



कल्याण

विष्णु पूर्व सप्तशती तेजोराशि जगत्पति ।
अनुकायक जो भक्त्युक्त गुरुपूजार्थी दिवाकर ॥

वर्ष ६६ } गोरखपुर, सौर भाग, श्रीकृष्ण-संका ५२१७, जनवरी १९९२ ई- { संख्या ९
पूर्ण संख्या ७८२

भगवान् नर-नारायणकी वन्दना

तली नमो भगवते पुण्याय भूते विश्वाय विश्वगुरवे पादेवतायै ।
नारायणाय श्रवणे च नरोत्तमस्य ईशस्य संवत्सरे निगमेधराय ॥
महर्षिनि निगम आत्मज्ञानप्रदो मुमुक्षुः पञ्च कण्ठोऽन्वयत मनसः ।
ते सर्वकर्मविनाशितिरम्यहीलं तस्मै नमः पूज्यमात्मनि पूज्योऽयम् ॥

(श्रीमद्भागवत १२।८।६७, ६९)

(महर्षि मार्कण्डेयजी की है—) ! आप अन्तर्यामी, सर्वव्यापक, सर्वस्वरूप, जगद्गुरु, परमश्रेष्ठ और शुद्धस्वरूप हैं। समस्त लौकिक और तैलिक काही आपके अधीन है। आप ही वेदमार्गिक प्रवर्तक हैं। मैं आपके इस युगलस्वरूप नरोत्तम नर और शक्तिवर नारायणको तनस्मर करता हूँ। प्रभो ! वेदमें साक्षात्कार बनानेवाला ज्ञान पूर्णरूपसे विद्यमान है, जो आपके स्वरूपका रहस्य प्रकट करता है। यदि बड़े-बड़े प्रतिपादयत्री मनीषी इसे प्राप्त करनेकर यत्न करनेपर भी मोहमें पड़ जाते हैं। आप भी ऐसे लोलीकपरी हैं कि विभिन्न मतवाले आपके सम्बन्धमें जैसा सोचते-किचारते हैं, वैसा ही शील-लभ्य और रूप ग्रहण करके आप उनके सामने प्रकट हो जाते हैं। वास्तवमें आप देह अर्थात् उपस्थितियों के रूप विविध हैं। हे पूज्योत्तम ! मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

वैदिक स्तवन

इसका अर्थ है : सभी व्यक्तिगत सम्पत्तियाँ जम्मा ।

मेम [redacted] शुद्धीकृत मर पुनः [redacted] निरुद्ध कर्म ।

अधिकांश ब्रह्मचर्यियों को कुछ भी जड़-वैभव-वस्त्र-वस्तु है, तब समस्त ईश्वरों का हाथ है। उस ईश्वरों के साथ रहने का स्थापना (इसे) धर्मों को। (इसमें) अलगाव का बोध, (कर्मों) का—बोध-वस्तु विचारण है अर्थात् विचारण भी नहीं है।

[illegible]

हमारे लिये (दिन और रातोंके अधिपत्य) मिल सकना कल्याणकार हो । तथा (रात्रि और अत्यन्त अधिपत्य) मलाल । भी) कल्याणकार हो । । पशु और सूर्यमण्डलके अधिपत्य) अर्थात् हमारे लिये कल्याणकार हो । (मल और भुजङ्गके अधिपत्य) इत । तथा (जलके भी कुट्टिके अधिपत्य) सुदृढता (दोष) हमारे लिये उत्तिष्ठ श्रदान करनेवाले हो । अतिउत्तमके विपत्तय उत्तिष्ठाने विपत्तय (जो विपत्तय अधिपत्य) । हमारे लिये कल्याणकार हो । (उपर्युक्त सभी देवताओंके अङ्गसङ्ग) साके लिये मन्त्रकार है । हे कानुदेव । तुम्हारे लिये मन्त्रकार है, तुम ही उत्तम (आनन्दके लिये उत्तिष्ठाने) मल को । । उत्तिष्ठाने । तुमको ही उत्तम मल करूँगा, (तुम मलके अधिपत्य हो, इसलिये मैं तुम्हें) मल करने पुनर्जित, (तुम मलके अधिपत्य हो, मल मैं तुम्हें) मल नामसे करूँगा, मल (सूर्यमण्डल परमेश्वर) मेरी रक्षा करे, मल मलकी अर्थात् अत्यन्तकी रक्षा करे, रक्षा करे । (और) मल करे । अत्यन्तकी । भगवान् उत्तिष्ठान् है, उत्तिष्ठान् है, उत्तिष्ठान् है ।

विश्वं देवानामुपासीतं बभूविर्देवः । अथाऽस्यैवैतन्मयाऽपि ॥

ये शिक्षण विधियाँ तब हैं, जिन, यद्यपि एक और और देशों में ऐसे समान विधाने जिनके हैं और समान तथा समान समाने अन्तर्गत हैं, वे पण्डित सूर्य अन्तर्गत, पृथ्वी और अन्तर्गतों के अपने अन्तर्गत पूर्ण करते हैं अन्तर्गतों के अन्तर्गत से रहे हैं।

वेदप्रमाणेन पुनश्च वाङ्मनसविज्ञानयोः सम्यक् भवत्यसौ ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

मैं आदित्य-स्वरूपवाले सूर्यदेवतास्य यज्ञम् पुरुषस्ये, जो अथर्ववेदके अन्त में पूर्ण प्रकारा सेकेवाले और परमात्मा है, उनको जानता हूँ। उनकी जो जानकर मनुष्य मनुष्यो लौकिक जाता है। मनुष्यके लिये मोक्ष-प्राप्तिके दूसरे कोई अन्य मार्ग नहीं है।

विद्ययापि येन हानिकरितानि पराकृत्य । यद् भवति तत्र तत्र ह्यसौ ॥

समस्त संसारको उत्पन्न करनेवाले—सृष्टि-काल-संसार कालेकाले **समस्त संसार** देदीपमान एवं जगत्को
 स्तुतकर्त्रेण प्रसुत **समस्त संसार** हे परब्रह्मस्वरूप सक्ति देव ! जगत् हमरे सम्पूर्ण—आधिभौतिक, आधिदैविक,
 आध्यात्मिक—सुरितो (कुलको—फाले) **समस्त संसार** हमसे दूर—बहुत दूर ले जाई, दूर करें, किंतु जो **समस्त संसार** (परमा) है,
 कल्याण है, श्रेय है, **समस्त संसार** है, तसे हमरे लिये—बिचके **समस्त संसार** सभी प्राणिनेके लिये—कसैं ओरसे (पल्लिपीति) ले
 आये, दें—‘**समस्त संसार** सब **समस्त संसार** ।’

अवस्थो मां सदा गमय । समस्तो वा ज्येष्ठिर्गणेश । कालोर्व्याघ्रो गमय ॥

॥ पावन ! आप असहसे सखी ओर, काले ज्योतिषी ओर मुझसे आग्रह और ले घसे।

पुराण-अवधूत-कालमें पालनीय धर्म

क्रद्धापक्षितानामुत्तमं सन्ध्याकाले । अथवाः शुक्लोद्भवः श्रोतारः पुण्यभागिनः ॥
 अभयस्य ॥ क्रद्धां पुण्यं भुज्यन्ति मनुजाश्चनः । तेषां पुण्यफलं नस्ति दुःखं त्याज्यमन्यपि ॥
 पुराणं ये च समुत्तमं समुत्तमोत्तमस्यैः । भुज्यन्ति च तेषां भयस्यप्रतिष्ठः सुखं संशयः ॥
 क्रद्धाणां परितोषान्तरां ये गच्छन्त्यनन्तो नराः । भोक्तव्यं तेषां तेषां तेषां सम्यगः ॥
 सोम्यैवमसक्त्य ये च तेषां भुज्यन्ति भवनीयम् । ते भवन्त्यः प्रजापतेः प्रजापते मनुजाश्चनः ॥
 ताम्बुलं भक्ष्यन्ते ये च तेषां भुज्यन्ति भवनीयम् । इतिहासं साधनस्येतन् नस्ति भवतिभयः ॥
 ये च सुखासनादयः तेषां भुज्यन्ति सुखिभ्यः । अश्वत्थान्तरां भुज्यन्ते ते भवन्त्येव वापराः ॥
 ये च भवत्समादयः ये च भवत्समन्विताः । भुज्यन्ति सन्तुष्टां ते च भवन्त्यनुवादयाः ॥
 असंशयस्य भुज्यन्ति विषमस्य भवन्ति ते । तेषां तेषां भुज्यन्ति भवन्त्यनन्तरा नराः ॥

जो लोग अन्न और पत्तियों से भोजन, अन्य कार्यों की उत्पत्ति से रीति, धर्म, पवित्र और शास्त्रितसे (पुराणों की कथाओं) भक्षण करते हैं, वे ही पुण्यके भागी होते हैं। जो अन्नम मनुष्य रीतिरहित होकर पुण्यकथाओं सुनते हैं, उन्हें पुण्यफल तो मिलता नहीं, बरते प्रत्येक जन्ममें दुःख भोग्य पड़ता है। जो लोग लम्बुल, पुष्प, चन्दन आदि पुष्प-सामग्रियों द्वारा पुण्यकी मलीभाँति पूजा करके भक्तिपूर्वक कथा सुनते हैं, वे निःसंदेह सुखी भवन्ते अर्थात् धनवान् होते हैं। जो मनुष्य कथा श्रुति समय अन्य कार्यों लिये बाँहों से डटकर अन्यत्र जाता है, उसकी भक्ति और सम्पत्ति नष्ट हो जाती है। जो पापी अन्नम मनुष्य मलकर्मों पराङ्गी करके (या देवी लगाने पर) पवित्र कथा सुनते हैं, वे अगुस्त होकर भ्रष्ट होते हैं। जो लोग पान चखाते हुए पवित्र कथा सुनते हैं, उन्हें कुलेका मल भक्षण करना पड़ता है और समस्त उन्हें समझौते से जाते हैं। जो लोग मनुष्य (व्यासासनसे) श्रुति आसनपर बैठकर कथा सुनते हैं, वे अक्षय नखेत्रका भोग करने की आशा होते हैं। जो लोग (व्यासासनसे) श्रुति आसनपर अथवा मध्यम आसनपर बैठकर उद्यम कथा भक्षण करते हैं, वे अर्जुन कर्मक वृत्त होते हैं। (जो मनुष्य पुण्यकी पुस्तक और व्यासकी) विद्या प्रणाम लिये ही कथा सुनते हैं, वे विद्वान् होते हैं तथा जो लोग सोते हुए कथा सुनते हैं, वे अन्नगर संपन्न होते हैं।

यः कृणोति कार्यं यतुः समानात्मनोऽस्मिन् । शुक्राश्रयार्थं कार्यं लभ्यमानं यत्किं प्रदीतम् ॥
 ये निष्कृतिं पुराणद्वारां लब्ध्वा वै पापहृदिनीम् । ते हि जन्मकर्म कार्याः शुक्राः सम्पद्यन्ति हि ॥
 कदाचिदपि हि पुरुषो यः कृण्वति लब्ध्वा नराः । ते शुक्रा नरकान् भोगान् भवन्ति वनसूकराः ॥
 ये कदापि नृलोदरे क्रीडन्ति न वैतथाः । अन्तर्गुणोऽपि ते शक्तिं प्राप्नुवन् परमं पदम् ॥
 कदापि क्रीडन्मानसां निद्रां कुर्वन्ति ये जनाः । कोट्यब्दं नरकान् शुक्रा भवन्ति प्रायसूकराः ॥
 ये श्रावयन्ति यन्त्रान् पुरुषां पौरुषिण्यौ कदाचन । यत्पश्येद्विपरीतं सत्तं विदुषि प्रज्ञयः पदे ॥
 आत्मनार्थं प्रयच्छन्ति पुराणद्वयं ये नराः । कदाचलभिनन्दयन्ति ॥ परलोकमेव च ॥
 स्वर्गलोकाः शक्राणां शुक्रा भोगान् यच्छेदितान् । विपराः प्रज्ञादित्येकेषु पदे प्राप्तिं निरामयम् ॥

इसी प्रकार जो कर्त्तव्ये सामान्य आत्मनस्य वैठकर कथा सुनता है, वह शुद्ध-शुद्ध-गमनके समान पापका भोगी होकर नरकगामी होता है। जो मनुष्य पुराणोंके ज्ञाता (व्यास) और कर्त्तव्ये हरण करनेवाली कथा भी न सुनते, वे ही जन्मोत्तक सूक्ष्म-योगिनिमें जाग्रत होते हैं। जो मनुष्य इस पुण्य कथा भी नहीं सुनते, वे घोर नरकोक्ष भोग करके वनैले सुख होते हैं। जो नरक्षेत्र कही जाती हुई कथामें अनुमोदन करते हैं, वे कथा न सुनकर भी अविनाशी परम पदको प्राप्त होते हैं। जो कुछ कही जाती हुई कथामें विमल पैदा करते हैं, वे करोड़ों वर्त्तमान नरकोक्ष भोग करके अन्तमें प्राणीण सूक्ष्म होते हैं। जो श्रेय साधारण मनुष्योंको पुराणसम्बन्धी पुण्य कथा सुनते हैं, वे ही करोड़ कर्मोसे भी अधिक समस्तक ब्रह्मलोकमें निवास

करते हैं। जो मनुष्य पुरुषके ज्ञान बलबलसे आत्मनके लिये कर्मकर, मुनिकर्मा, वर, सिंहासन और चौकी प्रदान करते हैं, वे स्वर्गलोकमें जन्म अर्थात् भोगोक्त उपभोग करनेके बाद ज्ञान उपरिसे लोकमें निवास कर अन्तमें निरामय पदको प्राप्त होते हैं।

[illegible]

इसी तरह जो लोग पुराणकी पुस्तकके लिखे उक्त श्लोक अन्वय प्रत्यक्ष करते हैं, वे प्रत्येक जन्ममें भोगविश्राम उपभोग करनेवाले एवं स्वामी होते हैं। जो महापातकोंसे युक्त अथवा उपद्रवस्थ होते हैं, वे सभी पुराणकी कथा सुननेसे ही परम पावनो प्राप्त हो जाते हैं। जो मनुष्य इस प्रकारके निष्कम-विषयसे पुराणकी कथा सुनता है, वह स्वच्छानुसार भोगीको भोगपर विष्णुलोकवासी प्राप्त करता है। जगत्के सम्मत होकर श्रेष्ठ युक्त प्रत्यक्षपूर्वक कथ और अनेकतर अतिद्वारा पुराणकी पूजा करे। तत्पश्चात् सदायक ब्रह्मण्यसहित पावनकी पूजा करे। उक्त समय पावनकी मी, पुष्पी, लोच और कथ देना चाहिये। तदुपरान्त ब्रह्मण्योको मलाई, लड्डू और नीरवश भोजन कराता चाहिये। तदनन्तर परमेश्वर कावसे प्रार्थना करे—'आय कावकायी भाग्यन् सुखिने कृष्णायोके समान, पुण्यवान्, रीतिनसम्पन्न, सत्यवादी और विवेचित्र है, अतएव मुझसे भी इन सम्पूर्ण धर्मोको सुन।' इस प्रकार प्रार्थना कर दान, धान और श्रेष्ठोके उनके मनको प्रसन्न करना चाहिये। जो मनुष्य इस प्रकार अन्तरपूर्वक करता है, वह सदा परमेश्वरी होता है। जो विवेचित्र मनुष्य दीर्घ अन्तरद्वारा कहे गये इन धर्मोका कालन करता है, वह पुराण-भक्तगता सम्पूर्ण फल पाता है।

पुराण-यष्टिमा

संस्कृत-विभागः सुविभाजितः गङ्गाधरम् ॥

सुतीर्थः विनाशः पुराणेषु । बुद्धबुद्धाज्जलं जगते जगत्सुखम् ॥

॥३॥ आहुतं चानि पुनश्चेत्येव च संसृजः ।

१०३५

इतिहासपुराणीषु निगद्येजं कृतः पुरा । यत्र दृष्टं हि केचु । तत्रैव लक्ष्यते स्मृति ॥

प्रमाणित प्रमाणित प्रमाणित प्रमाणित प्रमाणित

(आ. १, ३, ४, ५)

यह एक कर्मव्यवस्थाके लिये कर प्रणाली है। गृहस्थोंके लिये स्मृतियाँ ही प्रणाली हैं। किन्तु वेद और स्मृतिशास्त्र (धर्मशास्त्र) दोनों ही सम्पूर्ण रूपसे पुराणोंमें मिलते हैं। जैसे पाप पुण्य परव्यवस्थासे यह अद्भुत समाज उत्पन्न हुआ है, वैसा ही सम्पूर्ण संस्कारका व्यवस्था—सहित्य पुराणोंसे ही उत्पन्न है, इनमें लेखनका भी संसय नहीं है। वेदोंमें तिथि, नक्षत्र आदि काल-निर्णायक और ग्रह-संचारकी कोई सुक्ति नहीं बखशी गयी है। तिथिवेदीकी कृष्टि, क्षय, पर्य, प्रलय आदिकाल निर्णय भी इनमें नहीं है। यह निर्णय सर्वप्रथम इतिहास-पुराणोंके द्वारा ही निश्चित किया गया है। जो काल वेदोंमें नहीं है, वे सब स्मृतियोंमें हैं और जो काल वेदोंमें नहीं मिलता, वे पुराणोंके द्वारा मिलते हैं।

‘भविष्यपुराण’—एक परिचय

[illegible]

लेखकलेखन, देखभूजन, आदि-सर्वण आदि प्रभावविहित गुण कलौमें असम्भवकारणसे प्रकृत करनेके लिये उनके लैंगिक एवं पारस्त्रीयिक कलौका भी वर्णन किया गया है। इनके अतिरिक्त पुण्यमें अन्वयन कई विषयोंका सम्मेलन किया जाता है। इनके साथ ही पुण्यमें भी कथाओंमें असम्भव-सी दीक्षानेकाली कुछ करते परम्पर विरोधी-सी भी दिखायी देती है, जिसे स्वल्प अस्वाभावसे कुछ वास्तविक मानने लगते हैं। परंतु यथार्थमें ज़िंदगी क्या नहीं है। तब कबल है कि पुण्यमें कहीं-कहीं न्यूनगिन्यता हुई है तब विदेशी तथा विश्वविधायिकी आकाशवाणी-अस्वाभावसे बहुतसे लोग आज उपरगता भी नहीं हैं। इसी तरह कुछ अंधा जडित भी हो सकते हैं। परंतु इससे पुण्यमें भी मूल महत्ता तथा प्रवीणतामें कोई बाधा नहीं आती।

‘भविष्यपुराण’ महापुराणोंके अन्तर्गत एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है, इसमें वर्णित कथाओं विषय भी हैं, जिनमें यद-सुन्दर कथालय होता है। यथापि इलेक-संख्यामें अनुधिकृत होती है। भविष्यपुराणके अनुसार इसमें पचास हजार इलेक होने चाहिये; जबकि वर्तमानमें अष्टादश सहास इलेक ही इस पुराणमें उपलब्ध है। कुछ अन्य पुराणोंके अनुसार इसकी इलेक-संख्या साढ़े चौदह सहास होनी चाहिये। इससे यह प्रतीत होता है कि जैसे किन्तुपुराणकी इलेक-संख्या किन्तुधर्मोत्तरपुराणके सम्मिलित करनेसे पूर्ण होती है, वैसे ही भविष्यपुराणमें भविष्योत्तरपुराण सम्मिलित हो पूर्ण होता है, जो वर्तमानमें भविष्यपुराणके उत्तरार्ध है। इस उत्तरार्ध में मुख्यतः दान एवं उत्तमोक्त ही वर्णित हैं।

वस्तुतः यक्षिण्यपुत्राण शौर-प्रधान ग्रन्थ है। इसके अध्यायप्रारम्भे लगभग सूर्य है, जैसे भी सूर्यनामग्रन्थ प्रत्यक्ष देखा है जो पञ्चदेवोंमें परिगणित है और अपने शास्त्रोंके अनुसार पूर्वाङ्गके ~~प्रमाणों~~ प्रतिष्ठित है। द्विजमात्रके लिये प्रातः, ~~मध्यम~~ एवं सन्ध्याकालकी संख्यामें सुदिक्को अर्घ्य ब्रह्म करत अर्चिर्वाच है, इसके अतिरिक्त जो तथा अन्य आश्रमोंके लिये जो नियमित सूर्यार्घ्य देवेको विधि बतलानी गयी है। ~~अथर्ववेद~~ और ~~अथर्ववेद~~ रोग-मोक्ष, संस्थाप जगदि

पुण्यमें प्रति, ज्ञान, वैराग्य, सदाचार तथा सत्य एव
निष्कर्मकर्मकी महिमाके साथ-साथ यज्ञ, तप, दान, ज्ञान

सांसारिक दुःखोंकी निवृत्ति भी सुखोपसमसे सदा होती है।
 अथः पुण्योपे सौम्य और वैष्णवपुण्य ही अधिक फल देते हैं,
 विनये शिव और विष्णुकी महिमाका विशेष वर्णन मिलता है,
 परंतु भगवान् सुखदेवकी महिमाका विस्तृत वर्णन इस पुस्तकमें
 उपलब्ध है। यहाँ भगवान् सुखदेवकी महिमाका वर्णन
 जगत्साक्षात् एवं जगत्संसारिक पूर्णतया परमात्मके रूपमें
 प्रतिष्ठित किया गया है। सुखी महतीय स्वयम्के साथ-साथ
 उनके परिवार, उनकी अस्तुत कथाओं तथा उनकी जगत्साक्षात्
 पञ्चतिका वर्णन भी यहाँ उपलब्ध है। उनका शिव रूप क्या
 है, उनकी पूजाविधि क्या है, उनके अनुग्रह—प्रेमके लक्षण
 तथा उनका शास्त्रात्मक, पूर्व-जन्मकार और पूर्व-जन्मिणकी
 विधि और जगत्साक्षात् फल, सुखीके दोष-दुःखकी विधि और
 मोक्षा, जगत्साक्षात् ही सौख्यम् एवं दोषकी विधि अतिरिक्त
 महत्त्वपूर्ण वर्णन हुआ है। इसके साथ ही सुखी विष्ट
 स्वयम्के वर्णन, इन्द्रस्य पूर्वजन्मके वर्णन, सुखीका तथा
 भगवान् सुखीके रचनाका अतिरिक्त विविध प्रतिपादन हुआ है।
 सुखीके उपसमयमें ब्रह्मकी विस्तृत वर्णन मिलती है। सुखीकी
 शिव विधि में 'समर्थ'। जगत्साक्षात् फलभूतिप्रेमके साथ
 जगत्साक्षात् विधिके अनेक वर्णन और उनके उद्देश्यके यहाँ
 विस्तारसे वर्णन हुआ है। अनेक और तीर्थोंकी भी वर्णन मिलते
 हैं। सुखोपसममें पावनशुद्धिकी उल्लेख्यताका विशेष बत
 दिया गया है। यह इसकी मुख्य बात है।

इसके अतिरिक्त लक्षा, गणेश, कर्माधिकार तथा अति
 आदि देवोपमा भी वर्णन जगत्साक्षात् है। विविध विधिके और
 महादेवकी अधिपत्य-देवताओं तथा उनकी पूजाके फलका भी
 वर्णन मिलता है। इसके साथ ही ब्राह्मणकी महादेवकी
 निरूपण, गृहस्थधर्मका निरूपण, भक्त-पिता तथा अन्य
 गुरुजनोंकी महिमाका वर्णन, उनके अभिषेकन विधिके विधि,
 उपनयन, विवाह अदि संस्कारोंका वर्णन, स्त्री-पुरुषोंके
 सामूहिक भुगभुग-लक्षण, कियोंके कर्तव्य, कर्म, जगत्साक्षात्
 और उसका व्यवहारकी बातें, स्त्री-पुरुषोंके पारस्परिक व्यवहार,
 पञ्चमहायज्ञोंका वर्णन, बलिपूजादेव, अतिरिक्तकार, जगत्साक्षात्

विधिके भेद, मातृ-पितृ-श्राद्ध अदि उपदेव विधियोंपर
 जगत्साक्षात् विवेचन हुआ है। इस पूर्वमें जगत्साक्षात्-अतर्फी
 कथाका भी उल्लेख मिलता है, जिसके साथ नागोंकी उत्पत्ति,
 उनकी लक्षण, स्वभाव और विधिके वर्णन, सपत्नी काटनेके
 लक्षण, उनके विषयों के और उसकी विविधता अतिरिक्त
 विविध वर्णन यहाँ उपलब्ध है। इस पूर्वकी विशेषता यह है
 कि जगत्साक्षात् जगत्साक्षात् अतर्फी ही विशेष प्रमुखता दी
 गयी है। कोई भी व्यक्ति कितना भी विद्वान्, वैश्वधर्म्यी,
 जगत्साक्षात् तथा उच्च जगत्साक्षात् कर्म न हो, यदि उसके अतर्फी
 वेद, उच्च जगत्साक्षात् ही वेद वेद पुण्य नहीं कहा जा सकता।
 लोकात्म्य वेद और उच्च पुण्य वे ही हैं जो सदाकारी और
 सत्यवर्ण्य हैं।

सर्वविद्यापुस्तकमें जगत्साक्षात्कार मध्यमवर्ण्यका कारण होता
 है। जिसमें सृष्टि तथा जगत्साक्षात् एवं सदा सदा लोकात्म्य
 वर्णन हुआ है। जगत्साक्षात् तथा भूगोलके वर्णन भी मिलते हैं।
 इस जगत्साक्षात् मनुष्योंके २६ दोष बताये गये हैं, जिनमें
 स्वयम्के सुखतत्त्वपूर्ण मनुष्योंके इस जगत्साक्षात् तथा विधिके।
 पुण्योंके जगत्साक्षात् विधिके तथा पुण्य-वाचककी महिमाका
 वर्णन भी यहाँ प्राप्त होता है। पुण्योंके अन्त-महत्त्वपूर्ण
 सुखोंके जगत्साक्षात् अति अनेक पापोंसे मुक्ति मिलती है। जो
 जगत्साक्षात्, सवि तथा सत्य विधिके होकर पुण्योंका स्वयम् करता है,
 जगत्साक्षात्, विष्णु और शिव भक्त हो जाते हैं^१। इस जगत्साक्षात्
 इष्टार्थकर्मका निरूपण अतर्फी सधारेष्टके साथ किया गया
 है। जो कर्म अनसत्त्व हैं तथा निष्कर्ममायपूर्ण किये गये
 जगत्साक्षात् साधनिक रूपसे अनुसन्धानात्मिक कर्ममें किये गये
 उत्तरारण्य जगत्साक्षात् कर्म अनसत्त्व कर्मोंकी अपागत आते हैं,
 देवताकी स्थापना और उनकी पूजा, कुर्मा, पोषण, शासन,
 काली अदि सुदयन, वृक्षारोपण, देवलय, धर्मद्वारा,
 उच्च जगत्साक्षात् लक्षण तथा गुरुजनोंकी सेवा और उनके संतुष्ट
 करन—ये सब जगत्साक्षात् (पूर्व) कर्म हैं। देवाल्योंके
 निर्माणकी विधि, जगत्साक्षात् शास्त्रात्मिक लक्षण और उनकी
 स्थापना, प्रतिष्ठाकी कर्तव्य-विधि, देवताओंकी पूजापद्धति,

१-सर्वविद्यापुस्तकमें मुख्य कारण मिलता है। पुण्योंके जगत्साक्षात् जगत्साक्षात् म मातृ

सम्यं प्रत्यक्षता जगत्साक्षात् सुखीपुण्य भूगोल ॥ १॥ जगत्साक्षात् जगत्साक्षात् पुण्योंके सुखोपसम

उन्के ध्यान और मन्त्र, मन्त्रोंके प्रणि और मन्त्र—इन सबोंपर पर्याप्त विवेकन किया गया है। पञ्चम, षष्ठ, सृष्टि, तप्त, राज एवं अन्य ऋषि शास्त्रोंसे कही उक्त लक्षणोंसे भुक्त प्रतिमाका पूजन करना चाहिये। घरमें प्रत्येक उक्त अनुष्ठानके ऊँची मूर्तिका पूजन करना आवश्यक माना गया है। इसके साथ ही तालाब, पुष्करिणी, ताला तथा पवन आदि निर्माण-पद्धति, गृहवासु-प्रतिष्ठापन, गृहवासुमें किन देवताओंकी पूजा की जाय, इत्यादि विषयोंपर भी उक्त उक्त किया गया है।

गृहवासुपण, विभिन्न प्रकारके कुलोंकी प्रतिष्ठापन विधान तथा गोचरभूमिमें प्रतिष्ठा-सम्बन्धी चर्चाई मिलती है। जो वर्णित किया, भूल तथा फल देनेवाले कुलोंका विधान किया है या नहीं तथा देवालयमें कुलोंको लगाना है, यह उक्त विधानोंमें बड़े-से-बड़े पाठोंमें मिलता है जो विधानोंमें इन भुक्तलोकमें बड़े-से-बड़े पाठों तथा शुभ विधानोंमें उक्त करता है। विशेष पुत्र नहीं है, उसके लिये पुत्र ही पुत्र है। वृक्षारोपणका विधान लैबिक-पारलैबिक कर्म पुत्र ही करते हैं तथा उसे उक्त लोक प्रदान करते हैं। यदि कोई अन्धारा वृक्षारोपण करता है तो नहीं उसके लिये एक लक्ष पुत्रोंसे भी अधिक है। अन्धकार वृक्ष लगानेसे कभी लोक नहीं होता। विधान-वृक्ष दीर्घ आयु प्रदान करता है। इन प्रकार अन्य कुलोंके रोपणकी विधिमें फलभूमिमें अन्य हैं। सभी प्राकृतिक कार्य विधिगतपूर्वक सम्पन्न हो जायें तथा शान्ति-पद्म त ही इसके लिये उक्त-पद्धति और विधान अनुष्ठानोंमें भी इसमें वर्णन मिलता है।

भविष्यपुराणके इस पर्वमें कार्यप्रधान भी विधान कर्म प्राप्त होता है। विधान ब्रह्मण विधान, कुल-निर्माणकी योजना, भूमि-पूजन, अग्निसेवाएँ एवं पूजन, चरित कर्मके मन्त्र-निर्माणका विधान, कुलविधान-विधि, लोभप्रणय कर्म, यज्ञप्रणय कर्म और पुण्यभूमिमें विधि, यज्ञाधिकर्ममें विधानका महत्त्व और विधान-विधान आदि विधि-विधानोंका विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। विधानविधान चरित कर्म विधानविधान लक्ष विधानविधान कर्म नहीं करना चाहिये। ऐसा यज्ञ कभी सम्पन्न नहीं होता। जिस यज्ञका जो माप बरतलया गया है, उसके अनुसार करना

चाहिये।

इस क्रममें प्रीति और विधानोंके दर्शनका विशेष फल भी वर्णित हुआ है। भूत, वृक्ष, सिंह एवं प्रीति और वृक्षका कार्य, विधान और वृक्षपर भूलमें भी दर्शन हो जाय तो उसके फलदाता करना चाहिये। ऐसा करनेसे दर्शनके अनेक कर्मोंके फल नष्ट हो जाते हैं, उनके दर्शनमार्गसे बन तथा आयुकी वृद्धि होती है।

कोई भी कार्य देवकर्म या विधान कर्म समझकर किया करनेवाले के लिये आचार्य ही पूर्वकर्म फलदाता होते हैं। समकाले विधान की गयी विधानोंका कोई फल नहीं होता। उक्त कार्याचार्य, मन्त्र-विधान, विधि-निर्णय एवं वर्णभक्ति विशेष कर्म तथा विधानोंके पुनरावृत्ति करनेका विधान भी इस पर्वमें उक्तलोकमें सम्पन्न हुआ है। जो सर्वसाधारणके लिये उक्तोंमें भी है।

अनेक यहाँ गौतम-प्रकारके कर्म किया किया गया है। विधान विधान होता है। समान गौतम विधानविधान विधान है। उक्त विधान-विधान परम्पराके अनुसार अन्तरा विधान है। अनेक-अनेक गौतम-प्रकारके विधान, विधान तथा विधानका विधान चाहिये। इन सभी विधानोंका विवेकन यहाँ उक्तलोक है।

भविष्यपुराणमें पञ्चमपर्वके बाद अतिशयपूर्ण का वर्णित है। उक्त अन्य पुराणोंमें सत्ययुग, त्रेता और द्वापरके प्रकीर्ण राज्योंके इतिहासका वर्णन मिलता है, परन्तु भविष्यपुराणमें इन प्रकीर्ण राज्योंके साथ-साथ कलियुगी प्रकीर्ण राज्योंका आधुनिक इतिहास भी मिलता है। विधानमें भविष्यपुराणके भविष्य नामकी सार्धसत्ता विधानविधान में वर्णित हुई दीक्षती है। अतिशयपूर्णके प्रथम विधान सत्ययुगके विधानोंमें वंशका परिचय, त्रेतायुगके सूर्य एवं चन्द्र-यज्ञविधान कर्म, द्वापरयुगके चन्द्रविधान राज्योंके वृत्तान्त वर्णित है। इसके लक्ष मन्त्रविधान राज्योंका वर्णन है। प्रारम्भमें राजा प्रवीरने कुलदेवमें यज्ञ कलके मन्त्रविधान विधान किया था, परन्तु कलने लक्ष मन्त्रविधानमें राज्य किया तथा पाण्डव नारदयज्ञोंके अपनी पूजासे विधानका विधान प्राप्त किया। विधानमें वर्णित यज्ञ वि 'कई दृष्टिसे विधान युगोंकी अपेक्षा तुम श्रेष्ठ हो, अतः

मिता । मृनि वहां अती है और वैदिक । हनुमन्जीको प्रसन्नकर । निम्न बुझते हैं । तदनन्तर आश्वमेधके प्रदुर्धन तथा सृष्टि और उत्पत्ति । एवं शिव-वर्त्मके । वर्त्मन हुआ है । अर्न्तम आयुधोंमें मुगल बादशाहों । अंग्रेज । भी चर्चा हुई है । मुगल बादशाहोंमें चम्पर दुमई, अजमेर, सिक्खार, जाईपूर, औरंगजेब आदि प्रमुख शासकोंका वर्त्मन विस्तृत है । छत्रपति शिवाजीको भीतरका । प्रह । इसके साथ ही विक्टोरियाके शासन और उसके परिणामोंका भी वर्णन है । । यहाँ । कालसे कहा गया है । शक्तिपुरुषके । चरणों पर । मिलती है । सभी तक अनुपेक्षे परिपूर्ण हो । । अतीर्णता आ जाती है । शक्तिपुरुषके सामान्यवर्त्मके । साथ इस । वर्त्मन । गया है ।

। पुराणका अन्तिम । है उत्तरार्ध । । कालसे ज्ञात, राम और कल्याण वर्त्मन प्राप्त होते हैं । प्रत्यक्ष अनुगत श्रद्धालुका प्रतिपादन यहाँ हुआ है । प्रत्येक विधिसे, मन्त्री एवं मन्त्रीके भ्राता तथा उन विधियों आदिके अधिकार-देवताओंका वर्णन, प्रत्यक्ष विधि और उसकी प्रत्यक्षीकरण यहाँ विस्तारसे प्रतिपादन । गया है ।

उत्तरार्धके प्रारम्भमें श्रीनरदजीको भगवान् श्रीकृष्णन विनम्रभाषाका दर्शन कराते हैं । विनोद समस्त नारदजीने श्रोतृत्वमें भगवान् महात्मका दर्शनकर । कालसे देवनेही हृन्म प्रकट की । नरदजीके बार-बार आवाज करनेपर श्रीमन्नारद नरदजीके साथ कच्छीपने आये और वर्त्मने एक । ब्राह्मणका । चरण । शिष्टिज नारीमें धन-धनसे समृद्ध, उद्यमी, पशुपतन्में वन, कृषिकर्म्मके प्रतीति करिनेवाला सीरभ्र नामका एक वैद्यन निवास करता था, वे दोनों सर्वप्रथम उनकी । गये । वे वर्त्मने । यथोचित सस्वामन भोजनके लिये पूरा । यह सुन्कर कुछ ब्राह्मणरूपधारी भगवान्ने ईश्वर कहा—'तुमको अनेक पुत्र-पौत्र हों, तुम्हारी सेती और पशुधनकी निश बृद्धि हो यह मेरा अवशिष्ट है ।' यह कहकर वे दोनों । गए । यमि गङ्गाके तटपर रात्रिमें गोस्वामी नामका एक उरि ब्राह्मण

वसत । वे । उल्लेख । पहुँचे, वह अपनी सेती श्रोतृको चित्तमें लक्ष्य था । भगवान्ने उससे कहा—'हम तुम्हारे श्रोतृ हैं और कृपे हैं, अतः भोजन करोओ ।' उस । अपने चरण लक्ष्य जान-धोजन आदि करण, अनन्तर उक्त श्रवण श्रवण आदिसे प्रवर्त्तना की । प्रहः उक्त भगवान्ने ब्राह्मणसे कहा—'हम तुम्हारे चरणे सुखपूर्वक हों, चरणे करे कि तुम्हारी सेती निष्फल हो, तुम्हारे श्रोतृत्व । न हो' । कहकर वे चले गये । यह देखकर नरदजीने आश्चर्यचकिता होकर पूछा—'भगवान् ! वेचने अपनी पुत्र भी लेना नहीं की, परंतु भावने की कल्पना का दिवा, किन्तु इस ब्राह्मणने ब्रह्मसे अपनी बहुत सेवा की, फिर भी इसे अपने अवशिष्टके रूपमें श्राप ही दिवा—देख विनोद क्यों किया ?' भगवान्ने कहा—'नरद ! चरणे । पश्यनेसे विनया प्राप्त होता है, एक दिन इतने जेतनेसे उक्त हो प्राप्त होता है । वह वैद्यन अपने पुत्र-पौत्रोंके साथ इसी कृपे-कार्यमें लग्न हुआ है । हमने न तो उसके चरणे विनया किया और न भोजन ही किया, इस ब्राह्मणके चरणे चरणे और विनया किया । इस ब्राह्मणको देस आशीर्वाद दिवा कि विनये वह ब्राह्मणने न चरणे भुक्तिसे प्राप्त कर लगे । इस प्रकार कालचित करते हुए वे दोनों आगे बढ़ने लगे । आगे चलकर भगवान्ने । श्रवणभुक्तिके सर्वोत्तम । अपने चरणसे जान करकर एक सुन्दर । तरुण वृद्धा । तथा एक श्रद्धा विनया करकर पुत्र-पौत्रोंसे सम्पन्न ब्राह्मणकी चरणे शिव कर दिया तथा कुछ समय बाद पुनः नरदजीको अपने स्वाभिविक रूपमें । भगवान् अपादिता हो गये । नरदजीने अनुभव किया । इस भाषणके प्रभावसे संसारके जीव, पुत्र, की, वन आदिमें आसक्त हो गये-गये हुए अनेक । हैं । । मनुष्यको इससे सर्वोत्तम सुख मिले ।

इसके । संसारके शिवन विस्तारपूर्वक वर्त्मन किया गया है । प्रत्यक्ष सुनिहित भगवान् श्रीकृष्णसे प्रभु करते हैं, यह जीव शिव वर्त्मने देवता, मनुष्य और पशु आदि । वर्त्मन होता है ? शुभ और अनुभ । भोग वह कैसे करता है ? । कर देते हुए भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि उक्त वर्त्मने देवदेवि, शिवकर्मसे मनुष्यदेवि और पशुकर्मसे

आधुनिक कल्पना है, यह फलस्वरूप नहीं बल्कि कारण
मुख्य शक्ति है। इस तरह स्वाध्याय न करनेवाले की नहीं भी
प्रति नहीं है। इसके विपरीत मत-स्वाध्याय करनेवाले
सदा सुखी रहते हैं। इसलिये मत-स्वाध्याय समस्त
प्राणीय।

॥ पर्यन्त अनेक व्यक्तींनी कथा, महाकाव्य, विधान तथा
 फलश्रुतिप्रमाण वर्णन केल्या गेले हे : त्याच ही यादी
 ठापावली आहे ती असावी नवी है : एक-एक विधिकेरी या
 त्रिकोण विधान है : येरी अतिपट्ट विधिकेरी त्रिकोणान्त,
 अत्रोपजात, कोटिकलजात, फलश्रुतिजात ॥ १ ॥ दुसरा
 ॥ इसी ॥ ॥ मज्झत, ॥ मज्झतुलीया,
 इत्यमल्लजात, ललिततुलीयाजात, अतिशेखरतुलीयाजात,
 उपमल्लजात, सीमावशाकण, अमलतुलीया, रसकराजिनी
 तुलीयाजात तथा अमलतुलीया अति अनेक जत तुलीया विधिकेरी
 ही यादीत है : इसी प्रकार गवैशकतुली, ॥ ॥
 विनीक-वाही, कनकवाही, मन्दार-वाही, विजय-साली,
 मुक्ताभरा-साली, मल्लभरा-साली, जर्जरा-साली,
 शुभ-साली तथा अमल-साली ॥ ॥
 वर्णन हुआ है : तदनन्तर बुधवाही, श्रीकृष्णवाही,
 उपति एव बुधवाही, अमलवाही, श्रीकृष्णवाही, कनकवाही,
 आरुद्रवाही अदि त्रिकोण ॥ ॥ हुआ है : ॥
 चक्रवाही, अरुणवाही, गोमलवाही, देववाही एवं
 देवीवाही इत्यादी, श्रीवामवाही, मल्लवाही,
 विजय-मल्लवाही, गोविन्दवाही, अमलवाही,
 धरणीजात (काण्डवाही), विशोकवाही, विष्णुवाही,
 मन्दवाही अदि अनेक वाही-कोश विधान ॥ है :
 त्रिकोण विधिकेरी अन्तर्गत अमलजात, लौक्य-
 लौक्यमन्त्रावधत, मन्त्रावधत मन्त्रावधत-जात (काण्डवाही-
 त्रिकोण), अमलवाहीवाच्य विधान और उनके फलश्रुति
 वर्णन लिखे हैं : चतुर्दशी ॥ ॥
 (चतुर्दशी) जय, शिवचतुर्दशीकाव्ये महर्षि उद्दिष्टका
 अक्षय, अमल-चतुर्दशीकाव्य, अक्षय-जय, नमस्त,
 फलश्रुति-चतुर्दशीकाव्य अदि विभिन्न त्रिकोण प्रमाण हुआ
 है : तदनन्तर अमलवाच्ये वाह-चतुर्दशी ॥ ॥ वर्णन,
 पूर्णवाही-त्रिकोण वर्णन, जिसमे वैदवाही ॥ ॥ और ॥

पूर्वनिर्णय की विधि - वर्णन, साधकसहित-रज्या, कृतिस्थ-मन्त्रों के प्रयोगों वाली कलिप्रपादपत्र आरुपण, मन्त्रोप-पूर्णता तथा अनेक-पूर्णपत्रों का घात-विधि आदि ।
अनुष्ठान - अथर्ववेद के वर्णन किया गया है ।

विशेषीकृत विवरणोंके अनुसार नक्षत्रों और
प्रत्येक नक्षत्रकेअन्तर्गत वर्णन हुआ है। अन्तर्गत-नाशाख्यमें
पृथक् अक्षर है। मस-नक्षत्रके
प्रकरणमें कथा, प्राक्वितरण सम्पूर्ण तत्त्वा
विधान, कृत्तक (विष्णु)-रक्षाकरा एवं ग्रह-रक्षाकराकी
विधि, मङ्गलुनि विष्णुकरा,
विष्णुकरा विधि, भद्र (विष्टि)-त्रा तथा
भद्रके अतिरिक्तकी कथा, चण्ड, रुद्र तथा भुवस्तीकी अर्घ्य
विधि तथा भद्रके वर्णन हुए हैं। इन चण्ड १२१ में
उपचारकी विधिच प्रकीर्ण त्रिके अन्तर्गत प्रायः ८५ प्रायेक
अक्षर है, तदनन्तर मस-रक्षकच विधान,
तर्जनीविधि, मस-रक्षककी विधि, सूर्य-चण्ड-प्रकरणमें
प्रकरण
अर्घ्य प्राय दोहे हैं।

कृष्णसे पूर्व अर्थात् महाप्रसन्न गृहस्थ पुरुषको शरीरका तथा कित प्रसन्न काला व्यक्तिसे, इसका [] [] सुन्दर विचार [] [] १२६ वे अध्यायमें हुआ है। क्या पुरुषको यह भ्रम हुआ हो कि मृत्यु समीप आ गयी है तो इसे सब ओरसे मन इटाकर [] भगवान् विष्णुवर अथवा अपने गृहदेवका लक्षण करना चाहिये। कबसे [] होकर क्षेत्र तक यात्रा करनेकी मन्त्री उपकारोंसे नारायणकी पूजाकर तोत्रोंसे सुति करे। [] अनुसार गण, भूमि, सुवर्ण, धन, अन्न लब्धिपर धन करे और कन्ध, पुत्र, मित्र, जी, क्षेत्र, धन-प्राप्त्य तथा यत्न आदिसे कित इटाकर फलस्वरूप सर्वथा परित्याग करे [] [] तन्म, उदासीन, अपने और पराये लोगोंके उपकार और अपकारके विषयमें विचार न करता हुआ अपने मनको पूर्व जन्म तक ले। जनदुष्ट भगवान् विष्णुके आराधना में आये कन्ध नहीं है, इस प्रकार सब कुछ छोड़कर सर्वेष्ट भगवान् अभ्युत्थसे इदानीं धारण करके निरन्तर वामदेवके नामका लक्षण-वर्तिन करता रहे और [] मृत्यु अत्यन्त समीप आ जय ले दक्षिणप्र कुरा किञ्चन पूर्व [] और प्रियकर ज्ञान करे और परमात्म-प्राप्ति यह प्रार्थन करे कि 'मे

[illegible]

एक बात और ध्यान देना है, जो बुद्धिवादी लोगका
पुर्विक्रम ग्रामः कदावती है—यह यह कि पुनर्जीवे नई विरा
देवता, ॥ ॥ और जीवन्त मन्त्र कदावती ॥ ॥
॥ ॥ ज्योंही मान है और अन्य सबके रूप उसकी ॥ ॥
कदावती गयी है। गहराईसे ॥ ॥ न ॥ ॥ यह बात
विचित्र-सी प्रतीत होती है, परंतु इसका अर्थ यह है कि
भगवान्को यह लौलक्ष्यमय ऐसा आश्चर्यमय है कि इसी एक
ही परिपूर्ण भगवान् विभिन्न विभिन्न लौलक्ष्यप्राप्ति के लिये
॥ ॥, स्वभाव तथा अभिव्यक्ति ॥ ॥
कदावती के लिये अन्तर् विभिन्न ॥ ॥ ॥ ॥
भगवान्को ये सभी रूप निरूप, पूर्णतः और लक्षितमन्त्रकम
है, अपनी-अपनी रुचि और निहाके अनुसार जो जिस रूप
और तन्त्रके इष्ट बनाकर प्रकट है, यह उसी दिव्य तन्त्र और
रूपके समस्त ॥ ॥ भगवान्को प्राप्त था होता है, क्योंकि
भगवान्को सभी रूप पूर्णतः ॥ ॥ और उन ॥ ॥ रूपके एक
ही भगवान् लौलक्ष्य कर रहे हैं। योंही तथा तन्त्र अधिक

[illegible]

एक एक है, इसकी पुष्टि ■ इसीसे पत्नीभाति हो जाती है कि तीन बड़े जनेवाले पुत्रोंमें विष्णुकी और वैष्णवपुत्रोंमें विष्णु ही विष्णु ■ है तथा दोनोंको एक बताया गया है। इसी प्रकार अन्य पुत्र-विशेषके विविध प्रमाण देखने अपने ■ सोचते अन्य पुत्रोंके प्रधान ■ अपना ही समझ करतक है। यह श्रीचक्रपुत्र सीरपुत्र है, जिसने पाण्डव सूर्यकटककी अनन्त सीमाका वर्णन प्राप्त होता है। परंतु इसी पुत्रोंके अन्तर्में ■ २०५ ■ सदाचारका विशेष ■ है। इसमें यह बात आती है—भगवान् श्रीकृष्ण भुविधरसे कहते हैं—हमने ज्ञातेमें अनेक देवताओंका रूप बना करतक परंतु कदाचपि इन देवीमें कोई भेद नहीं। ■ ज्ञात है, यही विष्णु, जो विष्णु है यही शिव है, जो शिव है यही सूर्य है, ■ सूर्य है यही अग्नि, जो अग्नि है ■ अक्षिण, जो अक्षिण ■ यही ■ अर्थात् इन देवताओंमें कोई भेद नहीं। इसी ■ गौरी, लक्ष्मी, सावित्री जगत्-शक्तिमें भी भेदका रेशा नहीं। चाहे जिस देवी-देवताके उद्देशसे यह कहे, पर भेदबुद्धि न रहे, क्योंकि ■ जगत्-शिव-शक्तिमय है।

निम्नी देवताका अन्तर्गत लेखक नियम-व्रत आदि करे,

परंतु पितले ज्ञत-धन अदि बताने मने हैं, वे सन आचारमुक्त पुण्यके सफल होते हैं। आचारहीन पुण्यके वेद पक्षि नहीं करते, चाहे उसने काले अज्ञोत्सहित काले न पढ़ा हो। जिस भीति पंच जमनेन पक्षिपति बने दोस्तेकाले होइकर उड़ जाते हैं, उसी भीति आचारहीन पुण्यके वेद भी मृत्युके समय लग देते हैं। जैसे अशुद्ध धर्मों जल मयका धानके जमीने दुग्ध खानेसे अमलित हो जात है, उसी प्रकार आचारहीनों पितले ज्ञत धन भी

अर्थ है। अकार ही बर्ग और कुल्यम मूल है—जिन पुत्रोंमें
अकार लोग है वे ही सप्तम्य बहल्लो हैं। सप्तम्यके जो
लक्षण है, उसीके मन्त्र लक्षण है। ॥ पुत्र लक्षण
लक्षण के उसे लक्षण ही मन्त्राधीन होता है।

अभिमानपुराणे [] सप्त [] प्रतिपादन आहे
सम्प्रदायास सन्मान द्यावा हे। [] सुविधाचे हित
[] सप्त विद्यासमयवेळी [] प्रसारित किया गया है।

—संक्षेप रूपेण—

अक्षय्यनिषद

॥ मेरुपेजवली ॥

[illegible]

एवं यद्युज्जीविष्या सदाः श्रीगुरुभक्त्याः सुखोऽप्युज्जीविष्यात्तद्विषयं यो [] य तत्सामिप्येव
पश्यति । [] यत्तद्विषयं पश्यति । तस्मै तद्विषयं यद्युज्जीविष्यात्तद्विषयं [] एवं [] यत्तद्विषयं पश्यति ।

समस्त भगवान् सन्तुष्टी गये। सूर्यनारायणको प्रणाम करने में बाधुपत्नी उनकी स्तुति की। बाधु-इन्द्रियोंके प्रवर्धन भगवान् सूर्यनारायणको है। विचारण करनेवाले सूर्यनारायणको प्रवर्धन है। मन्त्रालेन (सहस्रों की संख्यासे) भगवान् सूर्यनारायणको प्रवर्धन है। तमोगुणरूपमें भगवान् सूर्यनारायणको है। रजोगुणरूपमें भगवान् सूर्यनारायणको प्रवर्धन है। सात्त्विकरूपमें भगवान् सूर्यनारायणको प्रवर्धन है। भगवान्! आप मुझे मसाले सहाई ले चलिए, मुझे मसाले मसाले मसाले और चलिए। भगवान् सूर्य प्रवर्धन हैं और वे हैं—उनके भी हैं। उनके प्रवर्धन कर रहे हैं तथा रजोगुणरूपमें प्रवर्धन हैं, सात्त्विक (सर्वज्ञ, सर्वशक्ति) सर्वसत्त्व प्रवर्धनवाले प्रवर्धनः सत्त्व और रजोगुण (भगवान् प्रवर्धन कर रहे हैं।) सत्त्व और प्रवर्धन सुखीभूत भगवान् सूर्यनारायण समस्त (प्रवर्धन) हैं। जो हमारे प्रवर्धन हैं, भगवान् सूर्यनारायण प्रवर्धन हैं। दिनका प्रवर्धन करनेवाले विचारणक सूर्यदेवके प्रति हमारा सब कुछ सत्त्व समर्पित है।

इस प्रकार चक्षुस्त्वर्तिविद्याके द्वारा सुनि निम्ने जानेर कण्ठान् पूर्वसमापन भवता । तब दोसर जोते—‘जो बाह्य इस चक्षुस्त्वर्तिविद्याका नित्य करता है, उसे अविनाश योग नहीं लेता, उसके कुलमे भय नहीं होता । बाह्योपे कय देनेर इस विद्याकी है । जो जानता है, यकन हो है ।’

1990 1991 1992 1993 1994 1995 1996 1997 1998 1999 2000 2001 2002 2003 2004 2005 2006 2007 2008 2009 2010 2011 2012 2013 2014 2015 2016 2017 2018 2019 2020 2021 2022 2023 2024 2025 2026 2027 2028 2029 2030 2031 2032 2033 2034 2035 2036 2037 2038 2039 2040 2041 2042 2043 2044 2045 2046 2047 2048 2049 2050 2051 2052 2053 2054 2055 2056 2057 2058 2059 2060 2061 2062 2063 2064 2065 2066 2067 2068 2069 2070 2071 2072 2073 2074 2075 2076 2077 2078 2079 2080 2081 2082 2083 2084 2085 2086 2087 2088 2089 2090 2091 2092 2093 2094 2095 2096 2097 2098 2099 2100 2101 2102 2103 2104 2105 2106 2107 2108 2109 2110 2111 2112 2113 2114 2115 2116 2117 2118 2119 2120 2121 2122 2123 2124 2125 2126 2127 2128 2129 2130 2131 2132 2133 2134 2135 2136 2137 2138 2139 2140 2141 2142 2143 2144 2145 2146 2147 2148 2149 2150 2151 2152 2153 2154 2155 2156 2157 2158 2159 2160 2161 2162 2163 2164 2165 2166 2167 2168 2169 2170 2171 2172 2173 2174 2175 2176 2177 2178 2179 2180 2181 2182 2183 2184 2185 2186 2187 2188 2189 2190 2191 2192 2193 2194 2195 2196 2197 2198 2199 2200 2201 2202 2203 2204 2205 2206 2207 2208 2209 2210 2211 2212 2213 2214 2215 2216 2217 2218 2219 2220 2221 2222 2223 2224 2225 2226 2227 2228 2229 2230 2231 2232 2233 2234 2235 2236 2237 2238 2239 2240 2241 2242 2243 2244 2245 2246 2247 2248 2249 2250 2251 2252 2253 2254 2255 2256 2257 2258 2259 2260 2261 2262 2263 2264 2265 2266 2267 2268 2269 2270 2271 2272 2273 2274 2275 2276 2277 2278 2279 2280 2281 2282 2283 2284 2285 2286 2287 2288 2289 2290 2291 2292 2293 2294 2295 2296 2297 2298 2299 2300 2301 2302 2303 2304 2305 2306 2307 2308 2309 2310 2311 2312 2313 2314 2315 2316 2317 2318 2319 2320 2321 2322 2323 2324 2325 2326 2327 2328 2329 2330 2331 2332 2333 2334 2335 2336 2337 2338 2339 2340 2341 2342 2343 2344 2345 2346 2347 2348 2349 2350 2351 2352 2353 2354 2355 2356 2357 2358 2359 2360 2361 2362 2363 2364 2365 2366 2367 2368 2369 2370 2371 2372 2373 2374 2375 2376 2377 2378 2379 2380 2381 2382 2383 2384 2385 2386 2387 2388 2389 2390 2391 2392 2393 2394 2395 2396 2397 2398 2399 2400 2401 2402 2403 2404 2405 2406 2407 2408 2409 2410 2411 2412 2413 2414 2415 2416 2417 2418 2419 2420 2421 2422 2423 2424 2425 2426 2427 2428 2429 2430 2431 2432 2433 2434 2435 2436 2437 2438 2439 2440 2441 2442 2443 2444 2445 2446 2447 2448 2449 2450 2451 2452 2453 2454 2455 2456 2457 2458 2459 2460 2461 2462 2463 2464 2465 2466 2467 2468 2469 2470 2471 2472 2473 2474 2475 2476 2477 2478 2479 2480 2481 2482 2483 2484 2485 2486 2487 2488 2489 2490 2491 2492 2493 2494 2495 2496 2497 2498 2499 2500 2501 2502 2503 2504 2505 2506 2507 2508 2509 2510 2511 2512 2513 2514 2515 2516 2517 2518 2519 2520 2521 2522 2523 2524 2525 2526 2527 2528 2529 2530 2531 2532 2533 2534 2535 2536 2537 2538 2539 2540 2541 2542 2543 2544 2545 2546 2547 2548 2549 2550 2551 2552 2553 2554 2555 2556 2557 2558 2559 2560 2561 2562 2563 2564 2565 2566 2567 2568 2569 2570 2571 2572 2573 2574 2575 2576 2577 2578 2579 2580 2581 2582 2583 2584 2585 2586 2587 2588 2589 2590 2591 2592 2593 2594 2595 2596 2597 2598 2599 2600 2601 2602 2603 2604 2605 2606 2607 2608 2609 2610 2611 2612 2613 2614 2615 2616 2617 2618 2619 2620 2621 2622 2623 2624 2625 2626 2627 2628 2629 2630 2631 2632 2633 2634 2635 2636 2637 2638 2639 2640 2641 2642 2643 2644 2645 2646 2647 2648 2649 2650 2651 2652 2653 2654 2655 2656 2657 2658 2659 2660 2661 2662 2663 2664 2665 2666 2667 2668 2669 2670 2671 2672 2673 2674 2675 2676 2677 2678 2679 2680 2681 2682 2683 2684 2685 2686 2687 2688 2689 2690 2691 2692 2693 2694 2695 2696 2697 2698 2699 2700 2701 2702 2703 2704 2705 2706 2707 2708 2709 2710 2711 2712 2713 2714 2715 2716 2717 2718 2719 2720 2721 2722 2723 2724 2725 2726 2727 2728 2729 2730 2731 2732 2733 2734 2735 2736 2737 2738 2739 2740 2741 2742 2743 2744 2745 2746 2747 2748 2749 2750 2751 2752 2753 2754 2755 2756 2757 2758 2759 2760 2761 2762 2763 2764 2765 2766 2767 2768 2769 2770 2771 2772 2773 2774 2775 2776 2777 2778 2779 2780 2781 2782 2783 2784 2785 2786 2787 2788 2789 2790 2791 2792 2793 2794 2795 2796 2797 2798 2799 2800 2801 2802 2803 2804 2805 2806 2807 2808

देव देव सूर्यस्य च खेडि ॥ नं. २२ ॥ वेदस्य सत्यः विनाशितः सत्यः ॥ (मार्ग २०५:११-१३)

विद्यावति संस्कार-विधि, बी-पुरुषोक्ति लक्षण, देवपूजाका विधान, राजाओंके धर्म • कर्तव्यका निर्णय, सूर्यस्तवन, विष्णु, रुद्र, दुर्गा तथा सम्मन्तरात्मिका स्तवन एवं पूजा-विधान, विविध • वर्णन, उपपत्तयों • कर्त्तव्य-विधि, संध्याविधि, ज्ञान, तपन, वैद्यदेव, भोजन-विधि, आतिथ्य, कुलधर्म, वेदधर्म तथा यज्ञ-मन्त्रादि अनुष्ठित होनेवाले • वर्णन वर्णन हुआ है।

• कुलश्रेष्ठ उल्लेख ! इस पद्यपुस्तकमें • संस्कारों, ईश्वरों विष्णुको, विष्णुको नरदेव, नरदेव इन्द्रको, इन्द्रको पराशरको तथा पराशरको व्यासको मुनि • वर्णन • प्राप्त किया। इस • परमेश-प्राप्त इस • भविष्यपुराणकी • अगले कहता है, इसे सुने।

इस भविष्यपुराणकी श्लोक-संख्या पचास हजार है^१। इसे श्रीमत्सूर्यक सुनेवाला ऋषि, कृषि तथा सम्पूर्ण समाजियोंको प्राप्त करता है। • इस पद्यपुस्तकमें • वर्णन • गये हैं—(१) ज्ञान, (२) तपन, (३) तैत्तिरीय, (४) तैत्तिरीय तथा (५) प्रतिमर्गार्थ। पुराणोंके सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर • वंशानुशील—ये वर्णन • बताये गये हैं तथा इसमें चौदह विधाओं • भी वर्णन है^२। चौदह विधाएँ इस प्रकार हैं—बार वंश (ब्रह्म, कुरु, सप्त, अध्वरी), छः वैद्य (शिक्षा, कल्प, विराट, •, कण्ड, ज्योतिष), तीनैसा, गंध, पूजा तथा धर्मशास्त्र। अमुकैत, धनुषैत, गान्धर्वैत तथा अर्धशास्त्र— इन चारोंको मिलानेसे अठारह विधाएँ होती हैं।

सुमन्तु मुनि पुनः बोले—हे राजन् ! अब मैं भूतमर्ग अर्थात् समस्त प्राणियोंकी उत्पत्तिका वर्णन करता हूँ, जिसके सुननेसे सभी प्राणियों निवृत्ति हो जाती है और धनुष काम शांतिको प्राप्त करता है।

हे • ! पूर्वजन्ममें यह सारा संसार मन्त्रकारसे था। •, कोई पदार्थ सृष्टिगत नहीं होता था, अविज्ञेय था, अतर्क्य था और प्रसन्न-सा था। उस समय सूर्य अतीव्र और सर्वभूतान्त • पतन • पतन • चलने अपने ऊपरसे • सृष्टि करनेकी • की और सर्वप्रथम कामकासे • उत्पन्न • तथा उसमें अपने सौर्यरूप अतिव्यक्त व्यक्त किया। इससे देवता, असुर, मनुष्य आदि सम्पूर्ण ब्रह्म उत्पन्न हुआ। वह सौर्य जन्मसे मितेसे अत्यन्त प्रसन्नमान सुखीका अन्त हो गया। उस अन्तके पक्षसे सृष्टिकर्त्ता अतुल्य लोकविशालाह • उत्पन्न हुए।

न (कल्पानु)से जलकी उत्पत्ति हुई है, इसीसे जलको नार कहते हैं। वह नार जिसका पहले अन्त (स्थान) हुआ, • जलका कहते हैं। ये सदसद्ब्रह्म, अन्तर्गत एवं विष्णुकारण है, इससे दिन पुरुष-विशेषकी सृष्टि हुई, ये लोकमें ब्रह्माके • अतिष्ठ हुए। ब्रह्माजीने दीर्घकालका तपसा • और • भाग कर दिये। एक भागसे पृथ्वी और दूसरेसे • रचना •, •, •, • दिशाओं तथा समस्त विषय-मान्य अर्थात् समुद्र बनाया। दिन महती • तथा सभी • की।

जलान्तरों सर्वप्रथम आकाशको उत्पन्न किया और फिर तपसे •, अग्नि, वायु और पृथ्वी—इन तत्त्वों रचना • सृष्टिके अतिमें ही • उन सबके नाम और कर्म केटके निर्देशानुसार ही निबत कर उनकी अलग-अलग लोकों बना दी। देवताओंकी तुलित आदि गण, ज्योतिषोमादि संकल्पन ब्रह्म, ब्रह्म, नदी, समुद्र, पर्वत, सम एवं विषम पृथ्वी आदि उत्पन्न कर चलने विषयों (संघर्ष, दिन, • आदि) और प्रसन्न • अतिथीरचना की। वस्त्र, ज्ञेय आदिकी • • सदसद्ब्रह्मके लिये धर्म और

आकाशपुरुष लिये ३ वेदधर्मपुरुष। अन्तर्गत य संपन्नः सत्त्विकपुरुषः सत्त्वः •
पञ्चमन्त्रादि दृष्टव्य धर्मस्य सुनने पर्वन्। सर्वज्ञः सत्त्वः • कुरु, कर्ण •
अन्ते य • गजराजो मीमांसा • सत्त्वः सत्त्विकपुत्रः पुरुषः • • • • • (विश्वकर्मा १। ८१-८४)

१-कर्मान् • भविष्यपुराणका जो संस्करण उपलब्ध है, •, •, •, • तथा उत्तर नामक चार सर्ग मिलते हैं और प्रयोग-संख्या के पद्याम प्रकारके • लक्षण अनुष्ठान • है। इसमें जो • ज्ञान • वर्णन • है।

२-सर्गा • प्रतिमर्गैत वंशे मन्वन्तराणि य •
वंशानुशीले वैयः पुरुषे पञ्चमन्त्राणि • पदार्थ-विशेषाधिकारः •
कुम्भन्तः • (वसुधैव २। ४-५)

अधर्मिकी रचना की और नानाविध अभिजातोंकी संहिताएँ
उनको सुख-दुःख, हर्ष-शोक आदि इन्द्रोसे संयुक्त किया ।
कर्म जिसने किया था तदनुसार (इन्द्र, वरुण, सूर्य
आदि) पक्षोंपर विभक्ति हुई । विराट, अर्जुन, युधिष्ठिर, कृष्ण, धर्म,
अधर्म, सत्य, असत्य आदि जीवोंके लिये स्वयंसे
वैशेष ही उनमें प्रविष्ट हुआ, जैसे विभिन्न जन्तुओंमें बंधनोंमें पुनः,
पक्ष आदि उत्पन्न होते हैं ।

इस लोककी अविभक्तिके लिये ब्रह्मदेवने अपने मुक्तों
बाहुओंसे धरित, ऊपर अर्धांग, नीचे वैश्य
चरणोंसे चरणोंको उत्पन्न किया । ब्रह्मदेवने अपने मुक्तोंमें
वैश्य उत्पन्न हुए । पूर्व-मुक्तोंमें ब्रह्मदेव उत्पन्न हुआ, उभे वरिष्ठ
भूमिमें ब्रह्मण किया । दक्षिण-मुक्तोंमें वरुणदेव उत्पन्न हुआ,
महर्षि याज्ञवल्क्यने पश्चिम-मुक्तोंमें विष्णु-मुक्तोंमें
मिश्र उत्पन्न हुआ, उभे गौतमभूमिमें शिव और उत्तर-
मुक्तोंमें अथर्ववेद प्राप्त हुआ, जिसमें लोकप्रियता
वैश्वदेवने प्राप्त किया । ब्रह्मदेवके लोकप्रियताएँ पञ्चम (ऊर्ध्व)
मुक्तोंमें अथर्ववेद पुनः, इतिहास और पञ्चम स्मृति-उत्पन्न उत्पन्न
हुए ।

इसके बाद ब्रह्मदेवने अपने देवोंके दो भजन किये । एहिने
भाग्यमें पुनः कार्य भाग्यमें की कल्पना और उसके विपरीत
पुनःकी सृष्टि की । उस विपरीत पुनःकी सृष्टि
रचनेकी बहुत कालावधि तक । सर्वप्रथम
वस प्राचीनोंको उत्पन्न किया, जो ब्रह्मकी कल्पनामें । उनके
समय इस प्रकार हैं—(१) शार, (२) भृगु, (३) कश्यप
(४) प्रचेतस, (५) पुलह, (६) तनु, (७) कुलक, (८) अग्नि,
(९) अग्निप्रिय और (१०) मरीचि । इसी प्रकार
अन्य महामोक्षकी शक्ति थी उत्पन्न हुए । अनन्तर देवता,
वैश्य और पक्ष, विराट, गन्धर्व, असुर, पित्र, मनुष्य,
सर्प आदि बोनियोंके अनेक गण उत्पन्न किये और उनके
रहनेके स्थानोंको विद्युत्, मेघ, पत्र, इन्द्रधनुष,

बृहस्पति (पुच्छल को), उत्पन्न, निर्मल (बादलोंकी
गङ्गाप्रवाह) और छोटे-बड़े नक्षत्रोंको उत्पन्न किया । मनुष्य,
अनेक प्रकारके मत्स्य, वृक्ष, पक्षी, हाथी, घोड़े, पशु,
वृक्ष, कुम्भ, कर्पूर, पतंग आदि छोटे-बड़े जीवोंको उत्पन्न
किया । इस प्रकार उन ब्रह्मदेवने ब्रिलेखिकी की ।

हे रामन् ! इस सृष्टिकी रचनाकार सृष्टिमें जिन-जिन
जीवोंके जो-जो कर्म और क्रम कहा गया है, उसका मैं वर्णन
करता हूँ, श्रवण सुने ।

हाथी, गज, गज और विविध पशु, विराट, मनुष्य
सब प्रकारके मर्त्य जन्तु (गर्भसे उत्पन्न होकरवाले) प्राणी हैं ।
कश्यप, ब्रह्मदेव, सर्प, मत्स्य तथा अनेक प्रकारके पक्षी जन्तु
(अर्धसे उत्पन्न होनेवाले) हैं । मत्स्यी, मत्स्य, वृक्ष, कटमल
आदि जीव वेदज हैं अर्धसे पक्षीकी उभारसे उत्पन्न होते हैं ।
पक्षियोंमें जो वृक्ष, जन्तु, पक्षी, अथर्वधियाँ आदि
कल्पना हैं । जो पक्षोंके पक्षोंमें रहें और कर्म
उभे व नष्ट हो । तथा बहुत कृत्स्न और पक्षोंवाले वृक्ष
ये अथर्वधियाँ कल्पना हैं और पक्षोंके आगे किन्हीं ही पक्षों
हैं । तथा जो पक्षोंमें और पक्षोंमें हैं उन्हें वृक्ष
हैं । इसी प्रकार मनुष्य, वरुण, विराट आदि भी अनेक
वेद हैं । ये सब पक्षोंके पक्षोंमें अर्धसे वृक्षकी
प्रकाश कटकर भूमिमें गड़ देनेसे उत्पन्न होते हैं । ये
वृक्ष अग्नि, वैश्वदेव-स्मृतिप्रमाण और इन्हें सुख-दुःख
हैं, पशु पूर्वजन्तुके कल्याण समोगुणसे
जन्तु रहते हैं, इसी कारण पशुओंकी भक्ति कालकीत आदि
कार्यमें अथर्व नहीं हो पते ।

इस प्रकार कल्याण-विराट-भगवान् भस्मरसे
उत्पन्न हुआ है । अब वह परमात्म विराट् आश्रय ग्रहण कर
है, तब संसार उसमें समा हो जाता है और
सब विराट् करता अर्थात् जागता है, सब सृष्टि
उत्पन्न और समस्त जीव पूर्वकर्मनुसार अपने-अपने

१-पञ्चमुक्तोंमें पञ्चमे लोकप्रियता । उत्पन्न पुनःकी वैश्वदेवने पक्ष ।

निर्धर्मता तात्कालीयपुनः पुनःकल्पित । तन्मयः सृष्टिप्रकारेण कल्पना लोकप्रियता ।

(आहत्य २ : ५६-५७)

२-अथर्वः कल्याणप्रकाश कल्याणप्रकाश । अथर्वः वे वे कल्याणः सृष्टि ।

पुनःकी वैश्वदेवने वृक्षप्रकाशः स्मृता । तन्मयः कल्याण वैश्वदेवः कल्याणप्रकाश ।

अथर्वः कल्याणः कल्याणः कल्याणः कल्याणः

(आहत्य २ : ७७-७८)

कर्मोंमें प्रकृत हो जाते हैं। यह अन्वय परस्पर सम्पूर्ण बराबर संस्कारों आशु और शयन दोनों अन्तर्होयुक्त बार-बार और बनता रहता है।

परमेश्वर कल्पके प्रारम्भमें सृष्टि और कल्पके अन्त्यमें प्रलय करता है। कल्प परमेश्वरका दिन है। इस कल्प परमेश्वरके दिनमें सृष्टि और रक्षितमें प्रलय होता है। हे राजा वैज्ञानिक ! अब कल्प-गणनाको सुने—

अष्टमहा नियम (पालक नियमों सम्प्रदायों विशेष कहते हैं) की एक कहा होती है अर्थात् जिसमें सम्प्रदाय अष्टमहा बार पालकीय नियम हो, उसमें बारको कहा कहते हैं। तीस श्राद्धकी एक बार, तीस बरकक एक बार, बार बारक एक सुवर्ण, तीस सुवर्ण एक दिन-रात, तीस दिन-रात एक महीना, दो महीनेकी एक श्राव, तीन श्राव एक अपरा तथा अवशेष एक वर्ष होता है। इस प्रकार सूर्यप्रकाशके इस दिन-रातका काल-विभाग होता है। सम्पूर्ण दिन रातका विभाग करते हैं और दिनमें अपने-अपने कर्मोंमें प्रकृत होते हैं।

दिन-रात मनुष्योंके एक दिन होता है अर्थात् सूर्य प्रथम पितृगणों ताड़ और कुम्भ दिन होता है। देवताओंका एक अष्टोपरा (दिन-रात) मनुष्योंके एक वर्षके बराबर होता है अर्थात् वसन्त ऋतु तथा श्राद्ध ऋतु की जाती है। हे राजा ! अब अगर महायोगीक रात-दिन और एक-एक युगके प्रमाणों सुने—अथवा बार हजार वर्षका है, उसके संख्याओंके बार सौ वर्ष तथा संख्याके बार सौ वर्ष मिलकर इस प्रकार बार हजार आठ सौ दिव्य वर्षोंका एक संवत्सुग होता है। इसी प्रकार त्रेतायुग तीन हजार वर्षोंका तथा संध्या और संख्याओंके सः सौ वर्ष कुल तीन हजार सः

वर्ष, इसमें दो हजार वर्षोंका संख्या तथा संख्याओंके बार सौ वर्ष कुल दो हजार बार सौ वर्ष तक कल्पयुग एक हजार वर्ष तथा संख्या और संख्याओंके दो सौ वर्ष मिलकर बारह सौ वर्षोंके बराबर होता है। ये सब दिव्य वर्ष मिलकर बारह हजार दिव्य वर्ष होते हैं। यही देवताओंका एक युग कहलता है।

हजार युग होनेसे महायोगीक दिन होता है यही ज्ञान उनकी रक्षिका है। जब महायोगी अपनी क्षमिके अन्त्यमें लेकर उठते हैं जब सत्-असत्-रूप मनको उत्पन्न करते हैं। यह मन सृष्टि करनेकी इच्छामें विकारको प्राप्त होता है, यह उसमें प्रथम आवरण-तत्त्व उत्पन्न होता है। आवरणतत्त्व गुण सत्त्व कहता है। विकारगुण आवरणको एक विकारके गन्धको करनेवाले पक्षि वायुकी उत्पत्ति होती है, जिसका गुण त्वर्य है। इसी प्रकार विकारवायु वायुके कल्पकालका भाव करनेवाला प्रकाशगुण तत्त्व उत्पन्न होता है, जिसका गुण रूप है। विकारवायु तेजको जल, जिसका गुण रस है और उसमें गन्धगुणवायु पृथ्वी उत्पन्न होती है। इसी प्रकार सृष्टिका प्रथम रहता है।

पूर्वमें बारह हजार वर्षोंका एक दिव्य युग कहा गया है, वैसे ही एकहजार युग होनेसे एक मन्वन्तर होता है। महायोगीक एक दिनमें बीस हजार वर्षोंका व्यतीत होते हैं। सन्वत्सुगों वर्षोंके चारों पाद वर्णमान रहते हैं अर्थात् सन्वत्सुगमें वर्ष (अर्थात् सप्तर्षयुगों) रहता है। अष्ट युगोंमें धर्मका बल घटनेसे धर्म क्रमसे एक-एक करण घटता है,—अर्थात् क्रममें धर्मिक तीन बार इसमें दो बार चरित्रयुगमें धर्मका एक ही चरण और तीन बार अधर्मिक रहते हैं। सन्वत्सुगोंके

१-एक महायोगीके सुवर्ण सूर्य-संक्रान्तिकाल सम्प्रदायों की बात है। बारह सौ वर्षोंका एक सौर वर्ष (रात है और मनुष्य-वर्षका यही एक सौर वर्ष देवताओंका एक अष्टोपरा होता है। ऐसे ही तीन अष्टोपराका एक साल और बारह वर्षोंका एक दिव्य दिन है।

संक्रान्तिकाल युगोंका मान	दिव्य वर्षों	सौर वर्षों
१-सन्वत्सुगका मान	४,८००	१७,२८,०००
२-त्रेतायुगका मान	३,६००	१३,९६,०००
३-द्वापरायुगका मान	२,४००	८,६४,०००
४-कलियुगका मान	१,२००	४,३२,०००
महायुग या एक चतुर्दशी—	१२,०००	४३,२०,००० वर्ष

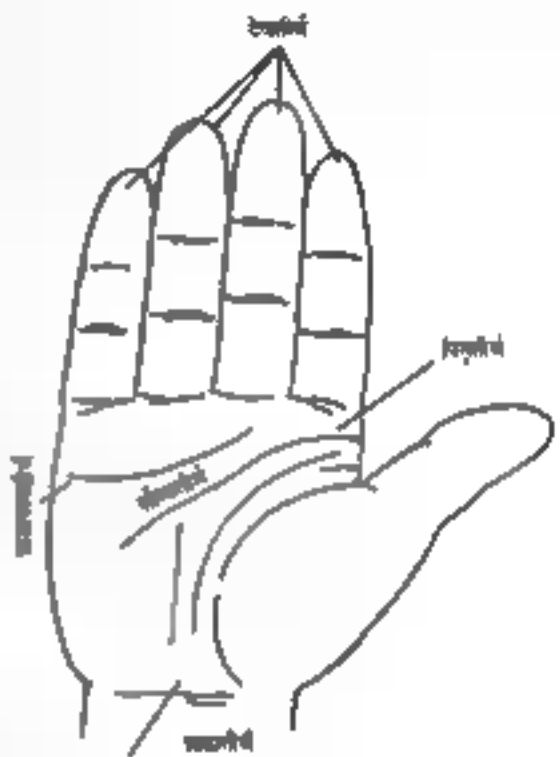
वैद्यदेव-वर्म सम्पन्न कर अपने पुत्र, मित्र तथा बन्धु-बन्धवोंके भोजन का रस था। इससे अन्नसम्पत्ति एक उत्तम उपाय सुझाती पड़ती है। उपाय करनेसे सुखसे वह दायवरा भोजनको छोड़कर बाहरकी ओर दौड़ा। किन्तु बन्धव कह बाहर पहुँचा वह अन्धाधर बंद हो गये। फिर लौटकर उस पत्रमें छोड़ा हुआ भोजन का उसे का रिखा। भोजन करते ही उस वैद्यकी मृत्यु हो गयी। अन्धराधर भोजनको भी उसकी दुर्गति हुई। इसीसे छोड़े हुए भोजनको फिर कभी नहीं खान चाहिये। अधिक भोजन भी नहीं करना चाहिये। इससे शरीरमें अत्यधिक रक्त की उत्पत्ति होती है, अधिक प्रतिक्रिया (पुनरुत्पत्ति, कर्तव्य, पत्र) अत्यधिक रोग उत्पन्न हो जाता है। अतः ही जलने खान, रस, तप, होम, तर्पण, पूजा आदि कोई भी पुण्य का अधिक सम्पन्न नहीं हो पाते। अतः भोजन कापना उचित रोग कापना है—अपु भरोती है, लोकमें निवा होता है तथा अन्धको छुट्टी नहीं होती। अधिक भुक्ते नहीं नहीं खान चाहिये। पवित्रतासे रहना चाहिये। पवित्र भुक्ते नहीं सुखमें जाता है और अन्धमें बर्गमें जाता है।

रक्षाने पुत्र—सुखीकर। उपाय किस करके करनेसे होता है? इसका अर्थ करे।

सुखीकर सुनि बोले—उपाय। जो उपाय विविध प्रकार आचमन करता है, वह पवित्र हो जाता है और अत्यधिक अधिकारी हो जाता है। अत्यधिकारी विधि यह है कि हाथ-पैर कोकर पवित्र स्थानमें आसनको ऊपर पूर्व अथवा उत्तरकी ओर मुख करके बैठे। दाहिने हाथकी उंगली नीतर रखकर दोनों करण अंगुष्ठ रकी तथा शिखामें उंगली रखने और फिर उपाय एवं केनसे उचित जीतल एवं करनेसे आचमन करे। पहले-पहले, बात करते, इतर-उधर देखते हुए, जीतलने और अंगुष्ठपुत छोड़कर आचमन न करे।

हे उपाय! उपायको दाहिने हाथकी उंगली करे करे है—(१) देवतीर्थ, (२) पिप्लीर्ष, (३) ब्रह्मतीर्थ, (४) प्रजापत्यतीर्थ और (५) सौम्यतीर्थ। अथ

सुने—अंगुष्ठके मूलमें ब्रह्मतीर्थ, कनिष्ठके मूलमें प्रजापत्यतीर्थ, अङ्गुलियोंके अग्रभागमें देवतीर्थ, तर्जनी अङ्गुलिके पिप्लीर्ष और हाथके मध्य-भागमें



सौम्यतीर्थ कहा जाता है, जो देवतीर्थमें प्रशस्त माना गया है। देवतीर्थ, ब्रह्मतीर्थ, अङ्गुली, देवतीर्थसे, तर्पण, पिप्लीर्ष, ब्रह्मतीर्थसे, अचमन ब्रह्मतीर्थसे, निवाहके हाथकी उंगली और लोकाय प्रजापत्यतीर्थसे, अङ्गुली उपाय, अधिकारकी ब्रह्मतीर्थसे करे। ब्रह्मतीर्थसे उपायकी उपाय करे।

अङ्गुलियोंके विवरण पर एकाग्रचित्त हो, पवित्र करनेसे किन उपाय किने तीन कर आचमन करनेसे पात्रान् फल होता है और उपाय प्रसन्न होते हैं। प्रथम आचमनसे अन्धदेव, द्वितीयसे अङ्गुली और तृतीयसे सामवेदकी वृत्ति होती है तथा आचमन करके अङ्गुली दाहिने अंगुलीसे मुखकर स्पर्श करनेसे

१- अङ्गुलीके मूलमें देवतीर्थ, कनिष्ठके मूलमें प्रजापत्यतीर्थ, अङ्गुलियोंके अग्रभागमें देवतीर्थ, तर्जनी अङ्गुलीके पिप्लीर्ष और हाथके मध्य-भागमें सौम्यतीर्थ। अथ उपाय। जो उपाय विविध प्रकार आचमन करता है, वह पवित्र हो जाता है और अत्यधिक अधिकारी हो जाता है। अत्यधिकारी विधि यह है कि हाथ-पैर कोकर पवित्र स्थानमें आसनको ऊपर पूर्व अथवा उत्तरकी ओर मुख करके बैठे। दाहिने हाथकी उंगली नीतर रखकर दोनों करण अंगुष्ठ रकी तथा शिखामें उंगली रखने और फिर उपाय एवं केनसे उचित जीतल एवं करनेसे आचमन करे। पहले-पहले, बात करते, इतर-उधर देखते हुए, जीतलने और अंगुष्ठपुत छोड़कर आचमन न करे।

विषय मुख्यतः दाहिना घरण दाहिने हाथसे और बायें घरण बाये हाथसे छूकर उनको प्रभाव करे। वेदके मन्त्रोंके समय आदिमें और अन्तमें ओम्कारका उच्चारण न करनेसे सब निष्कार हो जाता है। पहलेका पड़ा हुवा निष्कृत ॥ जल ॥ और आगेका विषय बाद नहीं होवे।

पूर्वादिभ्यो अत्रात्रागच्छते कुत्रात्रे अत्रान्नत्र ईदमत्र
 [] पक्षरा के तथा तीन बार प्रत्यक्षपक्षों स्थित होकर
 ओंकारका उच्चारण करें । प्रत्यक्षपक्षों तीनों के दोहरे प्रतिनिधियुक्त
 [] , उच्चार और सच्चार—इन तीन वर्णोंको तीनों के दोहरे
 निष्कारण [] , इनसे [] बनता है । पूर्वार्ध सः—ये
 महाहोतार्य और तपस्वीके तीन [] तीनों के दोहरे [] हैं ।
 इसलिये जो ब्राह्मण ओंकार तथा महाहोतार्यपूर्वक []
 तपस्वीका दोहो मंत्रपठनेमें जब करता है, वह वेदपठने
 पूर्वकसे प्राप्त करता है । और जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अपनी
 [] [] होते हैं, उनकी मातृ पुरुषोंमें निष्ठा होती है तथा
 पालनेवाली भी वे कल्याणके [] [] होते, इसलिये []
 कर्मका स्वाग नहीं करना चाहिये । प्रत्यक्ष, तीन महाहोतार्य और
 त्रिपदा तपस्वी—ये सब [] जो ब्रह्म (गणपती-मन्त्र)
 होता है, वह ब्रह्मका मुख है । जो [] तपस्वी-मन्त्रका
 शब्दा-भक्तिके [] तपस्वीक मन्त्र निकलनेसे विधिपूर्वक जब
 करता है, वह वायुकी तत्त्व वेगमन्त्र []
 स्वकृपको धारणकर ब्रह्मराजको प्राप्त करता है । एककार अं
 परब्रह्म है, प्राणात्मक परम तत्त्व है । सर्वज्ञ (गणपती) से
 ब्रह्मकर कोई मन्त्र नहीं है और बीजसे सब बोलने श्रेष्ठ है ।
 तपस्या, उषन, दान, पूजादि विचार्य स्वकृपाः नष्टकाम् हैं,
 किंतु प्रत्यक्ष-स्वरूप [] वह ओंकारका कभी चक्षु नहीं
 होता । विधिवशों (दर्श-पौर्णमास आदि) से चक्रवर्त्त
 (प्रणवादि-जप) सदा ही श्रेष्ठ है । उर्ध्वशु-जप (जिस जपमें
 केवल ओठ और जीभ चलते हैं, शब्द न सुनयी पड़े) तथा
 गुह्य और उर्ध्वशु-जपसे मनस-जप हजार गुण अधिक फल
 देनेवाला होता है । जो पञ्चवक्त्र (पितृधर्म, इन्द्र,
 अग्निवैशदेव) विधि-यज्ञके कारण है, वे सभी जप-वक्त्रों
 सोलहवीं कल्पके ब्रह्मका [] नहीं हैं । ब्रह्मपक्षों सब सिद्धि
 जपमें प्राप्त हो जाती है और कुछ करें या न करें, पर ब्रह्मपक्षों
 तपस्वी-जप अवश्य करना चाहिये ।

सूत्रोदयसे पूर्व जब तक दिक्काल देते रहे तभीसे आतः-
संघा अभ्यास कर देने चाहिये और सूर्योदयरपन्त गवत्री-जप
रहे। [] प्रका सूर्यस्तसे पहिले ही सायं-संध्या
अभ्यास [] और रात्रिके दिककाली देनातक गवत्री-जप करता
है। आतः-संघामे बड़े होकर [] करनेसे सुख पाए नष्ट
होते हैं और रात्रि-संघाके समय [] गवत्री-जप करनेसे
दिनके जप नष्ट होते हैं। इसलिये दोनों कालोंमें संघा
अभ्यास करने चाहिये। जो दोनों संघाओंमें नहीं करता उसे
सम्पूर्ण दिक्कालके विहित समझने चाहिए।
[] बाहर एकबल-स्वाध्याय, [] या नदी-सागर आदिके
सटपर गवत्रीजप जप करनेसे बहुत लाभ होता है। यमकोक
[] संघाके मन्त्र और जो शक्त-पञ्चादि निम्न-कर्मा हैं इनके
विधान अनुसार अतिशय ध्यान बिचार नहीं करना चाहिये
अर्थात् तिथिकर्मों के अनुसार नहीं होता।

समर्पण-संस्कारक शिष्य गुह्य
 रहे। कृपित करे, सब गुह्य सेवा करे
 करता रहे। सब कुछ जगते हुए भी जगत्
 रहे। अकारण कुर, सेवा करेकाल, ज्ञान देनेकाल, धर्मिक,
 विद्वान्, प्रवित्तमान्, उदार, सचुक्तमान तथा अपनी
 जगत्काल—वे दस अकारणके योग्य हैं। बिना पूर्ण विद्वान्से
 कुछ न करे, अकारणसे पूछनेवालेको कुछ न बताये। जो
 अनभिज्ञ ईश्वरसे पूछता और जो अनभिज्ञ ईश्वरसे उत्तर देता
 है, वे दोनों नकारके योग्य हैं और जगत्में सबके अधिपति
 हैं। जिसको कष्टसे बच या अर्थकी प्राप्ति न हो और वह कुछ
 सेवा-सुकृत् भी न करे, ऐसेको कभी न पढ़ाये, क्योंकि ऐसे
 विद्वान्को ही सब विद्या उद्योगमें जीव-वपनके समान निष्फल
 है। अधिष्ठित-देवतासे ज्ञानसे कहा—'मैं
 तुलसी हूँ, मेरी पालेकीति करो, मुझे ब्राह्मणों
 (अध्वर्यों) के मुखोंमें दोष-बुद्धि रखनेवालेको और द्वेष
 करनेवालेको न देख, इससे मैं रहूँगी। जो
 चित्तेन्द्रिय, कथित और प्रमादसे रहित हो उसे
 मुझे देख।'।

ये कुत्सुर्ग सङ्गठन विभिन्न वेद-शास्त्र आदिको रचने प्रमाण करता है, यह अति भव्यकर ऐसी नकलको प्राप्त होता है।
 ■ लैबिन्स, वैदिक ■ आध्यात्मिक ज्ञान दे उसे

कपिल-वर्षादारी, ज्विज्जाली, रोगिणी, रोमैले खीन, अखन छोटी (बौनी), बाकल तथा पिगल वर्णाली कन्धसे विवाह नहीं करना चाहिये । नक्षत्र, वृक्ष, नदी, श्लेषक, चर्मा, पत्नी, सर्प आदि और द्युस्मैके कम्पर जिसका नाम हो तथा ब्रह्मने नामादारी कन्धसे विवाह नहीं करना चाहिये । जिसके सब अङ्ग ठीक हों, सुन्दर नाम हो, इस या हाथीपै-सी गति हो, जो सुक्ष्म रोम, केस और दाँतोंवाली तथा कोमलवाली हो, ऐसी कन्धसे विवाह करना उत्तम होता है । जो तथा धन-व्ययितो अस्वीकृत समृद्ध सेनेपर जो इन दस कुलमें विवाहका सम्बन्ध स्थापित नहीं करना चाहिये—जो संसर्गसे खीन हो, जिसने पुरुष-संतति न होती हो, जो केटके पटन-कटनसे खीन हो, जिसमें खी-पुरुषोंकी करीबोंका बहुत लम्बे केस हो, जिसमें सर्प

(नवसरी), लव (एगवल्फ), फन्दीमि, मिरगी, लव और लव-जैसे रोग होते हैं।

ब्रह्मजीने ब्रह्मिणोंसे पुनः कहा—ये सब उत्तम लक्षण विराजमान हैं और जिसका आचरण भी अच्छा हो उस कन्यासे विवाह करना चाहिये। क्योंकि लक्ष्मीकी अपेक्षा उसके सहाचरको ही अधिक प्रशंसा कहा गया है। जो भी सुन्दर और तथा सुख लक्षणोंसे युक्त है, किन्तु यदि सहाचरसम्पन्न (उत्तम आचरणयुक्त) नहीं है तो वह प्रशंसा नहीं माननी गयी है। अतः विवाहमें आचरणको सर्वोच्चको अवश्य देखना चाहिये^१। वेदों में कहा गया है तथा महाभारतमें सम्पूर्ण युद्धकासे विवाह करनेपर श्रद्धा, बुद्धि तथा सत्कीर्ति प्राप्त होती है। (अष्टाध्याय ५)

गणतन्त्रसमये एवं धन-सम्पदन करनेकी

समान करण्ये विषयः-सम्बन्धनी प्रतीक्षा

राजा सत्ताधीशाने सुनानु धुमिले पृष्ठ—राजान् ।
 (सदाचार) की भी मैं सुनना चाहता हूँ, उसे आज बरतानेकी
 क्या करें ।

मुनि बोले—महामुनि ! आप विष्णुजीके शिष्योंके सद्वृत्त हैं, मैं भी आपकी अनुसरता हूँ, आप भवान्मूर्तिक सुनें। जब शनिवारके सद्वृत्तके विषयमें महाप्रभुसे मैं आपकी आज्ञा पाने लगे—मुनीवरों ! सर्वप्रथम गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेवाला व्यक्ति यथाविधि विद्याध्ययन करके सत्कर्मोंवाला बनकर उपासना करे, तदनन्तर सुन्दर लक्षणोंसे युक्त और सुशिक्षित कर्मजसे शास्त्रोक्त विधियोंसे विवाह करे। इसके पश्चात् गृहस्थाश्रम केवल है। इसीलिये धन-सम्पदन करनेके ही गृहस्थाश्रममें प्रवेश चाहिए। मनुष्यके लिये जो नरकस्थि फलता सहनी जरूरी है, विष्णु भगवंतें युष्माके तकफते हुए स्त्री-पुत्रोंको देकरा व्यक्त नहीं हैं। फते और पैसे-कुर्बाने कस पढ़ने, और दीन और धूसे स्त्री-पुत्रोंको देकरा किन्तु हृदय विदीर्ण नहीं होता, वे कलके लखन और कतोर हैं।

उन्के जीवनमें विचार है, उनके लिये तो मृत्यु ही अन्त है। अर्थात् ऐसे मूल्यवान् घर जाना ही श्रेष्ठ है। अतः अर्थात् अर्थहीन मूल्यवान् विचारों—(धर्म, अर्थ, कर्म—) पर विचार क्यों सम्भव है ? क्या सही-सुख न प्राप्त कर वातना ही योग्य है। सहीके विचार गृहस्थधर्म नहीं हो सकते। धन-हीन जीवन व्यतीतकीसे गृहस्थ बननेका अधिकार नहीं है। कुछ लोग सतानकी ही विषयवाचक लाचार भावता है अर्थात् संसारसे ही धर्म, अर्थ और कर्मकी प्राप्ति होती है, ऐसा समझते हैं; परन्तु नीतिविज्ञानादिक पक्ष अभिमत है कि धन और अर्थ सही—ये दोनों विचारों-साधनके हेतु हैं। धर्म ही दो प्रकारका कहा गया है—इष्ट धर्म और पूर्ण धर्म। पूर्ण धर्म धर्म और कर्म, कर्म, तत्त्व आदि धर्मपूर्ण धर्म है। ये दोनों धर्मों ही सम्भव होते हैं।

दरिद्रोंके कष्ट भी उससे लज्जा करते हैं और भनाइयोंके अनेक कष्ट हो जाते हैं। धन ही निर्वासन मूल है। धनवानमें मित्र, कुल, शील अनेक उत्तम गुण जा जाते हैं और निर्धनमें विद्वान् होते हुए भी वे गुण नष्ट हो जाते हैं। स्वस्व, शिल्प, धन्य और अन्य भी मिलने कर्म हैं। उन संस्कार तथा धर्मिक

भी बन ही है। धनके निम्न पुण्यका नाम आनन्द-
सन्धयत् स्वयं ही है।

पूर्वजन्ममें किये गये पुण्योंसे ही इस जन्ममें प्रभुत्व बनती
जाता है और धनसे पुण्य होता है। इसलिये धन ही
पुण्यका अन्योन्यस्वयं सम्बन्ध है अर्थात् वे एक दूसरेके कारण
हैं। धनसे घनार्थीन होता है और धनसे पुण्यजन होता है—

अन्यपुण्यविमुक्तः स्वयन्पुण्यकारिणेभ्यः ।
धनो धर्मोऽपि शान्तः सर्वकर्मसु ॥ १३॥
(अध्याय ६। १३)

—इसलिये विद्वान् मनुष्यको इसी रीतिसे विवर्ग-सम्बन्ध
करना चाहिये। औरहीन तथा निर्धन पुण्यजन विवर्ग-सम्बन्धमें
ही है। धन-धर्म-प्रत्यक्ष ही ज्ञान ही है।
अर्थार्जन अवश्य कर लेना चाहिये। न्यायोपयोगी धनकी प्राप्ति
होनेपर धार-परिमह करना चाहिये। अपने कुलमें अनुकूल,
धन, शिष्या आदिसे प्रसिद्ध, अभिहित, सुन्दर धन कर्मकी
साधनभूता है। धन ही चाहिये। धन ही विवर्ग
होता है, स्वयत्क पुण्य अर्थ-शरीर ही होता है। इसलिये
यथाक्रम ठीकत अवसर प्राप्त हो जानेपर विवर्ग करना चाहिये।
जैसे एक पट्टियेका रथ अथवा एक पैदावार पत्नी विवर्ग
सफल नहीं हो पता, वैसे ही जीवित पुण्य ही धनः
सभी धर्मपुण्यमें प्रसक्त है।

एकवाक्ये १३। धनोऽपि शान्तः ॥

विवाह-सम्बन्धी तात्त्विक नियमन, विवाहोद्योग कर्मकाके लक्षण, प्रकारके विवाह,
ब्रह्मचर्य, आर्यावर्त आदि ज्ञान देशोका वर्णन

ब्रह्मचरी बोलें—मुनिवरी । जो धन धनकी
अर्थार्त् स्थापना सात पीढ़ीके अन्तर्गतकी न हो
समान गौरवकी न हो, द्विजवर्गके विवाह-सम्बन्ध तथा
संतानोत्पादनके लिये प्रशस्त मान्य गयी है। जिस कर्मकाके
भई न हो और जिसके पित्रके सम्बन्धमें कोई कान्यारी न हो
ऐसी कन्यासे पुत्रिय-धर्मकी आशंकासे बुद्धिमान् पुत्रको
विवाह करना चाहिये। धर्मसम्बन्धके

सर्वकर्मसु ॥
(अध्याय ६। १३)

पत्नी-पतिव्रतों धर्म तथा अर्थ दोनोंमें बहुत होता
है और इससे जन्ममें ही उत्पन्न होती है, जन्मजन्तल
कर्मकाही नृवीय पुण्यार्थ ही प्राप्त हो जाता है, ऐसा विद्वानोंका
कथन है। विवाह-सम्बन्ध तीन प्रकारका होता है—नीच
कुलमें, समान कुलमें और उन्नत कुलमें। नीच कुलमें विवाह
करनेसे निम्न होती है। उन्नत कुलमेंलेके साथ विवाह करनेसे
वे करते हैं। अपनेसे बड़े धन धनका गम्य
विवाह-सम्बन्ध, नीचके साथ कन्या गये विवाह-सम्बन्धके
प्रकार समान ही होता है। इस कारण अपने समान कुलमें
विवाह करना चाहिये। समझी लोग विवाहित सम्बन्ध भी
नहीं मन्ते। यह कैसा ही सम्बन्ध होता है जैसे कोयल
ही है। प्रतिदिन कोयली अभिवृद्धि होती
ही और विवर्ग-सम्बन्धके समय भी प्राणतक भी देनेमें
ही है। उन्नत कुलमें उत्पन्न होता है। परंतु
ही धन उन्नत ही होती है जो कुल, वीर्य, विद्या और धन
समान होते हैं। मनुष्योंके और कृताङ्गताकी परीक्षा
ही होती है। उन्नत धन और पतनही समानके
साथ ही करत चाहिये, अपनेसे बड़े तथा छोटेके साथ नहीं।
ही होती है।

(अध्याय ६)

अपने-अपने धर्मकी कन्यासे विवाह करना श्रेष्ठ कहा गया है।
इस लोक और परलोकमें दिवाहितके
कर्म करनेवाले अन्न प्रवाहके वड़े गये हैं, जो
—
दैव, अर्थ, प्रत्यक्ष, अशुभ, गन्धर्व, राक्षस
तथा पैदाशः इनके स्त्री-सम्बन्धवाले उन्नत कुलके घरमें
स्वयं कुलकर उसे अर्पण और पूजित कर कन्या देना ब्रह्म-

१-असंख्य ॥ या महासंगोष्ठा य न विदुः ॥ प्रत्यक्ष द्विजवर्ग ॥ विदुः ॥ अध्याय ७। १, मनु ३। ५)
२-पिता जिसके पुत्रसे अपने ॥ ॥ करत ॥ उसे पुत्रिय ॥ है।

प्रकारके मसाले, लवण, अनेक प्रकारके सब्जियाँ, मिर्च, अचार आदि, अनेक प्रकारकी दालें, सब प्रकारके तेल, सुखा कण, विविध प्रकारके दूध-दहीसे बने पदार्थ और अनेक प्रकारके अर्घ्य आदि जो-जो भी बस्तु मिले । कर्माणि अर्पित हों, उन्हें अपनी सामर्थ्य अनुसार प्रत्यक्षपूर्वक पहलेसे ही संघट्ट करना चाहिये, जिससे सम्भवतः उन्हें दूषता न पड़े । जिस बस्तुकी भीमरसे अत्यन्तकटाव पड़े, उसे पहलेसे ही संघट्टमें रखना चाहिये । सुखे-गीले, गिरे, बिना पिसे तथा कठे और पके आदि पदार्थोंका अच्छी तरह हानि-हान प्रसारण होना चाहिये ।

पात्रादि नयी गुल, धारण, पुष्ट, अमृताकार और पीतकी सेवामें आलस्य न करे । पीतकी प्रत्यक्ष चर्च निकासे । देकर आदिक द्वारा पीनेसे हुए चर्च, माला तथा अनुष्णकेसे बह कभी न हो पाएँ करने और न इनके प्रत्यक्ष, अलस्य । पीतकी पीत । गौरी इत्यादि दूध निकालने कि । पीतकी न हो जाय । पीतकी पी बनाये । बर्ष, प्रारंभ । बस्तु । गौरी हो बार दुधना चाहिये, जैसा शत्रुओंमें एक ही बार दुध । करवाते, चाले आदिकसे करवातेके लिये रुपये अथवा अन्न । गौरीतक अन्नकेसे । अपने । न हो । बर्ष देकरा रहे, शत्रु ही । पीतकी ध्यान रहे । दूध दुधनेका समय पर दूध दुध रहा है या नहीं, क्योंकि दोहनेके कर्माणि । ही गौरीसे दुधना चाहिये । अन्नकेसे अधिकतर अन्न नहीं होता । जब रात आध रात, तब एक पीतकी । दूध नहीं निकालना चाहिये, उसे बर्षकेसे ही पीने देना चाहिये । फिर । पीतकी एक भस्म, तदनन्तर । पीतकीसे ही बस्तु और फिर तीन बस्तु दूध निकालना चाहिये । एक वा । धन बर्षकेसे लिये लक्षण होना चाहिये । यथासमय तिलकी सली, कोमल ही फल । तथा जल आदिकसे बर्षकेसे फलन करना चाहिये । । गर्भिणी, दूध देनेवाली, बर्षकेसे तथा बर्षकेसे—इन पीतकी गौरीका आस आदिकसे । बस्तु फलन-पोषण करते रहना चाहिये । किन्तु बर्षे नून तथा अधिक न संपादें । गौरी गलेमें पीटी अन्नकेसे चाहिये । एक तो पीटी गौरीसे गौरी प्रोष होती है, दूसरी उसके नामसे कोई जीव-जन्तु हरबार उसके चरम नहीं करते, इससे

ऊपर रहा भी होती है और गौ बर्षे चरमे जाय तो उसके बर्षसे उसे दूध भी जा सकता है । जिसके पशुओं और खेतीसे छिटा, लाल और बलसे युक्त, लवणकार बने चर्चोंवाले तथा पशुओंके सेगले रहित स्थानपर गौरीके रहनेके लिये गोश या गोश्रम बननी चाहिये । पूर्व-कार्यमें लगे संघट्टोंके लिये देन-करन और उनके फल । अनुरूप भोजन तथा वेतनका प्रवण करना चाहिये । सेत, बर्षान्न अथवा बर्षिक आदिकें जहाँ भी संघट्ट । लगे ही बर्षे बार-बार जाकर उनके कार्य । उनके लक्ष्योपयोगी जाकर करनी । उनसे जो भोज्य हो, अन्नका कार्य करना हो, उसका प्रवण रखकर करे और इसके लिये । आवास आदिकी औरोंसे विशेष व्यवस्था करे । समय-समयपर प्रथम प्रकारके लवण और कट-कुलके बीजोंका प्रोषण करे । व्यवस्था करने सुझाव कर दे ।

पात्रादिक नयी गुल, धारण, पुष्ट, अमृताकार और पीतकी सेवामें आलस्य न करे । पीतकी प्रत्यक्ष चर्च निकासे । देकर आदिक द्वारा पीनेसे हुए चर्च, माला तथा अनुष्णकेसे बह कभी न हो पाएँ करने और न इनके प्रत्यक्ष, अलस्य । पीतकी पीत । गौरी इत्यादि दूध निकालने कि । पीतकी न हो जाय । पीतकी पी बनाये । बर्ष, प्रारंभ । बस्तु । गौरी हो बार दुधना चाहिये, जैसा शत्रुओंमें एक ही बार दुध । करवाते, चाले आदिकसे करवातेके लिये रुपये अथवा अन्न । गौरीतक अन्नकेसे । अपने । न हो । बर्ष देकरा रहे, शत्रु ही । पीतकी ध्यान रहे । दूध दुधनेका समय पर दूध दुध रहा है या नहीं, क्योंकि दोहनेके कर्माणि । ही गौरीसे दुधना चाहिये । अन्नकेसे अधिकतर अन्न नहीं होता । जब रात आध रात, तब एक पीतकी । दूध नहीं निकालना चाहिये, उसे बर्षकेसे ही पीने देना चाहिये । फिर । पीतकी एक भस्म, तदनन्तर । पीतकीसे ही बस्तु और फिर तीन बस्तु दूध निकालना चाहिये । एक वा । धन बर्षकेसे लिये लक्षण होना चाहिये । यथासमय तिलकी सली, कोमल ही फल । तथा जल आदिकसे बर्षकेसे फलन करना चाहिये । । गर्भिणी, दूध देनेवाली, बर्षकेसे तथा बर्षकेसे—इन पीतकी गौरीका आस आदिकसे । बस्तु फलन-पोषण करते रहना चाहिये । किन्तु बर्षे नून तथा अधिक न संपादें । गौरी गलेमें पीटी अन्नकेसे चाहिये । एक तो पीटी गौरीसे गौरी प्रोष होती है, दूसरी उसके नामसे कोई जीव-जन्तु हरबार उसके चरम नहीं करते, इससे

ऊपर रहा भी होती है और गौ बर्षे चरमे जाय तो उसके बर्षसे उसे दूध भी जा सकता है । जिसके पशुओं और खेतीसे छिटा, लाल और बलसे युक्त, लवणकार बने चर्चोंवाले तथा पशुओंके सेगले रहित स्थानपर गौरीके रहनेके लिये गोश या गोश्रम बननी चाहिये । पूर्व-कार्यमें लगे संघट्टोंके लिये देन-करन और उनके फल । अनुरूप भोजन तथा वेतनका प्रवण करना चाहिये । सेत, बर्षान्न अथवा बर्षिक आदिकें जहाँ भी संघट्ट । लगे ही बर्षे बार-बार जाकर उनके कार्य । उनके लक्ष्योपयोगी जाकर करनी । उनसे जो भोज्य हो, अन्नका कार्य करना हो, उसका प्रवण रखकर करे और इसके लिये । आवास आदिकी औरोंसे विशेष व्यवस्था करे । समय-समयपर प्रथम प्रकारके लवण और कट-कुलके बीजोंका प्रोषण करे । व्यवस्था करने सुझाव कर दे ।

सभी अवस्थाओंमें परिके अनुसार ॥ गिर्य बहिरास कलक ॥ और पंक्ति सेकते सभी सुको तथा निवर्गके भी प्राप्त ॥
कलिये । इस प्रकार को गये की-लकते परीपति सम्पादक ॥ लेखी है ।

संस्था

(34) $R_0 - R_1$

पञ्चाङ्गपद्धतौका वर्णन ■■■ प्रत्य-उपकारणेके ■■■■■ आहारस्य नियमण एवं

प्रतिपक्ष, उपस्थित, अनुपस्थित और माहौल

सुनिने कहा—उम्ह !
लक्षण और सर्वत्र करने कहाही अपने लोभ,
तथा अविद्या भी अपने-अपने और चले गये।
अब गृहस्थोको कैसा आचरण करना चाहिये, उसे ही जानना
है, आप ध्यानपूर्वक सुने—

गृहस्थोक्तो वैवाहिक आश्रमं निवृत्त्युक्तं गृहस्थोक्तं
 चाहिये । गृहस्थोक्तं यहाँ जीव-हिताः दोनोके । स्वयं ई—
 ओषधी, पत्नी, पुत्रा, दास्य । स्वयं + इस
 हिता-दोनोंसे मुक्ति । लिये गृहस्थोक्तो पञ्चमस्तो—
 (१) विद्वत्, (२) विद्वत्, (३) दैव्यत्, (४) भूतवत्
 (५) अतिविद्वत्से विद्वत् । स्वयं स्वयं चाहिये ।

तथा अभ्यास करने का प्रयत्न है। निम्नलिखित
कर्म विद्युत् है। देवताओंके लिये कार्य देवता है।
प्रतिनिधित्व कर्म भूतयत् । तथा एवं अभ्यासके
करने अतिविद्युत् है—

अध्यापकः प्रकाशः विद्यार्थी शर्मा १


आरोग्य और कुटुम्ब कल्याण विभाग, भारत सरकार

(आदर्श ५३.१०)

—इस निष्कर्ष पर आता है कि गृहस्थ धर्म
रक्षक हुआ भी पञ्चसूत्र-टीकोसे लिप्त नहीं होता। यदि संन्यास

होते हुए भी वह इन चीजों पर ध्यान नहीं देता है। दशमक
वीर्य ही धर्म है।

■ ■ ■ ■ ■ **पूछा**—किस कारणसे घरेलू अविरोध नहीं होता, वह युक्तिके स्थान होता है—यह आपने कहा है, परंतु फिर वह देखवका आदि कार्यको क्यों करे ? और यदि ऐसा करता है तो देवता, पितर उससे कैसे संतुष्ट होंगे, **क्या** आप निराकरण करें ।

सुखानु सुखि कोरे—उत्तर । ॥॥ ब्राह्मणोंके घरमें
अग्निहोत्र न हो उसका उत्तर ब्रत, उपवास, विषम, दाय तथा
हज्यादी भुक्ति, कर्तव्य मन्दिरे होता है । कल देवताजी जो
तिथि को, उसमें उपवास करनेके के देवता उसपर विशेषरूपसे
प्रसाद करते हैं—

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

संज्ञा:

संकेतस्थिति **■** **■** **श्रीपति ।**

श्रीमान् देवानन्दचरणेभ्यो नमः ॥

(संख्या २६ | १३-१४)

तकाले ॥ सप्त-महर्षि ॥ अथ ॥

अवकाश-आवकाश [] विधि वापसले वसती, सिध्द-वसतीने
विधि वापसले वसतीने तथा उपवासले विधियोजना धर्षण करे,
विधि: उपवासले तथा विधि: उपवास कर संसाधनधर्षण

६-न कस्यि दुर्मयं नाम सुखं तत्र जगति । अन्तर्गतदुःखमेव ॥

पदविषयार्थप्रकाशकद्वयानुसारेण

अनुसूचकमनोवृत्तेः परोक्षे विद्यते कर्मेण । अतीतकर्मविशेषात् ॥ ३॥

टीसीआर, समीक्षात्मक, मध्येकाव्यकविते । टीसीआर, समीक्षात्मक, मध्येकाव्यकविते । टीसीआर, समीक्षात्मक, मध्येकाव्यकविते ।

एकरोपे  संयुक्त संसदीय प्रणाली परीक्षाएँ राज्य विद्यालय शिक्षण

(आध्यात्म २५। १४-१९, ३२)

[illegible]

वेदोंका ज्ञाता धर्मात्मा राजाके रूपमें पृथ्वीपर है। भक्तिपूर्वक ब्रह्मजीका पूजन न करनेका ही मनुष्य संसारमें भटकता है। जिस तरह मानवका श्मशानमें पड़ा होना है, वैसे ही यदि ब्रह्मजीमें मन रहे तो ऐसा करने में मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकता^१। ब्रह्मजीके जीवन में बलिदान मन्दिरका उद्धार करनेवाला प्राणी मुक्ति प्राप्त है। ब्रह्मजीके सामान में कोई देवता है न गुण, न ज्ञान और न कोई तप है।

अतिपरा आदि सभी विधियोंमें बलिपूर्वक पूजाकर पूर्णमासे दिन विशेषकरसे पूजा करनी चाहिये तथा पण्डा, भैरी आदि साजिश करनी चाहिये। इस प्रकार बलि करने पर्वोंमें करता है, वलने हजार सुगन्ध ब्रह्मलोके आनन्दका उपभोग करता है। गौके और कुशके जलसे वेदधर्मोंके द्वारा ब्रह्मजीसे कर्मान्नाश-ज्ञान काव्यता है। अन्य सौ गुण पुण्य इसके होता है। यह एक अविनाशिक शक्ति है। और वैश्यको कपिल गी रक्षा चाहिये। मुक्ति का कपिल गणको वृत्तसे अभ्यस्त करना चाहिये, वृत्तोंके विशेष गये होना है। अतिपराके दिन कोई एक बार भी धीसे ज्ञान को उसके पीछेका उद्धार हो है। सुवर्ण-वस्त्रोंसे अलंकृत दस हजार सवसा गौ वेदका ब्रह्मजीके देनेको जो पुण्य होता है, यही पुण्य ब्रह्मजीके दुग्धसे करनेसे होता है। एक बार भी दुग्धसे ब्रह्मजीको ज्ञान करनेवाला पुण्य भुक्त्वा विमानमें विराजमान हो ब्रह्मलोके पहुँच जाता है। इसीसे ज्ञान करनेपर मिष्णुलेखनी प्रति होती है। ज्ञानसे ज्ञान करनेपर वीरलोक (धरालोक) है। रससे ज्ञान करनेपर सूर्यलोकाधी प्रति होती है। सुखोपकसे ज्ञान करनेपर सभी पापोंसे मुक्त होकर ब्रह्मलोके जाता है। वलसे हुए जलसे ब्रह्मजीके ज्ञान करनेपर सदा तृप्त रहता है। सम्पूर्ण उसके बलिदान हो जाता है। सर्वधर्मियोंसे करनेपर ब्रह्मलोक, चन्दनके

जलसे कलशेय ब्रह्मलोक, कमलके पुष्प, नीलकमल, फल (लेख-खल), चने आदि सुगन्धित पुष्पोंसे ज्ञान ब्रह्मलोकेमें पूजित होता है। कपूर और अगरके जलसे ज्ञान करनेपर वा गायत्रीमन्त्रसे सौ बार जलमें अभिषेक कर उस जलसे ज्ञान करनेपर ब्रह्मलोकेकी प्रति होती है। नील जल का कपिल गणको धारणा दुग्धसे ज्ञान करनेसे ज्ञान करनेसे सभी पापोंसे मनुष्य मुक्त है। इन भक्तिपूर्वक पूजा में पूजासे अभ्येधयका प्राप्त होता है। मिष्टान्त अथवा अथवा वृत्तोंके वृत्तसे ब्रह्मजीको ज्ञान करनेपर सौगुना, चिरीके वृत्तसे लक्ष्मण फल होता है और सुवर्ण-कलशसे ज्ञान करनेपर संवत्सुर फल प्राप्त होता है। ब्रह्मजीके दर्शनसे ज्ञान प्राप्त करता है, वृत्तोंसे पूजन और पूजनसे धृतराज अभिषेक है। सभी और मानविक पाप कर्मान्नाश वह हो जाने है।

रक्त । इस विधिसे ज्ञान करनेपर भक्तिपूर्वक ब्रह्मजीकी पूजा करनी चाहिये—पवित्र वस्त्र पहनकर, अमनसर सम्पूर्ण न्यास करना और प्रथम चार हाथ विद्युत न्यासों एक अष्टादश-मन्त्रात्मक विधान को। उसके बाद भक्त बलिपुत्र होने और पवित्र रंगोंसे पारे। इस प्रकार चन्द्र-विमानपर गायत्रीके धर्मोंसे न्यास करे।

ब्रह्मजीके अक्षरोंद्वारा शरीरमें न्यास कर देवताके शरीरमें करना चाहिये। प्रणवपुत्र गणजी-मन्त्रोंके द्वारा अभिषेकित केसर, चन्दन, कपूर आदिसे ललकृत करने सभी पुण्यद्वन्द्वोंका मार्जन करना चाहिये। अनन्तर पूजा चाहिये। ललकृत उद्धार कर पीठस्थापन और प्रणवसे ही तेजःशक्त्य ब्रह्मजीका करना चाहिये। विराजमान, जल मुक्तोंसे पुत्र चरण विक्षयी सृष्टि करनेवाले श्रीब्रह्मजीका ध्यान कर पूजा करनी चाहिये। जो पुत्र प्रतिपदा दिन बलिपूर्वक गायत्रीमन्त्रसे ब्रह्मजीका पूजन करता है, वह विश्वव्यापक ब्रह्मलोकेमें निवास करता है।

(अध्याय १७)

न्यायाधीश विधान और न्यायिक सुधार प्रतिपदा की महिमा

सुपन्तु मुनिने कहा—हे राजा राजर्षिक !

महासमूह [] रथयात्राका उत्सव [] है। वह महालयेकको [] है। कार्तिकको पूर्णिमाको मुगापर्वी। अक्सरपर सांविधिक साथ महापर्वको रथले [] और [] रात-धुनिके सब रथयात्रा निकाले। विभिन्न उत्सवके [] महापर्वको रथपर बैठाने और रथके आगे महापर्वके [] पात महापर्व उत्सवकेपुष्पको [] पूजा करे। महापर्वके दृष्ट करित एवं पुष्पयात्राकर करधे। [] छत्रि आगरण करे। गुप्त-गौत [] उत्सव एवं विविध छत्रि महापर्वके सामान्य प्रदर्शन करे।

[illegible][illegible]

करके चढ़िये, अनन्तर उसे अपने स्थानपर ले आना । अगली करके ब्रह्मजीको उनके मन्दिरमें स्थापित करे । इस समयब्रह्मको राज करनेवाले, रक्षकसे सर्वोपेक्षारहित तथा इसका दर्शन करनेवाले सभी ब्रह्मलोकवासे प्राप्त करते हैं । तीसरेदिनके दिन ब्रह्मजीके मन्दिरमें दीप प्रज्वालित करनेवाला ब्रह्मलोकवासे प्राप्त करता है । दूसरा दिन प्रतिपदाको ब्रह्मजीकी करके लम्बे भी यज्ञ-आयुष्मन्से अलंकृत होना चाहिये । तिथि ब्रह्मजीको बहुत प्रिय है । इसी तिथिसे यज्ञिके शुभकर्म हुआ है । दिन शुभकर्म उत्पन्न-भोजन करनेसे विष्णुलोकवासी प्राप्ति होती है । चतुर्थी शुक्लपक्षप्रतिपदाके दिन (बोली कलत्रके दूसरे दिन) कलत्रालोक पर्यटन करनेसे सभी आधि-प्राधिपति प्राप्त होते हैं । उस दिन भी, ग्रहण आदिसे अलंकृतकर उनसे सम्बन्धित । रक्षण चाहिये तथा भोजन करना चाहिये । वैश्व, और कार्तिक इन तीनों भौमीयोंकी सम्बन्धित है, किन्तु इनमें कलत्रालोक प्रत्यक्ष विशेष श्रेष्ठ है । इस दिन किन्ना हुआ ज्ञान-दान आदि की गुणे फलको देता है । कलत्रालोक इसी दिन शुभ मित्र या, इसलिये प्रतिपदा श्रेष्ठ नहीं है । (अध्याय १८)

द्वितीया-वस्तुमये यद्वर्णि व्यवस्थेति । एवं एवमद्वितीया-वस्तुमये यद्विधा

सुमन्तु मुनि बोले—द्वितीय विपिके पकड़ने
इन्के सम्पुल मर्षे अश्विनीकुमारोको खोजन करत
राजाने पूछ—महाराज ! इन्के सम्पुल
अश्विनीकुमारोको ठहोने सोमरस पिल्लस ? कस खोजन-
कविनी तपस्याके प्रभावकी प्रकटतासे इन्द्र मुक्त भी बननेसे
समर्थ नही हए ॥

सुप्रसन्न मुनिने कथा—भक्त्युपासी पूर्वसंन्यासे गङ्गाके तटपर समाधिस्थ श्री श्वकन्मनि बहुत दिनोंसे तपस्यामें लगे थे ।

10. अपनी सेना और अपना पुराके [] साथ
लेकर महाशय प्रसीति गङ्गा-छायेके स्थिते वहाँ जाये। उन्होंने
अपने-अपने [] समीप [] गङ्गा-स्थान सम्पन्न
सिन्धु तथा देवनागरीके अन्तर्धाना की और विमर्शके लक्षण
सिन्धु। नदनकर सब से अपने नगरकी ओर जानेकी उद्यत हुए
तो उसी [] सभी सेनाएँ स्वाकुल हो गयीं और मृग
तथा शिकार उनके [] बँट हो गये, औरस्रोते कुछ भी
नहीं दिखयी दिख। सेनाकी वह दृश्य देखकर राजा प्रसन्न

१-अन्य पुराणों तथा साहित्यिक अंगुलि में उद्धृत होनेवाले [] में लिखकर या, जो उद्धृत होना चाहते हैं [] लिखें।
उदा: पुराणों में या [] को प्राप्त होता है—

यथायं नृ गण्य दण्ड्य नरी एवम्भूतः पूज्यः पूज्यतया अङ्गम एवम् एवम् तद्वत्तः वीर्यम् ।

तथा—

पुत्री हूँ। मेरे पति ध्वजन जबि यहाँ तपस्य कर रहे हैं, उन्होंने सेवाके लिये मैं यहाँ उनके समीप रहती हूँ। कहिये, आपसे क्या बन है ?

अश्विनीकुमारोंने कहा—इस देवताओंके अश्विनीकुमार हैं। इस वृद्ध पतिसे तुम्हें क्या सुख मिलेगा ? दोनोंमें किसी एकका वरण कर लो।

सुकन्याने कहा—देवताओं ! मैं देवता नहीं। मैं पतिव्रता हूँ और मैं प्रथमसे अनुकूल दित-रात अपने पतिकी सेवा करती हूँ।

अश्विनीकुमारोंने कहा—यदि ऐसी है तो तुम्हारे पतिदेवकी अपने उपकारों द्वारा अपने समान सदा एक सुन्दर बना दोगे और सब हम तीनों गङ्गाके समान सब निकले फिर जिसे तुम पतिव्रतमें मान करण चाहो कर लेना।

सुकन्याने कहा—मैं विधा अङ्गके पुत्र का हूँ।

अश्विनीकुमारोंने कहा—तुम अपने पतिसे पूरा आभे, मैं यहाँ अतीवसे रहने। सुकन्याने पतिव्रतपुत्रिका पास आकर उन्हें सम्पूर्ण सुख अश्विनीकुमारोंकी बात कहकर प्रथमसुनि सुकन्याके लेकर पास आये।

प्रथमसुनिने कहा—अश्विनीकुमारों ! आपकी हमें स्वीकार है। आप हमें उमान कथकन् कर है, फिर सुकन्या चाहे जिसे भरण करे। प्रथमसुनिने इसका कथकन् अश्विनीकुमार ध्वजनपुत्रिके लेकर गङ्गाकी किनारे निकल गये और कुछ देर बाद तीनों की बाहर निकले। सुकन्याने देखा कि वे तीनों तो बहुत रूप, समान अवस्था तथा समान वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत हैं, फिर इनमें मेरी प्रथमसुनि हैं ? मैं नहीं और आनन्द हैं। अश्विनीकुमारोंने प्रार्थना करने लगी।

सुकन्या बोली—देवी ! जलका मुख्य पतिदेवकी भी मैंने परित्याग नहीं किया। मैं अब तो आपकी कृपासे उनका रूप आपके समान सुन्दर हो गया है, फिर मैं कैसे उनका परित्याग कर सकती हूँ। मैं आपकी भरण हूँ, सुकन्या कृपा करीजिये।

सुकन्याने इस प्रार्थनासे अश्विनीकुमारों को हो गये उन्होंने देवताओंके किन्हींको भरण कर लिया। सुकन्याने देवताओं के पुत्रोंमें गिर नहीं रही है और



उनके वरण भूमिमें रास नहीं कर रहे हैं, किन्तु जो तीसरा पुत्र है, वह भूधिर का है और उसकी पत्नी भी गिर रही है। इस किन्हींको देवता सुकन्याने कर लिया। वे तीनों पुत्र हैं। मैं प्रथम प्रथमसुनि हूँ। तब उसने उनका वरण कर दिया। उसे समान अवस्थासे उसका पुत्र-वृद्ध होने लगे और देवता पुत्रोंमें लगे।

प्रथमसुनिने अश्विनीकुमारोंसे कहा—देवी ! आप लोगोंने सुकन्या बहुत उपकार किया है, जिसके फलस्वरूप मुझे उमान और मैं सब पति प्राप्त हुई। अब मैं आपलोगोंका भी भरण करूँ, प्रथमसुनि आपका भरण करनेवालेका नहीं करता, वह क्रमसे इसीस नरकमें जाता है, इसलिये आपका मैं भ्रम करूँ, अब लोग करें।

अश्विनीकुमारोंने प्रार्थना कहा—महामन् ! यदि आप इच्छा किए करना की चाहते हैं तो अन्य देवताओंकी तरह हमें भी वस्त्राभूषण दितवाइये। प्रथमसुनिने वह बात स्वीकार कर ली, फिर वे उन्हें भिक्षुकर अपनी पत्नी सुकन्याके साथ अपने आश्रममें ला गये।

यह सब सुनकर वृत्तान्त श्रुत हुआ तो वे

पुरुषोत्तम सुभासुभ लक्षण

राजा शास्त्रीयकने पूजा—विदेन्द्र ! खे और पुरुषके ओ लक्षण कार्त्तिकियने बन्दने के और जिस ब्रह्मके बनेबने आकर भगवान् दिखने समुद्रमे केक दिख । वह कार्त्तिकियको पुनः प्राप्त हुआ या नहीं ? इसे अब मुझे बताये ।

सुमन्तु मुनिने कहा—रघुदेन्द्र ! पुरुषका जैसा लक्षण कहा है, वैसा ही वह राजा है । ज्योमकेस भगवान्के सुपुत्र कार्त्तिकियने जब अपनी उल्लेखके द्वारा श्रीचपयलको विरोध किया, उस समय ब्रह्माजी उनपर प्रसन्न हो उठे । उन्होंने कार्त्तिकियसे कहा कि इस तुम्हारे ब्रह्मा हैं, जो चाहते वह हर मुझसे पाँच हरे । उस तेजस्वी कुमार ने नतमस्तक होकर उन्हें प्रणाम किया और कहा कि मैं । श्री-पुरुषके विषयमें मुझे अत्यधिक कौतूहल है । जो लक्षण-ग्रन्थ पहले मैंने बनाया था उसे तब देकरदेकरने आकर समुद्रमें केक दिख । वह मुझे मूल भी गया है । इसको सुननेकी भी इच्छा है । अब कृपा करते उसीका वर्णन करें ।

ब्रह्माजी बोले—तुम्हारे अच्छी बात चुड़ी है । समुद्रने जिस प्रकारसे इन लक्षणोंकी कला है, उसी प्रकार मैं तुम्हें सुना रहा हूँ । समुद्रने श्री-पुरुषके शयन, पथजन तथा अभय—तीन प्रकारके बतलावये हैं ।

शुभाशुभ लक्षण देखनेवालेको कहिये । शयन मुहूर्तमें मध्याह्नके पूर्व पुरुषके लक्षणोंको देखे । ब्रह्मसमूह, श्रवणगति, सम्पूर्ण अन्न, दात, केरा, नख, दाढ़ी-शूकरलक्षण देखना कहिये । पहले आयुकी परीक्षा करनेके ही लक्षण बताने कहिये । अबु कम हो तो सभी लक्षण व्यर्थ है । अपनी अनुलिखितोंसे जो पुरुष एक ही जगह कभी बार हाथ करत अनुल्लभ होता है, वह उत्तम होता है । अनुल्लभ होनेपर और नख अनुल्लभ होनेपर अथय मन्द जाता है—लेखके प्रमाणका यही लक्षण अवश्य समुद्रने कहा है ।

कुम्भर । अब मैं पुरुषके अज्ञेय लक्षण कहता हूँ । जिसका पैर कोवाल, मांसल, रक्तवर्ण, शिथ, ठंडा, पश्चिमेसे रहित और नाड़ियोंसे व्याप्त न हो अर्थात् नाड़ियों दिखनी नहीं पड़ती हीं तो वह पुरुष राजा होता है । जिसके पैरके तलवोंमें अंकुशका चिह्न हो, वह सदा सुखी रहता है । बालुके समान

ऊँचे, कमलके सदृश कोमल और परस्पर मिली हुई अनुलिखितोंवाला, सुन्दर शरीर—एकसे युक्त, निगूढ टकनेवाला, सदा तर्प खनेवाला, प्रसन्नदृश्य, रक्तवर्णिक नखोंसे अलंकृत कर्णवाला पुरुष उत्तम होता है । सूर्यके समान जगह, सदैव नखोंसे युक्त, टेढ़ी-झड़ी नाड़ियोंसे व्याप्त, विरल अनुलिखितोंसे युक्त कर्णवाले पुरुष दक्षिण और दुःखी होते हैं । जिसका कर्ण आगमें जलभी गयी मिट्टीके समान वर्णका होता है, करनेवाला, पीले कर्णवाला अगम्य-गमन करनेवाला, कुम्भजवर्णक कर्णवाला पक्षपात करनेवाला तथा केवलकिक कर्णवाला अथय पदार्थ भक्षण करनेवाला होता है । पुरुषके पीठके अंगुठे मोटे होते हैं वे भ्रातृहीन होते हैं । जिसका अंगुठेवाले सदा पैदल चलनेवाले और दुःखी होते हैं । बिच्छे, जिसका तथा टूटे हुए अंगुठेवाले अतिशय निम्नित । देहे, छोटे और पटे अंगुठेवाले भोगते हैं । पुरुषके तर्जनी अंगुली अंगुठेसे बड़ी हो उसको श्री-सुख प्राप्त होता है । बहिष्ठा अंगुलीके बड़ी होनेपर स्वर्णकी प्राप्ति होती है । चपटी, विरल, सूखी अंगुली होनेपर पुत्र होता है और दुःख भोगता है । ठाठ और मोटा होनेपर दुःखी है । लम्बा नख होनेपर पुत्र प्रीत्यहित और कामनीयप्रति होता है । रोमसे युक्त जंभा होता है । जंघे छोटे होनेपर ऐश्वर्य प्राप्त होता है, किन्तु कल्पने रहत है । मुगके समान जंघा होनेपर राजा होता है । लंबी, मोटी तथा मांसल जंघावाला ऐश्वर्य प्राप्त करता है । शिष्ट तथा अथके संधन जंघावाला धनवान् होता है । जिसके भूटे मोसरहित होते हैं, वह विदेशमें मरता है, बिच्छू जानु होनेपर दक्षिण होता है । नीचे भूटने होनेपर श्री-शित होता है । मांसल जानु होनेपर राजा होता है । हंस, बाल पक्षी, सुक, सु, सिंह, हाथी तथा अन्य श्रेष्ठ वस्तु-वस्तुवर्णिक नख होनेपर व्यक्ति भ्रातृव्यान् होता है । ये अवश्य लक्षणके कथन हैं, इनमें संदेह नहीं है ।

पुरुषका रक्त कमलके समान होता है वह धनवान् होता है । कुछ खल और कुछ करण शरीरवाला मनुष्य अथय और कल्पकीने करनेवाला होता है । जिस पुरुषका रक्त शून्के समान रक्त और शिथ होता है, वह सदा दीनोक्त राजा

दाँत धरम्बर और छेत होते हैं, वह उत्तम की होती है। पेड़पत्ते समान कुक्षिवाले एक ही पुत्र उत्पन्न और वह पुत्र राजा होता है। इसके समान मृदु वचन बोलनेवाले, प्रह्लादके समान विष्णुल कर्णवाली की धन-धान्यसे सम्पन्न होते हैं, उसे आठ पुत्र होते हैं। जिस कीकें लम्बे वदन, सुन्दर नक और गौर घनुपके सम्मान देवों होती हैं, वह अतिशय सुखका भोग करती है। तन्वी, इयामवर्णा, मधुर भाँषणी, गुणोंके सम्मान अतिशय स्वच्छ दाँतवाली, विराघ अङ्गोंसे सम्पन्न की अतिशय ऐश्वर्यको प्राप्त करती है। विरालीर्ण जंगमोकरले, लक्षण मध्यभागवाली, विद्राक की रानी होती है। जिस कीकें वदन झलनर, ब्राह्मणे, कान्के ल कलेसर विरा लक्षण मस होता है, उस कीकें प्रथम पुत्र उत्पन्न होता है। जिस कीकें पैर रत्नवर्ण हो, सेहने बहुत कीकें न हो, छोटी एड़ी हो, परसस मिली हुई सुन्दर आँगुलि की, हो—ऐसी की अत्यन्त सुख भोग करती है। जिसकी पैर बड़े-बड़े हों, सभी अङ्गोंमें रोम हो, छोटे और घेरे हाथ हो, वह दासी होती है। जिस कीकें पैर उत्कट हो, मुस विकुल हो, उत्परके ओठके ऊपर रोम हैं वह शीघ्र अपने पतिको मार देती है। जो की पवित्र, पतिव्रत, देवता, गुरु और भ्रातृमोकी भक्त होती है, वह मानुषी बढलती है। जिस की करनेवाली, सुगन्धित द्रव्य लागातेवाली, मधुर वचन बोलनेवाली, धैर्य धारणवाली, कम सोनेवाली और सदा पवित्र रहनेवाली की

देवता होती है। गुणरूपसे खप करनेवाली, अपने पापको क्षिप्रमेवले, अपने हृदयके अभिप्रायको आगे न करनेवाली मन्त्री-संज्ञक होती है। कभी हँसनेवाली, करनेवाली, कभी क्रोध करनेवाली, कभी प्रसन्न रहनेवाली पुरुषोंके मध्य रहनेवाली की गर्दभी-श्रेणीकी होती है। पति और कान्यको द्वारा कहे गये हितकारी वचनको न करनेवाले, अपने हृदयके अनुसार विचार करनेवाली की आकृति कही जाती है। बहुत खानेवाली, बहुत खोलेवाली, कोटे खोलेवाली, पतिसे मारनेवाली की राक्षसी-संज्ञक है।, आकार और रूपसे उचित, सदा मलिन, अतिशय धनकर की विराली बढलती है। अतिशय बहान स्वयमवाली, नेत्रोंवाली, इधर-उधर देखनेवाली, मानवी-संज्ञक होती है। पञ्चभुजी, मदरा सकन करनेवाली, रत्नवर्णक गळोंवाली, गुण लक्षणोंसे पुत्र द्वाच-पैराकी की विराजरी-श्रेणीकी होती है। लीन, मुद्र, कभी अति बाटोके शब्दोंको सुनने तथा पुकी लुगीयन द्रव्योंमें अभिरुचि रखनेवाली काशी-श्रेणीकी है।

सुमनु मुनिने कहा—उभय। बहानी इस प्रकार की और पुरुषोंके स्थापितकीकेंयको भक्तवत्त अपने भेषको कहे गये।

(अध्याय २८)

विनायक-पूजाका

प्रतापीकने कहा—मुने! अब आप मुझे भगवन् गणेशकी आराधनाके बतलावें।

सुमनु मुनि बोले—उभय। भगवन् गणेशकी अराधनामें किसी विधि, नक्षत्र या उपवासकीसे अनेक यहाँ लेती। जिस की दिन ब्रह्म-धर्मपुर्वक भगवन् गणेशकी पूजा की जाय तो वह अपेक्ष फलको देनेवाली होती है। कल्प-वेदसे अलग-अलग करुओंसे गणपतिकी मूर्ति बनाकर उसकी पूजा मंत्रोवाञ्छित फलकी होती है। 'प्रहाकराण्य' विज्ञे, प्रह्लादपूजाय धीमहि, तज्जे दन्तिः प्रलोदयात्।'—गणेश-गायत्री है। इसका उप

कहिये।

सुत्र पक्षकी सतुर्कीके उपवास कर जो भगवन् गणेशका पूजन करना है, की सही कार्य सिद्ध हो आते और सभी अनिष्ट दूर हो जाते हैं। श्रीगणेशजीके अनुकूल होनेसे सभी वस्तु अनुकूल हो जात है। जिसपर एकदस भगवन् गणपति संतुष्ट होते हैं, उसपर देवता, पिता, मनुष्य उचित सखे रहते हैं। इसलिये 'सम्पूर्ण विघ्नोंको निकल करनेके लिये ब्रह्म-धर्मपुर्वक गणेशजीकी करनी कहिये।

(अध्याय २९-३०)

१-कल्पगमे प्राम्निग गणेश गायत्रीमें 'एकदन्त' कह है।

२-एकदले अराधने गायत्री तुष्टिफलने विनृत्यपूजाका

करी सुर्वक फल

(अध्याय ३०।८)

**चतुर्थी-कल्पमें दिवा, शान्त तथा सुखा—तीन प्रकारकी
चतुर्थीका फल और उनका व्रत-विधान**

सुपन्न मुनिने कहा—उक्तं ! चतुर्थी तिथि [] प्रकारकी होती है—दिवा, रात्रि और सुखा । अब मैं इनका [] कहता हूँ, उसे सुनें—

चातुर्थी नामकी शुद्ध चतुर्थीका रूप 'दिवा' है, इस दिन जो खान, पान, उपवास, जप आदि उत्कर्म किए जाते हैं, वह गणपतिसे प्रसादसे ही गुना हो जाते हैं । इस चतुर्थीको गुड़, लवण और पुष्पदान करना चाहिये, यह शुभकर माना गया है और गुड़के अणु (माल्युआ) से कलशमें भोजन करना चाहिये तथा इनकी पूजा करे । चाहिये । इस दिन जो स्त्री अपने हाथ और समुद्रको गुड़के फूल तथा लवण फूल, किराणियों है वह गणपतिसे अनुग्रहसे सौभाग्यकी होती है । पतिकी [] करनेवाली [] विशेषकरसे इस चतुर्थीका व्रत करे और गणेशजीकी पूजा करे । चतुर्थी ! यह [] चतुर्थीका नियम है ।

अब मैं नामकी शुद्ध चतुर्थीको 'रात्रि' कहता हूँ । यह रात्रि तिथि दिवा शान्त भोजन करनेके कथन 'इत्यर्थ' [] गयी है । इस दिन बिना हुए ज्ञान-दानार्थ [] गणेशजीकी कृपासे हजार गुना फलदायक हो जाते हैं । इस रात्रि नामकी चतुर्थी तिथिसे उपवास कर गणेशजीकी पूजा तथा हवन करे और लवण, गुड़, शक्कर [] गुड़के फूल [] दे । विशेषकरसे किसी अपने समुद्र आदि फूल करनेका पूजन करे एवं उन्हें भोजन कराये । इस व्रतके करनेसे अनाथ सौभाग्यकी प्राप्ति होती है, समस्त विघ्न दूर होते [] और गणेशजीकी कृपा प्राप्त होती है ।

किन्हीं भी महीनेके चौपदारपुत्र शुद्ध चतुर्थीको 'सुखा' कहते हैं । यह व्रत किन्हींको सौभाग्य, लवण रूप और सुख देनेवाला है । भगवान् शत्रु एवं पाप फलकी संपूर्ण हानिसे भूमिद्वारा स्वर्गकी मङ्गलकी उत्पत्ति हुई । भूमिद्वारा पुत्र होनेसे वह भोग कहलगा और कुत्र, रक्त, खोर, अङ्गुष्ठ आदि नामोंसे प्रसिद्ध हुआ । वह शरीरके अङ्गोंको रक्त करनेकर तथा सौभाग्य वांछित देनेवाला है, इसीलिये अङ्गुष्ठ कहलगा । जो पुरुष अथवा स्त्री चौपदारपुत्र शुद्ध चतुर्थीको उपवास [] भक्तिपूर्वक प्रथम गणेशजीका, तदनन्तर

रक्त चन्दन, रक्त पुष्प आदिसे चौपदार पूजन करते हैं, उन्हें सौभाग्य और उत्तम रूप-सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है ।

प्रथम संकल्पकर खान करे, अनन्तर गणेश-स्मरणपूर्वक हाथों गुड़ मृत्तिका लेकर इस मन्त्रको पढ़े—

ॐ [] पूर्वं शुभोत्कर्षात् [] ।
मन्त्रार्थे यत् [] पूर्वादिभिः ॥
(अष्टाध्याय ३१।२४)

इसके [] भूमिद्वारा गङ्गाजलसे [] सुखी रखने करे, तदनन्तर अपने सिर आदि अङ्गोंमें लगाये और फिर जलके [] हाथ होकर इस मन्त्रको पढ़कर मन्त्रकार बने—
मन्त्रार्थे वेदिः [] देवतामूर्तिकात् ।
वेदिकावेदिभिः [] मन्त्रार्थे यत् [] ॥
(अष्टाध्याय ३१।२५)

अनन्तर सभी [] गणेश, सरस्वती, इन्द्राणी और [] खान किया—इस प्रकार भाचना करनी हुआ [] भाग्यकर खान करे, फिर पवित्र होकर घरमें आकर दुर्गा, [] इन्द्राणी तथा गौरी स्पर्श करे । इनके स्पर्श करनेके मत इस प्रकार है—

पूर्वं स्पर्शं करणेन यत्
तत् सुखं भवति यत् [] पवित्रा ॥
पवित्रा यत् [] पवित्रा ॥
(अष्टाध्याय ३१।३१-३२)

इसी स्पर्श करनेका []
पवित्रा पवित्रा तत् वाश्वती प्रसिद्धा भवति ।
यत् [] यत् [] प्रसिद्धा ॥
(अष्टाध्याय ३१।३३)

पवित्र-यत् []
नेत्रस्य पवित्रा दुर्गा दुर्गा दुर्गा पवित्रा ॥
यत् [] यत् [] ॥
(अष्टाध्याय ३१।३४)

यत् []
पवित्रा पवित्रा तत् वाश्वती प्रसिद्धा भवति ।
यत् [] यत् [] ॥
(अष्टाध्याय ३१।३५)

ब्रह्मापूर्वक पहले गौरी प्रदक्षिण कर उपर्युक्त मन्त्रों परे और गौरी स्पर्श करे। जो गौरी प्रदक्षिण करता है, उसे सम्पूर्ण पृथ्वीकी प्रदक्षिणकता फल [] होता है।

इस प्रकार इनको स्पर्शकर, हाथ-पैर घेकर, अङ्गुलीय सैतकर आश्रयन करे। अनन्तर लौहर (खैर) की संधिपत्राओंसे अग्नि प्रज्वलित कर, घृत, दुग्ध, मधु, शिरा तथा विविध पक्ष्य पदार्थोंसे मन्त्र पढ़ते हुए इवन करे। अर्द्धाति इन मन्त्रोंसे दे—ॐ ह्रींकार [] ॐ ह्रींकार [] ॐ शोणमुत्पलपद्मनाभ [] ॐ कुम्भार [] ॐ ललिताकुम्भार [] तथा ॐ लोहिताकुम्भार []। इन मन्त्रोंसे १०८ या अपनी शक्तिसे अनुसार अर्द्धाति दे। अनन्तर सुवर्ण, चाँदी, चन्दन या देवदारुके कण्टकी मङ्गलकी मूर्ति [] तबि अथवा चाँदीके पात्रमें उसे [] करे। खैर, कुम्भार, लालकन्दन, लाल पुष्प, मैत्रेय अर्द्धाति उपर्युक्त पूजा करे अथवा अपनी शक्तिसे अनुसार पूजा करे। अथवा तब, मुनिवध या बामिसे [] पात्रमें कुम्भार, चन्दन [] अर्द्धातकन पूजा करे। 'अतिपूर्वक-१' इत्यादि वैदिक मन्त्रोंसे

सभी उपचारात्मक समर्पित कर वह मूर्ति ब्राह्मणको दे दे और कण्टकीकी खैर, दुग्ध, चावल, रोई, गुड़ आदि वस्तु भी ब्राह्मणको दे। धन खर्चकर कुम्भारता नहीं करनी चाहिये, क्योंकि केन्दुली करनेसे फल नहीं प्राप्त होता।

इस प्रकार बार बार भौमपुत्र चतुर्भीषा व्रतकर ब्रह्मा-पूर्वक दस अक्षय पत्र लेले खेनेकी मङ्गल और गङ्गा [] मूर्ति बरकवने। उसे बोरस पल या दस पलके सोने, चाँदी अथवा लाल अर्द्धाति पात्रमें भीतिपूर्वक स्थापित करे। सभी उपचारात्मक पूजा करनेके बाद दक्षिणके साथ सराय ब्राह्मणको उसे दे, इसमें इस ब्राह्मण सम्पूर्ण फल प्राप्त होता है। [] इस प्रकार इस उदय तिथिको [] करे। इस दिन जो घात करता है, वह पञ्चपाक समान कर्त्तव्यम्, सूर्यके समान तेजस्वी एवं बभ्रवन् तथा वायुके समान बलवान् होता है और अन्तमें महागलार्द्धाति अनुग्रहमें जीवन्मुक्तमें निवास करता है। [] शिवके ब्राह्मणको जो क्वीत भीतिपूर्वक पड़ता-सुनता है, वह महापतकदर्शनं मुक्त होकर श्रेष्ठ सम्पत्तियोंको प्राप्त करता है। (अध्याय ११)

पञ्चमी-कल्पका आरम्भ, नागपञ्चमीकी कथा, पञ्चमी-व्रतका [] और फल

सुमन्त्र मुनि बोले—राजन् ! अब मैं पञ्चमी-कल्पका वर्णन करता हूँ। पञ्चमी तिथि नगोंको असफल [] है और उन्हें आनन्द देनेवाली है। इस दिन नागलोकमें विविध उत्सव होता है। पञ्चमी तिथिकी जो क्वीत नगोंको दुष्प्रे खान करता [], उसके कुलमें वामुकि, तक्षक, कर्त्तिक, र्वाणधर, ऐरणत, भुतण्ट, कर्त्तविक तथा धनञ्जय—ये सभी भड़े-भड़े नाग अथवा दान देते हैं—उसके कुलमें सर्वथा [] नहीं []। बार माताके शापसे नागलोक जलने लग गया था। इसीलिसे उस दाहकी त्रधाको दूर करनेके लिसे पञ्चमीको नागके दुधसे नागोंको आज भी लोग खान करते हैं, इससे सर्प-धन्य नहीं रहता।

राजाने पूछा—भगवान् ! नागलोकने नगोंको क्यों झप दिया था और फिर वे कैसे बच गये ? इसका आज विस्तारपूर्वक वर्णन करे।

[] मुनिने कहा—एक बार राक्षसों और देवताओं

[] मनुष्यको धन्य किया। [] समय मनुष्यसे भस्मराज कोम उभे [] मन्त्र [] निकाल, उसे देखकर [] कहुने अपनी रणनी (सीत) विनतासे कहा कि देखो, यह अश्व शतवर्णका है, परंतु इसके बाल काले हीन पड़ने हैं। तब विनताने [] कि [] यह अश्व सर्वश्रेष्ठ [] न बाल [] और न माल। यह सुनकर कहुने कहा—'मेरे [] सर्व करो कि यदि मैं इस मन्त्रके बालोंको कुम्भारपूर्वक दिला दूँ तो तुम मेरी दाम्नी हो जाओगी और यदि नहीं दिला सको तो मैं कुम्भार दासी हो जाऊँगी।' [] यह शर्त स्वीकार कर ली। दोनों ब्रह्म [] हुई अपने-अपने स्थानको [] []। कहुने अपने पुत्र नगोंको मुलकर [] वृत्तन्त उन्हें मुत्र दिष्ट और कहा कि 'पुत्रो ! तुम मन्त्रके बालके [] मुन्त्र लेकर उभैः क्वीत शरीरमें लिपट जाओ, जिससे वह कुम्भारपूर्वक दिखने देने लगे। तबि मैं अपनी सीत विनताको भीतिकर उसे अपनी दासी बना सकूँ।' माताके इस

वचनको सुनकर नगोंने कहा—‘हाँ ! यह क्षण ही हमसे
नष्ट करेगा, चाहे तुम्हारे जीत हो या हार । छत्रमे जोड़कर बहुत
कड़ा अघर्ष है ।’ पुरोहित यह वचन सुनकर कहने कुछ लेकर
कहा—‘तुमलोग मंत्री अजब नहीं मानते थे, इसलिये मैं तुम्हें
[] देती हूँ कि ‘पाण्डवोंके शत्रुमें उत्पन्न राज [] जब
सर्व-सम करेगा, तब उस यज्ञमें तुम सभी अङ्गोंमें बल
जाओगे ।’ इतना कहकर बहुत धूप हो गयी । रागलक्ष्मी
एक सुनकर बहुत धक्काये और मासुकीको खपने लेकर
ब्रह्माजीके पास पहुँचे तथा ब्रह्माजीको अपना मत बताना
सुनाया । इसपर ब्रह्माजीने कहा कि वामदे ! निष्ठा मत करो ।
[] तुम्हें—‘वायव्य-वैश्वेय बहुत बड़ा मन्त्री उत्पन्न
नामक ब्राह्मण उत्पन्न होगा । उसके साथ तुम अपने उत्पन्न
नामवाली बहिनका किस्म कर देना और वह जो भी करे,
उसका वचन स्वीकार [] । उसे अस्त्रिक नामक ब्रह्मण
पुत्र उत्पन्न होगा, [] मनमेंवफाके सर्वपक्षमें लोकेश और
तुमलोगोंकी [] करेगा । [] इस वचनको सुनकर
नागराज वामदे आदि अनिष्टप्रपन्न हुए, उन्हें [] का
अपने लोकमें भ्रम गये ;

सुमन्तु पृथिवी इस कथाको सुनाकर कहा—‘राजन् !
यह सब तुम्हारे पिता गजा जनमेजयने किया था । यही बात
श्रीकृष्णभगवान्ने भी युधिष्ठिरसे कही थी कि ‘राजन् ! अजब
ही वर्षके बाद सर्पयज्ञ होगा, जिसमें बड़े-बड़े विषय और दुष्ट
नाग नष्ट हो जावेंगे । करोड़ों नग अब अङ्गोंमें दग्ध होने लगेंगे,
तब आसीक नामक ब्राह्मण सर्पयज्ञ रोककर नागोंकी रक्षा
करेगा ।’ ब्रह्माजीने पञ्चमीके दिन यह दिया था और अस्त्रिक
पुत्रने पञ्चमीको ही नागोंकी रक्षा की थी, उमा : पञ्चमी तिथि
नागोंकी बहुत प्रिय है’ ।

पञ्चमीके दिन नागोंकी पूजाकर यह प्रार्थना करनी चाहिये
कि जो नाग पृथ्वीमें, आकाशमें, ज्वरमें, सूर्यकी किरणोंमें,
सरोवरमें, वाणी, कृप, [] आदिमें रहते हैं, वे सब हमपर
[] हो, हम उनकी चर-चार नमस्कार करते हैं ।

सर्व नामः प्रीयतां ये ये वेदितुं पृथिवीतले ॥
ये च ह्येतिवर्गवित्ता येऽन्तरे दिवि संविताः ।
ये नदीषु यज्ञाश्च ये सारस्वतिगमिनः ।
ये च क्षत्रीयकामेषु तेषु सर्वेषु ये नमः ॥
(आश्वय ३२ । ३२-३४)

[] नागोंको विस्मृत कर ब्राह्मणोंको भोजन
करना चाहिये और स्वयं अपने कुटुम्बिकों साथ भोजन
करना चाहिये । [] योद्धा भोजन करना चाहिये, अनन्तर
[] अभिषेकके अनुसार भोजन करे ।
इस प्रकार निष्कान्तार जो पञ्चमीको नागोंका पूजन
करना है, वह श्रेष्ठ विषयमें बैठकर नागलोकको जाता है और
वहमें उत्पन्नहुए बहुत पञ्चमी, योगर्हित तथा प्रतापी राजा
[] हैं । इसलिये ही, और तथा गृण्यसे [] नागोंकी पूजा
[] चाहिये ।

राजाने पूजा—‘पाण्डव ! [] सर्वके कान्तेसे
वर्तकल्प गद्यत किम् गर्जिते [] होता [] और जिसके
पद्म-स्निग्ध, भार्य, [] अदि सर्वके कान्तेमें मो हों, उनके
उद्धारके [] कर्म-सा व्रत, दान [] उपवास []
चाहिये, वह अन्न कर्माये ।

सुमन्तु पृथिवी कहा—‘राजन् । सर्वके कान्तेसे जो पारता
है, वह आश्वयिजसे प्राप्त होता है तथा निर्धन सर्व होता है और
जिसके प्राप्त-पितृ आदि सर्वके कान्तेसे मरते हैं, वह उनकी
सहस्रके लिये भाद्रपदके शुक्ल पक्षकी पञ्चमी तिथिको उपवास
कर नागोंकी पूजा करे’ । यह तिथि ब्रह्मपुण्या कही गयी है ।
इस प्रकार [] पार्वतीका चतुर्थी तिथिके दिन एक बार
[] करना चाहिये और पञ्चमीको अनन्तर नागोंकी पूजा
करनी चाहिये । पृथ्वीपर नागोंका चित्र अङ्कित [] अथवा
खेना, कछु या मिट्टीका गोल बनाकर पञ्चमीके दिन करवीर,
कामल, चमेली अदि पुष्प, गन्ध, धूप और विविध नैवेद्यसे
उनको पूजा कर पौ, लौ और लड्डू उलय पाँच ब्राह्मणोंको
भित्तये । अन्न, कसुकि, शंख, पद्म, चन्दन, कर्पूरिक,

१-पञ्चमी [] भोजन ब्रह्म श्रेष्ठ विषय वेदितुम् । अर्थात् [] पञ्चमीको [] करना []
नागानामन्तरको [] है [] []
(आश्वय ३२ । ३२)
२-वर्तकल्पमें नागपञ्चमी नमः [] पञ्चमी [] उनके निष्कान्त-अपने अनुसार [] पञ्चमीको करनी है । यदि ना तो [] अनुष्ठान है
या वस्तुनानये कभी पाण्डवोंमें नागपञ्चमी पञ्चमी जाती गयी होती ।

अंशतर, धृतिपाद, प्रसन्नपाल, कर्तव्य, तपक और विगल—इन बारह जगोकी बारह महोगोमे क्रमशः पूजा करें :

इस प्रकार वर्षपर्यन्त बात ऐसे पूजककर सोनेका करनी चाहिये : बहुतसे ब्राह्मणोंको भोग्यन करन चाहिये । विद्वान् ब्राह्मणको सोनेका जग बनाकर उसे देना चाहिये । यह स्थापनकी विधि है । राजन् ! आपके पिता जन्मेजयने भी अपने पिता परीक्षितके उद्धारके लिये यह बात किया था और सोनेका बहुत भारी जग तथा अनेक गेरू बालगोमे दो थीं । ऐसा करनेपर वे पितृ-भ्राजने मुक्त हुए थे और परीक्षितने भी

उक्त स्नेहको प्राप्त किया था । आप भी सोनेका जग बनकर उनकी पूजकर उन्हें ब्राह्मणकी दान करें, इससे आप भी पितृ-भ्राजने मुक्त हो जायेंगे । राजन् ! जो कोई भी इस जगपद्धति-मतको करेगा, साँपसे डैसे जानेपर भी कुपलोकको प्राप्त होगा और जो व्यक्ति अन्धापूर्वक इस कथको सुनेगा, उसके कुलमें कभी भी सौम्य भय नहीं होगा । इस पद्धति-मतके करनेसे लोककी प्राप्ति होती है ।

(अध्याय ३२)

सर्वेकिक लक्षण, स्वस्व और जाति*

राजा दाताजीको पूजा—मुने ! सर्वेकिक कितने रूप हैं, क्या लक्षण हैं, कितने रंग हैं और उनकी कितनी जातियाँ हैं ? इसका आप वर्णन करें ।

सुभग्य मुनिने कहा—राजन् ! सर्वेकिक सुकेतु पर्यन्त महावि और गौतमका भी स्वस्व है । उसका मैं वर्णन करता हूँ । सर्वेकिक अथवा किसी स्वस्व अपने आश्रममें रहे । उस समय उस उर्ध्वस्थ महावि गौतमने उनके प्रणामकर विनयपूर्वक पूजा—महाराज ! सर्वेकिक लक्षण, जाति, वर्ण और स्वभाव किस प्रकारके हैं, उनका आप वर्णन करें तथा उनकी उत्पत्ति किस प्रकार है यह भी कहिये । विष किस प्रकार छोड़ते हैं, किसके कितने रंग हैं, किसकी कितनी जातियाँ हैं, सर्पिके दाँत कितने प्रकारके हैं । सर्पिणीको गर्भ क्या होता है और वह दिनेमें प्रसव करता है, स्त्री-पुरुष और नपुंसक सर्वत्र क्या लक्षण हैं, वे क्यों बदरते हैं, इन सब बातोंको मैं नृपककर मुझे बताये ।

कल्पवृक्षी बोले—मुने ! आप देकर सुने । सर्वेकिक सभी भेदोंका वर्णन करता हूँ । ज्येष्ठ और ज्युष्मय यशसे सर्पोंको मृद होता है । उस समय वे मैथुन करते हैं । वर्षा ऋतुके चार महीनेका गर्भ धारण करती है, सर्पिको दो सौ चालीस अंडे देती है और उनमेंसे कुछको स्वयं प्रसवित करने लगाती है । प्रकृतिस्वी कृपासे कुछके अंडे इधर-उधर कुलपककर जाते हैं । सोनेकी तरह कमलकेकले अंडोंमें पुष्प

सर्वेकिक समान आच्छादित और लंबी रेखाओंसे युक्त तथा विरीचपुष्पके रंगवाले बीच नपुंसक सर्प होता है । उन अंडोंको सर्पिणी छः महीनेका लेती है । अनन्तर अंडोंके फूटनेपर उनसे सर्प निकलते हैं और वे इस प्रकार यात्रासे कोढ़ करते हैं । अंडोंके निकलनेके सप्त दिनों में नृपकार्ण हो जाता है । सर्पकी आयु एक सौ बीस वर्षकी होती है और इनकी मृत्यु आठ प्रकारसे होती है—घोरसे, धनुष्यसे, लक्ष्मीसे, बिल्लीसे, मकुरसे, सुकरसे, वृद्धिकसे और गौ, भैरव, घोड़े, ऊँट आदि पशुओंके लुपेसे दब जानेपर । इनसे बचनेपर सर्प एक सौ बीस वर्षका जीवता रहते हैं । सप्त दिनोंके दाँत उगते हैं और इतीस दिनोंके विष हो जाता है । सर्प कष्टके तुरंत बाँध अपने जख्मसे तिरुन विषका स्वाग करता और फिर विष इकट्ठा हो जाता है । सर्पिणीके साध धूमनेकाल सर्प बारहवर्ष काटा जाता है । दिनमें वह बाधा भी द्वारा दूसरे सर्पोंके प्राण हरनेमें समर्थ हो जाता है । छः महीनेमें कंबुक- (केंचुल-) का स्वाग करता है । सर्पिके दो सौ चालीस पैर होते हैं, परंतु वे पैर गजके रोपके समान बहुत सूक्ष्म होते हैं, इसीलिये दिखायी नहीं देते । चलनेके समय निकल आते हैं और अन्य समय फोहर प्रविष्ट हो जाते हैं । उनके शरीरमें दो सौ बीस अक्षुस्त्रिंश और दो सौ बीस संधियाँ होती हैं । अपने जख्मके विष सर्प उत्सर्ज करते हैं उनमें कम विष रहता ।

*-द्विपक्ष-रुमाकर और अविदितकर्म-विनायक तथा तानुके-अन्धे—सुभग्य, कल्पके विविधलक्षणोंमें भी इस वर्णन मिलता है ।

और वे पक्कातर कर्तसे अधिक। ■■■ भी नहीं हैं। ■■■ ■■■
 दार्त स्तर, धीले एवं सफेद हो और विषम वेग भी मंद हो।
 वे अल्पकाल और मन्द उपरोक्त होते हैं।

सौंपकों एक गुह. दो जीभ. दाँत और विषसे भरी मुँह वार दावें होती हैं। दाँतोंके नम पक्करी, कण्ठमे, कालघरी और यमदूती है। इनके विष्णु, रुद्र और यम—ये देवता हैं। यमदूती छोटी होती है। इससे सौंप जिसे काटता है। इसपर मय, तय, ओषधि आदिक कुछ भी नहीं होता। बिह्व प्रकाशे सम्मन, कर्माके सबान इनके होता है और यमदूती कुम्कि होती है। क्रमशः दो, और चार महीनेमें वसव होती और क्रमशः पित्त, कफ और क्षीरका इनमें होता है। क्रमशः गृह्युक्त भक्त, कषाययुक्त अम, कटु पदार्थ, सन्निपातये इनके द्वारा गये कर्मात्माके देता कहिये। केत, और कृष्ण—इन चार दाँतोंके क्रमशः रंग हैं। इनके क्रमशः बाह्य, क्षीर, रुद्र है। दाँतोंमें सदा विष नहीं रहता। दाँतोंमें केवल समीप विष रहनेका है। करनेपर यह पहले मसकामें आता है, धमनी और फिर नाड़ियोंके द्वारा शरीरमें फैल जाता है।

भाठ वरुणोले सपि ■■■ ■—दकनेले, पाहलेले

कैरसे, मयसे, मरसे, भूलसे, विपत्त वेग होनेसे,
 रक्तके लिये ॥ कात्तकी प्रेरणासे । जब सर्प कटते ॥ पेटकी
 ओर उलट ॥ है और उसकी दाढ़ टेढ़ी हो जाती । तब
 ॥ हुआ सङ्कटन चाहिये । ॥ काटनेसे बहुत
 पाव ॥ जाय, उसको अस्थि होवे कटा है, ऐसा समझना
 चाहिये । एक दाढ़का चिह्न हो जाय, किन्तु ॥ भी मस्तिष्की
 ॥ न रहे तो मयसे कटा हुआ ॥ चाहिये । इसी
 ॥ दाढ़ ॥ दे तो मरसे ॥ हुआ, दो
 दाढ़ दिखानी दे और बाढ़ ॥ पर जाय तो भूलसे
 हुआ, दो ॥ दिखानी दे और पावसे रक्त ॥ जाय तो विपत्त
 वेगसे ॥ हुआ, दो दाढ़ दिखानी दे, किन्तु ॥ न रहे तो
 सङ्कटन रक्तके लिये कटा हुआ मानना चाहिये । ॥
 पैरकी तरह तीन ॥ गहरे दिखानी ॥ वाय दाढ़ ॥
 दे ॥ ॥ प्रेरणासे कटा हुआ मानना चाहिये । यह
 असाध्य ॥ कोई ॥ नहीं है ।

सर्वोत्तम कवियोंके दृष्ट, दृष्टानुवीत और दृष्टोद्भूत—ये तीन
वेद हैं। सर्वोत्तम कवि भीचा यदि इनके लो दृष्ट तथा
कविकार पर तो दृष्टानुवीत कहते हैं। इसमें तिहाई विषय
यह है कि सर्वोत्तम सब दृष्टानुवीत हैं। सर्वोत्तम
दृष्टानुवीत जाय—वीथके बल बलवत् ही जाय, उसका पैर
है। उसे दृष्टोद्भूत कहते हैं।

(अध्याय ३३)

विभिन्न लिपियों एवं नक्षत्रोंमें कालसरपसे ■■■ हुए धुल्लकी लक्षण,
नागोंकी उत्पत्तिकी श्रृङ्गा

कावय्य मुनि बोले— गौतम ! अन्ध मैं खान्दसर्वमे काटे हुए पुरुषका लक्षण कहता हूँ, जिस पुरुषको बरलम्पय कलम है, उसकी जिह्वा घंग हो जाती है, बट्ठयमे दर्द होता है, नेत्रोंसे दिग्धायी नहीं देता, दाँत और नाभि पके हुए जामुनके फलके समान काले पड़ जाते हैं, अङ्गुलीमें छिद्रिलता आ जाती है, विशाकष परिवर्णन होने लगता है, कंधे, कमर और घीबे झुक

जाते हैं, मुल नीचेकी ओर लटक जाता है, अर्थात् बाढ़ जाती है, अर्थात् दाढ़ और कज्ज सोने लगता है, बार-बार अर्थात् बंद हो जाते हैं, इससे अर्थात् कठनेपर खून नहीं निकलता। केवसे मारनेपर भी अर्थात् रेशा नहीं पड़ती, कठनेका स्थान बन्द हुए जगहके समान नीचे रंगबन, फूला हुआ, रक्तसे परिपूर्ण और कौपके केके समान हो जाता है, हिचकी आने

[illegible]

नमोऽस्तु नमः सर्वानामस्तु नमो निर्वाणाय नमः नमो उदितं नमः निरुद्धाय नमः

(विद्यार्थ्यां ४।५६७)

लग्नी है, कण्ठ अकण्ठ हो जाता है, कासपी गर्त बड़ जाती है, शरीरका रंग पीला बड़ जाता है। ऐसी अवस्थाको कलसर्परो घटा हुआ समझना चाहिये। उसकी मृत्यु असात सम्भली चाहिये।

घाव फूल जाय, नीले रंगक हो जाय, अधिक परीक्षा आने लगे, नाकसे बोलने लगे, ओठ छटक जाय, हृदयको कंपन होने लगे तो बालसरपरीसे कष्ट हुआ सम्झना चाहिये। दाँत पीसने लगे, नेत्र छटक जाय, लंबी श्वास होने लगे, पीठ छटक जाय, नाभि फड़कने लगे तो बालसरपरीसे कष्ट हुआ जानना चाहिये। दर्पण या अलखे अपनी छाया न देखे, सूर्य देवकीन दिखायी पड़े, नेत्र लाल हो जाय, सम्पूर्ण ऊपर कहके [] करीबने लगे तो इसे बालसरपरीसे [] हुआ [] चाहिये, [] शीघ्र [] [] है।

अहमदी, नवाबी, मुल्का, बराहमपुरी और बरगुजराती के दिन जिसको सही कहा जाता है, उसके प्रायः प्राय नहीं बचते। अहमदी, अंगरेजी, मराठा, भरणी, बुजिस्त, बिजुस्त, तीनों पूर्वा, मूल, कर्कशी और ज्ञातिमा नक्षत्रों जिसको सही कहा जाता है वह भी नहीं जाता। इन नक्षत्रोंमें विषय दोनोपक्षों अर्थात् की तत्परत आ जाता है। पूर्वोक्त विधि और नक्षत्र दोनो मिल करका मरका बरगुजराती, बरगुजराती और मूलो बुजुस्ते तीनों विषयों सही कहा जाता है वह नहीं जाता।

मनुष्यके शरीरमें एक ही अन्न सर्व-स्वाध है, उसके
 बीच अर्थात् लल्लटकी हड्डी, आँक, भूकम्प, चाल,
 अण्डकोशक ऊष्मी पाण, केका, केके, इत्यादि, कल-कल,

सर्पों के **विष** रोग, फैलाव तथा **प्राण** धारणों में प्राप्त विषों के लक्षण और उनकी चिकित्सा

बादामखानी कोले—गौराग । यदि वह जल हो तब कि सपने अपने यफदूरी नामक टुकड़े पड़ता । तो उसको विक्रिस्ता न करे । उस व्यक्तित्वों पर हुआ ही मय्यो' । दिग्ग और यतने दूसरा और खोलखर्चा प्रकृष्ट सौम्ये । नागोदय नामक वेला कजो गयी है । उसमे एक बन्दे तो कलखे द्वारा पड़ता गया समझना चाहिये और उसकी विक्रिस्ता नहीं चाहिये । पानीमें बाढ़ इकोनेपर और उसे उठानेपर

सतु, ठोड़ी और गुदा—ये चारही मुख्य मर्म-स्थान हैं। इनमें
सर्व अथवा सप्तमार्ग होनेपर पशुपत
पाता।

अब सर्व कष्टनेके बाद जो वैराग्ये मुक्तने जाता है उस दूतका लक्षण यन्त्रा है । उसका जलिका हीन वर्ण दूत और जलिका उत्तम वर्ण दूत भी अच्छा नहीं होता । यह दूत हाथसे टूट लिये हुए हो, दो दूत हो, कृष्ण अथवा राक्षस बाने हो, मुक्त बने हो, शिरपर एक बाल लपेटे हो, सरीसरे तेस लगाने हो, केस खोले हो, जोरसे खोलना हुआ भावे, हाथ-पैर बाँटे तो देखा दूत अव्यक्त अशुभ है । जिस रोगीका दूत इन लक्षणोंसे युक्त वैराग्ये समीप जाता है, वह योगी अवश्य ही मर जाता है ।

अज्ञानमयी सोते—गीतम् । अथ ये धामान् शिवके
 पुत्र पवित्रा मातेष्वे उत्पन्नान् विषयान् कथयन्ति । पूर्वकालमे
 कालमेव त्वमेक माते एव प्रसूते स्मृतिरिति । अथवा मागं सूर्य,
 मासिकं चन्द्रमा, तक्षकं धीम, मन्मथकं बुध, पद्मं बुधस्थितं,
 महाकायं शुक, कुरीलकं और शंकरपाल इतिश्च ब्रह्मेकं रूपं है ।
 [] दिन दसर्वा और चौदहवां समारो, सोमवारको
 [] मकरहवा, भीमवारको [] और दसर्वा,
 बुधवारको [] बुधस्थितको दूसरा और छठा, शुकवारको भीम,
 [] और कलक, इतिवारको पण्डित, सोमवारको, दूसरा
 और मकरहवा प्रहारा अनुबन्ध है । इन समयवीथे सर्वके कष्टनेसे
 स्थिर जीवित नहीं रहता ।

(अध्याय ३५)

१-कालकोविन्द एवं तारकोविन्दों काद्वन्द्विक जगत् ॥ वेद भरो गले हैं, खाई मज्जा निखाला मर्कट ॥ जैसे भगवान्‌को भी आश्रय नहीं है ।

सर्पोंकी चित्त-चित्त बर्तियाँ, सर्पोंके कटनेके लक्षण, पञ्चमी [] नागोंसे सम्बन्ध और पञ्चमी-सिद्धिमें [] पूजनका फल एवं विधान

गौतम बुद्धिने कश्यपजीसे कहा—महामन् ! सर्प, सर्पिणी, बालसर्प, सुतिक, नरुसक और खरार नामके सर्पोंके कटनेमें क्या चेद होता है, [] लक्षण और असन्-असन् बतलाये ।

[] बोले—यै इन सर्पोंके तथा [] रूप-लक्षणोंको संक्षेपमें बतलाता हूँ, सुनिये—

यदि सर्प कटे तो दृष्टि ठगरको हो जाती है, [] कटनेसे दृष्टि नीचे, बालसर्पके कटनेसे दृष्टि नीचे ओर और बालसर्पका कटनेसे दृष्टि बायीं ओर मुक्त जाती है : गर्भिणीके कटनेसे पसीना आता है, प्रसूते कटे तो रोनाह और [] होता है तथा नरुसकके कटनेसे शरीर टूटने [] है । सर्प दिग्धमें, सर्पिणी रात्रिमें और नरुसक सन्ध्याके समय अधिक शिथिल होता है । यदि कटनेसे, कटने, [] सर्प कटे या सोने हुए या प्रसूतको कटे, सर्प ३ दिवसकी बड़े भयका [] पड़े, [] न [] और पूर्वोक्त लक्षणोंकी जानकारी न हो तो पैर [] चिकित्सा कर शक्य है !

सर्प चार प्रकारके होते हैं—दवीकन, मण्डली, राजिल और खरार । इनमें दवीकनका विध शत-वर्षाण, [] पित्त-स्वभाव, राजिलका कफ-स्वभाव और खरार कफ-संनिपात-स्वभावका होता है अर्थात् इसमें कान, पित्त और कफ—इन त्रिविध अस्थिरता होती है । इन सर्पोंके रक्तकी परीक्षा इस प्रकार करनी चाहिये । दवीकन सर्पमें रक्त कुम्भकर्ण और सल्लु होता है, मण्डलीमें बहुत गहरा और लाल रंगका रक्त निकलता है, राजिल तथा खरारमें शिथिल और खोड़ा-सा छिद्र निकलता है । इन चार जातियोंके अतिरिक्त सर्पोंमें अन्य कोई श्रेणी जाती नहीं मिलती । सर्प ज्ञातन, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र—इन चार वर्णोंके होते हैं । ज्ञातन सर्प कटे तो शरीरमें दाह होता [], प्रथम मुख [] जाती है, मुख बन्द पड़ जाता है, मज्जा स्थितिमें हो जाती है और चेतन्य जाते रहती है । ऐसे लक्षणोंके दिखाने देतेपर ज्ञातन, अक्षरार्ण, सिंदुवारको भीमें घिसकर नख दे और पिल्लों में [] निवृत्ति हो जाती है । क्षत्रिय सर्पके कटनेपर शरीरमें

मुख [] जाती है, दृष्टि ठगरको हो जाती है, अत्यधिक पीड़ा होने लगती [] और [] अपनेको पहचान नहीं पाता । ऐसे [] होनेपर उसकी जड़, अधोभाग, इन्द्रायण और भ्रिंशुको भीमें घिसकर मिला ले तथा इसीका नख देनेसे एवं पिल्लोंसे साथ मिट जाती है । वैश्य सर्प इसे तो कफ बहुत आता है, मुखसे लार बहती है, मुख [] जाता है और वह केतनयुक्त हो जाता है । ऐसा होनेपर अक्षरार्ण, गृहधूम, गुप्पुल, शिथिल, अर्क, पत्तन और श्वेत गिरिकर्णिक (अपराधक) —इन सर्पोंके गोमूत्रमें घिसकर [] देने [] पिल्लोंके राज्य [] तथा लक्षण दूर हो जाती है । पित्त रक्तकी बड़े सर्प कटता है, उसे उचित लगकर ठगर होता है, [] अङ्ग चुलचुलाने लगते हैं, इसकी विधुतिक शिथि कमल, कमलका केसर, श्वेत, शीत, शकट, मधुसार और केतनिकर्णिक—इन सर्पोंके लक्षण भागमें लेकर शीतल जलके साथ घिसकर नख अर्क दे और दाह कराये । इससे शिथिल श्वेत हो [] है ।

ज्ञातन [] मध्याह्निक घरेले, क्षत्रिय सर्प मध्याह्नमें, वैश्य सर्प मध्याह्नके बाद और शूद्र सर्प संध्याके समय विधरान करता है । ज्ञातन सर्प वायु एवं पृथ्वी, क्षत्रिय मृत्तक, वैश्य मेखक और शूद्र सर्प सभी पदार्थोंका भक्षण करता है । ज्ञातन सर्प आगे, क्षत्रिय दाहिने, वैश्य बायें और शूद्र सर्प [] करता है । वैष्णवी इच्छासे पीड़ित सर्प शिपके वेगके कटनेसे जड़कुल होकर शिवा सम्य भी कटता है । ज्ञातन सर्पमें पुष्पके समान गन्ध होती है, क्षत्रियमें चन्दनके समान, वैश्यमें भूतके मग्न और शूद्र सर्पमें मल्लके [] गन्ध होती है । खरार सर्प नदी, कुल, तालाब, झरने, बाग-बगीचे और पवित्र [] रहते हैं । क्षत्रिय सर्प ग्राम, नगर आदिके द्वार, तालाब, चतुर्गण तथा तोरण आदि स्थानोंमें; वैश्य सर्प कपलान, [] मग्न, कल आदिके ढेर तथा घुँघोरे; इसी प्रकार शूद्र सर्प अपवित्र स्थान, निर्जन वन, शून्य घर, रमशान आदि सुते [] निवास करते हैं । ज्ञातन सर्प श्वेत एवं कपिल वर्ण, क्षत्रिके समान तेजस्वी, मनस्वी और सख्तिवक होते हैं । क्षत्रिय सर्प मृनेके समान रक्तवर्ण भयका सुवर्णके तुल्य पीत वर्ण

तथा सुक्के समान तेजस्वी, वैश्व हर्ष अस्त्राग्नी अस्त्राग्नी-
पुष्पके समान वर्णवाले एवं अनेक रेखाओंसे युक्त तथा सुक्
सर्प अस्त्राग्नी अस्त्राग्नी समान कृष्णवर्ण और सुस्पर्शक
होते हैं। एक अम्बुहके अन्तरसे दो दंत हो तो बालसर्पक
कटा हुआ जानना चाहिये। दो अम्बुह अन्तर हो तो तम्र
सर्पक, कई अम्बुह अन्तर हो तो बृद्ध सर्पक दंत समझना
चाहिये।

अनन्तनाग सामने, वासुकि [] और []
और देवता [] और [] दुहि [] और सोनी है।
अनन्त, वासुकि, तक्षक, कम्बोजक, पद्म, महापद्म, राक्षसक
और कुलिश—ये आठ नाग [] पूर्वदि उक्त []
स्वामी हैं। पद्म, राक्षस, कम्बोजक, विद्रुह, महापद्म, सुक्, क्षम
और अर्धचन्द्र—ये [] आठ [] आयुध हैं। []
और कुलिश—ये सोनी [] नाग-वर्णक [] इनके और
वासुकि अग्नि, महापद्म और [] वैश्य तथा पद्म और
कर्मिक द्वाय नाग हैं। अनन्त और कुलिश नाग सुवर्ण तथा
वस्त्राग्नी [] वासुकि [] [] तथा
अग्नि [] हैं, [] और महापद्म स्वर्ण []
इन्हीं अस्त्र हैं, पद्म और [] कृष्णवर्ण तथा कर्मिक
अस्त्र हैं।

सुवर्ण मुनि पुनः कथं—उक्त ! [] के सत्य

(अध्याय २६—३८)

बह्नी-कल्प-निष्कामप्राप्ति सन्द्-बह्नी-तलाकी पहिमा

सुवर्ण मुनि बोले—राजन् ! अब मैं बह्नी []
कल्पक वर्णन करता हूँ। यह विधि सभी मन्त्रधोके पूर्व
करनेवाली है। वार्षिक मन्त्रधोकी बह्नी विधिसे फलदायक यह
विधिप्रति किया जाता है। यदि राज्यभूत राजा इस []
अनुष्ठान करे तो [] अपना राज्य प्राप्त कर लेता है। इसविधिसे
[] अधिलक्ष्य रक्षणवाले व्यक्तिसे इस कालक कल्प-
पूर्वक [] करना चाहिये।

यह विधि स्वार्थिकार्थिकयुक्त अस्त्रक प्रिय है। इससे दिन

और विविध मन्त्र कल्पने महासुखी गौतमको उपदेशके
अंशमें कहे थे और यह भी बताया कि सदा भक्तिपूर्वक
नगोंकी पूजा करे और पक्ष्मीको विरोधरूपसे दूध, खीर
आदिसे उमका पूजन करे। अथवा दूध पक्ष्मीको हारके दोनों
और गंधके द्वारा नाग बनावे। दही, दूध, दुर्धा, पुण, कुल,
[] और अनेक प्रकारके नैवेद्योंसे नागोंका पूजनकर
[] खेपन करावे। ऐसा करनेपर उस पुरुषके कुरुमें
कपी [] पय [] लेता।

[] पक्ष्मीको अनेक रंगोंके नागोंको []
भी, खीर, दूध, [] आदिसे पूजनकर गुग्गुलुकी भूप दे। ऐसा
करनेसे [] नाग प्रसन्न होते हैं [] उस पुरुषकी स्वतः
वैश्वदेवको [] पय [] प्राप्त।

अनन्त मन्त्रधोकी पक्ष्मीको कुदाय नाग [] गन्ध,
पुष्प आदिसे [] करे। दूध, भी, जलसे जान करावे।
दूधसे पं. [] और [] नैवेद्यका भोग लगावे। इस
[] पूजा [] वासुकि अग्नि नाग अम्बुह से
[] और वह पुरुष नागलोकमें [] बहुत कलदायक सुखका
खेप कराता है। राजन् ! इस पक्ष्मी विधिके [] मैंने
कर्म [] उहाँ 'अहं कुलकुलके बह्नी स्वाहा'—यह मन्त्र
[] है, [] सर्व नहीं आ सकता।

१-कर्मकी नवीनतम देश बना जाता है। 'कर्मप्रसन्न'से इसका विस्तृत वर्णन है।

२-पक्ष्मीका अनुष्ठान [] दूध पक्ष्मीको स्वर्ण-बह्नी लेनी है तथा वार्षिक दूध पक्ष्मीको भी-बह्नी [] जाती है, जिस दिन मन्त्रधोकी पक्ष्मी
सुखीकृत होती है। 'पं.दु' नाग वार्षिक दूध पक्ष्मी बनाये जाते हैं, यह [] अन्तर्गतको पूर्व लेनेवाले मन्त्र-के अनुसार
प्रत्येक [] है।

प्रीयतां देवसेनानीः सम्पद्यन्तु ॥॥॥
 (अध्याय ३९।६)
 ब्राह्मणको आज देकर रहिये फलका भोजन और भूमिपर शयन करना चाहिये। इसके दिन पवित्र रहे और ब्रह्मचर्यका पालन करे। शुक्ल पत्र ॥ कृष्ण पत्र—दोनों पक्षोंको यह मत करना चाहिये। इस व्रतके करनेसे पापजन्म ॥ कृपासे सिद्धि, धृति, तुष्टि, राज्य, आनन्द, उत्तम्य और भुक्ति मिलती है। जो पुण्य उपसाधन न कर सके, वह रति-व्रत हो

करे, सब भी दोनों ॥ उत्तम फल प्राप्त होता है। ब्रह्म ब्रह्मके करनेवाले पुण्यवशे देवता भी सम्भव करते हैं और वह इस लोकमें उन्नत चक्रवर्ती राजा होता है। राजन् ! जो पुण्य पत्नी-प्राप्तके साधनस्वरूप भक्तिपूर्वक कृष्ण करता है, वह भी स्वर्गिण्यधिकृतकी कृपासे विविध उत्तम योग, सिद्धि, तुष्टि, धृति और सखीको प्राप्त करता है। परलोकमें ॥ गतिमान भी अधिकारी होता है।

(अध्याय ३९)

आचारवादी श्रेष्ठतम प्रतिपादन

राजा क्षत्राधीश्वरें ब्रह्म—मुने ! अथ अथ ब्राह्मण आदिके आचरणकी श्रेष्ठतम विषयमें ब्राह्मणको ब्रह्म ॥ सुमन्तु मुनि बोले—राजन् ! मैं अथवा संक्षेपमें इस विषयको ॥ ॥ अथ सुने। स्वयं-शरीरका अनुक्षण करनेवाले राजाक्षत्रोंमें ब्रह्म ॥ कि 'वेद आचारहीनको नहीं कर सकते, पहले ही ब्रह्म सभी अज्ञोंके साथ अध्ययन कर ले। वेद पढ़ना तो ब्राह्मणका विशेषत्व है, ब्राह्मणका मुख्य लक्षण तो सदाचरण ही अतल्लभ्य गण है' । वेदोंका अध्ययन करनेपर भी यदि वह आचारको छोड़ है तो उसका अध्ययन जैसे ही निष्फल होता है, जिस प्रकार नटुसकले सिध्दे ॥ निष्फल होता है।

जिनके संस्कार उत्तम होते हैं, ॥ भी दुराचरण का भी जाते हैं और नरकमें पड़ते ॥ अथ ॥ उत्तम आचरणसे अच्छे कहलकते ॥ ऐसे शरीर आह करतें हैं। प्रथम दुष्टता मरी रंभ, बाहरसे सब संस्कार हुए हो, ऐसे वैदिक संस्कारोंसे संस्कृत कर्तव्य पुरुष आचरणमें सुदोषों भी अधिक मिलिय हो जाते हैं। कुन कर्म करनेवाला, ब्राह्मण्य करनेवाला, गुरुद्वाराभी, जोर, गौओंको मारनेवाला, पशुधारी, परकीर्णभी, मिथ्यावादी, नास्तिक, वेदनिन्दक, निषिद्ध कर्मोंका आचरण करनेवाला यदि ब्राह्मण ॥ और सभी तरहके संस्कारसे सम्पन्न भी है, वेद-वेदाङ्ग-पाठ्यता भी है, फिर भी उसकी सन्धि नहीं होती। दयाहीन, हिंसक, अतिराग दम्पिक, कपटी, श्रेष्ठी, पित्रानु (चुगलखोर), अतिराग दुष्ट पुरुष वेद पढ़कर भी संसारको उठाते हैं और ॥ वेधका अपना

जीवन-खपन करते हैं, अनेक ॥ इस-छिड़से प्रजापती ॥ का ॥ अन्त सांसारिक ॥ सिद्ध करते हैं। ऐसे ब्राह्मण भुक्तसे भी भयम हैं।

जो पशु-प्राणिकों ॥ जाने, अन्यत्र और कुमारीका ॥, विशेषतः सत्यवादी और सदाचारी हो, ॥ पालन, आचार तथा सदाचरणमें ॥ रहे, उसके ॥ नाम रहे, वेद-वेदाङ्ग और कर्मका मर्मज्ञ हो, समझिके स्थित रहे, अग्नेय, मयस, धर तथा शीत आदिसे रक्षित हो, वेदिक पठन-पाठनमें आसक्त रहे, किसीका अधिक ॥ न करे, एकता और सत्य स्थानमें रहे, मुक्त-दुःखमें समन हो, धर्मिष्ठ हो, पाकधारणसे डरे, आभक्ति- ॥ निर्दोषता, दानी, दूर, ब्रह्मवेत्ता, शास्त्र-स्वभाव और शरीर हो तथा सम्पूर्ण ॥ परिनिष्ठित हो—इन गुणोंसे एक पुरुष ब्राह्मण होते हैं। ब्रह्मके भक्त होनेसे ब्राह्मण, ब्राह्मण करनेके कारण सक्रिय, वार्ता (वृत्ति-विद्या आदि) का संयन करनेसे वैदिक और शब्द-श्रवणमात्रसे जो वृत्ताति हो ॥, वे सुद कहलकते हैं। कर्म, दय, मम, दान, सत्य, शीत, धृति, दया, प्रदुता, ब्रह्मता, संतोष, तप, निरुत्कारता, अग्नेय, अनसूय, अनुष्णता, असेय, अमृतार्य, धर्मज्ञान, ब्रह्मधर्म, ॥ अस्तित्व, वैराग्य, पाप-वीर्यता, अद्वेष, गुरुश्रुता आदि, गुण जिनमें रहते हैं, उनका ॥ दिन-प्रतिदिन बढ़ता रहता है।

कर्म, तप, दय, शीत, क्षमा, प्रदुता, ज्ञान-विज्ञान और अस्तित्व—ये ब्राह्मणोंके सहज कर्म हैं। ज्ञानरूपी शिखा,

■ आचारवादी न पुत्री वेद अध्ययनितः न च भर्तृवर्त्यः । तिरपे हि वेदधर्मान् दिशन् वृत्तं तृते ब्राह्मणधर्मान् तु ॥ (अध्याय ४१।८)

तबलेकी सूत्र अर्थात् ब्रह्मसूत्र [] रहते हैं, [] मनु [] ब्राह्मण कहा है। पाप-कर्मोंसे निवृत्त होकर उत्तम [] करनेवाला भी ब्राह्मणके सम्मान ही है। उसेमने मुक्त हुए [] ब्राह्मणसे [] हो सकता [] और आचरणहीन [] भी

मुक्तसे अधम [] बात है। जिस तरह दैव और बौद्धके मिलनेपर कार्य सिद्ध होते हैं, [] ही उत्तम जाती और साधकमेंका योग होनेपर आचरणकी पूर्णता सिद्ध होती है। (अध्याय ४०—४५)

भगवान् कार्तिकेय [] यही-प्रसवकी महिमा

सुमन्तु मुनि बोले—राजन् ! भद्रपद मासकी यही तिथि बहुत उत्तम तिथि है, यह सभी फलके इतर करनेवाली, पुण्य प्रदान करनेवाली तथा सभी कल्याण-मङ्गलके देनेवाली है। यह तिथि कार्तिकेयके अतिउत्तम दिन है। इस दिन किया हुआ खान, दान आदि सर्वकर्म अधिक होता है। जो दक्षिण दिशा (कुमारिका-देश) में निवास करनेवाले भूमर कार्तिकेयका इस तिथिके दर्शन करते हैं, वे ब्रह्मरूप आदि फलोंसे मुक्त हो जाते हैं, इसलिये [] तिथिके भगवान् कार्तिकेयका अवश्य दर्शन करना चाहिये। अतिपूर्वक कार्तिकेयका पूजन करनेसे मानव मनोवर्धमान फल प्राप्त करता है और अन्तमें पुण्यलोकमें निवास करता है। ईद, पन्धर, कल आदिके द्वारा ब्रह्मपूर्वक कार्तिकेयका [] पूजन स्वर्गिक विद्यामें बैठकर कार्तिकेयके लोकमें जाता है। इनके मन्दिरपर [] चढ़ने तथा हाडू-पीडा (घाईन) [] करनेसे उन्नतके प्राप्त होता है। चन्दन, अगर, कपूर आदिके

कार्तिकेयको पूजा करनेपर हाथी, घोड़ा आदि वाहनोका त्यागी [] है और सेवकत्व भी प्राप्त होता है। राजाओंको [] से आराधना करनी चाहिये। जो राजा कुम्हारोंकी पुत्र भगवान् कार्तिकेयकी आराधना कर मुक्तके [] प्राप्त करता [] देवराज इंद्रकी तरह अपने अनुशोको पराजित कर देता है। विराट्पर्वका चंपक आदि विविध पूर्वोक्त पूजा करनेवाला व्यक्ति सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है और शिवलोकमें प्राप्त करता है। इस भाद्रपद मासकी [] मेखरा मेखन नहीं करना चाहिये। यही तिथिके मत [] पुत्रमकर तिथिके भंडन करनेवाला व्यक्ति संभुर्ग पक्षीकी मुक्त हो कार्तिकेयके लोकमें [] है। जो व्यक्ति कुम्हारोंकोसे शिव भगवान् [] दर्शन एवं धीरपूर्वक दत्तक पूजन करता है, वह अल्पकालीन प्राप्त करता है।

(अध्याय ४६)

सप्तमी-कल्याणमें भगवान् सूर्यके [] विष्णुका एवं शक्र-सप्तमी-व्रत

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन् ! जब मैं सप्तमी-कल्याण वर्णन करता हूँ। सभी तिथिके भगवान् सूर्यका अविर्भाव हुआ था। वे अण्डके साथ उत्पन्न हुए और अण्डमें रहने हुए ही उन्होंने बुद्धि प्राप्त की। बहुत दिनोंतक अण्डमें रहनेके कारण ये 'मर्त्य'के नामसे प्रसिद्ध हुए। जब वे [] सिद्ध हो तो [] प्रजापतिने अपनी कृपयसे [] कृपयके पार्ष्णि रूपमें इन्हें अर्पित किया। दक्षको उवाच— विश्वकर्मा इनके शरीरका संस्कार किया, जिससे ये अतिउत्तम तेजस्वी हो गये। अण्डमें स्थित रहते ही इन्हें समुद्र एवं कल नामकी दो संज्ञाएं प्राप्त हुईं। भगवान् सूर्यका तेज महान न बन सबनेके कारण उनकी स्त्री व्याकुल हो सोचने लगी—इनके

अतिउत्तम तेजके कारण मेरी दुष्टि इनकी ओर नहीं पाली, जिससे इनके अङ्गोंमें मैं देल [] का [] हो। मेरा मुख-वर्ण, कर्मवीर शरीर इनके तेजसे दग्ध हो इत्यङ्गुलीय हो गया है। इनके साथ मेरा निर्वाह होना बहुत कठिन है। यह सोचकर उभने अपनी सुखी एक स्त्री उत्पन्न कर उससे कहा—'तुम भगवान् सूर्यके साथी मेरी जगह रहना, परंतु यह भेट सुनने न पाये।' ऐसा समझकर उसने उस स्त्रीका नामकी स्त्रीको कार्य रख दिया तथा अपनी संज्ञा [] और यमुनाको स्त्रीको छोड़कर [] रक्ता करनेके लिये उत्तस्तुत देशमें चली गयी और वहाँ छोड़ीकर रूप धारणकर तपस्यामें रत रहते हुए उष-उष अनेक वर्षोंतक भूषणी रही।

१-सूर्यको पत्नी 'कृप' का दूसरा नाम 'मेख' है। अन्य सूर्यको मेखको विश्वकर्माको पुत्र कहा गया है।

भगवान् सूर्यो छायाको ही अपनी बनी सम्झा । कुछ समयके बाद छायासे रानीकर और तपती नानकी से संझने उत्पन्न हुई । छाया अपनी संतानपर बहुत तथा बससे अधिक खेद करती थी । एक दिन यमुना और तरुनीने विवाद हो गया । पारस्परिक शापसे दोनों नदी हो गयीं । एक बार यमुनाके भाई यमने तबित किया । इसपर यमने कुछ होकर छायाको मारनेके लिये पैर उठाया । छायाने कुछ होकर भाग दे दिया—'भूट । तुमने मेरे ऊपर बुरा बतलाया है, इसलिये तुम्हारा प्रतिपक्षीका प्राणहिनसक रुपी पक्ष नीचसस कर्म लेगा, सूर्य और बन्द लेगे । तुम मेरे शत्रुसे कलुषित अपने दिलने पुनीपर रखीने तो कृमिगल उमे को आवीगे ।'

यम और छायाका इस प्रकार विवाद हो ही रहा था कि एक समय भगवान् सूर्य वहाँ आ पहुँचे । यमने अपने पैर भगवान् सूर्यसे कहा—'पिताजी । हमारी बहन कटुनी नहीं हो सकती, यह कोई और की है । यह हमने मिल कर साथसे देखती है और हम सभी भाई-बहनके समान दुष्ट तथा समान व्यवहार नहीं देखती । यह सुनकर भगवान् सूर्यो कुछ होकर छायासे कहा—'तुम्हें यह किताबी नहीं है कि अपनी संझनोंमें ही एकसे प्रेम करो और दूसरेसे द्वेष । किन्तु संझने सबको समान ही सम्झना चाहिये । तुम विषय-दुष्टिसे बंधे देखती ?' यह सुनकर छाया कुछ न बोली, पर यमने पुनः कहा—'पिताजी ! यह दुष्टा मेरी बहन नहीं है, बल्कि मेरी माताबही छाया है । इसीसे इसने मुझे पाप दिया है ।' यह कहकर यमने पूरा वृत्तांत उन्हें बतला दिया । इसपर भगवान् सूर्यो कहा—'बेटा ! तुम विष्ठा न करो । कृमिगल पक्ष और उधिर लेखर भूलोकको बले आवीगे, इससे तुम्हारा पक्ष गलेगा । अच्छा हो जायगा और जलजलीकी आकासे तुम लोकपाल - पदको भी प्राप्त करोगे । तुम्हारी बहन यमुनाका जल गङ्गाजलके समान पवित्र हो जायगा और तपतीका जल नर्मदाजलके तुल्य माना जायगा । आयासे यह सत्य सबके देहमें अवस्थित होगी ।'

ऐसी व्यवस्था और मर्कट मित्र कर भगवान् सूर्य दश प्रजापतिसे पास गये और उन्हें अपने अग्रगण्य करतल बतले हुए सम्पूर्ण वृत्तक वद सुक्या । इसपर दश

कहा—'आपके अति बचक तेजसे व्याकुल होकर आपकी चर्चा उत्तरकुल देखीं करी गयी है । अब आप विश्वकर्मासे अपना रूप प्रसन्न कराव ले ।' यह कहकर उन्होंने विश्वकर्माके सुतकार उनसे कहा—'विश्वकर्मान् । इसका सुन्दर दे ।' तब सूर्यकी सम्पत्ति पकर अपने तक्षण-कर्मसे सूर्यको प्रारम्भ किया । उन्होंने तक्षणके सूर्यको अतिप्रत्य पीड़ा हो खां थी और बार-बार भूधर्मा का जाती थी । इसीलिये उस अङ्ग तो ठीक कर लिये, जब पैरोकी अनुसन्धेकर सोइ तब का सूर्य भगवान्से कहा—'विश्वकर्मान् ! आपने तो अपना बर्ण पूरी कर लिया, परंतु हम को रहे हैं । इसका कोई उपाय बताइये ।' कहा—'भगवान् ! आप रत्नचन्दन और करवीरके पुष्पका सम्पूर्ण प्रतीये करे, इससे तत्काल यह वेदना रहन जायगी ।' भगवान् सूर्यो कणकगुह्यर अपने लिये प्रतीये कल्पन, जिससे उनकी सारी वेदना मिट गयी । उन्नी दिनसे रत्नचन्दन और करवीरके पुष्प भगवान् सूर्यको दिया गये और उनकी पूजामें प्रयुक्त लगे । सूर्यभगवान्के प्रतीयेके सज्जनेसे जो तेज निकलन, उस तेजसे करनेवाले निर्माण हुआ ।

भगवान् सूर्यो भी उसी समय रूप प्रसन्न करने अपनी भार्यके दर्शनोके उत्कण्ठसे तत्काल उत्तर-कुम्भी ओर प्रस्थान किया । वहाँ उन्होंने देखा कि वध पीड़ीका रूप धारणकर विचारन कर रही है । भगवान् सूर्य भी अधमर पर पारव मिले ।

पर-पुत्रकी आशंकासे अपने दोनों नासपुटोसे सूर्यके तेजको एक पैक दिया, जिससे अश्विनी-कुम्भोकी उत्पत्ति हुई और यही देवताओंके वैद्य हुए । तेजके अंशसे रक्तकी उत्पत्ति हुई । तपती, शनि और सखी—वे तीन संझने छायासे और यमुना तथा यम संझासे उत्पन्न हुए । सूर्यको अपनी भार्या उत्तरकुम्भे समीप स्थिते दिन प्राप्त हुई, उन्हें दिव्य रूप समीप स्थिते ही मिलन तथा संझने की इसी स्थितिसे प्राप्त हुई, अतः समीप स्थित भगवान् सूर्यको है ।

जो व्यक्ति बहारी स्थितिसे एक समय भोजनकर पक्षीको

फल प्राप्त कर सकता है।

भाषावने कहा—महाराज ! प्रथम तो एकत्रित हो अमिताभमें ही सदेह है, कुछ लोभ कहते हैं देवता हैं और कुछ कहते हैं कि देवता नहीं हैं, फिर विविध देवता किन्हीं समझा जाय ?

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—कहा ! आगमसे, अनुग्रहसे और प्रत्यक्षसे देवताओंका होना सिद्ध होता है।

भाषावने कहा—यदि देवता प्रत्यक्ष हो सकते हैं फिर उनके स्वरूपके लिये अनुग्रह और अज्ञान-कल्पना की कुछ भी अपेक्षा नहीं है।

श्रीकृष्ण बोले—कहा ! सभी प्रत्यक्ष हो सकते हैं। इसका और अनुग्रहसे ही हमारी देवताओंका होना सिद्ध होता है।

भाषावने कहा—पिताजी ! देवता प्रत्यक्ष हैं विविध एवं अभीष्ट होनेवाले हैं, पहले अब उनकी वर्णन करें। अनन्तर स्वयं तथा अनुग्रहसे सिद्ध होनेवाले देवताओंका वर्णन करें।

श्रीकृष्णने कहा—प्रत्यक्ष देवता सूर्यनारायण हैं। इनका कृष्ण दूसरा कोई देवता नहीं है। सम्पूर्ण जगत् इसीसे उत्पन्न हुआ है और अन्तमें इसीमें विलीन भी हो जायगा^१।

सब आदि पुराणों और कालकी गणना इसीसे सिद्ध होती है। ग्रह, नक्षत्र, योग, करण, राशि, अदित्य, वसु, भर, शक्र, अग्नि, अधिनीकुमार, इन्द्र, प्रजापति, विदुषी, भू, भुवः, स्वः ये सभी लोक और पर्वत, नदी, मधुर, नाग तथा सम्पूर्ण पृथिवीध्वरी उत्पत्तिके एकमात्र हेतु भगवान् सूर्यनारायण ही हैं। सम्पूर्ण वायु-जगत् इसकी ही इच्छासे उत्पन्न हुआ है। इसकी ही इच्छासे स्थित और सभी इसकी ही इच्छासे

अपने-अपने व्यवहारमें प्रवृत्त होते हैं। इसीके अनुग्रहसे सब संसार देता है। सूर्यभगवान्के उदयके साथ जगत्का उदय और उनके अस्त होनेके साथ जगत् अस्त होता है। इनसे अधिक न कोई देवता हुआ और न होगा। वेदवि श्रद्धा तथा इतिहास-पुराणदिने जगत्का, अन्तर्यामि आदि सबोंसे प्रतिष्ठान किया गया है। जगत्का है : इनके सम्पूर्ण गुणों और प्रधानोंका वर्णन ही जा सकता। इसीलिये दियाकर, गुणकर, उनके स्वामी, उनके और सच्चा सहाय करनेवाले ये ये ही कहे गये हैं। ये अवधार्य हैं।

पुण्य सूर्य-मन्त्रकी रचनाकर प्रातः, मध्यह्न और सायं इनकी पूजा कर उपवास करता है, यह कथाश्रितियों का मत है। फिर जो कदाचि सूर्यनारायणका प्रतिपूरक पूजन करता है, उसके लिये जीवन-सा पदार्थ दुर्लभ है और जो अपनी अकारणसे हो मन्त्रतन्त्र भागवान् सूर्यको अपनी कुत्रिणीय निहित कर लेता है तथा ऐसा समझकर वह इनका ध्यानपूर्वक पूजन, इष्टन और करता, सभी कर्मजनोंको करता और अन्तमें इनके लोकको प्राप्त होता है। इसीलिये हे पुत्र ! यदि तुम सूर्यकी पूजा चाहते हो और भूति तथा सुखको इच्छा रखते हो तो विधिपूर्वक प्रत्यक्ष देवता भगवान् सूर्यकी तन्मयतासे करो। इससे तुम्हें आध्यात्मिक, तथा अधिभौतिक कोई भी दुःख नहीं होगा। जो सूर्यभगवान्को शरत्में जाते हैं, इनको किसी प्रकारका भय नहीं होता और उन्हें लोक तथा परलोकमें सुख प्राप्त होता है। सर्व यैने भगवान् सूर्यकी बहुत कालतक यथाविधि उपासना है, उसकी कृपासे वह दिव्य ज्ञान मुझे प्राप्त हुआ है। कृष्ण अनुग्रहोंके हितकर और कोई उपाय नहीं है।

(अध्याय ४८)

श्रीसूर्यनारायणके नित्यार्चनका विधान

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—सब ! सूर्यनारायणके पूजनका विधान बताया है, जिसके करनेसे सम्पूर्ण पाप और विघ्न नष्ट हो जाते तथा सभी मन्त्रेश्वरी

सिद्धि होती हैं और पुण्य भी प्राप्त होता है। प्रातःकाल उठकर उनी अदितिसे निवृत्त हो नदीके तटपर जाकर आचमन करे तथा सूर्यदेवके समक्ष झुट्ट मुखका शरीरपर लेभन कर

१-प्रत्यक्ष देवता सूर्य जगत्सूर्यनारायण । तन्मयतन्मयिका सर्वलोकका सर्वत्र प्रवर्तनी ।

कदाचित् जगत्का ही भगवती वा

(संस्कृत ४८ । ११-१२)

भी पुत्र-पौत्र, आरोग्य एवं लक्ष्मीको प्राप्त करता है और सर्वलोकको भी प्राप्त हो जाता है।

भगवान् कुम्भाने कहा—सत्य ! मया प्रकृत
सुख पक्षकी पक्षी विधियों एकमुक्त—मृत और कहींके नष्ट
करना चाहिये । सुख ! कुछ ह्येग सत्यकी उपवास चाहते
हैं और कुछ विद्वान् कहीं उपवास और सत्य विधियों प्रान्त
करनेका विधान कहते हैं (इस प्रकार विविध मत हैं) :
प्रकृत : कहींके उपवासकर भगवान् सूर्यजगत्पक्षी पुत्र करती
चाहिये । सत्य—न, करवीर—पुत्र, गुप्तल पुत्र, प्रकृत प्रकृत
नैवेद्योरी माय प्रदि चार कहींकेसक सूर्यजगत्पक्षी पुत्र करती
चाहिये । आत्मगुह्यके लिये गोमयचित्रित उपरसे प्रकृत,
गोमयका प्रकृत और मायप्रकृत प्रकृत—मोहन प्रकृत
चाहिये ।

क्रेडिट आदि कर महीनेमें देना बन्द, देना चुक, चुकाना बन्द, धूप और ताम्र केसेब सूर्यनाशकको मिलान करना पाछिसे । इन्में पञ्चगव्यप्राप्त कर ज्ञानको अङ्कित करना पाछिसे ।

सूर्यदेवके राज एवं उसके साथ भयपत्र करनेवाले
देवता-नाग आदिका वर्णन

राजा भक्तानीकले पूजा—मुने । सुने—राज्याधीन
 रक्षाय किन्तु विधानसे करनी बाँधिये । अब कैयट ~~राजा~~
 बाँधिये ? इस रथप्राकार प्रचलन मनुष्यलोकांसे किन्तु ही
 शून्य ? इन सब बातोंकी आप क्याकर मुने समझिये ।

सुषमा पुनि बोले—रामन् ! कितने लम्बा सुनेस
पर्वतपर साधमीन घराबाहु रहने बाबूजीसे पुनः—**‘बामन् !**
हस नोकको प्रकटित करनेवाले भावजन् मुझे निम्न प्रकारसे
रखने कैरकर धाधन करते हैं, इसे आप जानते हैं।’

ब्रह्माजीने कहा—अग्निदेव ! सूर्यनाशक जिम प्रवक्ताके रक्षमें बैठकर ध्यान करने हैं, उसका मैं तर्क करता हूँ।

अर्द्धिन् अर्द्धि कार भास्तेमे अगस्त्य-पुत्र, अपराधित धूप और गुणके पूर अर्द्धिन् मैत्रेय तथा इक्षुस भगवान् सूर्यको समर्पित करवा दिये। यथाशक्ति साधुग-धोवन कराकर आत्मसुद्धिके लिये कुशके बरतसे स्नान करना चाहिये। उस कुशदेवकी ही आज्ञान को। ब्रतकी सम्प्राप्तिमें माघ भासकी रथका दान करे और सूर्यमगवान्की प्रसन्नताके लिये रथचञ्चलकर अभ्योजन करे। यथापुण्यदायिनी सप्तमीको रथसप्तमी कहा है। महासप्तमीके नामसे उल्लिखित है। रथसप्तमीको जो उपवास है, यह ब्रत, धन, विद्या, पुत्र, आरोग्य, आयु और उताप्रेतम कर्षित प्राप्त करता है। हे पुत्र ! तुम भी इस ब्रतको करो, जिससे तुम्हारे सभी शरीरोंमें शिष्ट हो। कष्टकर शत्रु, कल, गन्ध-पदार्थों की वृद्धि अन्तर्हित हो गये।

सुधसुने कहा — राजन् ! उनकी आज्ञा पावन समान ही थी। कर्णवर्षा, सूर्य-मरुतलकी अराधनाओं से तब ही रथवासीवचन मिल्य और कुछ ही मध्याह्नी रोम्मुक्त होकर मनोजाश्रित पलत प्रातः वयं मिल्य । (अध्याय ५०-५१)

६. अथ मन्त्र सुने ।
एक [] [] अभि, पाँच और तथा स्वर्णमय अष्टौ
वज्रिमान् आठ बन्धोले युक्त एवं [] नेधिरे सुप्रसन्न—
इमं प्रत्यक्षं दस हजार बोद्धे तेषां चोदुः अतिशय प्रकाशमान
अनं-रश्मि विराजमान भगवान् सूर्य विकरण करते रहते हैं ।
रश्मि उपलब्धे ईषा-दण्ड नीन-गुप्त अधिक है । सभी उनके
स्पर्श उष्ण बैठते हैं । इनके रश्मि मुआ खोजकर धना हुआ
है । रश्मि कपटुक स्थान योगदान छन्दस्त्री सात थोड़े जुते रहते
हैं । संवत्सरार्थ जितने अवश्य होने हैं, वे ही रश्मि अङ्ग हैं ।
तोने व्याप्त मात्राही चीन नार्थार्थ हैं । पाँच प्रतापी अरे हैं, लखी

१-मित्र मित्र : मित्रता अधिनियम 1960 का अर्थ है कि दो व्यक्ति यदि एक-दूसरे को अपने मित्र के रूप में मानते हैं तो वे मित्र कहलाएंगे।

[illegible]

श्रुतुं नेमि है। दक्षिण और उत्तर—ये दो अथवा रथके दोनों भाग हैं। मुहूर्त रथके उषु, कलत्र, दण्ड, काष्ठार्य रथके बनेन, लाल अकादण्ड, विमेष रथके कर्ण, ईश-दाण्ड त्रय, रवि यकज, धर्म रथका प्यज, अर्थ और वयम धूर्तिकर अग्रपुत्र, गजपत्नी, विद्युत्, जगती, अनुहृत्, पीति, बृहती तथा उष्णिग्— ये सत्ता सन्द भात अन्ध हैं। धूर्तीयर यत्न पूजना है। इस प्रकारके रथमें बैठकर भगवान् सूर्य निरन्तर अक्षरवर्णों द्वारा प्रणम करते रहते हैं।

देव, ब्रह्म, गन्धर्व अप्सरा, नाग, विष्णु और शिव सूर्यके रथके साथ चूमते रहते हैं और दो-दो यन्त्रोंके सह इन्हीं परिचरित हैं।

धृता और अर्यमा—ये दो अदित्य, पूतकय तथा पूतक नामक दो ऋषि, सव्यक, वासुकि नामक दो नाग, कुम्भक और नाद ये दो गन्धर्व, क्रतुवत्सल तथा युक्तिवत्सल ये अप्सराएँ, रघुकुल तथा रथीक ये दो यक्ष, इति तथा ज्योती नामके दो राक्षस ये ब्रह्मणः पौत्र और वैश्वानर आसमे रथके आग करते हैं।

मित्र तथा वरुण नामक दो अदित्य, एक एक ये दो ऋषि, तक्षक और अनन्त दो नाग, मेनका तथा महजम्ब ये दो अप्सराएँ, हाहा-हुहु दो गन्धर्व, रथवन् और रथविष ये दो यक्ष, शीरेष्य और बभ नामक दो राक्षस ब्रह्मणः तथा आवाह यक्षमें सूर्यरथके साथ चलते रहते हैं।

आभण तथा भाद्रपदमें इन्द्र तथा विश्वम्भन् नामक दो अदित्य, अग्नि तथा भुगु नामक दो ऋषि, रत्नवर्ण तथा शङ्खपाल ये दो नाग, शम्भोषा और दुन्दुब नामक दो अप्सराएँ, धनु और दुर्धर नामक गन्धर्व, सर्प तथा जम्बा दो राक्षस, सोम तथा अग्रपूरण नामके दो यक्ष सूर्यरथके चलते रहते हैं।

अश्विन और वसिष्ठ यक्षमें पर्जन्य और पूष नामक दो अदित्य, और गौतम नामक दो ऋषि, पित्रोत्तर तथा वसुधेवि नामक दो गन्धर्व, तथा सुतापी दो अप्सराएँ, ऐश्वर्य और धनत्रय नामका दो नाग और सेहजित् तथा सुयेण नामक दो यक्ष, एवं यत्न नामक दो राक्षस सूर्यरथके साथ चला करते हैं।

मार्गशीर्ष तथा पौष मासमें अंशु तथा भग नामक

दो अदित्य, कश्यप और वज्र नामक दो ऋषि, महापद्म और कर्पूरक नामक दो नाग, चित्राङ्गद और अरणाधु नामक दो गन्धर्व, सह तथा सहस्रा नामक दो अप्सराएँ, नाश्वर्य तथा अर्धितुनेमि नामक यक्ष, आग तथा वात नामक दो राक्षस सूर्यरथके साथ चलते हैं।

श्रव-व्यासपुत्रमें क्रतुः पूष तथा जिष्णु नामक दो अदित्य, जम्बद्वि और विश्वविष नामक दो ऋषि, काश्यप और कम्पलक्ष्मण ये दो नाग, घृतशङ्ख तथा सूर्यदर्पा नामक दो गन्धर्व, विन्दोत्सव और रमा ये दो अप्सराएँ तथा सेनाजित् और सूर्यविज् नामक दो यक्ष, ब्रह्मोत्तम तथा यज्ञोत्तम नामक दो राक्षस सूर्यरथके साथ चलते रहते हैं।

ब्रह्माजीने ब्रह्म—ब्रह्मदेव ! तनी देवताओंमें अपने अन्तर्गत अन्त-शरीरोंको भगवान् सूर्यकी रक्षाके लिये ठहरे दिया है। इस प्रकार सत् देवता उनके रथके साथ-साथ चमकते रहते हैं। ऐसा कोई भी देवता नहीं है जो उनके पीछे चले। इस सन्निवेशण सूर्यनारायणके अन्तर्गत ब्रह्मण्यक, सन्निक यज्ञोत्तर, भगवद्भक्त विष्णुस्वरूप दीव विभवस्वरूप मानते हैं। ये स्थानाभिधानी देवता भगवान् सूर्यके आश्रयित करते रहते हैं। देवता और ऋषि भगवान् सूर्यकी स्तुति करते रहते हैं, गन्धर्व-गण गान करते रहते हैं तथा अप्सराएँ रथके आगे कृत्त करती हुई बलश्री रहती हैं। राक्षस रथके पीछे-पीछे चलते हैं। साठ हजार चालीसलक्ष ऋषिगण रथके धारों ओरसे घेरकर चलते हैं। दिवस्पति और स्वर्णभू रथके आगे, भर्ग और चारों ओर, कुम्भ दक्षिण दिशामें, वरुण उत्तर दिशामें, वीरिन्द्रोष और इरि रथके पीछे रहते हैं। रथके पीछमें पूषी, यक्षमें अक्षराश, रथकी वर्तनमें स्वर्ग, ध्वजगोत्र दण्ड, ध्वजगोत्र धर्म, पातकमें रुद्रि-वृद्धि और निवार हैं। भगवद्भक्तोंके ऊपरी भागमें गरुड तथा उसके ऊपर ब्रह्म स्थित है। वैष्णव पर्वत सत्रक दण्ड, हिमवत्तल सत्र संपन्न सूर्यके साथ रहते हैं। इन देवताओंका बल, शक्त, तेज, योग और तत्त्व वैसा है वैसा ही सूर्यदेव तपते हैं। ये ही देवगण हैं, बलवान् हैं, सृष्टिकार पालन-प्रेषण करते हैं, जीवोंके अन्तुष-कर्मको निवृत्त करते हैं, प्रज्जओंको आनन्द देते हैं और

भगवान् सूर्यका अधिवेक एवं उनकी भक्तिकथा

सूखने पड़ा—भगवान् ! भगवान् सूर्यकी रथयात्रा कम और किस स्थितिसे भी जाती है ? रथयात्रा करनेवाले, रथको खींचनेवाले, रथको चढ़ान करनेवाले, रथके रथचाल करनेवाले और रथके अग्रे नृत्य-गान करनेवाले एवं रात्रि-आकरान करनेवाले पुरुषोंको क्या करत है ? इसे अन्न लोकभक्त्यारण्यके लिये विदितसूर्यक कह्यो ।

ब्रह्माजी बोले—हे स्व ! अपने बहुत ज्ञान प्राप्त किया है । इसका विचार करता है, इसे क्या-क्या मनसे सुने ।

भगवान् सूर्यकी रथयात्रा और इच्छोत्पत्ति—ये दोनों जगत्को कल्याणके लिये मैं प्रवर्तित किये हैं । जिस देशमें मे दोनों महोत्सव आयोजित किये हैं, वहाँ दुर्भिक्ष नहीं होता और न चेरी आदिफल कोई कम ही रहता है । इसीलिये दुर्भिक्ष, अन्नरस आदि उपलब्धोपी स्थितिमें किये इन उत्सवोंको मनाना चाहिये । इसलिये सूर्य स्वकीको वृत्तके द्वारा भगवान् सूर्यको ब्रह्मसूर्यक ज्ञान करान चाहिये । ऐसा करनेवाला पुरुष सोनेके विमानमें बैठकर आकाश जाता है और वहाँ दिव्य भोग प्राप्त करता है । जो व्यक्ति चाहेउके साथ शरीर-वायव्य भोजन, विद्याभ और विज्ञानकी भक्तिके भगवान् सूर्यको अर्पित करता है, वह ब्रह्मलोकमें प्राप्त होता है । जो प्रतिदिन भगवान् सूर्यको भक्तिपूर्वक पूजना उद्योग लगाता है, वह पाम गतिमें प्राप्त करता है ।

पौष शुक्ल सप्तमीको तीर्थकी अल अर्घ्य करित करयो केदमनोके द्वार भगवान् सूर्यको स्नान कराया चाहिये । सूर्य-भगवान्के अधिवेकके समय प्रभात, पुष्कर, कुम्भोजन, नैमिक, पृथुदक (पेठ्या), शोण, गोकर्ण, ब्रह्मवर्षा, कुम्भवर्षा, मिलवक, नीलवर्षा, गङ्गाद्वार, गङ्गासागर, कलशमय, मित्रवन, भाण्डीरवन, चक्रतीर्थ, रामतीर्थ, गङ्गा, कपूर, स्मरती, सिन्धु, चन्द्रप्रभा, र्जस, विपास (व्यासन्दी), तापी, शिवा, वेङ्गती (वेतल), गोवर्षी, पञ्चोष्णी (पञ्चमिनी), कुष्णा, वेङ्ग, सप्तगु (सप्तगङ्गा), पुष्करिणी, वैशिश्वी (वोसो) तथा सरयु आदि सभी तीर्थों, नदियों और समुद्रोंका स्मरण करना चाहिये । दिव्य आकाश और देवस्थानोंका भी स्मरण करना चाहिये । इस प्रथम स्नान करकर तीन दिन, सात दिन, एक वर्ष अथवा अधिक दिनों अधिवेकके समयमें ही भगवान् सूर्य अधिवेक करे और प्रतिदिन भक्तिपूर्वक उनकी पूजा करता रहे ।

मध्य कालमें कुम्भ पक्षकी सप्तमीको बह्मल करहो तथा अष्टमिसे सूर्योदयित श्रीशिव एवं उनके ईश्वरीय बनी वैदीभर सूर्यकाभक्तिके भक्तिकर्माणि स्थापित करवान, ब्रह्मण-भोजन, वेद-पाठ आदि करवाने करत चाहिये । भगवान् मध्य शुक्ल तृतीयाको अर्घ्यकरित करत करे, पञ्चमीको एक बार भोजन करे, षष्ठीको शक्ति करत ही भोजन करे और सप्तमीको उपवास कर हमन, अष्टमीको उपवास करत करे । षष्ठ्यके दक्षिण देकर वैशिश्वकी भक्तिपूर्वक पूजा करे । तदनन्तर राजपटित सुवर्णके भगवान् सूर्यको पूजा करे । उस दिन भगवान् सूर्यकी पूजा करे । रात्रिमें जागरण करे और नृत्य-गीत गायत रहे । मध्य शुक्ल अष्टमीको रथयात्रा करनी चाहिये । रथके अग्रे विविध कर्तव्य करते रहे, नृत्य-गीत और बह्मल वेदपाठि लेवी रहे । रथयात्रा प्रथम नगरके उत्तर दिशासे प्रारम्भ करनी चाहिये, पुनः क्रमशः पूर्व, उत्तर और पश्चिम दिशाओंमें प्रणम कराना चाहिये । इस रथयात्रा करनेसे रथके सभी भक्तिकर्माणि प्राप्त होते हैं । रथको युद्धमें विजय मिलती है उस समयमें सभी प्रजा और पशुगण नैवेद्य एवं सुखी हो जाते हैं । रथयात्रा करनेवाले, रथको

१-पञ्चोद्ग तीर्थनामाणि स्नाना भगवान् सूर्यः ॥ १ ॥ २-नैमिक ॥ ३-पृथुदकं पञ्चोष्णी ॥ ४-शोणं गोवर्षी ॥ ५-ब्रह्मवर्षा ॥ ६-कुम्भवर्षा ॥ ७-मिलवक ॥ ८-नीलवर्षा ॥ ९-गङ्गाद्वारं ॥ १०-गङ्गासागरं ॥ ११-कलशमयं ॥ १२-मित्रवनं ॥ १३-भाण्डीरवनं ॥ १४-चक्रतीर्थं ॥ १५-रामतीर्थं ॥ १६-गङ्गा ॥ १७-कपूरं ॥ १८-स्मरती ॥ १९-सिन्धु ॥ २०-चन्द्रप्रभा ॥ २१-र्जस ॥ २२-विपास ॥ २३-तापी ॥ २४-शिवा ॥ २५-वेङ्गती ॥ २६-गोवर्षी ॥ २७-पञ्चोष्णी ॥ २८-कुष्णा ॥ २९-वेङ्ग ॥ ३०-सप्तगु ॥ ३१-पुष्करिणी ॥ ३२-वैशिश्वी ॥ ३३-सरायु ॥ ३४-सर्वे तीर्थानि ॥ ३५-सर्वे नद्यः ॥ ३६-सर्वे समुद्राः ॥ ३७-सर्वे देवस्थानाः ॥ ३८-सर्वे दिव्यस्थानाः ॥ ३९-सर्वे दिव्यभूतानि ॥ ४०-सर्वे दिव्यपशूनि ॥ ४१-सर्वे दिव्यपक्षिणः ॥ ४२-सर्वे दिव्यपुष्पाणि ॥ ४३-सर्वे दिव्यफलानि ॥ ४४-सर्वे दिव्यवस्त्राणि ॥ ४५-सर्वे दिव्ययानाणि ॥ ४६-सर्वे दिव्यशस्त्राणि ॥ ४७-सर्वे दिव्यसम्पत्तिः ॥ ४८-सर्वे दिव्यभोगाः ॥ ४९-सर्वे दिव्यक्रीडाः ॥ ५०-सर्वे दिव्यकर्मणि ॥ ५१-सर्वे दिव्यकल्याणाः ॥ ५२-सर्वे दिव्यसुखानि ॥ ५३-सर्वे दिव्यसन्निधिः ॥ ५४-सर्वे दिव्यसम्पत्तिः ॥ ५५-सर्वे दिव्यभोगाः ॥ ५६-सर्वे दिव्यक्रीडाः ॥ ५७-सर्वे दिव्यकर्मणि ॥ ५८-सर्वे दिव्यकल्याणाः ॥ ५९-सर्वे दिव्यसुखानि ॥ ६०-सर्वे दिव्यसन्निधिः ॥ ६१-सर्वे दिव्यसम्पत्तिः ॥ ६२-सर्वे दिव्यभोगाः ॥ ६३-सर्वे दिव्यक्रीडाः ॥ ६४-सर्वे दिव्यकर्मणि ॥ ६५-सर्वे दिव्यकल्याणाः ॥ ६६-सर्वे दिव्यसुखानि ॥ ६७-सर्वे दिव्यसन्निधिः ॥ ६८-सर्वे दिव्यसम्पत्तिः ॥ ६९-सर्वे दिव्यभोगाः ॥ ७०-सर्वे दिव्यक्रीडाः ॥ ७१-सर्वे दिव्यकर्मणि ॥ ७२-सर्वे दिव्यकल्याणाः ॥ ७३-सर्वे दिव्यसुखानि ॥ ७४-सर्वे दिव्यसन्निधिः ॥ ७५-सर्वे दिव्यसम्पत्तिः ॥ ७६-सर्वे दिव्यभोगाः ॥ ७७-सर्वे दिव्यक्रीडाः ॥ ७८-सर्वे दिव्यकर्मणि ॥ ७९-सर्वे दिव्यकल्याणाः ॥ ८०-सर्वे दिव्यसुखानि ॥ ८१-सर्वे दिव्यसन्निधिः ॥ ८२-सर्वे दिव्यसम्पत्तिः ॥ ८३-सर्वे दिव्यभोगाः ॥ ८४-सर्वे दिव्यक्रीडाः ॥ ८५-सर्वे दिव्यकर्मणि ॥ ८६-सर्वे दिव्यकल्याणाः ॥ ८७-सर्वे दिव्यसुखानि ॥ ८८-सर्वे दिव्यसन्निधिः ॥ ८९-सर्वे दिव्यसम्पत्तिः ॥ ९०-सर्वे दिव्यभोगाः ॥ ९१-सर्वे दिव्यक्रीडाः ॥ ९२-सर्वे दिव्यकर्मणि ॥ ९३-सर्वे दिव्यकल्याणाः ॥ ९४-सर्वे दिव्यसुखानि ॥ ९५-सर्वे दिव्यसन्निधिः ॥ ९६-सर्वे दिव्यसम्पत्तिः ॥ ९७-सर्वे दिव्यभोगाः ॥ ९८-सर्वे दिव्यक्रीडाः ॥ ९९-सर्वे दिव्यकर्मणि ॥ १००-सर्वे दिव्यकल्याणाः ॥

१-पञ्चोद्ग तीर्थनामाणि स्नाना भगवान् सूर्यः ॥ १ ॥ २-नैमिक ॥

३-पृथुदकं पञ्चोष्णी ॥ ४-शोणं गोवर्षी ॥ ५-ब्रह्मवर्षा ॥ ६-कुम्भवर्षा ॥

७-मिलवक ॥ ८-नीलवर्षा ॥ ९-गङ्गाद्वारं ॥ १०-गङ्गासागरं ॥ ११-कलशमयं ॥

१२-मित्रवनं ॥ १३-भाण्डीरवनं ॥ १४-चक्रतीर्थं ॥ १५-रामतीर्थं ॥ १६-गङ्गा ॥

१७-कपूरं ॥ १८-स्मरती ॥ १९-सिन्धु ॥ २०-चन्द्रप्रभा ॥ २१-र्जस ॥ २२-विपास ॥

२३-तापी ॥ २४-शिवा ॥ २५-वेङ्गती ॥ २६-गोवर्षी ॥ २७-पञ्चोष्णी ॥ २८-कुष्णा ॥

२९-वेङ्ग ॥ ३०-सप्तगु ॥ ३१-पुष्करिणी ॥ ३२-वैशिश्वी ॥ ३३-सरायु ॥ ३४-सर्वे तीर्थानि ॥

३५-सर्वे नद्यः ॥ ३६-सर्वे समुद्राः ॥ ३७-सर्वे देवस्थानाः ॥ ३८-सर्वे दिव्यस्थानाः ॥

३९-सर्वे दिव्यभूतानि ॥ ४०-सर्वे दिव्यपशूनि ॥ ४१-सर्वे दिव्यपक्षिणः ॥ ४२-सर्वे दिव्यपुष्पाणि ॥

४३-सर्वे दिव्यफलानि ॥ ४४-सर्वे दिव्यवस्त्राणि ॥ ४५-सर्वे दिव्ययानाणि ॥ ४६-सर्वे दिव्यशस्त्राणि ॥

सुर्वनारायणकी रघुसाहसा परत

ब्रह्माजीने कहा—हे महादेव ! इस प्रकार

आजैसी भगवान् भक्तकी रघुसाहा करनेवाला और दूसरेसे करनेवाला व्यक्ति पराए वर्षों (अष्टाजीकी आखी आयु) तक सुर्वलोकमें निवास करता है। उस व्यक्तिके सुखमें कोई क्षति होता है न कोई रोग। सुर्व भगवान्के आशुकी हितमें समर्पण करनेवाले तथा अनेक भक्तकी प्रशंसा करनेवाले व्यक्तिको सुर्वलोक प्राप्त होता है। नरक आदि तीर्थोंसे बच सकने जो सुर्वनारायणको ज्ञान करता है, वह कर्मलोकमें निवास करता है। लाल रंगका फल और गुड़का समर्पित करनेवाला प्रसाधितलोकको प्राप्त करता है। भक्तिपूर्वक सुर्वनारायणको ज्ञान करके पुनः करनेवाला व्यक्ति सुर्वलोकमें निवास करता है। जो व्यक्ति मुक्तिको रक्षक पढ़ता है, शकें मार्गसे पवित्र करता और पुनः, तेरण, पताका आदिसे अलंकृत करता है, वह कर्मलोकमें निवास करता है। जो व्यक्ति नृत्य-गीत आदिसे इस कृत उत्सव मनाता है, वह सुर्वलोकको प्राप्त करता है। जो व्यक्ति शक पवित्राज्ञान करने है, उस दिन जागरण करनेवाला पुनः पुनः व्यक्ति निरकार आनन्द प्राप्त करता है। जो व्यक्ति भगवान् सुर्वकी सेवा आदिसे हितमें व्यक्तिमें निवेशित करता है, वह सभी कर्मनाओंको प्राप्त कर सुर्वलोकमें निवास करता है। रघुसाह भगवान् सुर्वका दर्शन करना बड़े ही उत्सव है। जब रघुकी यात्रा उत्तर अथवा दक्षिण दिशाकी ओर होती है, उस समय दर्शन करनेवाला व्यक्ति धन्य है। जिस दिन रघुसाह हो, उसके सालपर बाद उसी दिन पुनः रघुसाह करनी चाहिये। यदि वर्षके बाद यात्रा न कर सके तो बारहवें ही अतिशय उत्साहके साथ उत्सव सम्पन्न कर यात्रा सम्पन्न करनी

चाहिये। जोरमें नहीं करनी चाहिये।

प्रथम हनुमान्के उत्सवमें भी यदि विघ्न हो जाय तो बारहवें वर्षमें ही उसे सम्पन्न करना चाहिये। जो व्यक्ति रघुसाहकी करता है, वह इन्द्रादि लोकपालके सम्मुखको है। यात्रामें विघ्न करनेवाले व्यक्ति बंधे रहता है। सुर्वनारायणकी पूजा किये जो अन्य पूजा करता है, वह पूजा है। रघुसाहके जो सुर्वनारायणका दर्शन करता है, वह विघ्न हो है। बड़ी, सप्तमी, पूर्णिमा, अमवास्या और दर्शन करनेसे बहुत पुण्य है। अष्टाद, पूर्णिमाको अनन्त पुण्य होता है। इन तीन मासोंमें ही करनी चाहिये। इनमें (वर्षिक-पूर्णिमा) पञ्चदायक होनेसे कहा गया है। इन समयोंमें उपवासकर जो भक्तिपूर्वक सुर्वकी पूजा करता है, वह सहस्रकों प्राप्त करता है। अष्टाद अमुक्त करनेके हितमें प्रतिमामें विधा सुर्विक पड़ान करने है। व्यक्ति मुनन करके जप, स्नान, दान आदि करता है, वह उत्सव है। सुर्व-कर्मों ही मुनन चाहिये। जो व्यक्ति इस दीक्षित होकर सुर्वनारायणकी आराधना है, परम गतिमें प्राप्त है। महादेवजी। इस रघुसाहके विधानका वर्णन किया। इसे जो पढ़ता है, मुक्त है। सभी कर्मरके रोगोंसे मुक्त हो जाता है और विधिपूर्वक रघुसाहका करनेवाला व्यक्ति सुर्वलोकको जाता है।

(अध्याय ५८)

रघुसाहसी तथा भगवान् सुर्वकी महिमात्मक वर्णन

ब्रह्माजी बोले—हे रघु ! उसके कुछ पक्षकी वही विधिके करके गन्धि करने सुर्वनारायणकी पूजाकर हितमें उनके सम्मुख प्रदन करे। सप्तमीमें प्रातःकाल विधिपूर्वक पूजा करे और उत्तराश्विपूर्वक जलहोत्रको भोजन करे। एक वर्षका सप्तमीको

करकर रघुसाह करे। कृष्णार्धमें तुलीया तिथिमें एकपुत, ज्युषीको नक्तस, पक्षमीको अर्धविह्वल, बड़ीको पूर्ण उपवास तथा सप्तमीको खरण करे। रघुसाह भगवान् सुर्वकी भक्तिपूर्वक पूजाकर सुर्वी तथा रघुदिसे अलंकृत तथा तेरण, पञ्चदिसे सुर्वीकर रघुमें सुर्वनारायणकी प्रतिमा स्थापित कर

आहुतिका की पूजा करके उसका दान कर दे। इससे अन्धकारों को दूर हो जायेगा, अन्धकार रथ बन्द कर आचार्यको दान करे, यह देवे ! यह माघ-सप्तमी बहुत उत्तम तिथि है, पहले ही करनेवाली इस रथसप्तमीको भगवान् सूर्यके ज्ञान, दान, होम, पूजा आदि सत्कर्म से युक्त हो जाता है। जो कोई भी इस बातको है, अथवा मनोरथको करता है। इस सप्तमीके भक्तिपूर्वक श्रवण करनेवाला व्यक्ति आहुतियोंके मुक्ति पा जाता है।

सुमन्तु मुनिने कहा—उम्ह ! इस प्रकार रथसप्तमी विधान अपने लक्ष्यको करते करते और रुद्रदेवता भी अपने धाम चले गये। आप को क्या सुनना चाहते हैं, यह बताये।

राजा शातापीकने कहा—हे महाराज ! सूर्यको प्रशस्तता में काशीयक वर्णन करो। अनुयायों के सुनिश्चित



आदि मेरे पितामहोंको सचो दिव्य भोजन

(अध्याय ५९-६०)

भगवान् सूर्यद्वारा योगका वर्णन एवं ब्रह्मजी द्वारा दिव्यीको दिया गया उपदेश

सुमन्तु मुनिने कहा—उम्ह ! ऋषियोंको प्रकर ब्रह्मजीने सूर्यनारायणकी अवस्थाको उपदेश दिया, उसे मैं सुनाता हूँ।

तब ऋषियों ब्रह्मजीसे प्रार्थना की कि महाराज ! सभी प्रकारकी वित्तवृत्तिके निरोधरूपी बंधों

करनेवाला जगत् पति मिला था, जिससे जन्म भी ले आहुतियोंसे संयुक्त करते थे। जिन भगवान् सूर्यकी देवता, ऋषि, तथा मनुष्य आदि निरन्तर आराधना करते रहते भगवान् भक्तिके महात्मको मैंने अनेक बार सुना है, उनसे विहाय सुनते-सुनते मुझे तृप्ति नहीं होती। जिनसे सम्पूर्ण विश्व उत्पन्न हुआ जिनके उदय होनेसे ही जलक चेतन होता है, जिनके हाथोंसे लोकमूर्खित जल और विष्णु तथा तत्परासं शंकर उत्पन्न हुए हैं, उनके प्रभावका वर्णन कर सकता हूँ ? मैं सुनना चाहता हूँ कि मन्त्र, होम, दान, ज्ञान, जप, पूजन, होम, तथा करनेसे भगवान् सूर्य सभी को निकट करते हैं और संसार-सागरसे मुक्त करते हैं, क्या उनकी उपाय मन्त्र, स्तोत्र, रहस्य, विद्या, पाठ, व्रत आदिको बखाने, जिनसे भगवान् सूर्यका कीर्तन हो और विद्या धन्य हो। विद्या धन्य है जो भगवान् सूर्यका स्मरण करता है। सूर्यकी अवस्थाके विना यह शरीर व्यर्थ है। एक बार भी सूर्यनारायणको प्रणम करनेसे प्राणीका गवसागरसे उद्धार हो जाता है। रथोक्त अक्षय मेरुपर्वत, आहुतियोंका अक्षय अवतार, लोकोंका अक्षय यज्ञ और सभी देवताओंका भगवान् सूर्य है। मुने ! इस प्रकार अन्तः गुणोवाले भगवान् सूर्यके पादलम्बों बहुत ही सुख है। दैवगण भी भगवान् सूर्यकी ही करते हैं, यह भी मैंने सुना है। यह वेद कहता है कि सम्पूर्ण प्राणियोंके हृदयमें तब समरथमासे समस्त पाप-तपोंको दूर करनेवाले भगवान् सूर्यकी भक्तिपूर्वक उपासना कर मैं भी संसारसे मुक्त हो जाऊँ।

अपने वैजलकचको देनेवाला कहा है, किंतु यह योग अनेक जन्मोंकी साधनाके द्वारा प्राप्त हो सकता है। क्योंकि ब्रह्म उलूक करनेवाले विषय दुर्लभ, मन किसी ब्रह्मसे स्थिर नहीं होता, राग-द्वेष आदि दोष नहीं छूटते और पुरुष अत्यायु होते हैं, इसलिये योगसिद्धि प्राप्त

सेना अतिशय कठिन है। अतः अगर ऐसे किसी सचनका उपदेश करे जिससे बिना परिश्रमके हो निस्तार हो सके।

ब्रह्मजीने कहा—मुनेबरो ! **॥॥** पूजन, **॥॥॥** वप, वाक्पचास और ब्राह्मण-भोजन आदिसं सुर्वप्रयत्नकी अश्रयण करना ही इसका मुख्य उपाय है। यह निश्चय है।

॥॥ बुद्धि, **॥॥** दृष्टि आदिसं सुर्वप्रयत्नकी अश्रयण करने लगे रहें। ये ही परब्रह्म, अक्षर, सर्वव्यापी, सर्वकारी, अव्यक्त, अविनश्य और मांशकी देनेवाले हैं। अतः **॥॥** उनकी अश्रयणा कर अपने मनोव्यापकत फलको प्राप्त करें **॥॥** सबसगारमें मुक्त हो जायें। ब्रह्मजीसे यह सुनकर मुनिनय सुर्वनाशयनकी उपासना-रूप निश्चययोगमें **॥॥** हो गये। हे राजन् ! निश्चयेमें हुये हुए संसारके दुःखी जेमेकेमें मुक्त भवनेवाले सुर्वप्रयत्नके **॥॥॥** और **॥॥** फल है, इसलिये उठते-बैठते, चलते-सोते, भोजन करते हुए वगैरा सुर्वप्रयत्नका ही अश्रय करो, भक्तिपूर्वक उनकी अश्रयणमें प्रवृत्त होओ, जिससे जन्म-मरण, उन्नीय-वन्नीयसे मुक्त इस संसारसमुद्रसे तुम पार हो जाओगे। जो पूरक जगत्कर्ता, सदा करण देनेवाले, दयालु और प्रहरीक **॥॥** कीसुर्वप्रयत्नकी शरणमें जाता है, वह अवश्य ही मुक्ति प्राप्त करता है।

सुमन्तु मुनिने पुनः कहा—राजन् ! **॥॥॥** करने करने दिव्यकी ब्राह्मण्य रूप गयी थी। उस ब्राह्मणके फलसे दूर ब्रह्मकी स्थिति उन्होंने बहुत दिनोंतक सुर्वप्रयत्नकी अश्रयण और स्तुति की। उससे प्रसन्न हो भगवान् सुर्व उनके पास आये। भगवान् सुर्वने कहा—'दिष्टिन् ! तुम्हारी भक्तिपूर्वक की गयी स्तुतिसे मैं बहुत प्रसन्न हूँ, अपना अभीष्ट कर लो'।

दिष्टिन्ने कहा—महाराज ! अपने पञ्चस्वर मुखे दर्शन दिया, यह मेरी सौभाग्यकी बात है। यही मेरे लिये सर्वश्रेष्ठ **॥॥** है। पुण्यहीनके लिये **॥॥॥** दर्शन सर्वोत्तम दुर्लभ है। आज सबके हृदयमें स्थित है, अतः अगर सम्बन्ध अभिप्राय जानते हैं। जिस प्रकार मुखे ब्राह्मण्य रूपी है, उसे तो अगर जानते हैं हैं। भगवान् ! आज मुझपर ऐसा अनुग्रह करें कि मैं इस निर्दिष्ट ब्राह्मण्यसे तथा अन्य पापोंसे उचित मुक्त हो जाऊँ और मैं सकल-मनोरथ हो जाऊँ। आप संसारसे **॥॥॥**

ब्रह्मण्ये, जिसके आचरणसे संसारके **॥॥॥** सुखी हों। दिष्टिने इस यत्नको सुनकर **॥॥॥** भगवान् सुर्वने उन्हें निर्विकल-योगका उपदेश दिया, जो दुःखके निवारणके लिये औपकार्य है।

दिव्योंने प्रार्थना करते हुए कहा—महाराज ! यह निश्चय-योग तो बहुत कठिन है, **॥॥॥** हृदययोगी जीतना, मनमें स्थिर करना, अहं-दर्शनदिक अभिमान और पमात्मका त्याग **॥॥॥** राग-द्वेषमें बचना—ये **॥॥** अतिशय कष्टसाध्य हैं। ये कठिन कई जन्मोंके अभ्यास करनेसे प्राप्त होती है। अतः अगर ऐसा सचन ब्रह्मण्ये, जिससे अनायास बिना बिहोम परिश्रमके **॥॥॥** हो जाय।

भगवान् सुर्वने कहा—राजन् ! यदि तुम्हें मुक्तिकी इच्छा है तो समस्त क्लेशोंको ब्रह्म करनेवाले श्रवणयोगमें सुनो। अपने मनको मुखमें लगाओ, प्रीतिमें मेरा पूजन करो, मेरा पूजन करो, मेरे परवश हो जाओ, आत्माको मेरेमें लगा दो, **॥॥** रामस्मरण करो, **॥॥** करो, सम्पूर्ण ब्रह्मार्थमें मुझे **॥॥॥** समझो', ऐसा करनेसे तुम्हारे सम्पूर्ण दोषोंका निवृत्ति हो जायगा और तुम मुझे **॥॥** कर लगेगे। भलीभांति मुझमें अवसर हो जानेपर राग-लोभादि **॥॥॥** **॥॥॥** कृताकुलता हो जाता है। अपने मनको स्थिर करनेके लिये श्रेष्ठ, खड़ी, तप्त, पाकण, ब्रह्म आदिसं मेरी प्रतिमाका निर्विकल **॥॥॥** **॥॥** फिर ही निश्चयकर विविध उपचारोंसे भक्तिपूर्वक पूजन करो। सर्वप्रकारसे प्रतिमाका अश्रय ग्रहण करो। चलते-फिरते, भोजन करते, अंगो-पीछे, ऊपर-नीचे उठीक भजन करो, उसे पवित्र तीर्थोंके जलमें स्नान कराओ। राग, पुत्र, पत्न, स्वपुत्र्य, विविध नैवेद्य और जो पदार्थ सर्वको फिर से उन्हें अर्पण करो। इन विविध उपचारोंसे मेरी प्रतिमाको संतुष्ट करो। कभी कभीकी इच्छा हो तो मेरी मूर्तिके आगे मेरा गुण-मुखाद राओ, सुन्नेकी इच्छा हो तो हमारी कथा सुनो। इस प्रकार मुझमें अपने मनको अर्पण करनेसे तुम्हें जन्मकल्पी **॥॥॥** हो जायगी। सभी कर्म मुझमें अर्पण करो, करनेकी कोई बात नहीं। मुझमें मन लगाओ, जो कुछ करो मेरे लिये करो, ऐसा करनेसे तुम ब्राह्मण्य आदि सभी दोष-पापोंसे

संहारशक्ति प्राप्त की है। प्रविष्टान भी उनके ही कृपाप्रसादको अनुभव करके, जिससे सभी ज्ञेय हो जायेंगे और तुम प्रसन्न मनोका करनेमें समर्थ होते हैं। इसलिये तुम भी पूजन, उपास आदिसे सर्वसर्वत्र सूर्यके

(अध्याय ६१—६३)

—CH—

भगवान् सूर्यके अनुष्ठान तथा मन्दिरमें अर्चन-पूजनकी फल-सप्तमी-प्रतका फल

दिष्टीमें ब्रह्माजीसे पूजा—ब्रह्मन् ! अपने अद्वैत-विद्यायोगको मुझे बतलाव, अब मैं यह बातमनेकी करे कि भगवान् सूर्य उपाससे कैसे प्रसन्न होते हैं ? करनेवालेके लिये क्या-क्या त्याग्य है ? आराधनमें क्या करना चाहिये, इसका फल विज्ञानपूर्वक वर्णन करे।

ब्रह्माजी बोले—दिष्टिन् ! भगवान् सूर्य पुनः अद्वैतपूजन करनेसे हो जाते और तत्त्व फल देते हैं। भावोंसे रहित होकर सद्गुणोंका आश्रय ग्रहण कर, सभी योगोंका परिष्कार करना ही उपवास कहलता है। उपवाससे कौन कौन मनोव्यभिक्त फल प्राप्त होते ? एक रात, दो रात, तीन रात या रात-रात करनेवाला निश्चय होकर उपवासकर मन, वचन और सूर्यनारायणकी आराधनामें तत्पर रहे तो अक्षय्यलाभसे प्राप्त कर सकता है। यदि सत्त्विक किसी कामकासे दाक्षिण्य होकर भगवान् सूर्यकी उपासना करे तो प्रसन्न होकर भगवान् उसकी कामना पूर्ण कर देते हैं।

करनेवाले आराधन सूर्यनारायणकी तत्परातापूर्वक आराधनके बिना किसी प्रकार भी सफल नहीं मिलती। अतः पुष्प, धूप, चन्दन, आदिसे भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा और प्रसन्नताके लिये उपवास करना चाहिये। उत्तम पुष्पके न मिलनेपर कृष्णिक कोमल फूल अथवा दुर्वाक्षुरसे पूजन करना चाहिये। पुष्प, पत्र, फल, जल जो भी पञ्चाराति मिले, उसे ही भक्तिके साथ भगवान् सूर्यको अर्चन करना चाहिये। इससे भगवान् सूर्यके अनुत्तु तृप्ति प्राप्त होती है। सूर्यनारायणके मन्दिरमें सदा ब्रह्म देवैश्च धूम्रिभ्यो अन्नं कणिकरैर्द्रोणी, उतने सम्प्रत्यक्त सूर्यके स्मरण होकर यह स्वर्गमें रहता है। मन्दिरके छोटे भागका भी दर्शन करनेपर उस

दिनके फलसे व्यर्थ फल है। गोमयसे, मृत्तिका अथवा चातुर्भुज के पुष्पोंसे मन्दिरमें उपलेपन है, यह सूर्यलेकमें है। मन्दिरमें जलसे विद्वज्जन करनेवाला करणलेकमें है। लेपन हुए पुष्प विशेषता है, कभी दुर्गति नहीं मन्दिरमें टीका प्रणालित करनेवाला सभी प्रसन्नता करता है। पक्ष्मलेकलेक अन्न सभी पक्ष्मलेक कापुसे हिलनेपर जाते हैं। गीत, वाद्य और नृत्यके द्वारा मन्दिरमें उत्सव कियासे, गन्धी और भस्माराई करन नृत्य करती है। जो पुराणका पठ है, उसे बुद्धिसे प्राप्ति होती है और वह (सभी) ब्रह्म ज्ञानेवात्स्य) हो है। सूर्यके आराधनसे जो चाहो प्राप्त कर सकते हो। इसकी आराधनासे श्रेष्ठ गन्धर्व, कर्तृपथ विद्याधर, देवता जन गये हैं। इन्हीं इन्हीं आराधनसे ही इन्द्रका प्राप्त किया है। ब्रह्माजी, गृहस्थ और वानप्रस्थ एवं क्षत्रिय के ही उपास्य है। शिवेन्द्रिय संस्थाही भी इनके अनुष्ठानसे मुक्तिमें प्राप्त करते, ये ही मोक्षके हैं। इस तरह सभी वर्ण और अश्वमेधिक आश्रय एवं परमगति भगवान् सूर्य हैं।

दिष्टिन् ! अब मैं और फल-सप्तमीका वर्णन करता हूँ। फल-सप्तमीका व्रत करनेसे सभी नष्ट हो जाते हैं। सूर्यलेककी प्राप्ति होती है। शुक्रा चतुर्थीको अवर्जित-का कर पञ्चमीको एक बार भोजन करे, क्षीको जितलोच, कितेन्द्रिय होकर पूर्ण उपवास करे और

१-विद्वज्जन करनेवाले पुष्पोंके बिना किसी प्रकार भी सफल नहीं मिलती। अतः पुष्प, धूप, चन्दन, आदिसे भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा और प्रसन्नताके लिये उपवास करना चाहिये।

२-उत्तम पुष्पके न मिलनेपर कृष्णिक कोमल फूल अथवा दुर्वाक्षुरसे पूजन करना चाहिये। पुष्प, पत्र, फल, जल जो भी पञ्चाराति मिले, उसे ही भक्तिके साथ भगवान् सूर्यको अर्चन करना चाहिये। इससे भगवान् सूर्यके अनुत्तु तृप्ति प्राप्त होती है।

भक्तिके साथ सभी सुखद्वारापत्ती पूरा करे।
 यत्ने भगवान् सुखिके सम्पुर्ण पुष्पक पर शक्ति करे।
 सूर्य भगवान्का ध्यान करते हुए उठकर स्नान-पूजन करे
 और खजूर, नारियल, आम, फलसुख अर्द्ध भोजन
 लगावे और ब्राह्मणको दे भोजन भी ब्राह्मणके रूपमें उन्हें
 करे। यदि ये न मिले तो इक्षिक (जवला) गेहूँका
 लेकर उसमें गुड़ मिलाने और ही भगवान् सूर्यको भोग लगावे,
 ब्राह्मण-भोजन करावे। वर्षाकाल राखीका व्रत
 कर अन्तमें करे। गोमूत्र, गोमय, गोदुग्ध, दही, घी,
 कुवाच जल, ब्रह्मिन्, शिल और सरसोंका उबटन, पुष्प,
 गौकै लीलाका जल, चनेलीके फूलके रस—इनसे और इक्षिक
 करे। ये करण करनेकरे है। सभी फल, सस्यसम्पन्न भूमि, चन्द्रमुख
 बछड़ेके साथ गौ, सिन्धुके और कर्कश
 ब्राह्मणोंके वे। जो सौख्य-सम्पन्न हो वह अथवा अनेके

शिल्पक, फल दो फल दे। सोम, रत्न और वस्त्र
 करे। भोजन करावे। इस प्रकार ब्रह्मण
 सम्पन्न करे। वह फल-सामग्रीका विधान कहा गया है।

वह अविश्वस्य पुष्पकभी सप्तमी सभी पापोंका
 करनेकरे है। इस दिन भगवान्का मनुष्य सूर्यलेखको प्राप्त
 करता है। यहाँ देव, गन्धर्व और अप्सराओंके साथ पूजित
 होता है। इस ब्रह्मण को करता है, वह पान, परिग्रह और सभी
 प्रयत्नके दुःखोंसे मुक्त हो जाता है। इस ब्रह्मण करनेसे ब्राह्मण
 सुख, क्षत्रिय इन्द्रलेख, वैश्य कुम्भ-लेखमें निवास करता है।
 यह इस ब्रह्मण करनेसे ईश्वर प्राप्त कर लेता है। पुनर्हीन
 पुत्र प्राप्त करता है, दुर्गा लीलाकाशालिनी होती है और विधवा
 बच्चे नहीं करता। इस पदाधीन पदाधीन
 सन्तान सम्पन्न चाहिये। इस फल-सामग्रीकी
 अथवा अथवा ब्रह्मण करनेवालीकी सभी इक्षिक पूर्ण हो
 जाती है। (अथवा ६४)

राखी-सप्तमी-ब्रह्मण • त्वाज्य पदार्थका विवेक •

ब्रह्मण विधान एवं फल

ब्राह्मणीके ब्रह्मण—विधि। अथ वी राखी-सप्तमी-
 ब्रह्मण विधान राखी है। इस ब्रह्मण करनेसे अनेकों अने
 अनेवाली ब्रह्मण पीड़ी तथा पीछेकी भी सत्ता ब्रह्मण कुम्भके
 उद्धार हो जाता है। जो इस ब्रह्मण विधिमें फलन करता है,
 उसे धन, पुत्र, आरोग्य, विद्या, विनय, तथा अथवा
 भक्तिकी भी है। इस ब्रह्मण निम्न प्रकार
 है—सबमें मिश्रभय रहते हुए भगवान् सूर्यका करता
 रहे। मनुष्यको ब्रह्मण दिन न लेखका स्पर्श करना चाहिये, न
 नीला वस्त्र धारण करना चाहिये तथा न औषधसे स्नान करना
 चाहिये। करण तो करे ही नहीं। इस दिन नीला
 धारण करके जो सत्कर्मा करता है, वह निष्फल होता है। जो
 ब्राह्मण इस ब्रह्मण दिन एक बार नीला वस्त्र धारण कर ले तो
 उसे उचित कि सप्तमी दुष्टिके शिरो उपास करके
 पञ्चगव्य-प्राशन करे, तभी वह शुद्ध होता है। यदि अज्ञानवश
 नील वस्त्रकी रस्सीसे कोई ब्राह्मण दन्तधवन कर लेता है तो
 वह दो चान्द्रायण-व्रत करनेसे शुद्ध होता है। इस दिन

रामपुष्पके रणके प्रवेश करनेवाले ही तीन पुष्प-
 करनेसे है। जो भक्ति करण
 नील वस्त्रके धारण करण जात वह पञ्चगव्य-प्राशनसे ही
 शुद्ध होता है। यहाँ नील एक बार बोधे जाती है, वह भूमि
 वर्षाकाल रहती है।

राखी-सप्तमी-ब्रह्मण दिन जो लेखका स्पर्श करता है,
 उसकी विष पाप्य नष्ट हो जाती है, अतः लेखका स्पर्श नहीं
 करना चाहिये। इस विधिके किसीके साथ द्रोह और क्रूरता भी
 करना उचित नहीं है। इस दिन गीता गाना, नृत्य करना,
 ब्रह्मण, शिव देवता, भगवान् हीराना, साथ
 शम्भु करना, हृत्-कीर्ता, ऐरा, दिनमें सोम, असत्य बोलना,
 दुष्टोंके अनिष्टका विचार करना, किसी भी जीवको मार देना,
 अर्थात्क भोजन करना, गली-कूचोंमें भ्रमण, शंका,
 कठका तथा क्रूरता—इन सबका प्रयत्नपूर्वक परित्याग
 देना चाहिये।

इस ब्रह्मण अथवा भ्रमसे करना चाहिये। अतः

पर्यंकर कुछ-रोगसे विदीर्ण हो गया था, वह सर्वथा रोगमुक्त कैसे हुआ और तुम्हारे गरीबी दूर हो गई ? जो भी कैसे बच गयी ? यह सब मुझे बताओ ।

साधुने कहा—महाराज ! मैं भगवान् सूर्यदेवताओं के सहजानामोदारा हूँ । उस समय प्रभवसे उन्होंने प्रसन्न होकर मुझे सबकुछ दर्शन दिया है और उनसे मुझे करवी भी प्राप्ति हुई है ।

वसिष्ठने पुनः पूछा—तुम्हें किस बात, तब तुम्हें उससे सबकुछ दर्शन हुआ ? यह सब किसकारसे बातलाओ ।

साधुने कहा—महाराज ! भगवान् सूर्यदेवताओं के प्रथम किंवदन्ती, वह समयका कृतार्थ अथवा पूर्वक सुनें ।

अबसे बहुत पहले अज्ञानका दुर्बल मुक्ति उपपादक किया था । इसीलिये प्रभुओं अथवा उन्होंने मुझे कुछरोगसे घल होनेका आप दे दिया, जिससे मैं कुछरोगी हो गया । सब अथवा दुःख एवं लज्जित होने हुए मैं अपने पिता भगवान् श्रीकृष्णके पास जाकर निवेदन किया—‘तब ! मैं दुर्बल मुक्तिके शायमे कुछरोगसे घल होकर आपकीपक्ष पीड़ित हूँ, मेरा गरीब गलत हो रहा है । कष्टका सब की बैठता जा रहा है । पीड़ामें आज निकल रहे हैं । मैंने आप उपचार करनेपर भी मुझे शक्ति नहीं मिलती । अब आपकी आज्ञा आज कर मैं आज स्वागत करता हूँ । अब मुझे यह आज देनेकी कृपा करें, जिससे मैं इस कष्टसे मुक्त हूँ ।’ मेरा यह दिन वचन सुनकर उन्हें कहा दुःख हुआ और उन्होंने क्षणपर कर मुझसे कहा—‘पुत्र ! मैं शरण करो, पिता मत करो, क्योंकि जैसे सुने निवेदनो आज जलकर भस्म कर देती है, कैसे ही किन्तु करनेसे वेग और अधिक कह देता है । प्रतिपूर्वक तुम देकराधन करो । उससे सभी रोग हो जायेंगे । पिताके ऐसे वचन सुनकर मैं पूछा—‘तब ! ऐसा मैं देवता है, जिसकी आराधना इस भयंकर रोगसे मैं मुक्ति पा सकूँ ?’

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—पुत्र ! एक समयकी योनि, योनिश्रेष्ठ याज्ञवल्क्य मुनिने महालोकमें परमेश्वर महादेवीके प्रणाम और उनसे पूछा कि महाराज ! यो

करनेके इच्छुक सभीको किस देवताकी आराधना करनी चाहिये ? अथवा सर्वकी प्राप्ति किस देवताकी उपासना करनेसे होती है ? वह परावर किन्तु किससे उत्पन्न हुआ है और किसमें लीन होता है ? इन सबका ज्ञान वर्णन करें ।

भगवान् बोले—महर्षे ! आपने बहुत अच्छा प्रश्न पूछा है । वह सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हूँ । मैं आपके प्रश्नोत्तर उत्तर दे रहा हूँ, इसे ध्यानपूर्वक सुनें—जो देवदेव अपने उदयके साथ ही सपना जगत्पत्र अथवा नष्ट कर तीनों लोकोंको प्रतिपक्षित कर देते हैं, वे अन्न-अन्न, अन्न, शाश्वत, सुख-असुखके जाननेवाले, कर्मसाक्षी, सर्वदेवता और जगत्के हैं । यह सबका कभी क्षय नहीं होता । वे देवता, देवताओंके देवता, जगत्के आधार, सृष्टि, विनाश तथा संसारकाही हैं । वे ही मुख्य वायुका होकर जिनमें लीन हो जाते हैं, जिनकी सहज रश्मियोंमें मैं, सिद्धिगण और देवता निवास करते हैं, जन्म, मृत्यु, बालविलय, विनाश, धार्मिक आदि योगिगण प्रभाव-मन्त्रमें बंधित हुए हैं, ऐसे ही ब्रह्मा देवता सूर्यकराधन की हैं । जन्म, विष्णु तथा शिव आदिभ्य नाम जो मात्र सुननेमें ही हैं, पर सभीको वे दुष्टिगण नहीं होते, किन्तु विविधवस्तु सूर्यकराधन सभीको प्रभव दिलायी देते हैं । इसीलिये वे सभी देवताओंमें श्रेष्ठतम हैं । अतः याज्ञवल्क्य ! अथवा सूर्यकराधनके अतिरिक्त अन्य किसी देवताकी उपासना नहीं करनी चाहिये । इन देवताकी आराधना करनेसे सभी फल प्राप्त हो सकते हैं ।

याज्ञवल्क्य मुनिने कहा—महाराज ! आपने मुझे बहुत ही उत्तम उपदेश दिया है, जो बिलकुल सत्य है, मैं पहले भी बहुत बार सूर्यकराधनके महात्म्यको सुना है । यह श्रद्धा अथवा विश्वास, धर्म अथवा आप और ललाटेसे नष्ट उत्पन्न हुए हैं, उनकी तुलना और कर्म देवता कर सकते हैं ? उनके गुणोंका वर्णन पत्र किन्तु प्रसन्नोक्ति किया जा रहा है ? मैं उन आराधना-विधिको सुनना चाहता हूँ, जिसके द्वारा मैं संसार-सागरसे पार कर जाऊँ । मैं कर्म-से तत्-उपवास-दम, शेष-अप आदि है, जिसके करनेसे सूर्यकराधन प्रसन्न होकर समस्त कष्टोंको दूर कर देते हैं ? यह अथवा कर्तव्यको कृपा करें, क्योंकि प्राणिमोदारा

धर्म, अर्थ ■■■ कामाग्नी प्रतिके लिये जो चेष्टाएँ की जाती हैं, उनमें वही चेष्टा ■■■ है जो मगधन् सूर्यनाम आश्रय ग्रहण कर अनुरोधित हो। अन्यथा वे सभी क्रियाएँ व्यर्थ हैं। इस अपार जोर संसार-सागरमें निम्न प्रक्रियेकेएक ■■■ किया गया सूर्यनामस्वर मुक्तिमें प्राप्त ■■■ देता है^२। भक्तिमायसे परिपूर्ण याज्ञवल्क्यके इन शब्दोंको सुनकर श्रद्धाभी प्रदत्त हो उठे और कहने लगे कि याज्ञवल्क्य ! ■■■ सूर्यनामस्वराको आश्रयनाम जो उपन्य ■■■ है, उसका भी वर्णन कर रहा है, एकप्रकृति होकर ■■■ सने।

ब्रह्माजी बोले—अद्वि और अपनासे रहित, सर्वव्याप्त, स्वच्छ, अपनी लीलासे प्रकृति-पुष्प-रूप बनकर सत्त्व, रसायन, तत्त्व करनेवाले, अक्षर, सृष्टि-रचनाके अग्रगण्य साधक, पालनके अग्रगण्य विष्णु और रक्षककास्यो लक्षण । पालन करनेवाले सर्वविधायक, पूज्य मायावान् सूर्यजन्मन ही हैं । वेदभेदस्वरूप भगवान् सूर्यको जन्म देकर, जन्मका कर्मन करीगा, अस्वतः ही, अद्वि प्रकृत होकर भगवान् भास्करने लगे ।

ब्रह्माजी पुनः बोले—पञ्चमस्कन्ध ! ■■■ ■■■ धीरे
भगवान् सूर्यसायणधर्म की जति थी । ■■■ कृत्तिले ■■■ होकर
■■■ प्रकट हुए, तब ■■■ पूजा ■■■ महाराज !
वेद-वेदाङ्गोंमें और पुराणोंमें आपका ही प्रतिबदन हुआ है ।
■■■ वराहा, अज तथा पञ्चवक्त्ररूप हैं । यह जगत् आपके
ही नियत है । गृहस्थाश्रम ■■■ मृत है, ऐसे ■■■ चन्दे
अश्वमेधाखोले रात-दिन आपकी अनेक मूर्तियोंको पूजन करते
हैं । आप ही सबके भला-फिदा और पूज्य हैं । आप किया
देवताओं का क्या कार्य पूजन करते हैं ? मैं इसे नहीं समझ पा रहा
हूँ, इसे मैं सुनना चाहता हूँ, धीरे धनमें बड़ा बौद्धिकल है ।

भगवान् सूर्यनि वन्द्या—नमस् ! यह अत्यन्त गुप्त बात है, किन्तु आप मेरे परम भक्त हैं, इसलिये मैं इसका वक्तव्य वर्णन कर रहा हूँ—वे परमेश्वर सभी प्राणियोंके व्याप्त, अकाल,

निष्क, सुख तथा [] , तर्हे क्षेत्र, पुरुष, द्विष्यमाण, महान्, ज्ञान तथा बुद्धि आदि अनेक नामोंसे उचित किया गया है। ये तीनों लोकोंके एकमात्र आधार हैं, ये निर्गुण होकर [] अपनी बुद्धिसे सगुण हो जाते हैं, सबके [] हैं। सब कोई कर्म नहीं करते और न तो कर्मफलकी प्राप्तिसे संलिप्त रहते हैं। ये परमात्म [] और शिव, ब्रह्म, ज्ञान, पर, नित्य, कान तथा सुखवाले [] ये [] अपनीसे अस्पर्शित करके अवस्थित [] सभी [] एकमात्र होकर आनन्दपूर्वक विचारण करते हैं।

सुखसुख कर्मकर्म कीजवातल शरीर होत्र कहलकता है ।
इसे ॥॥॥ कारण परमात्म कहल कहलकते है । ॥
अवस्थानुसंगे सुख कर्मकर्म, सुख, सुख कर्म धारण करलकते
विशेष और धारण-धारण कर्मकर्म कहलकते कहलकते कहलकते कहलकते
है । ये ही अनेक कर्म धारण करलकते हैं । जिस प्रकार एक ही
कर्म धारण करलकते धारण-धारण ॥॥॥ अनेक कर्म धारण किये हुए
है और यीसे एक ही अनेक अनेक कर्म-धारण करलकते अनेक
कर्मकर्म अनेक कर्म कर्म कहलकते है, उसी प्रकार परमात्म ॥॥॥ अनेक
॥॥॥ कारण ॥॥॥ कर्म ॥॥॥ कहलकते है । जिस ॥॥॥ एक
॥॥॥ ॥॥॥ ॥॥॥ कहलकते है ॥॥॥ है, ॥॥॥ प्रकार ॥॥॥
॥॥॥॥॥ सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न होता है । उन वह अपनी
इच्छासे संसारक संसार कहलकते है, सब फिर प्रलयही ही रह
जात है । परमात्मकते छोड़कर जगत्मे कोई स्थावर या जगत्
पदार्थ नित्य नहीं है, क्योंकि वे अक्षय, अप्रमेय और सर्वत्र
कहे जाते हैं । इनसे बढ़कर कोई अन्य नहीं है, ये ही पिता ॥॥॥
ये ही प्रजापति हैं, सभी देवता और असुर आदि उन परमात्म
प्रमाणदेवकी आराधना करते हैं और वे उन्हें सद्गति प्रदान
॥॥॥ है । वे सर्वज्ञ होते हुए भी निर्गुण हैं । उसी अक्षयस्वरूप
परमात्मक ॥॥॥ जान करत हैं तथा सूर्यकर्म अपने अक्षयक ही
पूजन करत हैं । हे महाशक्ति मुने ! भगवान् सूर्य स्वयं ही
वे कहे कहलकते कही थीं । (अध्याय ६६-६७)

◆◆◆◆◆

सूर्यनारायणके पुण्य, सूर्यमन्दिरमें मूर्जन-लेपन आदिका फल,

दीपदानका फल तथा सिद्धार्थ-सप्तमी-व्रतका विधान और

कोले—वज्रवस्त्र । एक बार मैं पणक पुनः सूर्यनारायणसे उनके शिव पुण्यके विषयमें विचारता । तब उन्होंने कहा था कि मल्लिकार्जुन- (बेल पुष्पकी एक जाति) पुष्प मुझे अत्यन्त प्रिय है । जो मुझे इसे अर्पण करता है, वह उसमें योग्य है । मुझे कमल अर्पण करनेसे सौभाग्य, सुगन्धित कुटज-पुष्पसे अक्षय ऐश्वर्यकी प्राप्ति है । मन्दार-पुष्पसे सभी प्रकारके कुष्ठ-रोगोंका नाश है और तिल-पत्रसे पूजन करनेपर विदुत् प्रीति है । मन्दार-पुष्पकी मालासे सम्पूर्ण पुत्री, कुसुम- (मौलसिरी-) पुष्पकी सफलता लाभ, पल्लवपुष्पसे अहि-वधना, अगस्त्य-पुष्पसे करनेपर (मेघ) सूर्यनारायणका अनुग्रह तथा कर्कोट- (कौल-) पुष्प समर्पित करनेमें मेरी अनुकूल होनेका सौभाग्य प्राप्त होता है । बिलालके पुष्पसे सूर्यकी (मेरी) पूजा करनेपर मेरी लोककी प्राप्ति होती है । एक हजार कमल-पुष्प भक्षणके (सूर्य) लोकमें निवास करनेका फल प्राप्त होता है । कुसुम-पुष्प अर्पित करनेसे भक्तलोक प्राप्त होता है । कस्तूरी, कचन, कुंकुम तथा कस्तुरीके धौगसे बनाये गये मण्डप लेपन करनेसे सद्गति प्राप्त होती है । सूर्यभगवान्‌के मन्दिरका मार्जन तथा उपलेपन करनेवाला सभी रोगोंमें मुक्त हो जाता है और पशु प्रभु धनकी प्राप्ति होती है । जो पशुसूर्यके गोकुलमें मन्दिरका लेपन करता है, उसे सम्पत्ति प्राप्त होती है और वह रोगोंसे मुक्ति प्राप्त करता है और यदि मृतिकासे लेपन करता है तो उसे अठारह प्रकारके कुष्ठरोगोंसे मुक्ति मिल जाती है ।

सभी पुण्यमें करवीरका पुष्प और सम्पत्ति विलेपनमें रत्नचन्दनका विलेपन मुझे अधिक प्रिय है । करवीरके पुष्पसे जो सूर्यभगवान्‌की (मेरी) पूजा करता है, संसारके सभी सुखोंकी योग्यता अक्षय्य काल है ।

मन्दिरमें लेपन करनेके पश्चात् मण्डल करनेपर सूर्यलोककी होती है । एक मण्डल करनेसे अर्चकी प्राप्ति, दो मण्डल करनेसे अक्षय्य, तीन मण्डलकी रक्षा करनेसे अविच्छिन्न संतान, चार मण्डल करनेसे लक्ष्मी, पाँच मण्डल करनेसे विमुक्त मन-धान्य, छः मण्डलकी रक्षा करनेसे

अयु, और पञ्च तथा सात मण्डलोंकी रक्षा करनेसे मण्डलका अविच्छिन्न होता है तथा आयु, धन, पुत्र और उन्नति प्राप्ति होती है एवं अन्तमें उसे सूर्यलोक मिलता है ।

मन्दिरमें फलका दीपक प्रज्वलित करनेसे नेत्र-रोग नहीं होता । मण्डपके तेलका दीपक जलनेसे सौभाग्य प्राप्त होता है, तिलके तेलका दीपक जलनेसे सूर्यलोक ककुआ तेलसे अनुग्रह विध्य होती है ।

पुण्य-पुष्प-पुष्प-दीप आदि उपकरणोंसे सूर्यका पूजन कर जब प्रकाशके मैत्रेय निर्देशित करने चाहिये । पुण्यमें और करनेके पुष्प, धूपमें विजय-धूप, गन्धोंमें कुंकुम, लक्ष्मी रत्नचन्दन, दीपोंमें पृथ्वी तथा मैत्रेयोंमें मोदक भक्षण सूर्यभगवान्‌के फल प्रिय है । अतः इन्हीं वस्तुओंसे उनकी पूजा करनी चाहिये । पूजा करनेके पश्चात् प्रदक्षिणा और भक्षण करके स्वयंसे दो सरसोंका एक दाना और जल लेका सूर्यभगवान्‌के सम्मुख जाड़े होकर इसका प्रार्थना करके विधान करते हुए भारतीयीत जलसे पी जाना चाहिये, परंतु दीपोंसे अक्षय्य स्पर्श नहीं हो । इसी प्रकार दूसरी प्रार्थना दो दाने जलके साथ करनी चाहिये और इसी तरह सातवीं सप्तमीतक एक-एक करके हुए इस प्रकार अर्चयित करके पान चाहिये—

सिद्धार्थकरत्न लोके सर्वत्र भूयसे कथा ।

तथा पश्यति सिद्धार्थकीर्तिः भुक्ता रविः ॥

(भाष्यार्थ ६८ । १६)

उत्पन्नर इच्छते रवितो जप और हवन करना चाहिये । यह भी विधि है कि प्रथम सप्तमीके दिन जलके साथ सिद्धार्थ (सरसों) का फल करे, दूसरी सप्तमीकी वृत्तके साथ और आगे तीरी, दूध, गोमय और पञ्चगव्यके एक-एक सिद्धार्थ बढ़ते हुए सातवीं सप्तमीतक सिद्धार्थका करे । इस प्रकार जो सर्वप-सप्तमीका व्रत करता है, बहुत-सा धन, पुत्र और ऐश्वर्य है । उसकी सभी मन-कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं और वह सूर्यलोकमें निवास करता है । (अध्याय ६८)

प्रियं, कृष्ण, अदितिपुत्र तथा सक्ष्म नामकाले भगवान्
सूर्यको बार-बार नमस्कार है।

ब्रह्माजीने कहा—यशस्वत्य ! जो मनुष्य शरीरधर और प्रतःफल इन नामोंके पवित्र होकर पढ़ करता है, वह मेरे समान ही मन्त्रोच्चारित करनेके प्राप्त करता है। इस नाम-स्रोत्रसे सर्वको [] करनेपर उनके अनुग्रहसे सर्व

जर्ब, काम, अहोम्भ, राज्य तथा विजयकी प्राप्ति होती है। यदि पशुपत ब्रह्मणे हो तो इसके पाटसे ब्रह्ममनुक हो जाता है। इसके अंग करनेसे सभी प्राणोंसे सुखका प्रभु मिल जाता है। यह जो सर्व-स्वोपर्यैनी कहा है, वह अत्यन्त रहस्यमय है।

(अध्याय ५१)

**जानकारीपत्रे सुव्यवस्थापनकी आसक्तिके तीन प्रमुख स्तम्भ,
हर्षासा यनिक सामान्यके प्राप्त देना**

[illegible]

राजा जलानीकामे मुकुट—मुने । जम्बूद्वीपमे भगवान्
सूर्यदेवका ॥ १ ॥ त्वान् बाबा ? ॥ २ ॥ अर्ध विधिपूर्वक ॥
करनेसे ॥ ३ ॥ श्वेतोत्तम ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

सुमनु मुनिने कहा—राजन् ! ॥ अश्वत्थामे कागज
सूर्यनारायणके मुख्य तीन स्थान हैं । प्रथम इन्द्रका ॥ दूसरा
मुखीर ॥ तीसरा तीनों लोकमें प्रसिद्ध कालप्रिय (कालजी)
नामक स्थान ॥ इस द्वीपमें ॥ अश्वत्थामे नदीके तटपर
स्थान भी अश्वत्थामे ॥ है, ॥ अश्वत्थामे नदीके तटपर
अश्वत्थामे है, जिसके साम्बपुर भी कहा जाता है, वहाँ भगवान्
सूर्यनारायण ॥ भक्तिने प्रसन्न होकर लोकनन्दनके
हिन्ने अपने ॥ निज-रूपमें निजका करते हैं । ॥
भक्तिपूर्वक उनका पूजन करता है, उसको ये स्वीकार करते हैं ।

राजा भगवान्‌जीने पुनः पूछा—मासुने ! सत्य क्यों है ? किसका पुत्र है ? भगवान्‌ सुनी उसके उत्तर जगदीश यशो ? या मी ? क्या करें ।

सुषन्त युक्तिने कथा—राघव ! सेसवार्ये छन्दस प्रसिद्ध है. उनामेसे विष्णु नामके जो आदिस्थ है. वे जगत्मे

जामुनेय श्रीगुरुवर्यगणों अवलोकन हुए। इनकी जामुनेयसी नामकी पत्नीसे महारत्नलक्ष्मी स्वयं नामक पुत्र हुआ। यह जामुनेय। पुत्र-दोहसे प्रसूत हो गया। उससे पुत्रः क्षीनेक लिये उससे जामुनेय पुनर्जन्मवासी अष्टावक्र की और उसीसे अपने नामसे जामुनेय नामक एक पुत्र हुआ। यहीपर भगवान् सर्वभारतकी प्रथम पुत्री की।

राज्य हलालीकाले पूजा—प्राणायाम । हलालीके द्वारा
ऐसा करीब-कर अपराध हुआ था, जिससे उसे ज्ञाना कन्टोस
जान लिया । जोसेसे अपराधका दोष नहीं मिलता ।

■ मुनिने कहा—एकम् । इस वृत्तान्तका वर्णन हम संक्षेपमें कर रहे हैं, अन्य सखधन होकर सुनें । एक समय उनके अवतारभूत दुर्वास मुनि तीनों लम्बीमें विद्यरत्न करते हुए छात्राश्रममें आये, धनुष पीले-पीले बैलोंसे युक्त कृश-शरीर, ■ विद्वत् रूपवाले दुर्वासवाले देखकर ■ अपने सुन्दर स्वरूपके अवतारमें कबल उनके देखने, चलने आदि चेष्टाओंमें व्यस्त करने लगे । उनके मुखके समान अपना ही विद्वत् मुख बनाकर उन्होंने भीति चलने लगे । यह देखकर और 'सम्पन्नो ह्य सदा मौनवत् अत्यन्त अधिमान है' ■ सम्पन्न दुर्वास मुनिने ■ श्लोक ■ आद्य । वे ■ हुए वह ■ ठरे—'साध ! मुझे कुरुष और अपनेको उक्ति कल्पना ■ हुए मेघ परितप्त विद्य है । ज, व और ही कारणसे प्रस हो आया ।'

१-।। सोने स्वर्णको विशेष जानकारीके लिये 'स्वर्णको' १,५०० पन्क्ति विशेषकर 'सुवर्ण' ॥ ॥ ॥ 'सुवर्ण-पत्र' ॥ अतिरिक्त सोने के लिये स्वर्णको ।

२-परी नगर भन्ने बल्लभ 'सुशक्त' पुः प्रसिद्ध बालको 'सुशक्त' पुः पुः, के भन्ने पत्रिकाको तपाईको पत्रमा प्रगति मिले ।

पुष्पप्रद है। महामासे। यहीपर जमीन तेजस्वी सम्पत्ति सूर्यनारायणकी आराधना करके यन्त्रोपनिषत्प्रकाशप्रद विराट् है। उनकी ॥ और आदेशसे सम्पत्ति यही भगवान् सूर्यदेव

प्रतिष्ठापित किया। जो पुरुष प्रतिपूर्वक सूर्यनारायणकी प्रणाम करता है और ब्रह्म-चक्रसे उनकी आराधना करता है, वह सम्पूर्ण जगत्से मुक्त होकर सूर्यदेवकी निवास करता है। (अध्याय ७४)

॥ सूर्यदेव विराट्स्वरूप तथा उनके प्रभावका वर्णन ॥

सुमन्तुजी बोले—उम्ह ! भगवान् बुद्धदेवता एक मासकर दुःखित हो सम्पत्ति अपने विश्व भगवान् श्रीकृष्णसे पूछा—तब ! मेरा यह कह किसे दूर होगा ? बुद्धदेव इसका उपाय आप बताये।

भगवान् श्रीकृष्णसे कहा—कहा ! तुम भगवान् सूर्यकी आराधना करो, उसके तुम्हारा यह बुद्धदेव दूर हो जायगा। तुम ॥ नारायण सूर्यनारायणकी विधानकी शिक्षा प्राप्त करो। वे ॥ उनकी ॥ बातलयेगे।

एक दिन नारायण द्वारा बुद्धदेव भगवान् श्रीकृष्णका दर्शन करनेके लिये आये। उसी समय सम्पत्ति अत्यन्त किन्तु भगवत्से ॥ उनके प्रभाव किन्तु और हाथ जोड़कर ॥ भगवत्से महामुने। मैं अत्यन्त दारुण हूँ, आप मेरे ऊपर बुद्धदेव कोई ऐसा उपाय बताये, जिससे मेरा शरीर बुद्धदेवसे मुक्त ॥ और मेरा यह दूर ॥ जाय।

नारायणजीने कहा—सम्पत्ति ! देव ॥ सृष्टि करते हैं, उनकीपर तुम भी पूजन करो। ॥ बुद्धदेवसे तुम योगसे मुक्त हो जाओगे।

सम्पत्तिने पूछा—महाराज ! देवता किन्तु बुद्ध और साधन करते हैं ? आप ही उसे भी बताये, जिससे मैं उनकी शरणमें आ सकूँ। यह शास्त्राभि मुझे दान्य बन रही है। ऐसे वीर देवता हैं, ॥ कृपा करनेके मुझे इस विधिसे मुक्त कल सकेने ?

नारायणजीने कहा—पुत्र ! समस्त देवताओंके पूजा, नमस्कार करने योग्य और विरक्त स्तुति भगवान् सूर्यनारायण ही हैं। तुम उनके प्रभावसे सुखे—

॥ समय समस्त लोकमें विचारण कराव हुआ मैं सूर्यदेवकी पहुँचा। कहाँ मैंने देखा कि देवता, गन्धर्व, जल, यक्ष, ॥ और अप्सराएँ सूर्यनारायणकी सेवामें लगे हुए हैं। गन्धर्व गीत गा रहे हैं और अप्सराएँ नृत्य कर रही हैं। राक्षस-यक्ष तथा नाग इस अर्थ करनेकी उनकी राक्षसे लिये

सके हैं। अम्बेद, पशुपति एवं साधवेद सूर्यदेव स्वरूप धारण कर लगे सृष्टि कर रहे हैं और अधिगण भी वेदोंकी शक्तियोंसे ॥ कर रहे हैं। सूर्यदेवसे ज्ञातः, मध्याह्न और आरंभकालमें तीनो सुन्दर ॥ संध्यारौ हाथमें कल तथा ॥ करण ॥ हुए सूर्यनारायणके पाठ और स्थित हैं। ॥ राक्षसोंकी है, मध्याह्न-संध्या कर्मजनोंके समान ॥ आरंभ-संध्या मंगलके ॥ वर्षावाली है। ॥ वसु, ऋतु, मरु, तथा अधिगणकुमार अदि सभी देवताओं तीनों संध्याओंमें इस भगवान् सूर्यदेव पूजन करते हैं। इन सदैव ॥ सके ॥ भगवान् सूर्यकी प्रणाम ॥ करती रहते हैं। गन्धर्व जेष्ठ भ्राता अरुण उनका सारथि है। वह करणके अवयवोंसे निर्मित उनकी रथवाह संचालक है। हरे जगत्की अम्बुजाय फल जल उनके रथमें जुते हुए हैं। राक्षी तथा विष्णु सम्पत्ति से पश्चिमी उनके दोनों ओर बैठी हुई हैं। सभी ॥ हाथ जोड़कर उनके ॥ सके हैं। विराट्, ऐश्वर्य, ॥ अदिगण तथा कल्याण नामक दो पक्षी द्वारापालके रूपमें ॥ लगे हुए हैं। दिव्यी ॥ सामने तथा ॥ अदि सभी देवता उनकी सृष्टि कर रहे हैं।

भगवान् सूर्यनारायणका ऐसा प्रभाव देवतायें भी सोचा कि पक्षी देव हैं, जो समस्त देवताओंके पूजा हैं। सम्पत्ति ! तुम ॥ प्रत्येक ॥

सम्पत्तिने पूछा—महाराज ! मैं चलीपति यह जानना चाहता हूँ कि सूर्यनारायण सर्वांगत कैसे हैं ? उनकी कितनी रश्मियाँ हैं ? कितनी सूर्यियाँ हैं ? राक्षी तथा निक्षुभा नामकी ये दोनों पक्षीय वीर हैं ? विराट्, ऐश्वर्य और दण्डनायक क्यों क्या कार्य करते हैं ? कल्याण, पक्षी वीर हैं ? उनके आगे स्थित रहनेवाला दिव्यी वीर है ? और वे वीर-वीर देवता हैं, जो उनके चतुर्दिक् सके रहते हैं ? आप इन सबका उत्तरतः अच्छी तरहसे वर्णन करें, जिससे मैं भी सूर्यनारायणके प्रभावसे ॥ प्रणामों आ सकूँ।

नास्त्वधीने कदा—साम्ब ! अद्य वै सूर्यनारयणने

सर्गन का ■■■ **है : तुम उसे प्रेक्षपूर्वक सुने—**

[illegible]

■ जागहूँ रख करनेवाले हैं।

नारदजीने पुनः कहा—शश्व ! सहस्रयुगके समान
जबकि विश्वकार प्रकृत होने ही उस पुरुषने जब सृष्टि
रखनेकी उच्छ्वास की, तब उन्होंने देखा कि सम्पूर्ण पृथ्वी जलमें
डूबे हुई है। उन्होंने महाह रूप धारण करके
महासागरके जलमें पृथ्वीके उद्धार किया। उस समय
कन्या बेलगम प्रतीत कियत हो उठा और रोमेंमें स्थित
प्रार्थिगम उनकी स्तुति करने लगे। पुनः ऋद्धाका रूप धारण
करके वे सृष्टिकी रचना करने लगे। उन्होंने सर्वप्रथम अपने ही
लक्षण अपने पत्नको मुक्त-सहित ब्रह्म दस मानसपुत्रोंको जन्म
दिया। जिनके नाम हैं—मनु, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह,
मरिचि, दक्ष एवं ब्रह्मा—इन प्रजापतिपौत्रोंकी सृष्टि
करके सब प्रजापति विराजमान हुए। ही सूर्यप्रादुर्भाव
देवी अदितिने पुनः कलमें स्वयं प्रसूत हुए। अदितिने पुनः
कनका हुए। दक्षको कन्या अदिति का विवाह महर्षि कश्यपके
सह्य हुआ। उसने 'धूम्रः स्वः' से प्रसूत एक अश्व उत्पन्न
किया, जिसको ब्रह्मसाम्राज्य भगवान् सूर्य प्रकट हुए। इस
सूर्यमण्डलका अकार नौ हजार योजन है। सत्तईस हजार योजन
है। जिस प्रकार कट्यवत् पुनः चारों ओर
केन्द्रोंसे व्याप्त रहता है, वसी प्रकार सूर्यमण्डल अपनी
किरणों से व्याप्त रहता है। वह सहस्रों सिरालाल पुरुष
जिसको परमेश्वर कहते हैं, इस तेजोमय मण्डलके मध्य स्थित
है। वह अपनी किरणोंद्वारा नदी, समुद्र, इन्द्र, कुम्भ
आदिसे जलको प्रवह कर है। सूर्यकी प्रभा (तेज)
सम्बन्ध प्रवेश कर जाती है, इसीप्रकार लक्षण अत्रि
दूरसे विद्यमान होने लगती है। सूर्योदयके समय वही जगत्
पुनः सूर्यमें प्रविष्ट हो जाती है। प्रकाशाल और उष्णता—ये
दोनों गुण सूर्यमें तथा अग्निमें भी हैं। इस प्रकार सूर्य और
एक दूसरेको आपासमें किया करते हैं।

सम्पन्न ! इति, किरण, गौ, रश्मि, गवस्ति, अमीषु, फल, उल, फलु, मरीचि, नदी, दोषिनि, सध्व, मयूस, भानु, अन्तु, सखिर्दि, सुपम्, कर कण फट—ये बीस भाग्यान् सूर्यकी किरणोंके नाम कहे गये हैं, जो संस्कृतमें एक हजार हैं। इनमेंसे कर सौ सूर्य कृति करती हैं, जिसका नाम अर्धन है। इन सूर्य सम्पन्न सम्पन्नम् है। तीन सौ किरणों जिसको वात

भगवान् सूर्यका परिवार

■ मुनि बोले—उत्तम ! सम्माने ■ पुनः
कहा—महापुनः ! आपने भगवान् सूर्यरायणके अन्तर्गत
अनन्तरात् महात्मका वर्णन किया, जिससे भी इदम् उनके
प्रति दुःख भक्ति उत्पन्न ■ गयी। ■ भगवान्
सूर्यरायणकी पत्नी महामाया राज्ञी एवं विष्णुका मन्त्र
और विराट आदिके विषयमें बतलाने :

■ महामाया बोली—सत्य ! भगवान् सूर्यरायणकी
राज्ञी और विष्णुका नामकी दो बहिनयाँ हैं। इनमेंसे राज्ञीके ■
अर्धरात् सर्ग और विष्णुकाये पृथ्वी की कहा जाता है। ■
भूत सप्तमी तिथिके चौके साथ और माघ कृष्णपक्षकी सप्तमी
तिथिके विष्णु (पृथ्वी) के साथ सूर्यरायणका संबंध होता
है। ■ राज्ञी—हीमे ■ और विष्णुका—पृथ्वीके ■
लक्षणका कल्याणके लिये अनेक कल्याण कल्याण
उत्पन्न होती हैं। राक्ष (अन्न) को देकर अन्नका प्रसारणके
काइयन कल्याण करते हैं। कल्याणका तथा कल्याणके देवताके
और पितृकी प्रति होती है। जिस प्रकार राज्ञी अपने दो बहनें
हुई और वे कल्याण पुत्री हैं। तथा इनकी जो संतानें हुई उनका
हम वर्णन करते हैं, हमें आप सुनें—

साम् । महामाया पुनः मरीचि, मरीचिके कायका, कायकाके
हिरण्यकशिपु, हिरण्यकशिपुसे प्रह्लाद, प्रह्लादके मिथेवन
नामका पुत्र हुआ। मिथेवनकी बहिनका नाम विष्णुकायिक
शेष हुआ, जिससे संज्ञा नामकी एक ■ हुई।
मरीचिकी सुकाय नामकी कायकायिका विष्णु अंगिरा
हुआ, जिससे कृष्णकी उत्पन्न हुए। कृष्णकीकी अर्धरात्रि
बहिनने अर्धरात्रि नामका बसुसे पतिप्राप्त किया, जिसका
पुत्र विष्णुकायिका सप्तम ■ जाननेका हुआ। उनकी
नाम लक्षा भी है। जो देवताओंके कई हुए। इन्हींकी ■
संज्ञाके राज्ञी कहा जाता है। इन्हींकी दो, लक्ष्मी, तथा तथा
सुरेण ■ कहते हैं। इन्हीं संज्ञाकी कायका नाम विष्णुका है।
सूर्य भगवान्की लक्ष्मी नामका भार्या कही हो कल्याणके और
■ । किंतु भगवान् सूर्यरायण मानवकाये उनके
समीप नहीं जाते थे और अत्यधिक तेजसे पर्यवृत्त होनेके
कारण सूर्यरायणका वह स्वरूप सुन्दर मालूम नहीं होता था।
अतः वह संज्ञाके भी अत्यन्त नहीं लगता ■ ।

संज्ञाके उत्पन्न हुई, किंतु सूर्यरायणके तेजसे व्याकुल होकर
वह अपने पिताके घर चली गयी और हजारों वर्षतक वहाँ
रही। जब पिताने संज्ञाके पतिके घर जानेके लिये अनेक ■
कहा, तब वह और कुम्भेश्वरके चली गयी। वहाँ वह
■ रूप ■ करके लूण आदि ■ हुई समय
■ लगी।

सूर्यरायणके समीप संज्ञाके रूपमें अनेकी छाया विधात
करती थी। सूर्य ■ संज्ञा ही समझते थे। इससे दो पुत्र हुए
और एक कन्या हुई। भूतका तथा भूतकायिका—ये दो पुत्र और
कायका सुन्दर सप्तमी नामकी कन्या ■ संताने है।
भूतकायिका की कायिका भूतके नामसे प्रसिद्ध होगा और भूतकायिका
ऊँकर नामसे ■ जान की। संज्ञा जिस प्रकारके अपनी
संज्ञाके ओह करती थी, वैसे ओह छापाने गयीं विधात। इस
अपमानके संज्ञाके ■ पुत्र संज्ञाकी भूतके तो सहज कर
लिया, किंतु उनके पुत्र का (धर्मराज) महान नहीं कर
सके। इनमेंसे एक भूत ही केन्द्र देना शुरू किया, तब ज्ञेयमें
आकर कायका तथा कायिका ■ उन्होंने अपनी
विष्णुकायिका परमेश्वर की और उसे चारोंके लिये अथवा पैर
■ यह देकर कुछ विष्णुकायिका के ऊँह कठोर शपथ दे
दिया—‘तुह ? तुम अपनी चौकी पैरसे माँके लिये उद्यत हो
रहे हो, इसलिये भूतका यह पैर टूटकर गिर जाय।’ कायिका
अपने विष्णु होकर कम अपने पिताके पास गयी और उन्हें
तब वृक्षका ■ सुकाय। पुत्रकी बातें सुनकर सूर्यरायणके
कायिका—‘पुत्र ? इन्हीं कुछ विरोध कारण होगा, क्योंकि अत्यन्त
धर्मका भूत-जैसे पुत्रके ऊपर माताको ज्ञेय आया है। सभी
कायिका को विदित है, किंतु माताका शपथ कभी अन्यथा नहीं
हो सकता। पर मैं तुम्हारे ऊपर अधिक ज्ञेयके कारण एक
उत्पन्न करता हूँ। यदि तुम्हारे पैरके माँसको लेकर कृषि
भूमिमें बसे जायें तो इससे माताका शपथ भी सत्य होगा और
तुम्हारे पैरकी रक्षा भी हो जायगी।’

सुगन्तु पुनिने कहा—उत्तम ! इस ■ पुत्रके
अवधारण देकर सूर्यरायण कायिकाके समीप आकर
बोले—‘अब ? तुम इनसे ओह क्यों नहीं करती हो ? माँके
लिये तो सभी संतानें ■ ही ऐसी चाहिये।’ यह सुनकर

छापने बोई उतर नहीं दिया, जिससे सूर्यधारावासी शेष आ गया और वे शेष देनेके लिये लज्जित हो गये। अतः भगवान् सूर्यको कुट्ट देवदेव प्रवर्षित हो गयी और उसने अपना सम्पूर्ण कुत्सता बतला दिया। तब सूर्य अपने समस्त निकृष्टार्थिकों को छोड़ गये। अपने ज्ञानात्मा सूर्यको कुट्ट देवदेव विचित्रता से उत्तम पूजन किया तथा मधुर वचनोंसे प्रशंसा किया कि कदा—‘देव ! मेरी पुत्री संज्ञा आपके अमृत तेजको मग्न न कर सकनेके कारण बचको रहने नर्क है और वह आपके उत्तम रूपके लिये यहाँपर मग्न तरसा बन रही है। साक्षात्कारने मुझे आज्ञा दी है कि यदि उनकी अभिरुचि हो तो तूम संसारके कल्याणके लिये सूर्यको तराकर उत्तम रूप बनाओ।’ विचित्रार्थिक भयान सूर्यधारावासी को छोड़ दिया। तब विचित्रार्थिक शत्रुघ्नोपमे सूर्यधारावासीको भूमि (कण्ट) पर बहाकर उनके प्रबल तेजको कण्ट छेदित, जिससे उनका रूप बहुत ही मीठा बन गया। सूर्यधारावासी अपने ज्ञानवाले इस बातकी जानकारी हो कर सम्पूर्ण सूर्यधारावासी अमुकधारावासी यही संज्ञा अधिनीके रूपको काम बचके उत्तम-रूपमें विवास कर रही है। अतः सूर्य की सर्व अलगा रूप प्रत्यक्ष करनेके उसके पास अवसर मिले। फलतः अधिनीसे देवताओंके पैदा बुद्धि अधिनीकुम्हारोंका रूप हुआ। इनके नाम हैं नासत्य तथा दल। इनके पक्षान् सूर्यधारावासी अपना कालौघिक रूप धारण किया। उस रूपको देखकर संज्ञा आत्मनः प्रीतिसे प्रसन्न हुई और वह उनके मध्य

गयी। तबभगवान् संज्ञासे ‘रेवन्’ नामका पुत्र उत्पन्न हुआ, जो सूर्यधारावासीके सम्मान हो सौन्दर्य-सम्पन्न था।

इस मनु, यम, यमुना, इति, तपती, दी, अधिनीकुम्हार, कलकत्ता मनु और रेवन्—वे सब सूर्यधारावासी रहने लगे। उनकी भूमिनी यमी यमुना नदी बनकर प्रवाहित हुई। सार्वर्गिक आठवें मनु होने। सार्वर्गिक मनु पृथ्वीदेवता तपत्या रहे हैं। सार्वर्गिक सूर्य धारावासी नदी नदी, जो सूर्यधारावासी ज्ञानवासी सूर्यधारावासी ज्ञानवासी है। इस नदीमें ज्ञान करनेसे बहुत ही पुण्य प्राप्त होता है। सूर्य नदीसे संगम और गङ्गा नदीसे वैद्यकी—धामुक्तता प्राप्त होता है। सूर्य अधिनीकुम्हार देवताओंके पैदा हैं, जिससे विज्ञान ही वैद्यकी धूमिलर अपना सार्वर्गिक करते हैं। सूर्यधारावासी अपने सम्पूर्ण रूपवाले रेवन् नामका पुत्रको अलोक्य स्थायी बनाया। जो मानव अपने गणनायक धर्मिक लिये रेवन्को पूजा करके प्रशान्त है, उसे धर्ममें श्रेष्ठ नहीं होता। विचित्रार्थिक द्वारा सूर्यधारावासी कण्टपर बहाकर जो तेज प्रहल किया गया, उससे उन्होंने भगवान् सूर्यको करनेके लिये किया। सूर्यधारावासी संतानोत्पत्तिकी कष्टको मुक्त अलगा है, वह सभी पापोंसे मुक्त होकर सूर्यधारावासी दीर्घकालात्मा रहनेके पक्षान् पुण्यीपर ज्ञानवासी रत्ना होता है। (अध्याय ७९)

सूर्यधारावासी उन्मत्तार एवं प्रदक्षिणा करनेका फल

और विज्ञान-साम्प्रदायी-प्रत्यक्षी

नासत्ये कदा—सम्प ! अब मैं आपको भगवान् सूर्यधारावासीके पूजन, उनके विहित लिये गये दान तथा उनके गये प्रणाम एवं प्रदक्षिणाके फलके विषयमें दिखौ और ज्ञानाधीन सेवाद सुन हूँ, आप ध्यानसे सुनें—

ज्ञानाधीन बोले—दिखिन् ! सूर्य भगवान् का उनकी स्तुति, जप, प्रदक्षिणा तथा उपवास आदि अभीष्ट फलवासी प्राप्ति होती है। सूर्यधारावासी नष्ट होकर करनेके लिये धूमिलर जैसे ही सिरका स्पर्श होता है,

कैसे तत्काल सभी नष्ट जाते हैं*। जो मनुष्य धर्मपूर्वक सूर्यधारावासी प्रदक्षिणा करता है, उसे सप्तदीपा समुपवीची प्रदक्षिणाका फल प्राप्त हो जाता है और वह समस्त मुक्त होकर अन्त समयमें सूर्यलोकाको प्राप्त है, किन्तु प्रदक्षिणामें ध्वजिताका ध्यान रखना आवश्यक है। अतएव सूर्य धारावासी अर्द्ध पहनकर प्रदक्षिणा नहीं करनी चाहिये। जो मनुष्य ज्ञान का सफाई पहनकर सूर्य-मन्दिरमें प्रवेश करता है, वह अधिनाय-वन नामक धोर नरकमें जाता

* प्रदक्षिणा विरोधी धर्म उन्मत्तारको नष्ट करता है।

ते प्रतीक्षाणि यन्महं मन्त्रादिभिः ॥

(अध्याय ८२।१९)

उपर्युक्त दोनों मन्त्र प्रहरण करने और समर्पित करनेके लिये हैं। मन्त्रवाक्य यह विधान कल्पवृक्षकी है। जो इस विधिसे सूर्यदेवकी पूजा करता है, उसे सूर्यलोकाधी है। उसकी संज्ञात्मक कभी अर्थात् उसकी

कुल-प्राप्त्य पुष्कर बलनी रहते है तथा उसके मन्त्रमें दक्षिण एवं रोग भी नहीं होते। सूर्यलोका प्राप्त करनेके पश्चात् पुष्कर्य होनेपर पुष्कर राजा होता है। इस पुष्कर-विधानको पढ़ने अथवा श्रवण करनेसे भी कल्याण होता है। अथवा लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है।

(अध्याय ८२)

भद्रादित्य, सौम्यादित्य और कामादित्यकार-श्रुतोंकी विधिका विवरण

भद्राधी बोले—दिष्टिन्। भद्राध मन्त्रके मूल पक्षकी वही विधिको जो बार हो इसका नाम भद्र है। उस दिन जो मनुष्य नवजात और उपवास करता है, वह इसपुत्र केवलकर सूर्यलोकाधी जाता है। उस दिन शेर चन्द्र, मन्त्रा-पुत्र, विजय-धूप तथा नैवेद्यको प्रत्येकप्रकारसे सूर्यनारायणका पूजन करनेके लक्षणको प्रयोग प्रयोगात्मा दक्षिणा देनी चाहिये।

दिष्टिन्। यदि रोहिणी नक्षत्रसे पुत्र प्राप्तकरने हो तो उसे सौम्यकार कहा जाता है। उस दिन किया जानेवाले स्नान, धान, जप, होम, मित्त-देवदि तर्पण तथा पूजन आदि कृत्य

अथवा है।

मन्त्राधीनिक मूल पक्षकी वही विधिको जो बार हो, वह कामाधकार कहलाता है। यह बार भगवान् सूर्यको अर्पण विधि है। इस दिन जो धर्म और दानसे सूर्यनारायणकी पूजा करता है, वह सभी कामको विमुक्त होकर सूर्यलोकाधी विधान करता है। इस प्रकार के पुत्र, पुत्रपुत्रको पुत्र, धनार्थको और आरोग्यके आरोग्यकी प्राप्ति है। तबकर कामाधकार-ज्ञानसे और सभी कामकार पूर्ण हो जाती है, नाम

(अध्याय ८३—८५)

पुनर, जय, जयन्तसंज्ञक आदित्यकार-श्रुतोंकी विधि

भद्राधी बोले—दिष्टिन्। आदित्यकारको इस नक्षत्र हो उसे पुनर (आदित्य) बार कहा जाता है। इस दिन उपवास करना चाहिये और करके विचार करना चाहिये। धूप, मन्त्र, दिव्य मन्त्र नव प्रकारके उपचारोंसे सूर्यनारायणका पूजन का महत्त्व-धनार्थको जपते हुए साधकको सूर्यनारायणके ही प्रमन चाहिये। प्रस्त-कालमें ही बंदकर स्नान आदिसे विमुक्त सूर्यभगवान्को अर्घ्य देना चाहिये। स्नान-पटन तथा कर्त्तव्यके पुष्पोंसे पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् फल भद्राधीको कुलकर वनमेंसे दो भद्राणीको मग-संज्ञक तथा तीन भद्राणीको भीमसंज्ञक विधिपूर्वक फर्षण-कट करके भद्राधकारके समस्त होनेपर मध्यम विष्टिको भगवान् सूर्यके समने निवर्तितमित्र मन्त्रसे प्रणम करना चाहिये—

स एव देवेश नोऽधीत्यस्य सर्वदा ।

पश्यते तुभ्यं तेन संज्ञितयेत् ॥

(अध्याय ८६।१०)

इस पूजा करनेपर सूर्यनारायण पुत्र प्रदान करते हैं। तबकर उपवासपूर्वक ज्ञानको करनेसे मन-काम, पुनर्य, सुख-आरोग्य तथा सूर्यलोका भी प्राप्त होता है, किन्तु विशेषरूपसे पुत्र-प्राप्ति ही प्राप्त इसीसे इस कारको पुनर कहते हैं।

भद्राधीने कहा—दिष्टिन्। दक्षिणपनके दिन जो कर हो, वह जयकार कहा जाता है। इस दिन किया गया उपवास, नवजात, स्नान-दान तथा जप भगवान् सूर्यमें सौगुनी प्रीति बढ़ानेवाला होता है। अतः सूर्यमें सौगुनी प्रीति बढ़ानेवाले इस कृत्य-कारको जयकार कहिये।

इस दिन रविकार हो तो उसे कहते हैं। इस दिन भगवान् सूर्य स्नान-दानादि कर्म पूजन करनेवालेको हजार गुना फल प्रदान करते हैं। इस दिन उपवास करके भूत, दूष तथा इक्षुरासे सूर्यनारायणको स्नान करके सुकुम्भम विष्टेय चाहिये और गुणुलक धूप देकर मोदकका नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। इस

भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करके तिलसे इतना करण रज्जुपुष्टी (पूरी) • भोजन करना चाहिये ।
चाहिये । तदनन्तर यथाशक्ति ब्राह्मणोंको मोटक, तिल तथा

(अध्याय ८६-८७)

विजय, अर्द्धिवाभिमुख तथा हृदयवार-व्रतोंकी

ब्रह्माजी बोले—दिग्भिन् ! सुकृ भक्तों देखिनी नक्षत्रों
पुनः सागरी त्रिभिन्को विजय-संज्ञक अर्द्धिस्वर कहते हैं ।
सम्पूर्ण पाषाण और घवोंको नष्ट कर देता है । उस दिन सम्पन्न
किये गये पुण्यकर्म कोदिगुण फल प्रदान करते हैं ।

दिग्भिन् ! माघ मासके कृष्ण पक्षकी सप्तम्यको जो दिन हो
उसी अर्द्धिवाभिमुख कहते हैं । उस दिन ज्ञात-कारण •
पर गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे सूर्यनारायणकी पूजा •
चाहिये । तदनन्तर रात्रिपक्षको बघासे बने हुए •
जातव्य तेजस्व सुदीपकी ओर मुखकर महाशेता-मन्त्र जपने
हुए सायंकालतक कक्षा रहना चाहिये । तदनन्तर ब्राह्मणको
भोजन करवाकर • देनी चाहिये । तत्पश्चात् मीन •
कषे भी भोजन करना चाहिये । जो मनुष्य इस •
विधिपूर्वक पालन करते हैं, • भगवान् सूर्यनारायणका

अनुग्रह • होता है ।
दिग्भिन् ! संवत्सरके दिन यदि रविकार हो तो उसका
जप हृदयकर होता है । • अर्द्धिवाके हृदयको अत्यन्त प्रिय
है । उस • करके यन्त्रसे सूर्यनारायणके अभिमुख
एक • अठ • पाठ करना चाहिये अथवा
धर्मशस्त्रसे भगवान् सूर्यका हृदयमें ध्यान करना चाहिये ।
सूर्यस्त होनेके • पर आकर यथाशक्ति ब्राह्मणको भोजन
कराये गन्ध-सौन्दर्यक • भोजन करके
सुखीकर लाल • हुए भूषण ही शयन करे । इस प्रकार
• इस दिन • रहकर ब्रह्म-धर्मसे सूर्यनारायणकी पूजा
करता है, उसके सम्पन्न अमीष्ट सिद्ध • जाते हैं और •
भगवान् सुखी • तेज-वर्धन तथा घरको प्रसन्न
• है । (अध्याय ८८—९०)

रोगक्ष एवं महाशेतावार-व्रतोंकी

ब्रह्माजी बोले—दिग्भिन् ! यदि रोगक्ष •
उत्तराश्विपुनरी नक्षत्र पड़े तो • रोगक्षका कहते हैं । यह
सम्पूर्ण रोगों एवं भयोंको दूर करनेवाला है । इस दिन जो गन्ध,
पुष्प आदि उपचारोंसे भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करता है,
यह सभी रोगोंसे मुक्त हो जाता है तथा सूर्यदेवको प्रसन्न होता
है । मन्दारके पत्रोंपर दोना बनाकर उसीमें उसीके भूल रक्षण
करके भगवान् सूर्यनारायणको समने रक्ष देना चाहिये तथा
प्रातःकाल उठकर उन्हीं फूलोंसे उनका पूजन करना चाहिये ।
तदनन्तर सौत्वं भोजन करके वाक्प्री सम्पत्ति करनी चाहिये ।

दिग्भिन् ! यदि सूर्यप्रहणके दिन रविकार हो तो उसे
महाशेतावार कहते हैं, यह भगवान् सूर्यको बहुत प्रिय है । उस
दिन उपवास करके पवित्रसे स्नान गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे
भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणका पूजन करके महाशेता-मन्त्रका जप
करे । तदनन्तर महाशेताकी पूजा करके सूर्यनारायणको •
करनेका विधान है । महाशेताकी • करके गन्ध-पुष्प
आदिसे उनका पूजन करे तथा उसीके समुत्त एक •

सूर्यनारायणकी स्थापना कर इनकी पूजा आदि करे । तत्पश्चात्
जप करके भूलक्षीत तिलसेक हवन करे । ब्रह्मणके समय
महाशेता-धनका जप करता रहे और ब्रह्मणके समाप्त होनेके
पश्चात् पुनः स्वयं • महाशेता तथा महाधिपति भगवान्
सूर्यका पूजन करे । ब्राह्मणोंसे पुण्य सुनकर उन्हें भोजन कराये
तथा यथाशक्ति दक्षिणा दे । उसके बाद स्वयं मीन शेषकर
भोजन करे । इस दिन किये हुए खान, दान, जप, होम आदि
कर्म • फल देते हैं ।

दिग्भिन् ! सम्पूर्ण पाषाण और भयोंको दूर करनेवाले
सूर्यनारायणके इन छद्मश चारोंका मीन जो वर्णन किया है, इसे
जो मनुष्य पढ़ता • सुनता है, • भगवान् सूर्यका प्रिय
हो जाता है और जो इन चारोंको नियमपूर्वक करता है, वह
धर्म, धर्म, धर्म और चन्द्रमाके समान वार्षिक, सूर्यके समान
जप, इनके • पराक्रम तथा स्थायी लक्ष्मीको प्राप्त •
है, तदनन्तर अन्तमें वह शिवलोकको चला जाता है ।

(अध्याय ९१-९२)

सूर्यदेवकी पूजामें विविध उपकार और फल आदि निवेदन करनेका

ब्रह्माजी बोले—विधिन् ! जो प्राची भगवान् सूर्यनामणके निमित्त सभी धर्मकार्य करते हैं, उनके पुत्रमें ऐश्वर्य और दौलती उत्पन्न नहीं होते । जो भगवान् सूर्यके मन्दिरमें भक्तिपूर्वक गेवारसे स्नान करता है, वह सफल सभी प्रयत्नोंमें मुक्त होता है । श्वेत-रक्त अथवा पीली मिट्टीसे जो मन्दिरमें लेप करता है, वह मन्त्रोपासित फल प्राप्त करता है । जो व्यक्ति ठण्डासपूर्वक अनेक प्रकारके सुगन्धित फूलोंसे सूर्यनारायणकी पूजा करता है, वह स्वप्न अर्थात् फलके लोभ छोड़ता है । पुष्प का तिल-तैलमें मन्दिरमें दीपक जलाकर करनेवाला सूर्यदेवके तथा सूर्यनारायणके चरणों, शीर्ष, देवालयादिमें दीपक जलाकर स्नान करनेवाला स्वर्गकी प्राप्ति करता है । भक्तिभावसे सम्पन्नित होकर जिस मनुष्यके द्वारा सूर्यके दीपक जलाया जाता है, वह अपनी अभीष्ट कामनाओंके प्राप्त कर लेनेके लोभ छोड़ता है । जो चन्दन, अगर, कुसुम, कपूर तथा चन्दूरी के मिलाकर तैयार किये गये अबटनमें सूर्यनारायणके अग्रद्वार लेपन करता है, वह करोड़ों स्वर्गमें स्थान प्राप्त कर पुनः पृथ्वीपर सभी इच्छाओंमें संतुष्ट रहता है और स्वप्न छोड़ता है । पुनः पुनः सूर्यको अर्घ्य प्रदान करनेवाला पुनः पुनः स्वर्गमें स्थान प्राप्त करता है । सूर्यके पदार्थ तथा पृथ्वीसे युक्त अर्घ्यके द्वारा सूर्यके अर्घ्य देकर मनुष्य देवदेवके बहुतों समयतक रहकर पुनः पृथ्वीपर उक्त होता है । स्वर्गमें युक्त जल अथवा ताल चर्चके जलमें अर्घ्य देनेवाले करोड़ों वर्षतक स्वर्गलोकात् पृथित होता है । कमलपुष्पमें सूर्यकी पूजा करके मनुष्य स्वर्गमें जाता करता है । ब्रह्म-भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणके गुगुलु तथा वृत्तमिश्रित धूप देनेसे तत्काल ही सभी पापोंसे मुक्ति मिल जाती है ।

जो मनुष्य पूर्वजन्में भक्ति और ब्रह्मसे सूर्यदेवकी पूजा करता है, उसे सैकड़ों कथित गोदान करनेका फल मिलता है । मध्याह्न-कालमें जो विशेषकर होकर उनकी पूजा करता है उसे भूमिदान और सौ गोदानका फल प्राप्त होता है । जो मनुष्य होकर श्वेत वस्त्र तथा

ऊनी (फाड़ी) कपण करके भगवान् सूर्यदेवकी पूजा करता है, उसे हजार गौओंके दानका फल प्राप्त होता है ।

जो मनुष्य अर्घ्यार्थमें भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, उसे अविस्मरत होती है और उसके कुलमें वृद्धि होती है । प्रदोष-वेलामें जो मनुष्य भगवान् सूर्यदेवकी पूजा करता है, वह स्वर्गलोकात् अक्षय-उपयोग होता है । प्रमत्तकालमें भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा करनेपर देवदेवकी प्राप्ति होती है । इस प्रकार सभी अथवा जिस किसी भी समय जो मनुष्य भक्तिपूर्वक मन्दिर-पुष्पोंसे भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, वह स्वर्गमें भगवान् सूर्यके स्नान होकर सूर्यदेवके पुत्र बन जाता है । जो मनुष्य होने अथवा स्वर्गलोकात् भगवान् सूर्यकी भक्तिपूर्वक पूजा करता है, वह ब्रह्मके लोकमें जाता करता है । देवताओंद्वारा पृथित होता है । ब्रह्म आदि स्वर्गलोकात् पूजा करनेवाला भक्तिमें नहीं होता । जो निदानमें सूर्यदेवके प्रणाम करता है, उसे प्रसाद होकर भगवान् ब्रह्म होता है ।

उत्पत्तिकालमें सूर्यदेवके मात्र एक दिन यदि धूलसे स्नान कर जाय तो एक लाख गोदानका फल प्राप्त होता है । सूर्यके दूधद्वारा स्नान करनेसे पुण्यद्वारा-वृद्धि फल मिलता है । इससे स्नान करनेपर अक्षय-वृद्धि फल प्राप्त होता है । भगवान् सूर्यके लिये पहली बार ब्रह्म ही सुगुप्त गौ तथा सप्त ब्रह्म करनेवाली पृथ्वीको जो करता है, अथवा स्वर्गलोकात् प्राप्त कर पुनः सूर्यदेवको चरण अर्घ्य और गौके शरीरमें अर्घ्य देने से ही करोड़ वर्षतक वह स्वर्गलोकात् पृथित होता है । जो मनुष्य भगवान् सूर्यके निमित्त भेरी, शंख, वेणु आदि दान करते हैं, वे स्वर्गलोकात् जाते हैं । जो मनुष्य भक्तिभावसे सूर्यनारायणकी पूजा करके उन्हें खज, ध्वजा, फलाका, फितान, घापर तथा सुवर्णदण्ड आदि समर्पित करता है, वह दिव्य छोटी-छोटी विमानोंमें युक्त सुन्दर विमानोंके द्वारा सूर्यदेवके जाकर आनन्दित होता है और विस्मयजनक वहाँ रहकर पुनः मनुष्य-जन्म ग्रहण कर सभी राजाओंके द्वारा अर्पितद्वारा उक्त होता है ।

नैवेद्य तथा विजय-धूप देने की चाहिये। ब्राह्मणोंको भोजन करकर स्वयं भी वैसा ही भोजन करना चाहिये। 'रक्षिषे श्रीकृष्णम्'—'सूर्यस्य ! मङ्गल प्रसन्न हो'—ऐसा कहते हुए **॥** **॥** खट्वरकी लकड़ीसे **॥** करण चाहिये।

तीसरी पादपात्रों अगस्ति-पुष्पसे भगवान् भस्करका पूजन करना चाहिये। इस व्रतमें भगवान् सूर्यको श्रीलम्ब, कुसुम, सिद्धक-धूप देने चाहिये, क्योंकि ये भगवान्को अत्यन्त प्रिय हैं।

'विजयते **॥** श्रीकृष्णम्'—'भगवान् विजयते-सूर्य'—

जयन्ती-सप्तमीकादिक विधान और फल

ब्राह्मणों कीले—विशेषण । मन्त्र **॥** **॥** **॥** यह सूर्यपूजाकी धर्मकी तिथि जयन्ती-सप्तमी **॥** **॥** **॥** यह सूर्यपूजाकी पाक्षिनातीक्ष्णी तथा **॥** **॥** **॥** है। इस तिथिपर **॥** **॥** **॥** विधिसे उपवासना करना चाहिये, उसे अन्न न्यें। पश्चिमेति इस व्रतमें चार पादपात्रोंका उपवेश किया है। पादपात्रों में एकभुक्त, बाड़ीमें मलजल और सप्तमीमें उपवास करने अङ्गुलीमें धारणा करनी चाहिये। मास, पक्षगुण तथा वैश्व मासमें यह जयन्ती-सप्तमीकादिक **॥** **॥** **॥** किया जाय मय भगवान् सूर्यको ककुत्स्थके सुन्दर पुष्प चढ़ाने चाहिये तथा ककुत्स्थके मिलन करना चाहिये, मोदकोका नैवेद्य और पुष्पका धूप देना चाहिये। पञ्चगव्य-आयन करके पक्षिनीकरण करना चाहिये। ब्राह्मणोंको मोदक पञ्चशक्ति मिलाना चाहिये तथा **॥** **॥** **॥** नामक चावलका भात भी देना चाहिये। इस प्रकार **॥** **॥** **॥** मनुष्य लोकपूज्य भगवान् भस्करकी पूजा करता है, वह इस व्रतकी सभी धारणाओंमें अङ्गवेष एवं उन्नमस्य-वस्त्रका वस्त्र **॥** **॥** **॥** है।

द्वितीय पारण्यमें सूर्यभगवान्की पूजा करने उन्नमस्य-पल्लव फल प्राप्त होता है। वैश्वक, ज्येष्ठ और अश्विनी कसमें सूर्यदेवकी पूजा करनेके लिये शशदल कमल तथा केत चन्दन

॥ **॥** **॥** हैं—ऐसी शायन करते हुए कुशदेवका प्राशन करना चाहिये तथा बेरकी दास्यन करने चाहिये। वर्षके अन्तमें भगवान् सूर्यकी गन्ध-पुष्प तथा नैवेद्यदि उपचारोंसे विधिवत् पूजा करने चाहिये, अन्यथा वर्षके **॥** **॥** **॥** अवस्थित होकर जम **॥** **॥** **॥** चाहिये।

॥ ! इसे विधिसे **॥** **॥** **॥** इस सप्तमी-विधिका व्रत करता है, उसके खनादिक समस्त व्रतके कार्य सौगुना **॥** **॥** **॥** देनेवाले हो गते हैं। इस सप्तमीके व्रतको करनेवाला **॥** **॥** **॥** वर, **॥** **॥** **॥** पुत्र, **॥** **॥** **॥** बल तथा लक्ष्मीको प्राप्त **॥** **॥** **॥** है। (अध्याय १६)

और गुणलके धूपका विधान कहा गया है। इसमें गुड़के बने हुए अपूपका नैवेद्य अर्पित करना चाहिये और गोमयका प्राशन करना चाहिये। ब्राह्मणोंको गुड़से बने हुए अपूपीका भोजन करना अच्छा माना गया है। यह धारणा पापनाशक है।

तृतीय धारणाकी विधि इस प्रकार है—आयन, भाद्रपद और अश्विन मासमें एक चन्दन, मालतीका पुष्प और विजय नामक धूपका पूजनमें प्रयोग करना चाहिये। पृथक् बनाये गये अपूपेका नैवेद्य निवेदित करना चाहिये। ब्राह्मणोंको भोजन की इसी वृत्ते अपूपसे कर्मावका विधान है। अरीको परम पवित्र करनेवाले कुशदेवका पूजा करना चाहिये। यह तृतीय धारणा धर्मका व्रत करनेवाली कती गयी है।

अब चौथी धारणा बता रहा हूँ, इसे सुने—कर्त्तिक, मार्गशीर्ष तथा चैत्र मासमें सूर्यपूजनकी धारणा करनेसे अन्नत कुम्भफल प्राप्त होते हैं। इस धारणामें कनेके लाल पुष्प, रक्तचन्दन देने चाहिये। अङ्गुली नामक धूप, पाचलका अण्ड नैवेद्य निवेदित करना चाहिये। केत नामके मङ्गल प्राशन करनेका विधान है।

चौथे धारणाओंमें जयन्तः 'विजयधामः श्रीकृष्णम्', 'धामः श्रीकृष्णम्', 'अश्विनः श्रीकृष्णम्' तथा 'भस्करः

१-अश्विनी चन्दन पुष्प सिद्धक भुक्त तथा मङ्गलस्य ककुत्स्थके ।
(अष्टाध्यायी १७। १९)
आग, चन्दन, मोक्ष, सिद्धक (एक मन्त्र-द्वय) और सिद्ध (चौक, चौक, धीव) को समस्त लोक जगत् पूज्य माना जाता है, उसे अङ्गुली-धूप कहते हैं।

श्रीवत्सन्—ऐसा कलत्र बनाना चाहिये। इस मनुष्य विभक्त्यसु भगवान् सुर्वनाशकको पूजा करता है, वह पदमे पदमे प्राप्त होता है। इस प्रकार सत्त्वो-व्रत करनेपर व्रतकर्त्तव्ये सभी अपीष्ट कष्टनाशको प्राप्त करता है। पुत्रार्थे पुत्र कनार्थे धन है और ऐसी मनुष्य

ऐसीसे मुक्त हो है तथा अन्तर्मे वह निवृत्त कलत्रान प्राप्त करता है।

इस मनुष्य इस सत्त्वो-व्रतकर्त्ता है, वह संत है तथा सभी पापोंसे मुक्त होकर विमुक्त्यसु सुर्वलोकको करता है। (अध्याय ९७)

अपराधिता-सत्त्वो पञ्चम्या-सत्त्वो-व्रतका कर्त्तव्य

ब्रह्मर्षी बोले—गणपति । भद्रम् । पञ्चमी सत्त्वो विधि अपराधिता-सत्त्वो कर्मसे विरक्त है। यह महापातकोक्य नाश करता है। इस व्रतमे मनुष्य विधिको एकभुक्त और पञ्चमी विधिमे नवव्रत करनेका विधान है। वही विधिको उपवास करके सत्त्वो विधिमे परमा करनेका विधान है। इसमें भी पारण्य करती है। सुविद्यकी पूजा करवीर-पुत्र, गुणुत्तमे हुए धृष्ट, गुणुत्तमे वने अपुपसे करनी चाहिये। भद्रम् । पञ्च, श्वेत चन्दन, घृतका धूप धूपका केवलसे सुर्वदेवकी पूजा करना चाहिये। मार्गदर्शक आदि तीन अगस्त्य-पुत्र, कुण्डलका विलेख, सिद्धक-धूप, शक्ति-चालकके वैशेष आदिसे पूजा चाहिये। परमपुत्र तीन मार्गमें रात कमलके पुत्र, अगस्त्य, चन्दन, अमृत धूप, शक्ति या मिथीचन्दन वने हुए अमृतके वैशेष सुर्वदेवकी पूजा करनी चाहिये। विद्वान्मे ज्ञेय अविद्ये महीनोमे सुर्वदेवकी पूजा करनेके लिये इस विधिको ब्रह्म है। भारी पारण्यको भगवान् सुर्वदेवके इस प्रकार है—सुधीशु, अर्चना, और विपुलपद।

परमपुत्रों प्रत्यक्षः 'सुधीशुः श्रीवत्सन्' इत्यादि पदे। गोमूत्र, धूप, गुण धूप—ये व्रतके हैं।

स मनुष्य इस विधिको इस सत्त्वो-व्रतको करता है, वह सुधीमे मनुष्योंसे पराजित नहीं होता। वह शत्रुको जीतकर धर्म, अर्थ तथा कर्म—इस विधिको परमपुत्र भी निःसंदेह प्राप्त कर लेता है। विद्वान्को प्राप्त करके वह सुर्व-लोकको प्राप्त होता है।

इस प्रकार सत्त्वो प्रत्यक्षपुत्रक सत्त्वो-व्रतको करता है, वह शत्रुको पराजित करके सुर्वलोकको प्राप्त करता है और श्वेत अङ्गोंसे मुक्त एवं स्वर्गम धन-प्राप्त्यसु सम्पन्नित पापको दृष्ट भगवान् कलत्रदेवके समीपमे जाकर व्रतका प्रिय हो है।

ब्रह्मर्षी बोले—सुधीशुकी सत्त्वो विधिमे जब सुर्व सत्त्वान करते तब वह सत्त्वो व्रतको ब्रह्मर्षी है, जो भगवान् भास्वरको अत्यन्त प्रिय है। इस अजसराय किये गये ज्ञान, धन, श्रम, ईश्वर और पितृ-देव-पूजन—ये सब सर्व-गुण फल है—ऐसा भगवान् भास्वरने है। (अध्याय ९८-९९)

नन्दा-सत्त्वो तथा भद्र-सत्त्वो-व्रतका विधान

ब्रह्मर्षी बोले—हे जीव । मार्गदर्शक कर्मसे शत्रु पक्षी जो सत्त्वो होती है, वह नन्दा कलत्राणी है। वह सभीको आनन्दित करनेवाली तथा कल्याणकारीणी है। इस व्रतमे पञ्चमी विधिको एकभुक्त और वही विधिको नवव्रत मनीषिलोग सत्त्वो विधिको उपवास ब्रह्मर्षी है। इस व्रतमे

विद्वान्मे तीन पारण्यको करनेका उन्देश किया है। इसके पूजनमे पारण्यको पुत्र, सुगन्ध, चन्दन, कर्पूर और अगस्त्ये विहित धूपका प्रयोग करना चाहिये। खड्गके शक्ति दही-भास्वर वैशेष भगवान् भास्वरको प्रिय है। उसी खड्गविहित दही-भास्वर जोवन ब्रह्मर्षीको करवाना चाहिये। तत्पश्चात्

१-शिवकी प्रतिवर्तिकाशुः सिद्धक तथा। कलत्र तन्मेऽं पुत्रेऽं व्रतमे कलत्रे ॥
उत्तेन पुत्रेऽं कलत्रे देवताय।
(१८।९-१०)
शिवपद, अगस्त्य, सिद्धक, जलार्थमे, श्रीवत्सन् इत्यस्य तन्मेऽं व्रतमे विरक्त जो धूप कलत्र बना है, उसे अनन्त संपत्ति धूप कर गयी है।

स्वयं भी उसी भोजनको खा चाहिये। भगवान् पादपङ्क्तियों के देवके प्रथम तिथि इस प्रकार है—
पल्लवके पुष्प, पक्ष्म धूप अथवा यक्षराक्षसार्थ जो भी धूप हो सके, उसी धूपसे पूजा करने चाहिये।

द्वितीय पारणामे प्रयोग धूप, शर्कराचन्दनसे पुष्प नैवेद्य सूर्यनारायणको अर्पित करनेका विधान है। खड़कमिश्रित भोजनसे ब्राह्मणोंको भोजन भी करना चाहिये। निम्ब-पत्रका पक्ष्म पक्ष्म भोजन चाहिये।

तृतीय पारणामे भगवान् पादपङ्क्तियों के नील श्वेत और गुगुलुक अर्पित करना चाहिये। प्रारणामे तथा शिरोधार्यमें चन्दनके उपयोगकी विधि कही गयी है।

मनुष्योंको सदा पवित्र करनेके लिये भगवान् सूर्यनारायणके नामोंकी भी स्तुति—विष्णु, माता काता ये हैं। प्रत्येक पादपङ्क्तिमें 'विष्णुः श्रीधरः' उक्त करना चाहिये। इस विधिसे जो मनुष्य भगवान् भास्करकी पूजा है, इस लोकमें अपनी कल्याणार्थको पूर्ण करके अनन्तकालतक है। उक्तपक्ष्म सूर्यलोकमें जाकर सब कार्य आनन्दको प्राप्त करता है।

तिथियों और नक्षत्रोंके देवता तथा उनके पूजनका फल

सुमन्तु मुनि बोलें—राजन् ! यद्यपि भगवान् सूर्यके सभी तिथियाँ प्रिय हैं, किन्तु विशेष विशेष हैं।

प्रतानीकने पूछा—जब भगवान् सूर्यके सभी तिथियाँ प्रिय हैं तो साधुमैत्री ही पूरा, प्रथम अष्टि विनोदकपसे कब अनुष्ठित होते हैं ?

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन् ! प्रचीन कालमें इस

ब्रह्माजी बोलें—गुरु पक्षमें सप्तमी तिथिको हस्त नक्षत्र हो तो वह भद्र-सप्तमी कही जाती है। उस दिन भगवान् सूर्यदेवके पड़ले पीसे, अनन्तर दूधसे तत्पश्चात् शर्करासे कण्ठकर चन्दनसे लेप करना चाहिये। तत्पश्चात् उन्हें गुग्गुलुकर दिलावे। यद्युक्त तिथिको एकधुत तथा पञ्चमी तिथिको विधान है। पौरी तिथिको अयाचित रहकर तिथिको उपवास रखना श्रेष्ठ कहा गया है। सप्तमी-प्रत्यय पक्षमें मनुष्यको चाहिये कि वह उस व्रतके पञ्चमी, सप्तमीसे दूर करनेवाले, विद्याल-वृत्तिकर करनेवाले मनुष्योंसे रहे। बुद्धिमान् व्यक्ति सूर्यनारायण करने करते हुए दिनों इष्टन न करे। इस तिथिको जो मनुष्य भद्र-सप्तमीका व्रत करता है, उसे श्रेष्ठ पुण्य प्राप्त होता है। सदा समस्त कल्याणकी वस्तुएँ प्रदान करते हैं। जो मनुष्य इस तिथिको पञ्चमिपूर्वसे भद्र (वृषभ) बनाकर सूर्यदेवको समर्पित करता है, उसके भद्र पुत्र प्राप्त होता है और वह जीवन-पर्यन्त आनन्दित रहता है।

जो भद्रपूर्वक सप्तमी-कल्पको प्रारम्भसे सुनता है, वह अष्टमेयकके कल्पको प्राप्त करनेको पञ्चाश पश्यपद—योगवाले प्राप्त होता है।

(अध्याय १००-१०१)



विषयमें भगवान् विष्णुने तत्पश्चात् ब्रह्माजीसे जो व्रत करने थे और ब्रह्माजीने वैश्व कालका, उसे मैं आपको बताना हूँ और भक्षण करें—

ब्रह्माजी बोलें—विष्णो ! विष्णुजन्मके समय प्रतिपद सभी तिथियाँ देवताओंके तथा सप्तमी भगवान् सूर्यके प्रदान। जिन्हें जो तिथि दी गयी, वह

१-कर्म, चन्दन, कुष्ठ (कुठकी), जगद, मिष्ठक, शीतलनी, कस्तूरी, कुङ्कुम, मुद्गन तथा इतलमिने मेंसे पक्ष्म धूप करना है।

सप्तमि पूर्ण पौष कुङ्कुम मुद्गन तथा इतलमिने मेंसे पक्ष्म धूप करने॥

(आहार्य १००।१-७)

कर्म, चन्दन, कुष्ठ (कुठकी), जगद, मिष्ठक, शीतलनी, कस्तूरी, कुङ्कुम, मुद्गन तथा इतलमिने मेंसे पक्ष्म धूप करना है।

२-कुष्माण्डः तिलै कर्म पूर्ण तथा॥

चन्दन सारो मुल्ल अथवा शीतलनी। (आहार्य १००।८-९)

कुष्माण्ड, कण्ठ, सुगन्धक, कस्तूरी, तथा तिलकर प्रयोग करना है।

उत्सव ही स्वामी कहलसक । जतः अपने दिनपर ही अपने मन्त्रोंसे पूजे जानेपर ये देवता अभीष्ट प्रदान करते हैं :

सुर्वी अग्निदेव प्रसिद्ध, ऋषदेव विविध, चक्रवर्त्त कुबेरदेव तुलसी और गणेशदेव चतुर्वर्त्ति सिद्धि दी है । नमस्तकदेव पञ्चमी, बह्म, अपने दिने सप्तमी और सप्तमे अष्टमी प्रदान है । दुर्गादेवदेव नक्षत्री, अपने पुत्र परमेश्वरके दसवीं, विष्णुदेवगणेशके एकदशी सिद्धि दी गयी है । विष्णुदेव द्वादशी, वामदेवके त्रयोदशी, शङ्करदेव चतुर्दशी तथा चन्द्रदेवके पूर्णिमाकी सिद्धि दी है । सुर्वी दुष्ट विनाशके यक्ष, पुण्यशक्तिदेव अमृतकला सिद्धि दी गयी है । ये सभी गयी पेश सिद्धियाँ चन्द्रमाकी हैं । कृष्ण पक्षमें देवता इन सभी सिद्धियोंमें शनैः शनैः चन्द्रकारणश्रीवश फल कर लेते हैं । सूर्य पक्षमें पुनः शीतलहरी कालके साथ उदित होती है । वह अष्टमी चौदशी काल सदैव अक्षय रहती है । उसमें सावन् सूर्यवश प्रदान है । इस प्रकार सिद्धियोंका और कुछ अन्य सूर्यवाचक हो गये हैं । अतः ये सभी सप्तमी काले होते हैं । व्याघ्रमावसे सूर्यदेव अक्षय प्रदान है । दूसरे देवता भी विस प्रकार विनाशके अभीष्ट प्रदान पूर्ण करते हैं, उसे ही संक्षेपसे बताता हूँ, अन्य तुले—

मत्स्यपदा सिद्धिमें अग्निदेवकी पूजा करके अमृतकाली युक्तता लभ्य कर तो उस इन्धनसे समस्त ज्ञान और अक्षयता धनकी प्राप्ति होती है । द्वितीयावसे ऋषादेव पूजा करके ऋषादेव ब्राह्मणके योजन कर्माके मनुष्य सभी विद्वज्जनों पराजित हो है । तृतीयावसे चन्द्रके पूजा कुबेरका मनुष्य निश्चित ही विपुल धनका फल प्राप्त है तथा अन्य-विक्रयदि व्यापारिक व्यवहारमें उसे अक्षयिक लाभ होता है । चतुर्वर्त्ति सिद्धिमें भगवान् गणेशवश पूजन करके चन्द्र सिद्धि सभी विनाशकर नाश हो जाता है, इसमें संदेह नहीं । पञ्चमी सिद्धिमें नागेश्वरी पूजा करनेसे विषय फल नहीं रहता, बी और पुत्र प्राप्त होते हैं और श्रेष्ठ लक्ष्मी भी प्राप्त होती है । षष्ठी सिद्धिमें कर्त्तिकेयकी मनुष्य रूप-सम्पन्न, दीर्घायु और कर्त्तिकेय कहनेवाला हो है । सप्तमी सिद्धिमें चित्रमातु नमस्कारके भगवान् सूर्यवाचकवश पूजन करना चाहिये, ये सबके स्वामी एवं रक्षक हैं । अष्टमी सिद्धिमें कृष्णसे सुशोभित भगवान् सूर्यवाचककी पूजा करनी

चाहिये, ये प्रभु इन तथा अक्षयिक वसति प्रदान करते हैं । नमस्तक शङ्कर मनुष्यवश करनेवाले, ज्ञान देनेवाले और चन्द्रमावश करनेवाले हैं । नक्षत्री सिद्धिमें दुर्गाश्वरी पूजा करके मनुष्य इच्छापूर्वक संसार-सागरके पार कर लेता है तथा और लोकव्यवहारमें वह सदा प्राप्त करता है । दशमी सिद्धिमें यक्षकी पूजा करनी चाहिये, ये निश्चित ही सभी वृष्टि करनेवाले और नरक तथा मृत्युसे मानववश उद्धार करनेवाले हैं । एकदशी सिद्धिमें विष्णुदेवकी प्रकरसे पूजा करनी चाहिये । वामदेव संतान, धन-धान्य और पुत्री प्रदान करते हैं । द्वादशी सिद्धिमें भगवान् विष्णुकी पूजा करके मनुष्य सदा होकर समस्त लोकमें ही पूज्य हो जाता है जैसे विष्णुदेवकी भगवान् सर्व पूज्य हैं । त्रयोदशीमें चन्द्रमाव पूजा करनेसे मनुष्य रूपका हो जाता है और अमृतकाली लभ्यता प्राप्त करता है तथा उसकी सभी कामकी पूर्ण हो जाती है । चतुर्दशी सिद्धिमें भगवान् एकदश्वर महादेवकी पूजा करके मनुष्य समस्त देवकीसे सम्पन्न हो जाता है तथा बहुत-से पुत्रों एवं प्रभुत्व प्राप्त करता है । चौथीमावसे जो भगवान् चन्द्रमावकी पूजा है, सम्पूर्ण संसारपर अपना अधिकार प्राप्त है और होता । सिद्धि । अर्थात् अमृतकाली पितृगण पूजित होनेपर सदैव होकर प्रजापति, वन-रक्षक, आयु वर-रक्षक है । उपवासके भी ये पितृगण उक्त फलमें देनेवाले होते हैं । अतः मानवके चाहिये कि अधिकपूर्वक पूजाके द्वारा सदा प्रसन्न रहे । मृत्युवश, ज्ञान-सर्वोत्थन और अंश मन्त्रोंसे बलवशके मध्यमें सिद्धिमें स्वामी देवताओंकी विविध उपचारोंसे अधिकपूर्वक यक्षसिद्धि पूजा करनी चाहिये तथा अन्य-होमदि कार्य सम्पन्न करने चाहिये । इसके प्रभावसे मानव लोकमें और परलोकमें भद्र सुखी रहता है । उन-उन देवोंके प्राप्त करता है और मनुष्य उस देवताके अनुरूप हो जाता है । अर्थात् वह हो जाते हैं तथा रूपका, धार्मिक, शत्रुवश नाश करनेवाला होता है ।

इसी प्रकार सभी नक्षत्र-देवता जो नक्षत्रोंमें ही व्यवस्थित हैं, ये पूजित होनेपर समस्त अभीष्ट कामनाओंके प्रदान करते

॥ अब मैं उनके [] बताता हूँ : [] नक्षत्रों में अधिपतिकुमारोंकी [] मनुष्य दीर्घायु एवं स्वास्थ्यप्रद होता है। चरणी नक्षत्रों में कृष्ण वर्णक सुन्दर पुत्रों [] कर्पूरदिग्गजोंसे पूजित मन्दोदर अम्बुसुतो [] देते हैं। कृत्तिका नक्षत्रों में रक्त पुत्रोंसे [] मारुत्यदि और श्रेष्ठके [] पूजा करनेसे अमिदोय [] की वनेष्ट [] देते हैं। रोहिणी नक्षत्रों में प्रजापति—सुत्र ब्रह्मकी पूजा [] [] अभिलम्ब पूर्ण कर देता है। मृगशिरा नक्षत्रों [] होनैर ठहरके क्षात्री भण्डोदय छोड़े और ठहरके प्रज्जन्म करते हैं। अश्वि नक्षत्रों में निम्नके अर्चनसे विजय [] है। सुन्दर [] आदि पुत्रोंसे पूजे गये राजान् [] सदा [] करते हैं।

पुनर्विदु नक्षत्रमे मन्दिरीत्यै पूज्यं करणी चक्षिणे । पूज्यते संसृत होकर ये ॥१॥ सपुत्रा रक्षा ॥२॥ है । ॥३॥ नक्षत्रमे उत्तरे ॥४॥ बुधस्तुतिं अर्प्यते पूज्यते काल ॥५॥ प्रभु सत्पुत्रिहो प्रदानं करोति ॥६॥ । अर्पयन् नक्षत्रमे ॥७॥ पूज्यं करणेसे नागदेव निर्धन ॥८॥ देते है, ॥९॥ । मय ॥१०॥ हव्य-हव्यके हव्य पूजे गये ॥११॥ विष्णुगण चन, चान्य, पूज्य, पुत्र तथा वसु प्रदान करोति ॥१२॥ । पूर्वाषाढानुमे नक्षत्रमे पूज्यते पूज्यं करणेपर विजय ॥१३॥ हो जाती ॥ और उत्तराषाढानुमे नक्षत्रमे भग नामक सूर्यदेवकी पुष्पादिसे पूज्य ॥१४॥ । विजय, कन्याको अभीष्टित जीत और पुत्रवत्के अभीष्ट पति प्रदान करते हैं तथा उन्हें ॥१५॥ । हव्य-सम्पदासे ॥१६॥ वन देते हैं । हस्त नक्षत्रमे भगवान् सूर्य गन्ध-पुष्पादिसे भूषित होनेपर सभी प्रकारकी वन-सम्पत्तिर्ष प्रदान करोते हैं । चित्र नक्षत्रमे पूजे गये भगवान् तथा सपुत्रीता ॥१७॥ ॥१८॥ है । ॥१९॥ नक्षत्रमे वायुदेव भूषित होनेपर संसृष्ट ॥२०॥ पराधर्षित प्रदान करते हैं । विशाखा नक्षत्रमे स्मरत पुष्पकेसे इन्द्रविजय पूजन करके भक्त्यु इस लोकमें वन-चान्य प्राप्त कर ॥२१॥ तेजस्वी ॥२२॥ है ।

**अनुप्राध नक्षत्रमे लाल पुष्पेसे भगवान् मित्रदेवकी
भक्तिपूर्वक विधिवत् पूजा करनेसे लाभहीन है। होरी है और
यह एक लोकमें [] [] [] [] है । जोड़ा नक्षत्रमे**

देवताय इन्द्राजी पूजा करनेसे मनुष्य पुष्टि प्राप्त करता है तथा पुण्य, धनमे एवं कामि सबसे श्रेष्ठ हो जाता है। मूल नक्षत्रमे सभी देवताओं की पूजा करकेसे पुण्य, धन, कामि सबसे श्रेष्ठ हो जाता है। और पुण्योक्त फलमेसे प्राप्त करता है। पूर्वरात्र नक्षत्रमे अर्ध-देवता (अर्ध) की पूजा और उषा करके मनुष्य शारीरिक तथा मानसिक संतापसे मुक्त हो जाता है। उत्तररात्र नक्षत्रमे विदेहदेवी और भगवान् विदेहाजी पुण्योद्धार पूजा करनेसे मनुष्य सभी कुल प्राप्त कर सकता है।

सत्य महात्मे को, और नील चण्डी पुष्पोद्धार
पागलन विष्णुकी पूजा कर मनुष्य इतना लक्ष्मी
और विश्वको प्राप्त करता है। नक्षत्रमे गन्ध-पुष्पादिसे
मनुष्यको पूजनेसे मनुष्य बहुत बड़े पापसे भी मुक्त हो जाता
है। इसे कहीं कुछ भी पाप नहीं रहता। हात्थिल नक्षत्रमे
हस्तकी पूजा करनेसे मनुष्य व्याधिसे मुक्त हो जाता और
अनुराधाकी पुष्टि, कर्कश और ऐश्वर्यको प्राप्त करता है।
पूर्वाषाढा नक्षत्रमे पुष्ट, स्वर्णक मणिके समान कर्णमाला
अनन्य मनुष्य पूजा करनेसे इतना भक्ति और विजय प्राप्त
होती है। नक्षत्रमे अश्विपुष्पकी पूजा करनेसे
पाम प्राप्त होती है। ऐश्वरी नक्षत्रमे कोत पुष्पसे पूजे
गन्धर्व पूजा सदैम मङ्गल प्रदान करते और अचल
भक्ति तथा विजय की देते ।

जपनी सामयिक समुदाय धर्मोपदेश के लिए पूजन के
 सदा कर देना चाहते हैं। यात्रा करने की इच्छा
 करने वाले व्यक्ति को भ्रम कराने की इच्छा हो तो पण्डित
 देवदास की पूजा करके ही वह सब कार्य करना उचित है।
 प्रभु करके प्रभु तथा प्रभु हो
 है—हेला रूप में भगवान् सत्य के रूप में।

समाजजीने काया—मधुसूदन ! आज व्यक्तिपूर्वक सूर्यकी अपराध काटो, क्योंकि भगवान् सूर्यकी विलय पूजा, नमस्कार, सेवा-मठ, उपवास, हनुमान् तथा [] प्रभारसे समाजगणको उस कालेकी मनुष्य पण्डित होकर सूर्यसेवाके प्रथम करता है ।

(अध्याय १०२)

किन्ना पात्र प्रणम्य अक्षयेय-यज्ञके यज्ञार होता है। अक्षयेय-यज्ञके करनेवाला मनुष्य धर्म-धर होता है, किन्तु सूर्यदेवके प्रणम्य पुनः संस्रममें नहीं होता * ।

प्रकार गतिपूर्वक विरामे विधि-विधानसे भगवान् सूर्यकी उपासना की जाती है, यह बात बतलता है। उनकी करके संस्कार-पूजा इस ब्रह्मण्यके बात किया है। अतः भी पहले उनकी सूर्यदेवसे अपनी क्षणीय इच्छाओंको प्राप्त किया। भगवान् उच्चर्य उनकी आराधनासे ब्रह्महत्यासे मुक्त हुए। आराधनासे किसी मनुष्यके देवत्व, किन्हीं सम्बन्ध और किन्हीं विद्याधरत्व प्राप्त किया है। ऐसा जानकर हमने एक ही ध्येयद्वारा ही भगवान् सूर्यकी आराधना करके

इसलिए भगवान् सूर्यके अतिरिक्त अन्य पूजनीय नहीं है। ब्रह्मण्यके देवोंकी अपेक्षा अपने क्षेत्र गुण भगवान् धारककी ही आराधना करनी चाहिये क्योंकि ये यज्ञ-पूजा विरामन् भगवान् सूर्य सर्वदा पूज्य है। विरामे लिये परिके अतिरिक्त विभावसु भगवान् सूर्यदेव पूज्य है। गृहत्व-जातिके लिये भी गोपति अंशुमान ही पूजने योग्य है। वैश्योंके भी तमोनाशक सूर्यदेवकी पूजा करनी चाहिये। संयसितके लिये भी तदीय विभावसु ही ध्यान करने योग्य है।

इस सभी धर्मों तथा सभी अभ्रमोंके लिये विभावसु भगवान् सूर्यनारायण ही उपास्य है। उनकी आराधनासे सद्गति प्राप्त हो जाती है।

(अध्याय १०३)

विमर्श-सामग्रीकी प्रक्रिया

ब्रह्मण्यी बोले—विष्णो ! अक्षयेय-यज्ञके अथवा विष्णु होकर भगवान् सूर्यनारायणके प्रतिष्ठाके लिये व्यक्ति मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है, अब आप उम-उम उपासना-प्रतिके विषयमें सुनें।

जो पालन मानकी विधिसे प्रतिपूर्वक बार-बार होता नामक भगवान् सूर्यका जप पूजन करता है, यह सूर्यदेवके प्राप्त होता है। एक-पूजाके पवित्र होकर १०८ बार जप करना चाहिये। अन्न करते हुए, प्रस्थान-कारणसे, उठते-बैठते अर्थात् सभी स्थानों पर सूर्यका नामोच्चारण करना चाहिये। उपवास करनेकाले व्यक्तिको ब्रह्मण्य, पवित्र और अन्यथा लोभसे बचावनी नहीं करनी चाहिये। ब्रह्मपूर्वक सूर्यदेवके प्रति मन एकत्र करके उनकी पूजा करते हुए इस इच्छेका फल करना चाहिये—

इस इस कृपातुसम्पन्नगतिर्न गतिर्न ।
संसारलोभप्रानां ज्ञाता यः विमर्शः ॥

(अध्याय १०४।५)

हे परमहंस-स्वरूप भगवान् सूर्य ! आप देखनु है, गतिहीनोके सद्गति प्रदान है, संसार-सम्पन्नमें निमग्न

अप रक्षक बने।

इस प्रकार एकप्रतिष्ठा होकर उपवास पूजा भगवान् सूर्यनारायणका पूजन चाहिये। पूर्वब्रह्मण्यके सूर्यदेवका पूजन करे, तबका 'ईश ईश' इस इच्छेका जप करे और भगवान् सूर्यके करजोंमें बार जलधारा अर्पित करे।

इसी प्रकार ब्रह्म, वैश्वदेव और ज्येष्ठ ब्राह्मण भी भगवान् सूर्यदेवका पूजन करते हुए मनुष्य मनुष्योके ही श्रेष्ठ गतिको प्राप्त कर लेता है और अन्तमें सूर्यदेवके प्राप्त करता है। अक्षय, ब्रह्मण्य, यज्ञपद और अक्षय मासमें भी इसी विधिसे भगवान् सूर्यभगवान्का 'प्रतिष्ठा' नामसे सम्पन्न पूजन और जप करना चाहिये। गेमुके प्राप्तिसे मनुष्य भगवान् होकर कुलदेवके प्राप्त करता है। संसारके स्वामी अक्षय आत्मस्वरूप भगवान् सूर्यनारायणकी आराधना एवं अन्तब्रह्मण्यके भगवान् सूर्यका स्मरण करनेसे सूर्यदेवकी प्राप्त होती है। कर्तिक अदि बार महिनेमें दूधका प्राप्ति करना चाहिये। इन महिनेमें 'कस्तूर' नामसे भगवान् सूर्यका पूजन तथा जप करना चाहिये। ऐसा करनेपर व्यक्ति भगवान् सूर्यके

* एकोऽपि होतः सूर्यतः प्रजापते रक्षकलोकायपूजेन सुखं । रक्षकलोकी पुनरपि जप इच्छितवान् न पुनर्नवाय ॥

लोकको प्राप्त होता है। प्रत्येक घरमें ब्रह्मण्यको यथावश्यक दान देना चाहिये। जतुर्धसको सम्पत्तिपर पुण्य-कर्म करना चाहिये और वसतिवत् अयोधन करना चाहिये। विद्वान्को चाहिये कि कथावाचककी पूजा करके अष्टकर्म करे, क्योंकि

विद्वान् कलकृतं अर्घ्यं पवनप्रोद्धा कथावाचकं यः ब्रह्मण्ये सङ्गयोगे कियत् कथं यथोक्ता आदः भगवान् सूर्यनारायणयोः अर्पयेत् ॥ यह विधि अभीष्ट धर्म, अर्थ तथा काम—इस विचारसे सदैव देनेवाली है। (अध्याय १०४)



कामरूप एवं पावनानिनी-साम्पत्ति-दान-वर्जन

ब्रह्मण्यी कोले—विष्णो । परमपुत्र परमेश सुख पक्षकी सप्तमीको ॥ ॥ करके भगवान् सूर्यनारायणकी विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् दूसरे दिन अष्टमीको प्रातः ॥ ॥ खनार्द्रसे निकृत् ॥ ॥ भक्तिपूर्वक सूर्यदेवका सम्पत् पूजन करके ब्रह्मण्यको दक्षिण देनी चाहिये। सप्तमपूर्वक भगवान् सूर्यकी निमित्त अर्घ्यार्पण प्रदान ॥ ॥ भगवान् वातवरको ॥ ॥ कर इस ॥ ॥ प्रार्थन ॥ ॥ चाहिये—

यमाश्रयं पुन देवी कलकृतं कामरूपम् ॥

स मे कामं देवेभ्यः सर्वान् कामान् विधातुम् ॥

यमाश्रयविधिः प्रातः सप्तमं कामान् कथेयितुम् ॥

स ब्रह्मण्यकृतं कामान् दानं मे विवर्तयति ॥

अत्रान्यथा देवेभ्यः धनमर्थं विवर्तयति ॥

कामान् सप्तमसप्तमं ॥ स मे कामं प्रदातुम् ॥

(आत्मार्क १०५।५—७)

'प्राचीन समयमें देवी सावित्रीने अपनी अभीष्ट-मिष्टिदे के लिये जिन आराध्यदेवकी आराधना की थी, वही मेरे आराध्य भगवान् सूर्य मेरी सभी कामनाओंको प्रदान करें। देवी अर्द्रतिथि जिनकी आराधना करके अपने सभी अभीष्ट धर्मोपयोगोंको प्राप्त कर लिया था, वही विवर्तित भगवान् धनको ॥ ॥ होकर मेरी सभी अभिलषणाओंको पूर्ण करें। (सूर्यदेव की प्रार्थना के कारण) राजपटसे व्यूत देवराज इन्द्रने जिनकी अर्चना करके अपनी सभी कामनाओंको ॥ ॥ उन दिनों ॥ ॥, वही दिवस्पति मेरी कामना पूर्ण करें।'।

हे ॥ ॥ ! इस प्रकार भगवान् सूर्यको प्रार्थन कर पूजा सम्पन्न करें। अनन्तर सदैव होकर इतिवत्प्रकार भोजन

करे। परमपुत्र, पौत्र, वैजयन्त और ज्येष्ठ—इन चार मासमें इस ॥ ॥ कृतकी धारण करनेका विधान है। भक्तिपूर्वक कलकृतके पुष्पोंसे बाण महीने सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। कृष्ण अमृतको कृत्त जलपानी चाहिये और गो-शुक्लजल प्राशन करना चाहिये तथा सौं-विधित फलाम्रम नैवेद्य देकर ब्रह्मण्यको भोजन करना चाहिये।

अष्टक अर्घ्य भगवान्को पावनकी क्रिया इस प्रकार है—इन मासमेंसे तमस्यीके पुष्प, गुग्गुलुका धूप, कुपेय जल और वातसे नैवेद्यका विधान है। ॥ ॥ भी उसी पावनके नैवेद्यको प्राण करना चाहिये।

ब्रह्मण्य अर्घ्य भगवान्को गोमूत्रसे शरीर-शोधन करना चाहिये। दशहूँ-धूप, रक्त कथिल तथा कलाशय नैवेद्य भगवान् सूर्यको विनोदित ॥ ॥ चाहिये। प्रत्यह महीनेमें ब्रह्मण्यको दक्षिण ॥ ॥ चाहिये। प्रत्येक परमायामे भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणको प्रसन्न ॥ ॥ प्रसाद करना चाहिये और यथाशक्ति स्मृति धनको दान करना चाहिये। वित्तशालिनी (कैकुटी) न करे। क्योंकि सप्ताहसे पूजा करनेपर तथा दान अर्द्रतिथि तक पौर्णमासी ॥ ॥ रक्षक अष्टक होनेवाले भगवान् सूर्य प्रसन्न होते हैं। चरणोंके अन्तर्गते यमाश्रय जल अर्द्रतिथि ॥ ॥ करके पूजा करनेका भगवान् सूर्य प्रसन्न हो निर्वाधरूपसे कथेवाग्निदत्त फल प्रदान करते हैं। यह साम्पत्ति पुण्यद्विनी, ॥ ॥ तथा सभी फलको देनेवाली है। मनुष्यकी ॥ ॥ अभिलषाएँ होती हैं, वैसे ही फल प्राप्त होते हैं। इस कृतको करनेवाला व्यक्ति सूर्यके सपान ही तेजस्वी बनकर सर्वप्रथम विमानपर असकृत् ॥ ॥ सूर्यदेवको प्राप्त करता

१- कर्पूर, जम्बू, सुलभाफल, ताम्र, नख, उल्ल, ॥ ॥ कृष्ण, सुन्दर, शिखर, तथा ॥

दशहूँजल, कृष्ण धूप, पिसे देवन, कलकृत

(आत्मार्क १०५।१५-१६)

कर्पूर, जम्बू, सुलभाफल, ताम्र, ॥ ॥, उल्ल, ॥ ॥, कृष्ण, सुन्दर, शिखर, तथा सुगन्ध—इन्हीं सामग्रियों मिलकर दशहूँ नामक धूप ॥ ॥ बना है। यह धूप भगवान् सूर्यदेवको अर्पण किया है।

है । वहाँ आसानी से चिह्नको प्राप्त करता है । वहाँसे पुनः पृथ्वीपर लेकर गोखी सूर्यमण्डली के कृन्तसे प्रसंगी रखा होता है ।

इसी प्रकार उत्तरायणके सूर्यके चक्र पक्षमें भग्न, अर्धचन्द्र,

सूर्यपट्टद्वय-व्रत, सर्वांगी-सप्तमी एवं मार्तण्ड-सप्तमीकी विधि

ब्रह्माजी बोले—धर्मज्ञ ! मैं जगत्का देवदेवेश परमात्मा सूर्यसंस्थापक पट्टद्वय-सप्तम्यवका कर्त्तव्य है, तुम ।

अंगुष्ठाक्षी सूर्यदेवने संसारके उत्पत्तिकर्त्ता अपने दोनों पक्षोंमें पट्टकीतर है । उनके वामपादको और दक्षिणपादको दक्षिणायनके रूपमें चाहिये । सभी इन्द्र आदि देवगण इनके वन्दन करते रहते हैं । हम और अन्य सूर्यदेवके दक्षिणपादकी अर्चना करते हैं । विष्णु तथा शङ्कर सदापूर्वक उनके वामपादकी पूजा करते हैं । जो मनुष्य प्रत्येक सातवींसे भगवान् सूर्यदेवकी विधिपूर्वक आराधना करता है, उसपर वे सदा संतुष्ट रहते हैं ।

भगवान् विष्णुने पूछा—केलोक-वासी सूर्य-वाचस्पती आराधना किस प्रकार की जाती है ? कर्त्तव्य करें ।

ब्रह्माजी बोले—उत्तरायण केन्द्रके दिन के लिये मनुष्य मृत-दुग्ध आदि पदार्थोंके द्वारा भगवान् सूर्यको आन करता चाहिये । सुन्दर वस्त्रोपहार, पुष्प-धूप तथा अनुलेपनादिसे उनकी विधिपूर्वक पूजा कर ब्रह्मण्यको प्रोक्षण और दक्षिणदिसे संतुष्ट करना चाहिये । उसके बाद सूर्यपति-परायण व्यक्तिको उनके पट्टद्वय-व्रतका विधान ब्रह्मण्य कहना चाहिये । तदनन्तर स्नान करके 'चित्राभङ्ग' शिवाकारकी वन्दन करनी चाहिये । स्नाने-चरने, सोने-जागने, प्रणाम करते, हवन और पूजन करते समय भगवान् विष्णुभक्तों ही रूप करते हुए प्रतिदिन उनके नाम-कीर्तनका ही तत्काल रूप करना चाहिये, जबतक दक्षिणायनका समय न आ जाय । उनकी प्रार्थना इस प्रकार करनी चाहिये—

परमात्मामयं ब्रह्म विश्वानुग्रहं करो ।

यमने संसारिधरं स मे भवतुः वरा गतिः ॥

(अध्याय १०७-१०८)

सूर्य नक्षत्रोंके पक्षोंपर दान-भक्षणसे परमात्मा सूर्यकी पूजा कर उन्हें प्रसन्न करना चाहिये । इससे सम्पूर्ण नष्ट हो जाते हैं । इसे पापक्षीकी सप्तमी कहा जाता है ।

(अध्याय १०५-१०६)

विष्णुभक्त परमात्मामय परमात्मा हैं, जिनका अनन्तकालमें पृथ्वीपति स्वल्प कर्त्तव्य है । वे सूर्यसंस्थापन में प्रवृत्त होते हैं ।

इस प्रकार स्तुति करके सामर्थ्यशक्त भगवान् सूर्यके व्रतको उत्पन्न करना चाहिये, जबतक दक्षिणायन पूर्ण रूपसे न आ जाय । पक्षार्थ यथावर्तित भोजन करके भगवान् मार्तण्डके रूपमें पुष्प-कथा और आभूषणका पाठ करना चाहिये । सूर्यपूर्वक यथावर्तित और लेखनका प्रवृत्ति भी करना चाहिये । इस प्रकार जो मनुष्य यह व्रत करता है, उसको इसी वर्षमें सभी पापोंसे मुक्ति मिल जाती है । यदि इस कः मार्तण्ड कीर्तने ही व्रतकी शुरुवात होती है तो उसे पूर्ण उत्पत्तिकाल फल प्राप्त होता है । इसके अतिरिक्त उसे भगवान् सूर्यसंस्थापक पट्टद्वय-पूजनका फल भी प्राप्त है ।

भगवान् पुनः बोले—मया मारुतके कृन्त पक्षकी सर्वांगी-सप्तमी कहली है । इस सभी अर्धपक्षक सम्पूर्ण पूर्ण हो जाती है । इस व्रतमें पापक्षी आदि दुष्टपक्षीयोंसे मार्तण्डक न करे और एकाग्र-मनसे विनय होकर वहाँ भगवान् सूर्यका पूजन करे ।

मया अर्ध कः मार्तण्डके प्रत्येक संज्ञात्मिको पराणा मनी है । तदनुसार मया आदि कः मार्तण्डके क्रमशः 'मार्तण्ड', 'क', 'चित्राभङ्ग', 'विष्णुवर्ध', 'भग' और 'ईश'—ये नाम कहे गये हैं । पूरे कः मार्तण्डके मृत-दुग्धादि पदार्थोंसे स्नान और व्रतको लिये प्रसन्न एवं पापनाशक मान्य मान्य है ।

इस व्रतमें तेल और सार पदार्थ ग्रहण न करे, रहिये करे । संसारमें सब कुछ देनेवाली यह विधि सर्वांगी-सप्तमीके नामसे विकसित है । हे ! अब मैं मार्तण्ड-सप्तमीका कर्त्तव्य कहना चाहता हूँ ।

यह व्रत पौष मासके शुक्ल पक्षकी सप्तमीको किया है । इसके सम्बन्ध अनुष्ठानसे अपीष्ट फलप्राप्ति होती है ।

करायें। जहन् ! जेह कुलमें जन्म, जहन्में और दुर्लभ कनकी अभिवृद्धि—ये तीनों विलम्बे द्वारा प्राप्त होते हैं, उस विधिति-प्रसक्तों भी हमें बतावें।

ब्रह्माजी बोले—याम मसमें कृष्ण पक्षकी सप्तमि के दिन ■■■ नक्षत्रका योग रहनेपर ■■■ कि वह जगत्प्राप्त सूर्यदेवकी सुनम्ब, धृष्ट, ■■■ एवं उज्जर उज्ज्वल पूजन-साधनियोंके द्वारा पूजा करे। गृहस्थ पूजन पुर्वोक्त द्वारा यन्त्रादि-युक्त पूजा वर्षाकाल सम्पन्न करे और कब (कबपर), शिव, लीला, यम, सुवर्ण, यम, ■■■ जल, ओम्ब (ओम्बका पानी), उषाकाल, ■■■ और गुह्यते करने पड़वें, ■■■ (प्रतिमास) मुनिपों, ■■■ का देन चाहिये। इस काल

अमलवृद्धिके लिये सूर्यप्राप्तकी पूजा करके प्रतिम्वस ■■■ रात, गोपुत्र, जल, पुत्र, दुर्लभ, दधि, घान्य, तिल, यम, सूर्यमन्दिरके लिये हुआ जल, कमलगुहा और दूधका प्रदान-करना चाहिये। ■■■ सप्तमी-प्रसक्तों करनेकर मनुष्य का-कान्धसे परिपूर्ण, लक्ष्मीयुक्त तथा समस्त दुःखोंसे विरक्त होता है और जेह कुलमें जन्म लेकर विवेचिय, ■■■, सुदृष्टम् और सुखी ■■■ है। अतः अथ ■■■ विना प्रसक्त किये ही इन प्रभक्तसम्पन्न स्वामी ■■■ दिव्यकरकी ■■■ कर कामनाओंके सम्पूर्ण फलमें प्राप्त करें।

(अध्याय ११२)

सूर्यमन्दिर-निर्माणका ■■■ यमराजका अपने दूतोंको सूर्यभक्तोंसे

दूर रहनेका आदेश, पुत्र तथा दूधसे अभिषेकका फल

■■■ कहे—हे सूर्यदेव ! जो मनुष्य निरी, स्वामी अथवा फलसे भगवान् सूर्यके मन्दिरका निर्माण करवाता है, वह प्रतिदिन किये गये मन्त्रके फलमें प्राप्त करता है। भगवान् सूर्यप्राप्तका ■■■ करवाकर वह ■■■ कुलकी ■■■ आगे और सौ ■■■ पौष्टिकोंको सुर्वलोक तक बना देता है। सूर्यदेवके मन्दिरका निर्माण-कार्य ■■■ करते ही सत्त वाच्यमें विप्रन्न गया जो जोका ■■■ कहते पाप है, ■■■ वह ही ■■■ है। मन्दिरमें सूर्यकी मूर्तिके ■■■ कर मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है और उसे ऐश्वर्य-फलमें प्रति नहीं होती तथा अपने आगे और पीछेके कुलका उद्धार ■■■ है। इस विषयमें प्रजाओंको अनुप्राप्तित करनेकरने कने प्रशदधसे मुक्त अपने निजकोसे पहले ही कहा है कि 'ये इस आदेशका परोक्षित फलम् करते हुए तुमलोगों समस्त विचारन ■■■, कोई भी प्राणी तुमलोगोंकी आज्ञाका उल्लङ्घन नहीं कर सकेगा। संसारके भूखभूत भगवान् सूर्यकी लक्ष्मण करनेकरने स्त्रोगोंको तुमलोग छोड़ देन, क्योंकि उनके लिये यहीन स्वप्न नहीं है। संसारमें ही सूर्यप्राप्त है और विजय इदम् उद्धार लगत हुआ है, ऐसे लोग जो सूर्यकी सत्त पूजा विप्रन्न करते हैं, उन्हें दूरसे ही छोड़ देन। बैठते-खेते, चरते-उरते और गिरते-पड़ते जो मनुष्य भगवान् सूर्यदेवका भक्त-संकीर्तन करता है, वह भी हमारे लिये बहुत दूरसे ही स्वप्न है। जो

मनुष्य फलमें लिये विप्रन्न-निर्माण करवाती है, उन्हें तुमलोग दूर उद्धार से मा देकर। यदि तुमलोग ऐसा करोगे तो तुमलोगोंकी गति उक्त जायगी। जो पुत्र-पुत्र-सुनम्ब और सुन्दर-सुन्दर ■■■ द्वारा ■■■ पूजा ■■■ है, ■■■ वे तुमलोग मय पक्षध, क्योंकि वे मेरे पिताके विप्रन्न वा ■■■ है। सूर्यप्राप्तका मन्दिरमें उपलब्ध तथा सपर्य करनेकरने जो लोग हैं, उनके भी कुलकी तीन पौष्टिकोंको छोड़ देन। जिसने सूर्य-मन्दिरका निर्माण कराया है, उसके कुलमें उत्पन्न पुत्र पुत्र भी तुमलोगोंके द्वारा कृति दृष्टिसे देखने योग्य ■■■ है। ■■■ भगवत्प्राप्तमें मेरे पिताकी सुन्दर वर्जना की है, उन मनुष्योंको तथा ■■■ कुलको भी तुम सदा दूरसे ही स्वप्न देन।'

भगवान् मन्दिरका भक्ति द्वारा ऐसा आदेश दिये जानेपर भी एक बार (पुत्रों) यम-निर्माण उनके आदेशका उल्लङ्घन ■■■ सप्तमि-के पास ■■■ गये। परंतु उस सूर्यप्राप्त सप्तमि-के तेजसे वे सभी यमके सेवक मूर्धित होकर पृथ्वीपर ■■■ की गिर पड़े, जैसे मूर्धित पक्षी पर्वतपरसे भूमिपर गिर पड़ता है। इस ■■■ जो ■■■ भगवान् सूर्यके मन्दिरका निर्माण करता-करता है, वह समस्त पक्षोंको सम्पन्न कर लेता है, क्योंकि भगवान् सूर्य स्वयं ही सम्पूर्ण वज्रधर्म हैं।

ब्रह्माजी बोले—सूर्यकी ■■■ जो ■■■

ज्ञान ॥ है, ॥ अपनी सभी कामनाओंको प्राप्त कर लेता है । कृष्णवर्षाकी अष्टमीके दिन सूर्यभगवान्को जो चीसे खान करता है, उसे सभी प्राणोंसे छुटकारा प्राप्त ॥ है । ॥ अथवा शहीके दिन सूर्यनारायणको गन्धके चीसे खान करनेसे सभी ॥ हो आते हैं । संसारकालमें ॥ तो ज्ञात-अज्ञात सम्पूर्ण ॥ दूर हो आते हैं । सूर्यभगवान् सर्व-व्यकरण है और समस्त हवन-पराधीन भी ही उत्तम पदार्थ है, इसलिये ॥ दोनोंका ॥ सभी प्राण यह हो आते हैं । सूर्यको दूधसे खान करनेवाला मनुष्य ॥ जन्मेक

सुखी, बेपरवाह और कष्टान् होता ॥ और अपने दिलकलेकमें निवास करता है । ॥ दूध खाया होता है और लेकदले मुक्ति देनेवाला है, कैसे ही दूधसे खान करनेपर भोजन इतकर निर्मल ज्ञान प्राप्त होता है । दूधके खानसे भगवान् सूर्यभगवान् प्रसन्न होकर सभी मनुष्योंको अनुकूल करते हैं तथा सभी लोगोंको पुष्टि और धीरि प्रदान करते हैं । भी और दूधसे विभिन्न-विचित्रक देवेषु सुखितको ॥ करनेपर उनकी दृष्टिको पड़ने ही मनुष्य सम्मान प्राप्त हो जाता है ।

(अध्याय ११३-११४)

कौसल्या और गौतमीके संसार-कर्ममें भगवान् सूर्यका योगदान- विस्तार तथा भगवान् सूर्यके पत्र-पुष्पादिका वर्णन

ब्रह्माजी बोले—जगदीश ! देखलेकमें गौतमी ॥ कौसल्याका सूर्यके विषयमें एक पुराण संकट अभिज्ञ है । एक बार गौतमी ब्रह्मजीके कार्त्तिक आने परीक्षा सब भविष्यत्त्वकीय कौसल्याको देखकर ब्रह्मजीके ॥ पूजा— 'कौसल्ये ! स्वर्गमें निवास करनेवाले सैकड़ों देवता, अनेक देवतावादी हैं, इस प्रकार विष्णुजी और उनकी पत्नियाँ और भी हैं, किन्तु इनमें न ऐसी गन्ध है, न ऐसी कविता है, न ॥ रूप है । धारण किये हुए वस्त्र तथा आभूषण भी ॥ सुखीभूत हो गये हैं, जैसे कि आम दोनों को-पुष्पोंके हो ॥ हैं । आप दोनोंमें सौम्य-सा ऐसा रूप, दान अथवा होकर ॥ किया है, जिसका यह फल है । आप इसका वर्णन करें ।

कौसल्या बोली—गौतमी ! हम दोनोंमें ब्रह्मजी भगवान् सूर्यकी ब्रह्मपूजा करवाना भी है । सुखित ॥ जलसे तथा घृतसे उन्हें खान कराया है । उनकी कृपासे हमने स्वर्ग, निर्मल भक्ति, प्रसन्नता, शैव्यता और सुख प्राप्त किया है । हमलोगोंके पास जो भी आभूषण, कपट, रत्न आदि प्राप्त ॥ वस्तु है, उन्हें भगवान् सूर्यको अर्पण करनेके बाद ही हम धारण करते हैं । स्वर्गाधीन्य अधिपत्यको हम दोनों भगवान् सूर्यकी आराधना की थी और उस उपरान्तके फलस्वरूप ही हमलोग स्वर्गका सुख भोग रहे हैं । जो निष्काम-गन्धों भरीभूति सूर्यकी उपसमा करता है, उसे भगवान् सूर्य मुक्ति प्रदान करते हैं । विशेषके सुखिकर्ता सविताजी दृष्टिसे ही सब सुख प्राप्त होता है ।

ब्रह्माजी बोले—विष्णो ! भगवान् सूर्यकी ॥ भी मनीष कामनाओंको प्राप्त ॥ है, ॥ करनेवाली है । ॥ कष्ट, ॥ तथा ठीकरेसे जो भगवान् सूर्यको अनुकूल करता है, प्रसन्न होकर भगवान् सूर्य ॥ प्रदान ॥ है । बरलेक (कालम कष्ट), सुख (एक गन्ध-द्रव्य), रत्नवस्त्र, गन्ध, विचित्रवस्त्र तथा और जो जो अपनेको इस पदार्थ हो, उन्हें भगवान् सूर्यको निवेदित करना चाहिये । मालती, धारिणी, सुखी, अधिपत्य, पदरत्न, कपटी, अन्न, सुख, शरीर, कर्त्तव्य, ॥ केतक (केवड़ा), सुन्द, अरोक्त, विष्णु, शैव, कपट, अगति, पञ्चत आदिके पुत्र भगवान् सूर्य-देवको ॥ ॥ विष्णुपत्र, शरीर, भुङ्गाज-पत्र, ॥ भगवान् सूर्यको प्रिय है । अतः उन्हें अर्पण करना चाहिये । कृष्ण तुलसी, केतकीके पुष्प और पत्र तथा रत्नकटके अर्पण करनेसे भगवान् सूर्य सब प्रसन्न होते हैं । नीलमाल, शैव्यमाल और अनेक सुखित पुत्र भगवान् सूर्यको चढ़ाने चाहिये, किन्तु कुट्य, ॥ और गन्धवित्त पुत्र सूर्यको नहीं चढ़ाने चाहिये, इन्हें चढ़ानेसे खीट्य, मय और रोगकी प्रति ॥ है । ॥ न हो ॥ ही पुत्र भगवान्को चढ़ाने चाहिये । उद्यम वृष, मुर, ॥ कष्ट, ॥ तथा दूसरे सुन्दर पदार्थोंसे भगवान् यन्त्रालीकी अर्पण करनी चाहिये । विविध ऐश्वर्य तथा कष्टसागर निर्मल ॥ वस्तु ॥ जो अपनेको भी प्रिय ॥ ऐसा वस्तु

असत्य बलशाली हूँ। मेरा शरीर भी तोरेगा है। मेले कलेके लक्षण संस्कारमें कोई खो नहीं है। सबके मर आसौय तेजसे सहन करनेमें असमर्थ है। महापुने ! आचलके शिवस्थल है। आप मेरी जिज्ञासाको शान्त करें। राजके इस प्रकार घुड़नेक उन आह्वानोंमें सुर्वदेवके परम पतक परमसुने शर्पक की कि आप । इनके संदेहको निवृत्त करें। कर्पक महालोकी सम्पत्तिसे महापति परमसुने योग-सम्पत्तिके द्वारा राज तथा पूर्वजन्मके सभी कर्मोंकी कर्मकारी प्राप्त कर राजके कल्याण अक्षय किया—

पराशरसु बोले—महाराज ! आप पूर्वजन्मके कर्म मित्रकी, हिंसक तथा कठोर इत्येके गुरु थे, कुल-रोगसे पीड़ित थे। सुन्दर नैवेद्याली थे भगवानी उस समय भी अज्ञानी हो पार्थ थीं। वे ऐसी प्रतिज्ञा थी कि आपके द्वारा पीड़ित होनेक भी आपकी सेवामें निरत रहेंगे । वे तुम्हारे अतिशय कृपाके कारण आपके कणु-कणक आपसे अलग हो गये और आपने भी अपने पूर्वजन्मका संकेत करनेसे नष्ट कर डाला। अन्तर आपने कुली-कार्य प्रारम्भ किया, वैवेक्यासे वह भी कार्य हो गया। आप अत्यन्त दौल-दौल होकर दूकानोंकी सिद्धिदाता जीवन-पान्न करने लगे। अपनी कर्मों को देनेक बहुत प्रयत्न किया। आपका हाथ नहीं छोड़ा। इसके बाद आप दोनों कान्यकुलक वैवाह्य करे गये और भगवन् सुर्विके मन्दिरमें सेवा करने लगे। वहाँ प्रतिष्ठित मन्दिरक मन्दिर, लेखन, योगक (बल विद्युत्क) आदि कार्य बड़े भक्तिभावसे करते रहे। मन्दिरमें पुराणकी पाठ होती थी। अन्य दोनोंने सत्य भक्तिपूर्वक भजन किया। कर्म-प्रयत्न करनेके बाद आपकी पत्नीने पितासे प्राप्त अंगुलीके कथामें चढ़ा दिया। आपके मनमें तब यही चिन्त रहती थी कि वह मन्दिर कैसे स्वच्छ रहे। आप दोनों बहुत दिनोत्तक वहाँ रहे। भगवान्के सेवाकभी योगकर्मों अपेक्ष मर महर्निश लगा रहता ।

इस प्रकार आप दोनों निष्कर्म-पक्षसे भगवन् सुर्विके सेवा करते और जो कुछ मिलता, उसीसे निर्वाह करते थे। गौरी भगवन् सुर्विके द्वारा निवृत्त चिन्त करते थे, अतः आपके सभी पाप समाप्त हो गये।

समय अपनी विराट् सेनाके

अपका एक राजा वहाँ आया। उसकी अपार सम्पत्ति और इससे श्रेष्ठ रत्नोके देवकत आप । राजा-रानी कर्मकी हुई। कुछ ही समयमें आपका देहात् हो गया। सुर्विके ब्रह्म-भक्तिपूर्वक की गयी सेवा तथा पुराण-प्राप्तिके कारणसे राजा हुए और आपकी स्त्री रानी तथा अन्य जो असीम सेवा प्राप्त हुआ है, की कारण सुनिये—

जब मन्दिरमें दीपक जलत तब कर्मिके अभावमें सुनने लगता था, तब आप अपने योगके लिये रहते सेलसे धरो धीरे करते थे । आपकी रानी अपनी साड़ी फाड़कर उससे कली बनाकर करती थी। राजा । यदि अन्य कर्मों आपकी ऐश्वर्यकी इच्छा है तो भगवन् सुर्विके ब्रह्मपूर्वक अराधन करें। गन्ध, पुष्प, धूप, नैवेद्य आदि । दिये । भगवन् सुर्विके अर्पण करें। उनके मन्दिरमें मन्दिर, उपवेशन आदि कार्य करें । वे । उपवास कर रति-कर्मक । नृत्य-गीत-काव्यदिद्वारा महोत्सव करवें। पुष्प-झिझक । ब्रह्मपूर्वक सुने तथा भगवान् लिये वेद-पाठ करवें। निष्कर्म-पक्षसे तत्त्व होकर इनकी सेवामें लगे रहें। संतुष्ट होकर भगवन् सुर्वे अर्पण कर देंगे। वे पुष्प, नैवेद्य, रत्न, सुकर्ण । उत्तम वस्त्र वहाँ छोड़ें, चित्ता में भक्तिभावसे प्रसन्न हैं। यदि भक्तिभावपूर्वक सुर्विके अराधना और विविध उपचारोंसे पूजन करेंगे तो इनसे भी अधिक कर लेंगे।

राजा सदाशिवसे कहा—भगवन् ! इन्द्रकी प्राप्ति या अन्धकारकी मूर्तिसे जो अन्नन्द होता है, अन्नन्द आपकी इस खाकीसे सुखक मुझे प्राप्त हुआ। अन्नानकभी अन्धकारके लिये आपकी यह कर्म प्रदीप्त दीपकके समान है। सम्पत्तिके सम्पादनसे हम । व्याकुल थे। आपने सम्पत्ति-लिये मूल आज उपदेश दिया है। इससे यह सिद्ध हो गया कि मुझे वह सारी सम्पत्ति पूर्वजन्मके सुखकर्मिके ही फलस्वरूप हुई है। भक्तिमान् दरिद्र भी भगवन् सुर्विके प्रसन्न कर सकता है, किन्तु एक ऐश्वर्यशाली भगवन् कोनेक अनुकूल नहीं प्राप्त कर

सकता। भगवन् ! आप मुझे सूर्यभगवान्‌को भक्षणके उर मार्गसे सूचित करें, जिससे मैं अनुष्ठान कर सकूँ।

पराशरु बोले—राजन् ! कर्त्तिक मासमें त्रिदिव्य भगवान् सूर्यका पूजन कर ब्राह्मणको भक्षण करने चाहिये और एक बार भोजन करना । इस आराधनसे बाल्यवस्थामें किये गये ज्ञान-अज्ञान सभी छुटकारा मिल है। पूर्वोक्त रीतिसे करनेवाले स्त्री-पुरुषकी, ब्राह्मणको भक्षण करनेवाले राजा करनेवाले ब्राह्मणकायमें किये गये पापोंमें सुक्ति हो जाती है। पौष मासमें पूर्वोक्त विधिके अनुसार एकभुक्त भक्षणपूर्वक सूर्यकी पूजावस्थामें सभी पाप नष्ट होते हैं।

इस त्रैमासिक भक्षणपूर्वक विधानका करनेवाले स्त्री या पुरुष सूर्यभगवान्‌के भक्षण हो जाते हैं। लघु पापोंसे मुक्त हो जाते हैं। दूसरे इसी प्रकार वृश्चिक मास करनेपर सभी उपपापका विनाश हो जाते हैं। तीसरे वर्ष इस मासमें करनेपर महापापका नष्ट करने है और मनोव्यभिक्त परलब्धि है। यह तीन मासों में और तीन करने चाहिये; सभी आधिभौतिक, अधिदैविक आध्यात्मिक—त्रिविध

फलक इसके द्वारा नष्ट हो जाते हैं। इस सर्वपापहर्ता भक्षणके विधिकार्य-मत्त कदा है।

समाजिकान्ते कहा—भगवन् ! कदा विधान है सुन, परंतु भोजन कैसे ब्राह्मणको करना चाहिये, यह भी आप बतावें।

पराशरु बोले—पौराणिक ब्राह्मण भोजन करता है। इस प्रसंगमें भक्षणको सूचितने को निर्दिष्ट किया था, मैं आपको बता दूँ—

जिससे लघु भक्षण अलगमें भगवान् सूर्यकी पूजा—‘पञ्चमनः । कैन-कैन पुत्र, कैनेद, बका आदि भक्षणसे किया है और ब्राह्मणको भक्षण करनेसे आप संपुष्ट होते हैं ?’ इसे आप कृपाकर बतावें।

भगवान् सूर्यकी भक्षा—भक्षण ! कदाहीके पुत्र, राजा कश्यप, गुणलगाय कृप, और मोदक आदि कैनेद भुजे हैं। ये और पौराणिक ब्राह्मणको दान देकर सम्पत्ति मुझे ब्रह्मज्ञाता है, उनकी वसवरा गीत, और कुल जायसे नहीं होती। मैं कुल आदिके पावन-प्राप्तसे भविष्य प्रसन्न होता हूँ। अतिशय-पुत्रको भक्षण तथा मेरी पूजा करनेवाला भोजक—ये दोनों मुझे विजय दिये हैं। इसीलिए पौराणिकका पूजन करें और अतिशय आदिको सुनें। (अध्याय ११६)

भोजनकोकी उत्पत्ति उनके लक्षणोंका वर्णन

भगवान् बोले—भगवन् ! यह भोजक कौन है ? किसका पुत्र है ? ऐसा कैन-सब किया है, कारण ब्राह्मण आदि कदाहीने छोड़कर आपका इतना अनुग्रह हुआ ? कृपाकर सब मुझे बतावें।

आश्विन बोले—महामति वैशेय ! तुमने बहुत सुन्दर किया है। इसके उत्तरमें मैं जो कहता हूँ, उसे तुम सबकामन होकर सुनो। अपनी पूजाके निमित्त ही मैं अपने भोजनकोकी उत्पत्ति की है। ये वर्णक ब्राह्मण है और मेरी पूजाके लिये अनुग्रहमें तत्पर रहते हैं। ये भोजक मुझे उचित प्रिय हैं।

प्राचीन कालमें शक्तिहीनके सभी राजा पुत्रों विमानके समान एक सूर्य-मन्दिर बनवाकर और उसमें

करनेके लिये सभी शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न सोनेकी एक दिव्य सूर्यकी प्रतिमा भी बनवायी। उस राजाकी यह विष्ठा होने लगी कि मन्दिर तथा प्रतिमाकी प्रतिष्ठा कौन कराये ? उन्हें कोई योग्य व्यक्ति नहीं दिखायी दिया। अतः वह राजा मेरी उत्तरमें आया। अपने मनको विचारप्रस्त देखाकर उसे प्रसन्न दर्शन दिख और पूछा—‘कदा ! तुम क्या विचार कर रहे हो, तुम क्यों चिन्तित हो, शीघ्र ही अपनी विचारका कारण बताओ। तुम दुःखी मत होओ, मैं तुम्हारे अत्यन्त दुष्कर कर्मोंका भी सम्पन्न कर दूँगा।’ इसपर राजा ने प्रसन्न होकर कहा—‘प्रभो ! मैंने कभी एवं श्रद्धासे इस दीर्घमें आपको विचार मन्दिर बनवाया है तथा एक दिव्य सूर्य-प्रतिमा बनवायी है, मुझे यह विष्ठा सत्त रही है कि

प्रतिष्ठा-कार्य कैसे सम्पन्न हो ?' उनके इन कथनोंको सुनकर मैंने कहा—'राजन् ! मैं अपने तेजसे अपनी पूजा करनेके लिये पागलपन महर्षियोंकी सृष्टि करता हूँ। मेरे ऐसा कहते ही चन्द्रमाके समान सेतुबन्धने ऊपर चरमस्थली पुरुष में शरीरसे उत्पन्न हो गये। मैं सभी कामकाय सब करने हुए वे, हाथोंमें पिटाही और कमरके पुष्प लिये हुए वे तथा सङ्कोचका चारों ओर उपनिबद्धता फैल कर रहे थे। इनमेंसे दो पुष्प लल्लटरी, दो बल्लःस्थली, दो चालीसे तथा दो चारोंसे उत्पन्न हुए।' महर्षिओंने मुझे मानते हुए हाथ जोड़कर मुझसे कहा—'हे पिता ! हे लोकनाथ ! हम आपके पुत्र हैं। आपने विनाशित्वे हमें उत्पन्न किया है ? हमें लालच दीजिये। हम सब आपके कलेशकाय प्राप्त करेंगे।' मुझे ऐसा कथन सुनकर मैंने कहा—'तुम सब इस राधाकी कला सुने और मैं जिस कहे बैठा ही करे।' मुझसे ऐसा कहनेके बाद मैंने राजासे कहा—'राजन् ! मैं मेरे पुत्र हूँ, महर्षियोंके सेतु हैं तथा सर्वोपरि पुष्प हैं। वेही प्रतिष्ठा महर्षिके लिये वे सर्वोपरि योग्य हैं। इनके प्रतिष्ठा करवा लो। मन्दिरकी प्रतिष्ठा करवाकर मन्दिर इन्हें समर्पित कर दो। वे सदा मेरा पूजन किया करेंगे, परन्तु देकर इनसे हर्षण मत करना। निमित्त से कुछ धन-धान्य, गृह, क्षेत्र, चारा, प्राण, मग्न आदि मन्दिरमें देने, उन सबके लक्ष्मी वे भोजक ही हैं। जैसे पिताके हस्तका अधिकारी उसका पुत्र होता है, वैसे ही मेरे धनके अधिकारी वे भोजक ही हैं।' मेरी आज्ञा फकर उस राजासे प्रसन्न हो बैठा ही किया और भोजकोंद्वारा प्रतिष्ठा करवाकर सब मन्दिर उन्हींके अर्पित दिया।

अरुण ! इस प्रकार अपनी पूजाके लिये मैंने अपने शरीरके तेजसे भोजकोंको उत्पन्न किया। वे मेरे अन्नसम्पन्न हैं। मेरी प्रीतिके लिये जो कुछ भी देना हो वह भोजकोंके देना चाहिये। परन्तु भोजकोंको दिया हुआ धन कभी वापस नहीं लेना चाहिये। भोजक हमारे सम्पूर्ण स्वामी हैं।

भोजकोंमें वे स्वयम् होने चाहिये—वह पहले वेतनप्राप्त कर फिर गृहस्थजीवनमें प्रवेश करे। नित्य विचारल लान करे, दिन-रातमें पञ्चकृत्य* द्वारा मेरा पूजन करे। पेट, आराम और

देकतकको कभी निन्दा न करे। नित्य हमारे सम्पन्न राजा-करे। यही पुराण सुननेसे जैसी प्रसन्नता मुझे होती है। वैसे एक बार राजा-धर्मि प्रवचन करनेसे जाती है। इसलिये भोजकोंको पूजनमें नित्य राजा चाहिये। वे उपजेय पदार्थ न नहीं करते हैं, इसलिये भोजक कहलते हैं और नित्य हमको भोजन कराते हैं, इसलिये भी भोजक कहलते हैं। वे ध्यान करते हैं, मग्न करे हैं। भोजक रात्रि सुतिकर सम्पूर्ण ध्यान में पड़ा अवस्थित रहता है। जो भोजन किया मेरी पूजा करता है, उसके संताप नहीं होवे और मेरी प्रसन्नता भी उसे नहीं होती। मुझकर रहना चाहिये, किन्तु अचानक नहीं। तथा शरीरको नल्लता कर उपवास करना चाहिये तथा वैष्णविकता का भी करना चाहिये। मेरी धर्मिक शिक्षा साधनिक धर्म करे। धर्म-संस्कारोंका धर्म होकर मेरा पूजन करे। प्रवेष्ट न करे। हमका वैवेद्य पञ्चान करे। वह वैवेद्य राजा है। मुझे हुआ कथ, पुष्प, उपलब्धता और नहीं। कथामें गये जल विधायक (विश्वकर्माके वस्तु) अमिकय उत्पन्न न करे। सदा रहे, एक भोजन करे और ज्ञेय, अमृतल-बनन तथा अज्ञान कर्मोंको त्याग दे।

अरुण ! इस प्रकारके लक्ष्योवाला भोजक मुझे बहुत प्रिय है। भोजकोंको सदा सम्पन्न करना चाहिये। तुम्हारी ही लक्षन भोजक भी मुझे बहुत प्रिय है।

महर्षि बोले—राजन् ! इस प्रकार अरुणको उत्प्रेक्ष्य देकर सुमन्त्राश्रम आकाशमें करने लगे और अरुण भी वह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ।

महर्षि बोले—महर्षि पण्डितोंके मुक्तसे यह कथा सुनकर सब सज्जित और उसकी रानी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने पुष्पोंपर जहाँ-जहाँ भगवान् सूर्यके मन्दिर थे, सबमें धार्जन और उपलक्षण कराया। सब मन्दिरोंमें कथा कहनेके लिये पौराणिकोंको नियुक्त और बहुत-सी

* इत्या, अधिगमन, उपासन, स्नान और योग—वे चार लक्ष्यके हैं, प्रीति-पूजन, सेवा-सर्वण, पूजन, ध्यान, सुखे हैं।

भुक्तलोकके वायु और स्वर्गलोकके सूर्य हैं। यन्त्रद्वारा भुक्तलोकमें रहते हैं और रश्मि, अग्निदेवता, अर्द्धदेव, यन्त्रद्वारा तथा देवगण स्वर्गलोकमें निवास करते हैं। चौथा महालोक है, जिसमें प्रजापतियोंसहित कल्पकाशी रहते हैं। पश्चिम जनलोकमें भूमिदान करनेवाले तथा छोटे तपोलोकमें ऋषि, सनत्कुमार तथा वैराज आदि ऋषि रहते हैं। सप्तमे स्वर्गलोकमें वे पुरुष रहते हैं, जो जन्म-मरणसे मुक्त हो जाते हैं। इतिहास-पुराणके वक्ता तथा श्रोता भी उक्त लोकमें रहते हैं। इसे ब्रह्मलोक भी कहा गया है, इसमें न विघ्न है। किसी प्रकारकी

देव, दानव, राक्षसी, यक्ष, राक्षस, भग, भूत और विद्वान्—ये आठ देवयोगिनियाँ हैं। इस प्रकार इस ज्योतिषमें सातों लोक स्थित हैं। परन्तु, अर्द्ध, और देवयोगिनियाँ तथा मूर्ति और अमूर्ति सब देवता इसी ज्योतिषमें स्थित हैं। इसलिये जो भक्ति और ब्रह्मसे ज्योतिष पुरुष है, उसे देवताओंके पूजनका फल प्राप्त होता है। वह सूर्यलोकमें जाता है। अतः अपने कर्मफलके लिये सदा ज्योतिष पूजने करना चाहिये।

महीपते ! जाम्बवत, क, टिक्, ज्योतिष, ज्योतिष, नव, अम्बर, पुष्कर, गगन, मेरु, विपुल, किल, अर्द्धदेव, पुष्कर, तमस, शेट्ठी—ज्योतिषके इन्होंने नाम कहे गये हैं। तन्त्र, और, क्षिति, भूत, मनु, इक्षु तथा सुखद (जलवायु) —ये सप्त समुद्र हैं। हिमवान्, डेमकुट, विषय, नील, श्वेत, भृङ्गवान्—ये छः वायुदेवता हैं। इनके मध्य महाराजत नामका पर्वत है। माहेन्द्रि, आग्नेयी, याम्या, नैऋती, वारुणी, श्वेती, स्वोम्भ तथा ईशानी—ये देवतागणियाँ ऊपर सम्प्रक्षिप्त हैं। पृथ्वीके ऊपर स्वेकालोक पर्वत है। अनन्तर, इसमें चार अग्नि, वायु, आकनश आदि भूत कहे गये हैं। इसमें चार महान् अहंकार, अहंकारसे चार प्रकृति, प्रकृतिसे चार पुण्य और इतल पुरुषसे चार ईश्वर हैं, जिससे यह सम्पूर्ण जगत् अकृत है। भगवान् भास्कर भी ईश्वर हैं, उनसे यह जगत् परिष्कृत है। ये सप्तर्षी किरणवाले, महान् नेत्रस्त्री, चतुर्भुज एवं महापते हैं।

भुक्तलोक, भुक्तलोक, स्वर्गलोक, महर्गलोक, जनलोक,

तपोलोक और स्वर्गलोक—ये सप्त लोक कहे गये हैं। भुक्तलोक नीचे जो सप्त लोक हैं, वे इस प्रकार हैं—तल, सुतल, पञ्चतल, तन्त्रतल, अतल, वितल और रसातल। वाहन मेरु पर्वत भूगर्भलोक मध्यमे पर्वत हुआ बाद रमणीय भूमिसे मुक्त तथा सिद्ध-गन्धर्वोंसे सुसंस्थित है। इसकी ऊँचाई पौराणी १०००० है। यह सोमल हज्जर योजन भूमिमें नीचे प्रविष्ट है। इस प्रकार १०००० तन्त्रतल एक तन्त्रतल योजन मेरुपर्वतका नाम है। १०००० योजनस नामका प्रथम भूत सुगर्भका है, १०००० नामका १०००० पदपण अर्द्धतल है। विष १०००० तन्त्रतल भूत भूतभूतभूत है और वायुतन्त्र नामका चतुर्थ भूत भूततल है। वायुतन्त्र नामका प्रथम सौमनस भूतपर भगवान् भूततल उदय होता है, भूततलसे ही सब जगत् उत्पत्ति है, अतः उक्त नाम उदयतल है। उत्तरापण होनेपर सौमनस भूतसे और १०००० तन्त्रतल भूतसे भगवान् भूत भूततल उत्पत्ति होता है। भूत और तन्त्र-मन्त्रतलसे मध्यमे दो भूतसे भूततल उदय होता है। इस पर्वतके ईशानज्योतिष ईश और १०००० ईश, नैऋत्यज्योतिष आदि और वायुज्योतिषसे बहत् तथा मध्यमे तन्त्रतल, तन्त्र एवं नक्षत्र स्थित हैं। इसे ज्योतिष कहते हैं। ज्योतिषसे भूतभूतभूत एवं भूततल करते हैं, अतः यह ज्योतिष महीपते और सर्वलोकमय है। जगत् पृथ्वीज्योतिषमें स्थित भूतपर भूत है, दूसरे भूतपर भूततल (उत्पत्ति), तीसरे भूतपर भूत, चौथे भूतपर भूत है। मध्यमे ब्रह्मा, विष्णु और १०००० है। पृथ्वीतल भूतपर विष्णुतल और तन्त्रतल भूतपर भूततल निवास करते हैं। पृथ्वीतल भूतपर अर्द्धतल निवास करते हैं। अनन्तर महादेवकी केलियुक्त यम १०००० करते हैं। नैऋत्यज्योतिषके भूतमें महाभूततली विष्णुतल निवास करते हैं। उसके बाद वरुण स्थित है, १०००० महादेवकी महाभूतमें १०००० निवास करते हैं। सभी देवोंके सम्मुख वायुतल भूततल अर्द्धतल नरवाहन भूतपर निवास करते हैं, मध्यमे ब्रह्मा, नीचे अनन्त, उपेन्द्र और शंकर अवस्थित हैं। इसके मेरु, ज्योतिष और भूत भी कहा जाता है। यह ज्योतिषतन्त्र मेरु केदमय नामसे प्रसिद्ध है। वायु भूत वायु केदमरूप है। (अध्याय १२५-१२६)



सुतिसे [] हूँ, कस । मुझसे जे तुम [] हो कर करो ।
 साम्बने कहा—भगवन् ! आपके कहनेसे मेरी []
 हो, यही वर [] हूँ ।
 सूर्यभगवान्ने कहा— ऐसा [] होगा ! मैं तुमसे []
 संबुद्ध हूँ, सुजात ! द्वितीय वर माँगे ।
 साम्बने कहा—भगवन् ! मेरे गरीबों केवलस्य यह
 मल—कुछ आपकी कृपासे दूर हो जाय, गोपते ! मेरा गरीब
 सर्वथा शुद्ध निर्मल हो जाय ।
 भगवान् सूर्यने कहा— ऐसा ही होगा ।
 भगवान् सूर्यके ऐसा कहते ही साम्बके गरीबसे कुछ रोग
 बैसे ही दूर हो गया जैसे सर्पिके गरीबसे केचुल । यह दिव्य
 कृपासम्पन्न हो गया । साम्ब भगवान् सूर्यके प्रणामान् []
 सम्पुल लड़े हो गये ।
 सूर्यदेवने कहा— सम्ब । प्रमत्त होकर मैं और भी वर
 देता हूँ । अगले में यह स्थान तुम्हारे नामसे अधिकृत होगा ।
 लोकमें तुम्हारी अध्यक्ष कीर्ति होगी । जो व्यक्ति तुम्हारे नामसे
 मेरा स्थान बनावेगा, उसे सगणन लोक प्राप्त होगा । इस
 ब्रह्मभगा नदीके तटपर मेरी स्थापना करो । मैं तुम्हें स्वर्गसे
 दर्शन देता रहूँगा । इतना कहकर सूर्यभगवान् प्रपञ्च दर्शन
 देकर अनाद्यमी हो गये ।
 इस सम्बद्धता संवेदनसे जो व्यक्ति धर्मात्पूजक []
 करलमें पड़ता है, अथवा अतः द्विजेमें एक सौ इक्कीस बार पार
 और हवन करता है तो राक्षसी कृपणा करनेवाला राक्ष,
 धनकी अधमना करनेवाला भन प्राप्त कर लेता है और रोगसे
 पीड़ित व्यक्ति जैसे ही रोगमुक्त हो जाता है, जैसे स्वच्छ कुक्ष-
 रोगसे मुक्त हो गये ।

सुप्रसुप्ति कोसे—राजन् ! तपस्याके समय रोगसे
 दुर्लभ सम्पत्ति सूर्यो सुप्ति उनके सहस्रनामसे की थी । उसे
 दुःखी देखकर त्वाको भगवान् सूर्यने साम्बसे कहा—
 'राजन् ! सहस्रनामसे मेरी सुप्ति करनेकी आवश्यकता नहीं है ।
 मैं अपने अविनाश योगनीय, पवित्र और इच्छित शुभ नामोंको
 करता हूँ । प्रत्यहपूर्वक उन्हें पढ़ना करो, उनके पाठ करनेसे
 सहस्रनामके पाठक कर प्राप्त होगा । मेरे इक्कीस नाम इस
 [] हैं—
 (१) विवर्जन (विपत्तिवर्जन कहते [] नष्ट
 करनेवाले), (२) विवस्वान् (प्रकाश-रूप), (३) मार्तण्ड
 (विजयेने अन्धमें बहुत [] विना), (४) धास्वर,
 (५) [], (६) लोकप्रकाशक, (७) श्रीमान्,
 (८) लोकचक्षु, (९) प्रोष्ठर, (१०) लोकसाक्षी,
 (११) विलोकेश, (१२) कर्तृ, (१३) इतां,
 (१४) लोचनरा (सम्बन्धवालो हुए करनेवाले),
 (१५) तपन, (१६) तपन, (१७) युधि (युधिप्रताप),
 (१८) सप्तकण्ठन, (१९) गर्भितहस्त (हिरण्य ही जिनके
 सप्तकण्ठ हैं), (२०) तप्त और (२१) सर्वदेवनायकम् । *
 [] के इक्कीस नाम मुझे अविनाश प्रिय हैं । यह
 [] जिनसे अधिक है । यह साचरण [] कीरण
 करनेवाला, बनसी कृति करनेवाला और वरदाकर है एवं तीनों
 लोकमें विवर्जन है । महत्त्वसे । इन नामोंसे उदय और अस्त
 दोनों संज्ञाओंके समय प्रणत होकर जो मेरी सुप्ति करता है, वह
 सभी जनोंसे भूत हो जाता है । धार्मिक, वैधिक और
 गौरीक जो भी पुज्जत है, वे सभी एक बार मेरे सम्पुल
 इसका जप करनेसे विनाश हो जाते हैं । यही मेरे लिये अपने

प्रत्यहदर्शन से देव सम्पुद्धति लेकन । यः ॥ सूर्यः सर्व-संयुक्तोऽहं योगीन्द्रः ॥
 सुप्तो लो सदा देवैर्वाङ्मन्योऽस्मिन् । संयुक्तोऽहं योगीन्द्रः ॥
 सुप्तिः [] पवित्रा [] देव सम्पुद्धिः [] ते प्राप्नुयन्ते [] सम्पुद्धिः ॥
 यदापि लो पर भग्न मोक्षदः य मोक्षकम् । अनपेक्षितमोक्षो यो योऽपि सदापि यः ॥
 [] यदापि [] सोऽपि सदापि यः ॥ यदापि [] यदापि [] यदापि ॥

* वैकृतने [] योऽपि सदापि [] । लोकप्रकाशकः [] लोकप्रकाशकसुप्तिः ॥
 लोकप्रकाशक विलोकेशः कर्तृ इतां कर्तृत्वा । तपनस्य तपनीय
 गर्भितहस्तो [] ॥ सर्वदेवनायकः ॥

(अष्टाध्याय १२.१०—१६)

(अष्टाध्याय १२.१५—७)

योग्य तथा हवन एवं संध्योपसना है। अतिमन्त्र, अर्चामन्त्र, मृगमन्त्र इत्यादि भी यही है। अन्नप्रदान, स्नान, नमस्कार, प्रदक्षिणामें यह महामन्त्र प्रतिष्ठित होकर सभी पापोंका हरण करनेवाला और पुण्य करनेवाला है। [] जगत्पति

भगवान् भक्तकर कृष्णपुत्र साम्बको उपदेश देकर यहीं अवर्धन हो गये। साम्ब भी [] सावराजसे [] भक्तकरकी स्तुति कर नीचेग, श्रीमान् और उस भयंकर राक्षसिक देवसे सर्वथा मुक्त हो गये। (अध्याय १२७-१२८)

साम्बको सूर्य-प्रतिमाकी []

सुयन्तु धुनि बोले—राजन् ! इस प्रकार [] सूर्यराज्यसे कर प्राप्त कर [] प्रसन्न हुए [] कर- [] आश्चर्य मानते हुए अन्य तपस्वियोंके साथ [] स्थित चन्द्रभागा नदीमें स्नान करनेके लिये गये। वहाँ [] स्नानकर ब्रह्मके साथ अपने हृदयमें सम्बलभक्त भगवान् सूर्यकी भावना कर मनमें यह सोचने लगे कि 'सूर्यराज्यकी [] प्रतिमा हो और उसे किस प्रकार कहाँ स्थापित करें।' इस प्रकार विचार कर ही रहे थे कि उन्होंने देव्य — चन्द्रभागा नदीके ऊपरसे एक अत्यन्त देवीप्रधान प्रतिमा बहती हुई बनी आ रही है। प्रतिमा देवकर [] यह निश्चय हो गया कि [] भगवान् सूर्यकी ही मूर्ति है। जैसे उन्होंने अन्न दी थी, [] यह सूर्य-प्रतिमा है, इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं। यह सोचकर नदीसे उस [] [] हुई मूर्तिले निकारकर इनोंने मित्रवन (मृगवन) में [] स्थानपर तपस्वियोंके साथ लिङ्गपूर्वक उसकी स्तुति की। एक दिन साम्बने सूर्य-प्रतिमाको प्रणामकर पूजा — 'गन्ध ! अर्घ्य भी वह प्रतिमा किन्तने बनसी ? इसकी आकृति बड़ी सुन्दर है।' आप कृपाकर बताये।

प्रतिमा बोली—साम्ब ! पूर्वकालमें मेरा रूप [] नेत्रोपम था। उससे एककुल होकर सभी देवताओंने प्रार्थना की कि 'आप अपने रूप सभी प्राणियोंके सहन करनेके योग्य [] नहीं तो सभी लोग जल जायेंगे।' मैंने महातपस्वी विश्वकर्माको अर्पण दिया कि मेरे तेजका काम कर मेरा निर्माण करो। मेरा अर्पण प्राप्त कर उन्होंने जलक्षीपमें पत्तनवे पुमाकर मेरे तेजकां सगट दिया। उसी विश्वकर्माने कल्पवृक्षके काष्ठसे यह मेरी मूलभान्य प्रतिमा [] है। तुम्हारा उद्धार करनेके लिये येही ब्रह्मके अनुयाय विश्वकर्माने [] लिङ्गसंघित विष्णुमन्त्रपर इसे निर्दिष्टकर चन्द्रभागा नदीमें प्रवाहित कर दिया है। साम्ब ! वह स्थान बहुत शुभ है, सुन्दर है। वहाँ गया मेरा मन्त्रिभ्य रहेंगे। प्रणः प्रपुष्पाण इमं चन्द्रभागां तदपर मेरा [] प्रण करेंगे। मध्याह्नमें कालाग्रयण (कालग्रहण) और अनन्तर रात में अर्धदिन मेरा दर्शन [] करेंगे। पूर्वाह्णमें ब्रह्मा, मध्याह्णमें विष्णु और [] सदा पूजा करेंगे। कालको ' इमं प्रकार भगवान् सूर्यके ऐसा कहनेपर साम्ब अत्यन्त प्रसन्न हुए और भगवान् सूर्य [] अवर्धन हो गये। (अध्याय १२९)

मन्दिर-निर्माण-बोध्य धूमि एवं मन्दिरमें

प्रतिमाओंके स्नानकर निकसन

राजा जताजीबने पूछा—धुने ! साम्बने भगवान् सूर्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा किस प्रकार की ? किन्तके कथनानुसार [] भगवान् आदिन्यके प्रसादका निर्माण कराव्य।

सूर्य-मन्दिरका निर्माण बताया है, वह ज्योतिः सूर्यलोचने जाता है, इसमें संदेह नहीं।

सुयन्तु धुनि बोले—चन्द्रभागा नदीसे प्रतिमा प्राप्त करनेके [] साम्बने देवर्षि [] स्मरण किया। स्मरण करने ही से वहाँ उपस्थित हो गये। साम्बने लिङ्गपुत्र उसका पूजन-स्तुति आदि करके उससे पूजा — 'महाराज ! भगवान्के मन्दिरको जो बनवाता है तथा प्रतिमाकी जो प्रतिष्ठा करता है, उन दोनोंके क्या फल है ?'

साम्बने पूछा—सूर्य-मन्दिरका निर्माण किस प्रकार तथा किस स्थानपर बनना चाहिये ? आप इसे बतायें।
आश्व बोले—वहाँ जलरश्मि निरन्तर विद्यमान रहे, वहाँ मन्दिर [] चाहिये अर्थात् सर्वप्रथम एक विशाल [] निर्माण करना चाहिये। [] और धर्मकी अभिवृद्धिके लिये वहाँ देवमन्दिरका निर्माण [] चाहिये। उसके [] उन्नत एवं पुष्पवृद्धि भी लम्बाने चाहिये। ब्रह्मण आदि वर्णोंके लिये वैसी धूम वास्तुश्रमकी दृष्टिसे

नारदजीने कहा—नरनार्द ! जो गन्धर्व स्थानमें

प्रसाद-निर्माणके लिये वर्णित है, किसी ही भूमि देवद्वाराके लिये भी प्रस्ताव गयी है।

सूर्यनाथपणक मन्दिर पूर्वीदिगुक्त चहिले, पूर्वकी ओर कर रक्तेका स्थान न हो तो पश्चिमीदिगुक्त बनवाये। परंतु मुख्य पूर्वीदिगुक्त ही है। स्कन्ददेव इस प्रकारसे कल्पना करे कि मुख्य मन्दिरसे दक्षिणकी ओर भगवान् सूर्यका ज्ञान-गृह और उत्तरकी ओर यज्ञराज्य रहे। भगवान् शिव और भक्तकका मन्दिर उत्तरदिगुक्त, भगवान् पश्चिम दिगुक्त उत्तर-मुक्त चाहिये। भगवान् सूर्यके दक्षिणे पार्श्वमें मिथुना तथा बायें पार्श्वमें राक्षसे रहना चाहिये। सूर्यराजपणके दक्षिणभागमें मिथुन, दण्डनायक, सम्पुक्त और महादेवकी स्थापना करना चाहिये। देवगृहके बाहर अश्विनीकुम्भकोर स्थान बनना चाहिये। मन्दिरके दूसरे कक्षमें शत्रु और शैव, तीनों कक्षमें कालकाय और पक्षी, दक्षिणमें दण्ड और फाउ, उत्तरमें लोकपुत्रित कुक्षीको स्थापित करना चाहिये। कुक्षीसे उत्तर दिशा एवं विनायककी स्थापना करनी चाहिये या जिस दिशासे

उत्तर स्थान हो वहीपर उसकी स्थापना करे। दक्षिणी एवं बायीं ओर अर्घ्य दान करनेके लिये दो मण्डल बनवाये। उदयके समय दक्षिण मण्डलमें और अस्तके समय काम मण्डलमें भगवान्को अर्घ्य दे। चतुर्दशर पौठके ऊपर ज्ञानगृहमें कल्पसे भगवान् सूर्यकी प्रतिमाको सविधि कराये। समने भगवान् मङ्गल वाट बनाने चाहिये। तीसरे मण्डलमें सूर्यनाथपणकी पूजा करे। सूर्यनाथपणके समने दिक्षीकी स्तम्भक (कड़ी हुई) प्रतिमा स्थापित करनी चाहिये। सूर्यराजपणके सम्मुख पक्षीपथ ही समदिक्कय लोचकी रचना करनी चाहिये। मण्डलके पश्चिम बाईं सूर्यको अर्घ्य देना चाहिये अथवा मण्डलमें अर्घ्य देनेके लिये धनु नामक कृतीय मण्डलमें प्रथम ज्ञान करकर बाह्यमें अर्घ्य दे। भगवान् सूर्यके स्थानपर पुण्यका वाट करनेके लिये देवताओंके स्मरणका विधान है। नृपराज सर्वलोक—ये दो प्रसाद सूर्यराजपणको स्वीकार शिव है।

(अध्याय १३०)

सप्त प्रकारकी प्रतिमा एवं काहु-प्रतिमाके निर्माणोपयोगी बुद्धोंके लक्षण

पारावती जीकी—सत्य। अथ विप्रश्नके सप्त प्रतिमा-निर्माणका विधान है। अथ निर्माणोपयोगी बुद्धोंके लिये भगवान् सूर्यकी तथा प्रसादका बन्धकी या समती है। सोम, चण्डी, ताम्र, पद्मनाभ, मृत्पद्म, वाह्य विप्रश्नविप्रश्न। इनमें काहुकी प्रतिमाके निर्माणका विधान इस प्रकार है—

प्रसाद प्रसाद भगवान्को गुप्त ज्ञान देकर मङ्गलस्मरणपूर्वक काहु-अथवा कालकाय काहु काहु काहु प्रतिमापयोगी बुद्धका स्थापना करना चाहिये। बुद्धको बुद्ध, कमजोर बुद्ध, चौराह, देवस्थान, मरुस्थल, उमराव, जैव, जलपथ अर्थात् सभी बुद्ध तथा पुत्रक बुद्ध—जिसको किसी बिना पुत्रकोले व्यक्तिने पुत्रके रूपमें अथवा बाल बुद्ध, जिसमें बहुत कोटर हो, अनेक पक्षी रहते हो, जल, कपु, शक्ति, विजयती तथा हथी आदिसे दूषित बुद्ध, ह्म-टो प्रसादकोले बुद्ध, जिसका अप्रमाण सुख गया हो ऐसे बुद्ध प्रतिमाके योग्य नहीं होते। मङ्गल, देवद्वार, बुद्धको चन्दन,

विष्णु, शिव, ब्रह्मा, श्रीपत्नी (अभिमान्य), काल (कालरत्न), सरल, अर्जुन और रत्नचन्दन—ये बुद्ध प्रतिमाके उपाय है। बायीं लिये विप्र-विप्र प्रसाद काहुको है।

अभिमान बुद्धके पास काहु बुद्धकी पूजा करनी चाहिये। पश्चिम स्थान, पद्मनाभ, केत-अङ्गाराम्, पूर्व और उत्तरकी ओर शिव, लोकोको काल न देनेवाला, विस्तृत सुन्दर प्रसादको तथा फलसे सपुष्ट, शैव, जलपथ तथा लक्ष्मीला बुद्ध गुप्त होके है। लक्ष्मी गिरे हुए या हाथीसे गिराये गये, शुष्क होकर या अग्निसे जले हुए और पक्षियोंसे चोंटित बुद्धोंका उपयोग कल करना चाहिये। मधुमक्खीके लोकोको बुद्ध भी चण्ड नहीं है। शिष्य पत्र-समन्वित, पुष्पित तथा पश्चिम बुद्धोंका वर्जित आठ मासेमें उत्तम मुहूर्त देकर उपवास रहकर अर्धस्नान-कर्म करना चाहिये। बुद्धके नीचे चारों ओर लोफकर गन्ध, पुष्पमाला, धूप आदिसे व्यवस्थित बुद्धकी पूजा करे। अनन्तर गायत्रीमन्त्रसे अभिमन्त्रित

जलसे प्रोक्षण करे। दो ठण्डाल वज्र धारण कर वृक्षकी गन्ध-माल्यसे पूजा तथा सगुण कुम्हारसनपर बैठकर देवदरकी समिधासे अहुतिर्वा दे, अभ्यर्चन करे।

ॐ प्रजापते सत्यसहाय नित्य

शेष्टान्तराम् सचराचरात्मन् ।

समिधायमर्च्य कुम्भ देव कुम्भे

सूर्यकुलं यजमानावितोत्तमं अयः ॥

(ब्राह्मण २४१।२५)

इस वृक्षको मिल है। श्रेष्ठान्तराम्! सचराचरात्मन्! देव! इस वृक्षको अग्न सहनिध्य करें। सूर्यकुल-यजमान इसको चरित हो। अहुतिको नयनकर है।

इस वृक्षकी पूजा कर जलसे स्नानकर देते कहें—'वृक्षराज! संसारके कल्याणके लिये जल देकर देते हैं। देव! आज यहाँ छेदन और तपसे रक्षित होकर निश्चय रहेंगे। समस्त प्रजापति वृक्षको द्वारा आपकी पूजा करेगा।'

वृक्षके मुखमें धूप-माल्य आदिसे कुम्हारका पुष्पण कर उसका गिरा पूर्वकी ओर माधधानीसे स्थापित करें। अभ्यर्चन मोक्ष, और आदि इसका तथा सुगन्धित पुष्प,

सूर्य-प्रतिमाकी निर्माण-विधि

वारहगिरीमें कहा—'यदुगर्दू! देवकी प्रतिमाका लक्षण विशेषरूपसे उद्दिष्टकी प्रतिमाका लक्षण कहता हूँ। एक हाथ, दो हाथ, तीन हाथ अथवा सन्ने तीन हाथ लम्बी या देवाल्यके द्वाराके प्रमाणके अनुसार भगवान् सूर्यकी प्रतिमाका निर्माण करना चाहिये। एक हाथकी प्रतिमा सौम्य होती है, दो हाथकी धन-व्यय देखी है, तीन हाथकी प्रतिमासे सभी कर्म सिद्ध होते हैं, सन्ने तीन प्रतिमाकी स्थापनासे राष्ट्रमें सुमिष, कल्याण और अन्तेमकी प्राप्ति होती है। प्रतिमाके अग्रभाग, मध्यभाग और पृष्ठभागमें सौम्य होनेपर उसको गन्धर्व प्रतिमा कहते हैं। वह धन-व्यय प्रदान करती है। देवाल्यके द्वाराका चित्तव्यसितार से, उसके अग्रध्वजे अंशके समान प्रतिमा बनवाने चाहिये।

पुष्प, वृक्षकी तथा देवता, शिव, वृक्ष, विशाख, नय, सुरगण, विनायक आदिकी पूजा करते रहिये वृक्षका स्पर्श कर यह कहें—'देवदेव! जल पूजामें देवोंके द्वारा परिकल्पित। वृक्षराज! वृक्षकी भयंकर है। यह विशिष्ट गये पूजा जल प्रदान करें। जो-जो प्राणी यहाँ निवास करते हैं, उनके भी यंत्र नमस्कार है।'

पुनः उस वृक्षका पुष्पण करे तथा ब्राह्मण योमकसे दक्षिण देकर विरोधको स्थापितकर पूर्व-वृक्षका छेदन करे। पूर्व-इष्टान और उत्तरकी ओर वृक्ष कट करके भिरे तो अच्छा है। प्रजापतिके इन दिशओंमें निरोध ही वृक्षका छेदन करे अन्यथा नहीं। वृक्षका पूर्व-अग्र और दक्षिण दिशओंमें गिराने शुभ नहीं है एवं वायव्य पश्चिममें अच्छा है। पहले वृक्षके चारों ओरकी प्रजापतिसे वृक्षका कट करके वृक्षको कटवाये। वृक्षसे सजाई सर्वथा अलग हो जाये तथा गिरकर टूटे नहीं ऐसे सफ़्त भी नहीं हो में ठहरे। जिसके कटनेसे दो भाग हो जाय, जिस वृक्षसे कट्टर हव, धी, आदि निकले उसका परित्याग कर दे। इन वृक्षोंके वृक्षका देकर वृक्षका करना

(अध्याय २४१)

नगराम् सूर्यकी प्रतिमा विशाल नेत्र, कमलके समान मुख, सत्यकी चिन्मय लक्षण सुन्दर ओष्ठ, एकदंष्ट्रि मुकुटसे अलंकृत मस्तक, यन्त्र-कुम्हार, कटक, जंगम, हार आदि अलंकरणोंसे सुशोभित अलङ्कार धारण किये हुए, हाथोंमें लघुस्त्रिण कम्पल और सुगन्धित माला लिये हुए अतिशय सुन्दर यथोक्त लक्षणोंसे समन्वित बनानी चाहिये।

इस प्रकारकी प्रतिमा करनेवाली, अग्रोप-प्रत्यक्ष तथा जलान प्रदान करनेवाली है। हीन या कम अज्ञानी प्रतिमा अनिष्टकरक होती है। उदा: प्रतिमा सोम्य और सुशोभित बनवाने चाहिये।

वाराहकी मूर्ति हाथमें कम्पलरूप धारण किये कम्पलरूपम् तथा मुखमें संयुक्त

चाहिये। कार्तिकिकर्षी कुम्भ-स्वभाव, हाथमें चक्र
लिये, अतिशय सुन्दर चाहिये। इनको
मधुर-मण्डित होनी चाहिये।

इन्द्रकी प्रतिमा कर दौनोंसे युक्त सफेद दौनोंवाले देवका
गजपर अथवा एक हाथमें वज्र धारण किये हुए बनानी
चाहिये। इस प्रकार देवोंकी प्रतिमा तुल्य रूपसे युक्त और
सुन्दर बनवाने चाहिये।

नारदजी बोले—साध्व! भगवान् सूर्यकी
बनवाकर ईशानदेवमें ब्रह्मा, विष्णु, परब्रह्म, पुण्यकर्म,
पतक आदिसे विभूषित कर फिर अधिष्ठाताके लिये मण्डपका
निर्माण करवाना चाहिये। ब्राह्मणकी मूर्ति श्री, विजय, वर, भाग्य
और धन प्रदान करती है, मित्रकी प्रज्ञा प्रदान
करवाण करती है। योगिनीकी प्रतिमा करवाण और सुविधा
प्रदान करती है, सुवर्णकी प्रज्ञा पुष्टि, कर्मकी पूर्ण करती,
ब्रह्मकी पूर्ति प्रकटित तथा पञ्चमयी प्रीति विभूत भूमि लभ
करती है। लोहे, शीशे एवं रौप्यकी मूर्तियाँ अति
है, इसलिये इन वास्तुओंकी नहीं बनानी चाहिये।

सामने पुरुष—नारदजी! भगवान् सूर्य स्वर्गस्थ
कैसे गये हैं, यह उनका स्वर्गस्थान कहा है? उसे कुम्भका
बतलाइये।

नारदजीने कहा—साध्व! सुनो कहीं अच्छी बात पुरी

सूर्य-प्रतिष्ठाका मूर्त और बनानेका विधान

नारदजी बोले—साध्व! भगवान् सूर्यकी स्वरूपके
लिये प्रीति, इतिहास, चतुर्था, पञ्चमी, दशमी, अष्टोदशी तथा
पूर्णिमा—ये तिथियाँ प्रशस्त मानी गयी हैं। चन्द्रमा, बुध, गुरु
और शुक्र—इन ग्रहोंके उदित एवं अनुकूल होनेपर भगवान्
सूर्यकी प्रतिष्ठाकी करनी चाहिये। सूर्यकी स्वरूपमें
तीनों उग्र, रेश्मी, अग्नि, रौप्य, लाल, पुष्प, पुण्य,
और भरी—ये प्रशस्त हैं। प्रतिष्ठाके लिये
यज्ञभूमि भूमी, राख, केश आदिसे सहित एवं युक्त होनी
चाहिये। उसमें बालू, कंकड़ एवं कोकले न हों। दस हाथ
लम्बा-चौड़ा बनवाना चाहिये। उसके चारों ओर कुश,
अग्न, उपवन आदि होने चाहिये। उस मण्डपमें चार
लम्बी-चौड़ी वेदीका निर्माण करे। नदीके संगम-स्थानसे बिट्टे

है। अब मैं यह सब बतारूँ। इसे ध्यानसे सुनो—

भगवान् सूर्य स्वर्गस्थ हैं, उनके नेत्रोंमें बुध और सोम,
भगवान् सूर्य सूर्यके लिये कपालमें ब्रह्मकी
कल्पने रूप, दौनोंमें वज्र और मण्डप विवास है।
धर्म और अधर्म, जिह्वामें सर्वशासनकी महारथी
सत्सती स्थित है। कर्णोंमें दिग्दर्श और विद्वान्, तालुदेगमें
और इन स्थित हैं। इसी प्रकार घुमघुममें कर्णों आदित्य,
केशके लिये, चेतमें सपुत्र, हृदयमें वर, किन्नर,
गर्भ, पित्रा, दन्त और शस्त्रागण विराजमान हैं।
भुक्तकी चर्च, कर्णोंमें बुध, पीठके मध्यमें मेरु, खोली
कानोंके मण्डल और नाभिपङ्कटमें धर्मलोक विवास
है। कर्णपर पुष्पी अग्नि, लिङ्गमें शक्ति, जानुओंमें
अग्नि-कुम्भ, उग्रकी पर्वत, नखोंके मध्य सातो पताल,
कानोंके बीच और सम्मुखस्थ भूकपाल तथा दन्तपरमें
कार्तिकी रुद्र है। इस प्रकार भगवान् सूर्य स्वर्गस्थ
तथा सभी स्वर्गस्थ हैं। वे वायुसे विश्व व्याप्त हैं,
कैसे ही पृथ्वी व्याप्त है, वैसे ही पृथ्वी व्याप्त है, क्योंकि वायु भी
भगवान् सूर्यके धर्मके अङ्गमें ही स्थित रहता है। ऐसे में
भगवान् सूर्य सम्पूर्ण अविद्योपर अनुग्रह करनेके लिये विराज
रहते हैं।

(अध्याय १३२-१३३)

काल काल कहीं विद्यते। मन्त्रीकी प्रति मण्डपकी गोबर
आदिसे उपरिष्ठ करने, पूर्व दिशामें चतुर्ग, दक्षिण दिशामें
अर्धचन्द्र, पश्चिम दिशामें वर्तुलमकार और उत्तर दिशामें
अक्षरवाले कुम्भोंका निर्माण करे। बट, पीपल, गूलर,
केर, पत्राश, इमी चन्दनके द्वाग पाँच-पाँच हाथके
संगे लगवें। शुक्र पुष्पमाल, कुश आदिके अलङ्कृत करे।

मण्डपके मध्यमें अलङ्कृत वेदीके ऊपर कुश विद्याकर
पुष्पोंसे अलङ्कृत करे या प्रतिमाको रखे। मण्डपके
दिशामें पीठ, स्त, कुम्भ, अङ्गनके नील, शैल, कुश, हस्ति और विश्वकर्माकी अष्ट पत्तिकाएँ आठ
दिशामें प्रशस्तके लिये लगवें। सफेद और लाल चूर्णसे

वेदीके ऊपर कमलकी अङ्कुरिता बगवे । 'वेदो वेदिः' (यजु- १९।१७) इस मन्त्रसे वेदीका स्पर्श करे : 'वेदे वेदेवेदिः' (यजु० ११।१४) इस मन्त्रसे उसपर पूर्वीय और उत्तराय कुम्भको मिलाये । तब उक्त विधान और दो []

एक इच्छा एवं विविध वक्ष्य पदार्थको मण्डपमें रखे । एक उक्त वेद छत्र चर्च स्थिरित कर विविध दीपमालासे मण्डलको अलङ्कृत करे :

(अध्याय १३४)

सामवेदायुक्तानके प्रसंगसे सूर्यकी अभिषेक-विधि

नारदजी बोले—सत्य । अब मैं भगवान् सूर्यके जपनकी विधि बताता हूँ । वेदपाठी, पवित्र अक्षरजिह्व, शास्त्रमर्मज्ञ, सूर्यपक्ष पौनिक अथवा अन्य ऋतुकोके साथ मण्डलको ईशानकोणमें एक द्वाप रज्ज-चौड़ा और तीव्र भवरीठ स्थिरित कर देव-प्रतिमको प्रसरणसे लम्बे [] प्रतिमको उस पीठपर स्थापित करे । मार्गमें 'भर्गो देवस्य धियोः' आदि धातुशिल्प मन्त्रोंकी ध्वनि होती रहे तक बलि-धर्मको पाठ बजते रहें । अनन्तर सपुत्र, गङ्गा, यमुना, सरस्वती, यन्महागा, सिन्धु, पुष्कर आदि तीर्थों, नदी, समुद्र, पर्वतीय [] भगवान् सूर्यको जान कराये । अठ ऋतुओं और अठ पौषक सेनेके कलशोंके जलसे जान कराये । जानके जलमें रत्न, सुवर्ण, रज्य, लवण, मर्कटिपि, पुष्प, मांस, सुवर्ण (सूर्यमुखी), मुला, विष्णुजन्त, अलङ्करी, दूर्वा, मदार, हल्दी, त्रिपुण्ड्र, बज्र आदि सभी औषधिधर्म डाले । कलशोंके मुखपर बट, चौपल और गिर्रीको कोमल परलम्बीको कुशके साथ रखे । भगवान् सूर्यको अर्घ्य देकर ग्राथत्री-धर्मसे अभिषेकित सोरठ कलशोंसे जान कराये । सूर्य कलशके अन्धकारमें आँधी, तूफान, भूतिकाके फलजोसे ही खान करना चाहिये । इसके अनन्तर जो ईंटोसे की हुई वेदीके ऊपर कुछ विधान मूर्तिको दो वक्क धनधन स्थापित करना चाहिये । उस दिन व्रत रहे । मूर्ति स्थापित करनेके

पञ्च निम्न मन्त्रोंसे प्रार्थनाका अभिषेक करे—

देवदेव । सत्य, विष्णु, शिव आदि देवागण आकाश-जगत्को परिपूर्ण अलङ्कार आपका अभिषेक करे । दिक्पाले । पतिमन् मरुत मेघजलसे परिपूर्ण द्वितीय कलशसे आपका अभिषेक करे । सुतेज । विश्वधर भरलक्ष्मीके जलसे परिपूर्ण तृतीय कलशके द्वाप आपका अभिषेक करे । देवदेव । इन्द्र, अग्नि, लोकपालगण समुद्रके जलसे परिपूर्ण चतुर्थ कलशसे आपका अभिषेक करे । नागगण कमलके पत्रगसे सुगन्धित [] परिपूर्ण पञ्चम कलशसे आपका अभिषेक करे । विष्णु एवं सुवर्णजलपाते सुनेल आदि पर्वतगण पर्वत-पक्षिकों स्थित छठे कलशके जलसे आपका अभिषेक करे । अक्षरज्ज्वरी सप्तर्षिगण पद्मपत्रगसे सुगन्धित सम्पूर्ण तीर्थ-जलसे परिपूर्ण सप्तम बटके द्वाप आपका अभिषेक करे । अठ प्रवरके मङ्गलसे समन्वित अष्टम कलशसे वसुगण आपका अभिषेक करे । हे देवदेव । आपकी भयलक्ष है ।'

इसी प्रकार एक ताकके पात्रमें पञ्चगव्य बनाकर जान कराये । वैदिक मन्त्रोंसे गोमूत्र, गोमय, दूध, दही, कुसुमोदक लेकर ताकके पत्रमें पञ्चगव्य बनाकर सूर्यनागवक्त्रोंसे जान कराये । धनसे गन्धपुष्प जलसे जान कराये, अनन्तर सुसोदक-जान कराये तथा रक्त बल एवं अलङ्कारसे अलङ्कृत कर इस प्रकार अलङ्कृत करे—

१-देवागणअभिषेकानु	२-विष्णुसिद्धयः । लोकपालसुनेन	३-मन्त्रेण	४-सुतेजः ॥
पद्मज्जलिपिङ्गु	भौतजलो दिग्भयते । वेदोऽभिपूज्येन	द्वितीयकलशसे	दुः॥
अक्षरज्ज्वरी	पूर्वेन कलसेन सुतेजः । विष्णुभार्गविकानु	तृतीयकलशसे	दुः॥
सप्तमख	अभिपूज्य लोकपालः सुतेजः । सप्तमोदकपूर्वेन	चतुर्थकलशसे	दुः॥
वर्षाण	परिपूज्य मन्त्रेण सुवर्णजः । पञ्चमोदकपूर्वेन	पञ्चमकलशसे	दुः॥
विष्णुमोदकपूर्व	अभिपूज्य पञ्चमः । विष्णुमोदकपूर्वेन	षष्ठम कलशसे	दुः॥
सप्तमोदकपूर्वेन	मन्त्रेण सुवर्णजः । सप्तमोदकपूर्वेन	अष्टमः अष्ट खेपः ॥	
वसुगणअभिपूज्य	कलसेन जानये । यः । अष्टमसुनेन	देवदेव सप्तमः ।	दुः॥

सूर्यदेवता पूजनकर ब्रह्मणों और ऋषियोंके भोजन करावे और उन्हें दक्षिणा दे। इस भोजनार्थ भक्तिपूर्वक प्रतिमाएँ स्थापना किये जायें, वह उनकी सभी कल्पणा, मङ्गल और सुख-समृद्धिकी सूचक होती हैं और उसमें भगवान् सूर्यका चित्र सांकेतिक रहता है। सूर्यकी स्थापना करनेवाला व्यक्ति मोक्ष प्राप्त करता है और उसे बहुत जल्दोक्त आधि-व्याधियाँ भी नहीं आती। दिनोक्त प्रकृतिके उत्सवोंमें सम्मिलित रहनेवाला व्यक्ति सूर्यस्तोत्रके द्वारा सूर्यनारायणकी प्रतिमाकी स्थापना करनेसे दस विघ्नयों तथा सौ व्याधियों-यज्ञोंका फल प्राप्त होता है। यदि सूर्य ईश अर्चना पूर्ण नहीं हो जाती, तबतक यदि कर्मकेवल पुण्य सार्-

सुख योग्य है। सूर्य-मन्दिरके जीर्णोद्धार करनेका पुण्य इससे भी अधिक है। जो पुरुष मन्दिरका निर्माण कराकर प्राणियोंकी सुख, स्वास्थ्य एवं प्रत्येक हेतुभूत सुखोंका भण्डार सूर्यकी प्रतिमा स्थापित करता है, वह संसारके सब सुखोंके भोगकर सब कष्टोंका सूर्यस्तोत्रके निवास करता है। मन्दिरके इतिहास-पुस्तकका पठ भी करना चाहिये।

यदि किसी अन्य देवताओंकी प्रतिमाओंका भी स्थापन करना हो तो उसमें उद्योग करे तथा सुप्त मुहूर्तमें इन प्रतिमाओंको बध्नात्मक विधिबद्धकर स्थापित कर पूजन करे।

(अध्याय १४६-१४७)

भस्मरोपणका और फल

नारदजी बोले—सत्य। अब मैं भस्मरोपणकी विधि बतलाता हूँ। पूर्वकालमें देवता और आसुरीयों में भीषण युद्ध हुआ, उसमें देवताओंमें अपने-अपने शरीरों में शिन्-शिन् पिङ्गोंकी चोट लगी, वे ही उनके शरीरों का दुःखदायक कारण इस प्रकार है—भस्मरोपण नहीं करके, अशुद्ध और प्रामादके कारणसे पतन होना चाहिये अथवा रक्त, आँसू, दस, सोलाह या बीस हाथ लम्बा होना चाहिये। भस्मरोपण दण्ड बीस हाथसे अधिक लम्बा न हो और सम पर्वोद्धार हो। उसकी गोलई चार अङ्गुल होनी चाहिये।

भस्मके ऊपर देवताओंकी सुविधा करनेका विधि भस्मरोपण कहिये। भस्मरोपण विधि के अनुसार गरुड, शिवजीकी भस्मरोपण पूष, ब्रह्माजीकी भस्मरोपण पद्म, सूर्यदेवकी भस्मरोपण शक्र, सोमकी पताकापर गरुड, अश्विनकी भस्मरोपण इन्द्र, कामदेवकी पताकापर मकरध्वज, इन्द्रकी भस्मरोपण इसी, दुर्गाकी भस्मरोपण सिंह, उग्रदेवीकी भस्मरोपण गेहूँ, रेवतीकी भस्मरोपण अश्व, वरुणकी भस्मरोपण कर्पूर, हरिण, अश्विनी भस्मरोपण मेघ, गणेशजीकी भस्मरोपण मूषाका तथा ब्रह्मर्षियोंकी भस्मरोपण कुराव्य करनी चाहिये। जिस देवताका भस्मरोपण हो, उस भस्मरोपण अङ्गुल रहता है।

विष्णुकी भस्मरोपण दण्ड सेनेका और भस्मरोपण पितृवर्णकी होनी चाहिये, गरुडके समीप रक्त करनी चाहिये। शिवजीका

भस्मरोपण और शिव वर्णकी भस्मरोपण सुवर्ण के समीप स्थापित करे। भस्मरोपण और पद्मवर्णकी भस्मरोपण रक्त करे। सूर्यनारायणका भस्मरोपण और शक्रके समीप पताका होनी चाहिये। भस्मरोपण गरुड एवं पुष्पमालाओंमें संयुक्त हो। इन्द्रका भस्मरोपण और इसीके समीप अनेक वर्णोंकी पताका होनी चाहिये। यमका भस्मरोपण लोहेका और मरिचके समीप कुम्भवर्णकी पताका रखनी चाहिये। कुम्भका भस्मरोपण कर्पूर और मयूख-धनके समीप रक्त वर्णकी पताका रखे। कालदेवका भस्मरोपण और तारुवृक्षके समीप पताका रखनी चाहिये। कामदेवका भस्मरोपण शिवके (शेन, शीटी और शिव-मिश्रित) कर और मकरके समीप रक्तवर्णकी पताका स्थापित करनी चाहिये। कर्त्तिकेयका भस्मरोपण शिवके और मयूके भस्मरोपण पताका भस्मरोपण तारुका अथवा इतिहासका एवं मयूके समीप सुवर्णवर्णकी पताका और मातृकाओंके भस्मरोपण अनेक वर्णोंके तथा अनेक वर्णोंकी अनेक पताकाएँ होनी चाहिये। रेवतीकी भस्मरोपण अश्वके समीप लालवर्णकी, कर्पूरका भस्मरोपण लोहेका और मूषाका समीप नीले भस्मरोपण होनी चाहिये। गौरीका भस्मरोपण और इन्द्रके (चैत्रवृष्टी के) भस्मरोपण रक्तवर्णकी पताका होनी चाहिये। अश्विनी भस्मरोपण सुवर्णका और मेघके

■ અનેક વર્ષની પરાકા હોની જાણિયે । વાનુજા ■
 લોકિકા ઔર હરિજનકે સમીપ કુલવર્ષકો પરાકા હોની
 જાણિયે । ભગવતીકા ધ્યનપદ સર્વપાતુવ, ■ તમ
 શિક્ષકે સમીપ રીન રંગની પરાકા હોની જાણિયે ।

इस प्रकार [] पहिले निर्वाणकर उसका अधिवासन
करे। लम्बानके अनुसार वेदीकर [] करे, []
स्थापना [] समीपविधि-ब्रह्मसे [] जान करके []
मध्यमे उसे सङ्गकर सभी उपचारोंसे उसको पुनः करे और
उसे पुष्पमाला पहिनाये, दिग्बल्लोकसे बलि देकर एक []
अधिवासन करे। दूसरे दिन भोजन कराकर नाच गुरुत्वे
लालित्याचन करी प्रसन्न-कृत्य सम्पन्न कर प्रसन्नसे मन्दिरके
[] अङ्कुर करे। अङ्कारोहणके समय अनेक []
पादोंसे बजाये, ब्राह्मणगण घंट-ध्वनि करे। इस प्रकार
देवालयपर अङ्कारोहण करन चाहिये। अङ्कारोहण करने-
वालेकी सम्पत्तिकी भद्रा धृष्टि होती रहती [] और []
गतिसे [] करता है। अङ्कारोहण मन्दिरसे अम्बर [] करने

है, अतः ध्वजोद्विग्न होना नहीं रहना चाहिये। ध्वजारोहणके समय इन यन्त्रोंको चढ़ाना चाहिये—

■ जगज्जन् देव देवमाह्वय वै संगं ॥

श्रीकृतः श्रीनिवाससुत उवाच श्रीमदक्षोभिसुत ।

अनेकस्य बहुस्य धर्मात्पुनश्च नै गतोः ॥

इतिविषयं सप्त प्रश्नोत्तरिणम् साक्षी ॥ श्रुत्वा ॥ ॥ ॥

■ कर्मि सतः कर्मः प्रसादस्तर्कमूलकः ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ उपरिवाक्यानु-
सृतं जगत्पुनर्विनाशं विपुलं च भवति न च सविधिं ॥
विधिं सति च तदात्मनो वा ये । भवं सर्वं विना व्यापसरन् ॥

(आवृत्ति २३८ | ७३-७४)

सकल दायरे [] प्रमाणित [] तथा []
 दर्ज करे। इस प्रकार अधिकृतक को [] ध्वजारोपण
 करता है, यह सेवा योग्यता योग्यता सुपरीक्षणी []
 है।

(अध्याय २३८)

साप्तेयारुपानर्मे मर्गेत्तु चर्त्तन

साधने कहा—नारदी ! अगली कृपामें मुझे
सूर्यभगवान्‌का नाम दर्शन प्राप्त हुआ, उत्तम रूप भी प्राप्त
हुआ, किंतु यो मम धित्तामें अकुल है, इस मूर्खता बुराई
और रक्षण क्यों करेगा ? इसे अब कतनेही कहा करे ।

नारायणी बोले—सत्य ! इस कार्यको कोई भी साधन स्वीकार नहीं करेगा, क्योंकि देवपूजा अर्थात् देवपत्नसे असत्य निर्वृति करनेवाले साधन देवलोक को [] है । [] लोग लोभवश देवधन और साधन-धनसे चकल कर लेते हैं, वे भक्तमें जाते हैं, अतः कोई भी साधन देवराज्य पुनः नहीं बनना चाहता । तुम भगवान् सूर्यकी दारणमें जाओ और उन्होंने पूछे कि कौन उनका विधि-विधानसे पूजन करेगा ? अथवा राजा दमसेनके पुष्टीकरणसे कहो, सम्भव है कि वे इस कार्यको स्वीकार कर लें ।

नरदजीकी ■ बाक्यसे सुनकर जम्बवतीमुख सम्म
तमसेनके पुरोहित गौरमुखके पास गये और उन्होंने उन्हें आदेश
प्रणम्यकर कहा—‘महाराज ! मैं सूर्यमन्त्रानुसार ■
विशाल मन्दिर बनवाया है, उसमें समस्त पत्थर तथा
परिष्कार एवं पण्डितोंसेहित उनकी प्रतिष्ठा स्थापित की ■ और

अपने कहीं एक भी बसावा है। आपसे
आप बात करें।

गौतममुनिके कथन— साधव ! मैं तुम्हारे और आप
 हैं। आपके द्वारा मैंने इस प्रतिबद्धता से लेकर मेरा
 यह जीवन। आप मुझे एक धर्म है, किन्तु
 देवताविषयक कथनको नहीं लेना चाहिये। आप यह जान लीजिए
 कि मैं एक सुनिश्चित प्रमाण अधिकारी हूँ।

अध्यापक कृष्ण— महाराज ! मरा मरीन है ? मर्दा रहते है ? किससे कुछ है ? इनका नाम ~~क्या~~ है ? आप कृपाकर बताये ।

चौरमुख कोसे— मग भगवान् सूर्य (अग्नि) निष्पन्नके पुत्र हैं: पूर्वजन्ममें निष्पन्न महर्षि ऋषिब्रह्मको उत्पन्न सुन्दर पुत्री थी। एक बार उसमें अग्निको उल्लङ्घन किया। फलस्वरूप भगवान् सूर्य (अग्निस्वरूप) रह हो गये। यही अग्निको भगवान् सूर्यके निष्पन्नको जो पुत्र हुआ, यही मग कहलप्रया। भगवान् सूर्यके वरदानसे ये अग्निजन्ममें उत्पन्न अथर्ववेदको धारण करनेवाले मग सूर्यके परम पुत्र और सूर्यके पञ्चके लिये नियुक्त हुए। भगवान्

सूर्यकी पूजा करनेवाले मग आकशीमें निवास करते हैं, भगवान् सूर्यके पूजाके रूपमें उन्हें आकशीपूजा करी।

सूर्यके द्वारा वह जानकर अपने भगवान् श्रीगुरुदेवसे तथा समाचार सुनकर। फिर वे आकशीपूजा करनेवाले मगद्वारा सवार हो ईश्वर की आकशीपूजा करी। वहाँ उन्होंने अतिशय तेजस्वी भगवान् सूर्य-भगवान्की आराधनामें संलग्न देखा। सूर्यके उन्हें प्रणामकर उनकी प्रशंसा की।

सूर्यके कहने—आपलोग भय हैं। अब सूर्यके दर्शन सबके लिये कल्याणकारी आप लोग सब भगवान् सूर्यकी आराधनामें लगे हुए हैं। भगवान् श्रीगुरुदेव पुत्र हैं, वेदा नाम सत्य। मैं वनवासमें गयेके तपस्य मुक्तिकारी मुक्तिसे स्थापना है। उनकी आज्ञासे अनुसर उनकी विधिपूर्वक आराधनाके विहित आकशीपूजा करनेवाले।

सूर्यके आकशीपूजा करनेवाले हुआ है। सविनय प्रार्थना है कि आपलोग कुशलसे अनुशीलमें पधार और भगवान् सूर्यकी पूजा करें।

सूर्यके कहने—सत्य। इस बातकी जानकारी भगवान् मुक्ति देने पहले ही दे दी है।

सूर्यके सत्य बहुत प्रसन्न हुए और गुरुदेव उन्हें आकशीपूजा (मुक्तिदान—मुक्तिदान) से आये। सूर्यभगवान् वहाँ आकशीपूजा करनेवाले बहुत प्रसन्न हुए। सूर्यके कहने—‘सत्य ! अब तुम विद्या छोड़ दो, ये मग मेरी विधिपूर्वक पूजा सम्पन्न करेंगे।’

इस प्रकार आकशीपूजाके अन्तमें सूर्यके कहनेवाले गुरुदेव भय-घान्ते परिपूर्ण इस आश्विनपूर्वमें उन्हें आकशीपूजा दिये। भगवान् सूर्यकी संक्षेपमें गुरुदेव गये और सत्य मुक्ति एवं मार्गसे प्रत्यक्षकर आनन्द-चित्तमें आकर आये। (अध्याय १३९—१४१)



अध्याय १४२ और अन्त

एक बार सूर्यकी मूर्ति काससे मनेद्वारा धारण किये जानेवाले अध्यायके विषयमें की।

कासजीके कहने—सत्य ! तुम्हें अध्यायके विषयमें बताया है, उसे सुने। देवता, शक्ति, गुरु, गुरुदेव, अन्तरा, वर और शत्रु-हर्त्रा भगवान् सूर्यके शक्ति मग रहते हैं। यह रथ वासुकि नामक नागसे बँध रहता है। किसी समय वासुकि नागके केतुक (केतुक) उत्तरकर गिर पड़ा। केतुकके शरीरसे उस निर्मोह (केतुक) को भगवान् सूर्यकी सुवर्ण और रत्नोत्तम अत्यन्तकर अपने लक्ष्य मगमें धारण कर लिया। इसीलिये भगवान् सूर्यके भक्त अपने देवकी प्रसन्नताके लिये अध्याय धारण करते हैं। उसके धारण करनेमें श्रेष्ठक पवित्र जाते हैं और उसके सूर्यभगवान्का अनुग्रह हो जाता है।

इस अध्यायको सूर्यके केतुककी तरह मध्यमें आकशीपूजा करनेवाले रहने चाहिये। यह एक वर्णना होना चाहिये।

कासके मगमें यह भगवान् सूर्यकी आकशीपूजा उत्तम, एक ही वीरता मध्यम और एक भगवान्का वर्णना होता है, अन्त इससे नहीं होना चाहिये। भगवान्की मगमें आकशीपूजा अध्याय धारण करना चाहिये। भगवान्के लिये यह सुवर्ण श्रेष्ठक है। इसके धारण करनेसे वह सभी विद्याओंकर अधिपति होता है। अध्याय सर्वोत्तम, सर्वोत्तम, सर्वोत्तम और सर्वोत्तम है। इसके मूलमें विष्णु, मध्यमें ब्रह्म और अन्तमें शिवजीकी भगवान् शिव निवास करते हैं। इसी तरह ब्रह्मेन्द्र, गुरुदेव और सत्यदेव अन्तः मध्य और अन्तभागमें रहते हैं, अध्यायके अध्यायमें स्थित रहता है। पृथ्वी, तेज, वायु, अन्तरा और भूतल, भूतल, भूतल तथा स्वर्गल अन्तः सातों लोक अध्यायमें निवास करते हैं। सूर्यभक्त श्रेष्ठकके सभी समय अध्याय धारण कर भगवान् सूर्यकी उपासना करनी चाहिये।

(अध्याय १४२)



साम्योपासनायै भगवान् सूर्यको अर्घ्य करने और धूप दिखानेकी महिमा

सुमन्तु मुनि बोले—उज्ज ! इस प्रकार^१ श्रद्धापूर्वक
द्वारा अर्घ्यार्थके विषयमें जानकारी प्राप्त कर संन्यस्त^२ श्रद्धापूर्वक
वापस लौट आये और उन्होंने उनसे यह कर्तव्य कथन
पूजा—देवर्षे ! भोजनके भगवान् सूर्यको स्नान, अर्घ्य,
आचमन, धूप आदि करने चाहिये ?
इसका आप कृपाकर वर्णन करें ।

नारदजी बोले—सन्त ! स्नेहमें मैं यह बात
ही, होकर सुनें । सर्वप्रथम शौचार्तिसे निवृत्त
होकर आचमनपूर्वक नदीमें या जलशय आदिमें स्नान
कराहिये । अन्तर स्नानदान कर तीन बार अर्चन करें । सुद
काल पहनकर धौवरी धारणकर पूर्वदिशमुख वा उत्तरदिशमुख हो
आचमन करेगा चाहिये । कदनकर दो बार मर्जन और तीन बार
अभ्युक्षण करें । आचमनके बिना की गयी कृत्वा निष्फल होती
है एवं इसके बिना पूजा सुदृष्ट होती । अर्घ्य दान भक्त
कि देवता पादपञ्चकों की चाहते हैं । आचमन करनेके
पौन होकर देवालयमें जाता चाहिये । अन्तर
अंगप्रक्षालन कर मिरके कपड़ेसे धोकर धोकर
पुष्पोंसे सूर्यभगवान्को पूजा करें । अर्घ्यपूर्वक श्रद्धा-भक्त
गुणवत्ता धूप दें । फिर भगवान् सूर्यके चरणोंपर पुष्पद्वारा
अर्पित करें ।

रात्रिपदन, कर्कर, कुकुम करने
विलम्बकर तापके पापसे भगवान् सूर्यको अर्घ्य देना चाहिये ।

सूर्यमण्डलका पूजनका वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—उज्ज ! एक बार श्रद्धापूर्वक
चक्र-मन्त्राधारी नारायण भगवान् श्रेष्ठके दर्शनके
द्वारा आये । श्रेष्ठकृष्णने पाप, अग्नि, आचमन
आदिसे पूजन आसनपर उठे बैठकर और प्रणम
कर सम्प्रदुष्ट करने गये भोजनके धौवरी तथा उनकी
सूर्यभक्तिके विषयमें विज्ञान प्रकट की ।

भगवान् वेदव्यास बोले—श्रेष्ठ भगवान् सूर्यके
अन्य उपासक है और अन्तमें ये भगवान् सूर्यको दिव्य
तेजस्वी कायमें प्रतिष्ठित होते हैं । भगवान् भक्तवत्की तीन कल्याण

अर्घ्यकार्यके साथमें भगवान् सूर्यको अवाहन करें
तथा दोनों अनुष्ठेय बैठकर भगवान् सूर्यको अपने हृदयमें
पूजन करते हुए बोले निम्नो मन्त्रसे अर्घ्य प्रदान करें—

तेजोरासे जगत्सो ।

अनुकम्पे हे मे कृपा गुहाभास्ये दिवाकर ॥

कदनकर इस प्रकार अर्चन करें—

अर्चितस्ते चक्रवर्त्तया यदा भक्त्या विभावसो ।

देविकानुधियै नमः कर्त्तव्यमिह मे ॥

(सप्तमः १४३/१००)

कदनकर इस प्रकार जो भगवान् सूर्यको
अर्चन करत हैं धूप देता है, वह अक्षयेध-पञ्चक
काल काल करता है और उसे कम, पुत्र तथा अरोम्यकी पी
अति हो जाती है एवं अन्तमें वह भगवान् सूर्यमें स्नान हो जाता
है । उक्त पुष्पोंके न बिलम्बकर पत्रोंसे ही पूजन करें । धूप ही
रे वा अर्घ्यपूर्वक बल ही सूर्यको समर्पित करें । यदि यह भी
न हो सके तो प्रणम हो करें । प्रणम करनेमें असमर्थ हो तो
खनवी पूजा करें । यह विधि हमके अभिप्रायमें करनी चाहिये,
अर्घ्यपूर्वक सामाग्रीयोंसे पूजन करें ।
अर्घ्यपूर्वक सूर्यभगवान्को पूजा देनेकेकारणकी भी अक्षयेध-
काल बिलम्ब और सूर्यलोचनकी है ।
धूप-दानके समय सूर्यको दर्शन करनेपर उत्तम शक्ति प्राप्त
होती है । (अध्याय १४३)

है । सूर्यमण्डलकी प्रथम कला अग्निमें स्थित है, उससे सभी
सिद्धि होती है । दूसरी प्रकाशिका कला अक्षयमें
स्थित है । तीसरी कला सूर्यमण्डलमें है । सवित्रदेवका
मन्त्र उक्त एवं है । मण्डलके मध्यमें
सदस्यत्वक वह परमात्मा पुरुष-रूपमें स्थित है । वह पुरुष
क्षर-अक्षररूपमें है, इसको महामय कहते हैं । इसके निष्कल
और सकल दो भेद हैं । तत्त्वोंके साथ सभी भूतोंमें अवस्थित
मन्त्र मन्त्र और नन्दीन होनेपर
निष्कल । वृष, गुरु, कृता, वृष, सिंह, पृथ्वी, राधा, पशु,

सूर्यका पूर्वार्धमें रातवर्ण, आन्धेद-स्वरूप तथा कलसरूप होता है। मध्यार्धमें तुल्यवर्ण, कञ्जोद-स्वरूप एवं सतीतक रूप होता है। सायंकालमें कृष्णवर्ण, सन्ध्यावेदस्वरूप तथा ताम्रसरूप होता है। इन तीनोंसे विभिन्न ज्योतिःस्वरूप, सूक्ष्म निरञ्जनस्वरूप चतुर्थ स्वरूप है। ज्योत्स्नमें चैतन्य जगदी-प्राणि विचारके स्थिर कर प्रणयसे पूजक, कुप्यक और रेषक-रूप । इसके अंगुष्ठके अग्रभागसे लेकर मालाकार्यरूप ।

और मलकमें अधिर्गन्धक रूप काहिये। इन सबमें सूर्यमन्त्रका करे—यह चतुर्थ स्थान है, इस स्थानमें इच्छा करनेवाले पुरुषको अवश्य जानना । यहिणन सूर्यभगवान्के इसी तृतीय स्थानमें मनवा लीनकर मुक्त हो जाते हैं। जो इसी ध्यान कर पायी होते हैं। इनको सुन्नकर भगवान् वेदव्यास और चले गये।

(अध्याय १४५)

अन्तर्यामी के लक्षण

राजा सत्तानीकले पूजा—मुने ! भगवान् सूर्यकी पूजा करनेवाले भोजक दिव्य, इनको इच्छा एवं उन्हें अत्यन्त शिव है। इसलिये वे पृथ्वी हुए किन्तु । अन्तर्यामी के कहते हैं, इस आन बतलाने ।

सुनानु सुनिवे कथा—उत्तम ! मैं इस विषयमें भगवान् वासुदेव तथा कृष्णजीके द्वारा हुए । समय नरद और परीत—ये दोनों सम्मत्त गये। उन्होंने भोजकीके किन्तु, अवसर से दोनो विमानपर आरुढ़ । इसकापुष्टिमें उन गये। उनके विषयमें कृतवर्माको हुई । सूर्यकी पूजक भोजकीका अन्न आग्राह्य है, फिर नरद तथा परीत—इन दोनोंने उनका अन्न कैसे ग्रहण किया ? इसपर वासुदेवोंने कृतवर्मासे कहा—जो भोजक अन्नग्रहण नहीं करते बिना अन्नग्रहणके तथा बिना ज्ञान किये भगवान् सूर्यकी पूजा करते । और शुद्धता ज्ञान ग्रहण करते हैं तथा देवकीयन पाते । वह बुद्धि-वर्धन करते हैं, जिनके ज्ञानकीद्वारे सन्नद्ध नहीं हुए हैं, वस्तु ग्रहण नहीं करते, सुखित नहीं रहते—वे भोजकीके अन्न हैं। ऐसे भोजकद्वारा किये गये देवकीयन, हवन, स्नान, तर्पण, कर्म तथा ब्रह्मण-भोजन सत्कर्म भी निष्फल होते हैं। इसीसे अस्तुति होनेके कारण वे अन्नोन्नयन कहे गये हैं। भगवान् सूर्यकी नैवेद्य, निर्घारण, गुणगुण अर्पित सुतेके हाथ बेचनेवाले, भगवान् सूर्यकी पत्नी । भोजक उन्हें शिव नहीं । तथा वे भोजकीमें अधम हैं। जो भोजक भगवान्के भोग लगाने बिना भोजन सेते हैं, उनका वह भोजन उन्हें नरक प्राप्त करनेवाला बन जाता है। भगवान् सूर्यकी अर्पण करने ही नैवेद्य पचान करना

इससे उचित ही होता है।

वासुदेवने पुनः कृतवर्मा—कृतवर्मा ! भोजकीके विषयमें विषयमें भगवान् सुनि अन्नवाले जो बतलाया, उसे और सुने—

जो भोजक पर-परी तथा पर-धनक द्वारा करते हैं, देवकीयन तथा वेदिक निष्क हैं, वे मुझे अश्रिय हैं। उनके द्वारा की गयी पूजा तथा दान किये गये अर्पणसे मैं भक्षण नहीं करता। मैं भगवन् महादेवताका कर्म नहीं करते एवं सूर्य-मुद्राओंको नहीं जानते तथा मेरे पार्श्वोक्त नाम नहीं जानते, मैं पूजा करनेके अधिकारी । और न मेरे शिष्य हैं।

इसके विपरीत, मनुष्य, पितृकी पूजा करनेवाले, सुखित सिरवाले, अन्नग्रहण करनेवाले, शत्रु-ध्वनि करनेवाले, ज्ञेयवर्धन, तीनों स्वयं ज्ञान एवं पूजन करनेवाले भोजक मुझे अत्यन्त शिव हैं एवं मेरे पूजनके अधिकारी हैं। जो उचितकरके दिन बड़ी शिव पश्येपर नक्तान तथा सन्नद्ध एवं सन्नद्धिये करते हैं एवं मुझमें विशेष शक्ति रखते हुए मेरे वासुदेवकी पूजा करते हैं तथा देव, पितर, और भूत-वस्तु—इन पवित्र अनुष्ठान करते हैं, एकत्रुक्त होकर सूर्यपूजा करते हैं तथा सांख्यिक, पार्श्व, एकेष्टि अर्पित आद्वय सम्पन्न करते हैं और उन शिष्यकीं रूप देते हैं, वे भोजक मुझे अत्यन्त शिव हैं तथा जो भोजक पञ्च पञ्चकी भक्षकी करवीर-पुष्प, रत्नचन्दन, मोदकका नैवेद्य, गुणगुण रूप, दूध, शक्करि कर्मा-पनि, पञ्चक तथा सन्नद्धिसे मेरी पूजा करते हैं, घृतकी आहुति देकर करते हैं तथा पूजापूजक सन्नद्धीकी पूजा करते हैं, वे मुझे शिव हैं। इतना कहकर भगवान् सूर्यदेव सुमेध गिरिकी

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—सौम्य ! सूर्यपूजाके पहले कमल बनाकर पूर्वकी भाँति हृदयमें स्थित भगवान् सूर्यका 'सखोत्पल' नामसे कथारूपमें स्मरण-पूजन करना। पूर्वक चतुर्थीका विषय और शिवा लगते हुए 'ज्यः' लगकर अमृत्यास एवं हृदयदि न्यास तथा पूजन करना चाहिये। लक्ष्म करते समय नमस्के अन्तमें 'सखो' प्रत्यय प्रयोग करना चाहिये। यथा—'ॐ सखोत्पलस्य नमः ।' ॐ सखोत्पलस्य विधाकराय नमः । नमः सूर्यः प्रखोत्पलः ।' इन श्रुतियों के अनुसार सूर्यपूजाका यथा कर्ममें करना चाहिये, अन्यथा कर्मोंका फल प्राप्त नहीं होगा। यह सूर्यपूजाकी साधारणशैली प्रकृतिकाही तथा परम पवित्र है एवं भगवान् सूर्यको अत्यन्त शिथिल, इष्टलिये प्रत्यक्षपूजन करने और कर्मकी विधियों का पालन चाहिये। इससे अभीष्ट फलप्राप्त सिद्ध होता है।

साधकने पूछा—भगवान् ! अद्वैत-मार्गमें शिव कर्मके लिये और कैसे नीक्षा लेनी चाहिये ? इसे कैसे

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—प्रद्युम्न, धर्म, कुलदेव शत्रु, पुरुष अथवा जो भी सूर्य-प्रदण्डमें अधिकारी है। सूर्यपूजाके समयमें सूर्य, सूर्यदेवता साधारणकी तुल्य मानना चाहिये और भीतपूर्वक उक्त प्रणाम करना चाहिये। सभी विधियों पूर्वोक्त विधिके अनुसार अग्नि-स्थापन कर विधिपूर्वक सूर्य तथा आश्विन पूजा करके लक्ष्म करना चाहिये। तदनन्तर गुरु पवित्र शिष्यको कुशे और अक्षतोंके द्वारा उसके प्रत्येक अङ्गमें सूर्यकी भावना कर उसके स्पर्श करे। शिष्य वाञ्छितसे अर्पण करने पर, पुत्र, अक्षत, नम आदिसे भगवान् सूर्यकी पूजा करे तथा शक्ति भी दे। अद्वैत, गरुड, अग्नि आदिक अपने हृदयमें ध्यान करे। यौ, गुरु, दधि, दूध, घाघल आदि रसकर तीन बार जलसे अग्निमें सिंचितकर आग्निमें पुनः स्थान करे। उसके बाद गुरु शिष्य-शिष्यको दातुन दे। वह दातुन दूधवाले कुशका छे और उसकी लम्बाई खाह उम्रुल होनी चाहिये। दातुन करनेके पश्चात् उसे पूर्व-दिशामें फैक देना चाहिये, उस दिशामें देखे नहीं। पूर्व, पश्चिम और ईशान कोणकी ओर घूम करके दातुन करना शुभ होता है और अन्य दिशाओंमें दातुन करना अनुपमाना गया है।

विदित दिशामें दत्तकधनसे जो दोष लगता है, उसकी शक्तिसे लिये पूजन-अर्पण करना चाहिये। पुनः गुरु शिष्यके अङ्गोत्पल स्पर्श करे। सूर्यपूजाके अन्तपूर्वक उसके अङ्गोत्पल स्पर्श करे। ईशानसंयमके लिये शिष्यसे संकल्प करावे। तदनन्तर सूर्यको देकर उसे शपथ करनेकी आज्ञा दे। दूसरे दिन आश्विनकर सूर्यको प्रसन्नकर नमस्कार कर अग्नि-स्थापन कर और लक्ष्म करे। सूर्यमें कोई शुभ संसार सुने अथवा लक्ष्म यदि कोई अनुपमान दिशामें पड़े तो सूर्यनारायणकी लक्ष्म से अभ्यर्तित दे। सूर्यमें यदि देवपति, अग्नि, नदी, सुन्दर उज्ज्वल, उपवन, पत्र, पुष्प, फल, कमल, आदि और केन्द्रेण सूर्यसंयम तथा, वनारण्य अश्विन, सैवामें सूर्य कर्पण गुरु, नमस्के साधकाल, सुन्दर भावण शिष्य, अथवा उक्त पञ्चनगर सवार, पञ्च, रत्न आदिकी शक्ति, शत्रु, गरुड, पञ्च आदि उपकरण अथवा सम्पत्तिकी अर्पण सूर्यमें दिखायी दे तो उस लक्ष्मको शुभ मानना चाहिये। शुभ कर्म दिशामें पड़े तो सब कर्म शुभ ही होते हैं। सूर्यको स्वयं दिशामें पड़नेका लक्ष्मको सूर्यपूजा सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। साधारण तथा गुरुको पूजा करना चाहिये। अद्वैतमार्गका पवित्र और सभीको कुल प्रदान करनेवाला है। इसलिये अपने मनमें ही आदित्य-मन्त्रका प्रयोग करे। सौ आहुति चाहिये। इस समयमें और मनका अनुसरण करते हुए अद्वैतमार्गका पूजाशक्ति प्रदान करे। इससे व्यक्तिमें कुलका उद्धार हो जाता है। सूर्यपूजा पुण्यदिना अवलोकन करना चाहिये। पूजाके बाद विसर्जन करे। सूर्यका दर्शन करनेके पश्चात् ही भोजन करना चाहिये। वस्त्रोंकी छायापर और न ही का-नक्षत्र-योग और लक्ष्म करना चाहिये। सूर्य अपन, शत्रु, पक्ष, दिन, काल, सैन्यतर आदि सभीके अभ्यर्तित है और वे सभीके पूज्य तथा नमस्कार करने योग्य है। सूर्यकी सृष्टि, वन्दन और पूजा सदा करनी चाहिये। और कर्मसे देवताओंकी निन्दन परित्याग करना चाहिये। साध-पवित्र भोजन, सभी प्रकारके शोकको त्यागकर शुद्ध अन्न-करणसे सूर्यको नमस्कार करना चाहिये। इस प्रकार संक्षेपसे मैं सूर्य-दीक्षाकी विधिको बतला रहा हूँ, जो सुखयोग और मुक्तिमें प्रदान है। (अध्याय १४९)

भगवान् आदित्यकी सप्ताखरज-पूजन-विधि

ध्यातवान् श्रीकृष्ण बोले— यत्स ! ये

मण्डलान् सूर्य-मरुतकान् पूजा-विधिं कलस्वरा इति । इह केटीकर
आह्वय-कलस्वरा मण्डलान् पूजा-विधिं कलस्वरा इति । इह केटीकर
कलस्वरा कलस्वरा इति । इह केटीकर

■ ■ ■ शर्वांग, सभी देवताओंमें श्रेष्ठ, सम्पूर्ण ■ ■ ■
 वायोरूपक ■ ■ ■क मगवान् सुप्रसिद्ध है। इसमें हजार ■ ■ ■
 युक्त पशुनाहु मगवान् सुप्रसिद्ध मूष करनी चाहिये। इसके
 पश्चिममें अरुण, दक्षिणमें निरुक्त देवी, दक्षिणमें ही रेवत तथा
 उत्तरमें ■ ■ ■ पूजा करनी चाहिये और ■ ■ ■ भी
 पूजा करनी चाहिये। अश्विनमेघमें देवताकाही, ■ ■ ■
 अश्विनपुष्पारोही और ■ ■ ■ पशुकी रूप
 ईशानमेघमें लोकेश्वरकी देवी पशुकी पूजा करनी चाहिये।
 द्वितीय आकरणमें पूर्वमें अम्बरारोही, दक्षिणमें देवीकी,
 पश्चिममें गङ्गाकी और उत्तरमें ■ ■ ■ देवताकी ■ ■ ■ पूजा
 होती है। ■ ■ ■ अश्विनमेघमें शैल, ■ ■ ■ नदी, ■ ■ ■
 ■ ■ ■ और ईशानमेघमें विनादेवीकी पूजा करनी चाहिये।
 तृतीयआकरणमें पूर्वमें शुक, पश्चिममें ■ ■ ■, उत्तरमें कृत्तिका,
 ईशानमें ■ ■ ■ और मकरमें ■ ■ ■

करनी चाहिये। नैऋत्यकोणमें राहु तथा वायव्यकोणमें केतुकी पूजा करनी चाहिये। चौथे आकरणमें लेखक, पञ्चिदशपुर, मय, विष्णुपाद, वरुण, यामपुर, ईशान, सुमेरु अर्द्धकी ऊन-ऊनकी दिशाओंमें पूजा ॥ ॥ चाहिये। ॥ अक्षयणमें पूर्वादि क्रमसे महादेवा, श्री, शक्ति, विभूति, कृति, उर्ध्व, पृथ्वी तथा महावैरिणी आदि देवियोंकी पूजा करनी ॥ ॥ तथा इन्द्र, विष्णु, अर्धमा, धन, पर्यन्त, विपत्तान्, अर्ध, लक्ष्मी अर्द्ध छंदरा अर्द्धदेवोंकी पूजा करने आकरणमें करनी चाहिये। शिव, नेत्र, अक्ष-सकसे धूल रथस्थित सूर्यकी ॥ ॥ करनी पूजा करनी चाहिये। धन, भाग्य, महादेवकी तथा लोकसे अर्द्धकी ॥ पूजा करनी चाहिये। इसमें यह वाक्यान् पाकरका पुत्र, गन्ध आदिसे विधिपूर्वक पूजकतः—'ॐ सकोट्याय नमः' इस मूल मन्त्रसे अपने अङ्गोक्त स्पर्श अर्थात् हृदयदिग्वात् करती हुए पूजन करना चाहिये। जो मन्त्रात् विधिपूर्वक इस विधिसे सूर्यकी विलम्ब अक्षय होने परकी सप्तमीके दिन पूजन करता है, वह परंपरानुसार ॥ ॥ लेख है।

(अध्याय १५०)

सौरभर्यन्तु सप्रीत

■ सतानीकाने पूछा—मुने ! भगवान् सूर्यका माहात्म्य कीर्तिबोधक और सभी पापोंका नाशक है । मैंने भगवान् सूर्यनारायणको ■ लोकमें किसी अन्य देवताको नहीं देखा । जो धरण-पोषण और सत्कार भी करनेवाले हैं वे भगवान् सूर्य किस प्रकार प्रसन्न होते हैं, इस धर्मको अन्य अच्छी तरह जानते हैं । मैं वैष्णव, शैव, सैद्धिक ■ धर्मोंका अवण किया है । अब ■ स्त्रीधर्मको ■ पढ़ता हूँ । इसे ■ पासे बांधते ।

सुमन्तु मुनि बोले—एकदम । अब आप सौरभमणि
विषयमे सने ।

यह सौंदर्य सभी धर्मों के लिए और उच्च है : किसी समय [] भगवान् सुनि आये [] अस्मत्से इसे [] था। सौंदर्य अन्धकाररूपी दोषसे दूरकर शक्तिसे [] और यह संसारके लिये मान्द कल्याणकारी

है। जो व्यक्ति स्वयंसेवक होकर सूर्यकी भक्तिमूर्त्यक पूजा करता है, वह सूर्य और धन-धान्यसे परिपूर्ण हो जाता है। अन्न, कपड़ा और सार्य—विशाल भण्ड एक समय सूर्यकी अर्पण करने चाहिये। जो व्यक्ति सूर्यनारायणकी भक्तिमूर्त्यक अर्पण, पूजन और स्मरण करता है, वह सूर्यकी कृपासे अपने सभी प्रकारके कष्टोंसे मुक्त हो जाता है। सूर्यकी सदा स्तुति, प्रार्थना और अर्पण करने से, वे भयानक न होकर देवस्वरूप हो हैं। षोडशोपनिषद्-पूजन-विधियोंमें सूर्यनारायणकी कथा है, सूर्य नारायण है—

प्रश्न: [] ब्रह्म क्या [] करना चाहिये जप,
स्मरण, पूजन, अर्चनादिपर सूर्यस्तो प्रणाम करनेके भक्तिपूर्वक
आराधना, [], पीपल आदिकी पूजा करने चाहिये । भक्तिपूर्वक
इष्टिमास - पुष्यमास श्रावण और आश्विनको वेदाध्ययन []
चाहिये । सबसे श्रेष्ठ करना चाहिये । [] पञ्चमन खोगोंकी

पुण्यदि ग्रन्थोंकी सुननी चाहिये। येष्ट नित्य-अति करना चाहिये। इस प्रकारके उपकारोंसे जो अर्चन-पूजन-विधि बतायी गयी है, वह सभी प्रकारके स्तोत्रोंके लिये है। जो कोई इस प्रकारसे भक्तिपूर्वक पुण्य करता है, पुनि, श्रीमान्, और अच्छे कृत्योंसे उत्पन्न है। जो कोई पत्र, पुष्प, फल, जल, इत्यादि उपरो मेरी पूजा करता उसके लिये मैं अदुःख हूँ और न वह मेरे लिये अदुःख है। मुझे जो व्यक्ति जिस कष्टसे देखता है, मैं भी उसे उसी रूपमें पदार्थ हूँ। यहाँ

स्थित हूँ, वहीं येष्ट भक्त भी स्थित होता है। जो भूषण सर्वव्यापीको सर्वत्र और सम्पूर्ण प्राणियोंमें स्थित देखता, उसके लिये उसके हृदयमें हूँ और वह मेरे हृदयमें है। सूर्यकी करनेवाला व्यक्ति बड़े-बड़े राजाओंपर शत्रु होता है। जो व्यक्ति मनसे येष्ट निरन्तर ध्यान करता रहता है, उसकी चित्त मुझे बराबर यनी रहती है कि यहाँ उसे कोई दुःख न होने पावे। येष्ट भक्त मुझको आप्त है। मुझमें निद्रा ही सर्वोच्च सार है।

(अध्याय १५६)

देवताओं द्वारा भगवान् सूर्यकी स्तुति एवं कर-प्राप्ति

भगवान् सूर्य की स्तुति—एकम् । भगवान् सूर्यकी प्रति, पूजा और उनके लिये दान करना तथा वरदायी बात नहीं तथा नीति और उदात्त अभ्यस भी दुर्लभ है। फिर भी प्रत्येक प्रकारसे इसे प्राप्त किया जा सकता है। सूर्य-मन्दिरमें सूर्यकी प्रदक्षिणा करनेसे वे सदा प्रसन्न रहते हैं। सूर्यवक्त्र करण पूजन एवं सूर्यनारायणका स्तोत्र-पठ करनेकरता व्यक्ति फल एवं पुण्य तथा विषयोंका परित्यागकर भगवान् सूर्यमें अपने मनको देनेकरता कृप्य निमीक होकर निश्चल भक्ति प्राप्त कर लेता है।

राजा वासुदेवकी पूजा—द्विजश्रेष्ठ ! मुझे भगवान् सूर्यकी पूजन-विधि सुननेकी भाँती ही अभिलषा है। मैं अपने ही मुखसे सुनना चाहता हूँ। कृपाकर कहिये कि सूर्यकी प्रतिष्ठा स्थापित करनेसे कौन-सा पुण्य और फल प्राप्त होता है तथा सम्मार्जन करने और गन्ध आदिके लेपनसे किस पुण्यकी प्राप्ति होती है। आरती, नृत्य, यज्ञ-गीत आदि कृत्योंके करनेसे कौन-सा पुण्य होता है। अर्घ्यदान, जल एवं पञ्चामृत आदिके छान, कुरा, रक्त पुष्प, सुवर्ण, रत्न, गन्ध, चन्दन, कपूर आदिके द्वारा पूजन, गन्धर्व-विलेपन, पुष्प-प्राण एवं वासन, अम्बुज-दान और व्योमरूपमें भगवान् सूर्य तथा अरुणकी पूजा करनेसे जो फल प्राप्त होता है, वह कालक्रमेण कृपा करें।

भगवान् सूर्य की स्तुति—एकम् । प्रथम जब भगवान् सूर्यकी महनीय तेजके विषयमें सुनें। कल्पके आरम्भमें ब्रह्मादि देवगण अर्हन्तके धनीकृत हो गये। समयकी भीषणता उन्हें अपने कर लिये। उनका समस्त अर्हन्तकार्य नष्ट करनेके लिये एक महनीय तेज प्रकट हुआ, जिससे वह सम्पूर्ण नष्ट हो गया। अम्बुज-नादाक तथा सौ योजन विस्तारपुक्त वह तेजःपुञ्ज आकाशमें कर रहा था। उसका प्रकटन पृथ्वीपर कजालकी कर्णिकारूपी धाति दिखलाई दे रहा था। वह देव ब्रह्मादि देवगण परस्पर इस प्रकार विचार करने लगे—हमलोगोंका क्या भला करनेके लिये हो यह तेज प्रदुर्भूत हुआ है। यह तेज कहाँसे प्रदुर्भूत हुआ, इस विषयमें वे कुछ न जान सके और इस तेजसे सभी देवगणोंको अहर्ण्यकृत कर दिया। सैनाधिपति उन्हें दिखायी नहीं पड़े। देवताओंमें उनमें पूछा—देव ! कौन है, कहाँ है, यह तेजकी कैसी शक्ति है ? सभी लोग आपसक दर्शन करना चाहते हैं। उनकी प्रार्थनासे प्रसन्न हो भगवान् सूर्यकरुण अपने विराट् रूपमें प्रकट हो गये। उस महनीय तेजःस्वरूप भगवान् आकाशकी देवगण पृथक्-पृथक् वन्दन करने लगे।

देवताओंकी स्तुतिक्रम भाव इस प्रकार है—हे देवदेवेश ! आप सबकी किरणोंसे प्रकाशमान हैं। कौण्यल्लभ ! आप संसारके लिये दीपक हैं, आपको नमस्कार है। अन्तरिक्षमें

है। पुनः पुनः ही श्रद्धादि देवताय सदा चतुर्धर उत्पन्न होते हैं। त्रिलोक्येन ! ये सम्पूर्ण जगत्में उद्यत हैं। इसलिये मेरे ज्योतिरूपकी आराधना आपसहित श्रद्धा, विष्णु भी करें। त्रिलोक्य ! गन्धमादनकर दिव्य मन्त्रों लक्ष्मी करके परम शुभ पदार्थ-सिद्धिमें प्राप्त करें। जगदीश ! मेरे ज्योतिरूपकी श्रद्धा और भक्तिपूर्वक कल्याणप्रार्थने निवास कर करें। जगत्की श्रद्धा और अनन्तरिण्ये जगत्कर लोकपालन पुण्यप्राप्तिमें मेरी अग्रपूजा करें। इस प्रकार आराधना करनेके पश्चात् कदापके समस्त मोक्षदाय, रविमन्त्रादिसे युक्त मेरी मूर्तिपर आपलोग दर्शन करेंगे।

इस प्रकार सूर्यनामपत्रके सुन्दर वाक्यान् विष्णुने ठहरे प्रणाम कर कहा—देव ! हम सभी लोग उत्तम सिद्धि प्राप्त करनेके लिये आपके परम तेजस्वी ज्योतिरूपका पूजन-अर्चनाकर किन्तु विधिसे अवधान करें। परमपूजा ! कृपया आप हमलोगोंको परम सिद्धि प्राप्त करनेमें कोई शिष्ट-बाधा न पहुँच सकें।

भगवान् सूर्य बोले—देवताओंमें श्रेष्ठ चतुर्धर ! आप शक्तवित्त होकर सुनिये। आपका प्रभुत्व है। अनुपम ज्योतिरूपकी आपलोग आराधना करें। पूजा मध्याह्नकालमें भक्तिपूर्वक सदैव करनेसे इच्छित भक्तिमें प्राप्ति हो जाती है। भगवान् सूर्यके इस वाक्यको सुन्दर श्रद्धादि देवताओंमें प्रणामकर कहा—देव ! जगत् भव्य है, हमलोगोंको आपने अपने तेजसे प्रकाशित किया है, हमलोग भुजभूषण हो गये। आपके दर्शनप्राप्तसे ही हमलोगोंमें ज्ञान प्राप्त हुआ। तप, मोक्ष, तन्त्र अदि सभी कामनाओं ही पूर्ण गये हैं। हमलोग आपके ही तेजसे प्रकाशसे उत्पत्ति, चलन और संहर करते हैं। अब आप ज्योतिरूप पूजन-विधिमें बतानेकी कृपा करें।

भगवान् आदित्यने कहा—आपलोग सदा ही कष्ट

रहे हैं, जो मैं हूँ चढ़ी आपलोग भी हैं, अर्थात् आपलोगोंके स्वस्वार्थ मैं ही स्थित हूँ। अहंकारी, विष्णु, असत्य, कलहसे युक्त लोभोंके कल्याणके लिये आपलोगोंके अन्यकार्य अर्थात् तप-भोक्तृदिकी निवृत्तिके लिये मैंने तेजोपय स्वल्प प्रकट किया, इसलिये अहंकार, मान, दर्प अदिक परित्याग श्रद्धा-भक्तिपूर्वक निरंतर आपलोग मेरी आराधना करें। मेरी शक्त-विकृत उत्तम स्वस्वार्थ दर्शन प्राप्त होगा और मेरी दर्शनसे सभी सिद्धि प्राप्त हो जावेगी। इतना कहकर सहस्रमन्त्र पावन सूर्य देवताओंके देखते-देखते अन्तर्धान हो गये। भगवान् तेजस्वी रूपका दर्शनकर श्रद्धा, विष्णु दिव्य सभी आश्चर्यचकित होकर कहने लगे—‘वे तो अदिति-पुत्र सूर्यवराण हैं। वे महातेजस्वी लक्षण प्रकाशित करनेवाले सूर्यनामपत्र हैं, इन्होंने हम सभी लोभोंको महान् अन्यकारणों तपसे निवृत्त किया है। हम जगत्की आनन्द प्रकाश दर्शन कर, जिससे हमें प्रकाशमें हमें सिद्धि हो सके।’

श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पूजन लिये आपकी पुण्यप्राप्ति, भगवान् विष्णु शालग्राममें कृष्णज ईश्वर गन्धर्वदत्त परमेश्वर बने गये। सर्व मान, दर्प तथा अहंकारका परित्याग कर श्रद्धाजी चार कोणसे युक्त ज्योतिरूप, पावन विष्णु चक्रमें अक्षिता ज्योतिरूप और शिव अक्षिणी तेजसे अभिभूत ज्योतिरूपकी श्रद्धा भक्तिपूर्वक पूजा करने लगे। श्रद्धादि देवता गण, गुरु, गति अदिक दिव्य सर्वोत्तम सूर्यनामपत्रकी पूजाकर उनकी अचल भक्ति और प्रसन्नता-प्राप्तिके उपाय तपस्यामें हो गये।

सूर्यपुत्र मुनि बोले—वराण्य । देवताओंके पूजनसे प्रसन्न हो वे एक रूपसे श्रद्धाके पास, एक रूपसे शक्तिके पास एक रूपसे विष्णुके पास गये एवं अपने चतुर्धर रूपसे रक्षापट्ट हो सर्वकार्यों स्थित रहे। भगवान् सूर्य अपने ज्योतिरूपसे पुण्य-पुण्य ठहरे दर्शन दिव्य दिव्य

१-अन्य पुरुषों तथा स्त्रियों केपक्ष में ही दर्शनमें उत्तुंग अवस्थाका परमार्थाने, परम ज्योतिरूप और सर्वत्र महत्-तात्त्विक, महत्ताका अवस्था-तात्त्विक रूप-तात्त्विक रूप होता है, जो सर्वत्र-विकृतोंमें युक्त होता है और पुनः कृष्टिमें सर्वत्र रूप-तात्त्विकी वास्तविकी साथ अवस्था, महत्, अहंकारके अवस्थाकी अवस्था होती है।

२-योगशक्तिमें अन्तर्गत दिव्य वास्तव रूप-ज्योतिरूप-वस्तु (स्वर-वस्तु)का निर्देश है और महापुरुषों 'अभिव्यक्ति-वस्तु' इस रूपमें अवस्था अवस्था मान है।

आरुण्य सूचिका ने अपने अद्भुत योगबलसे देखा कि चतुर्भुज महााजी कमलमुखा-श्लोकमन्त्रे पूजामें अत्यन्त क्रोध-वर्धितसे **॥** है। **॥** देखकर **॥** भगवान् सूचिका ने कहा—‘सुरेश ! देखो, **॥** पर देनेके लिये दण्डित है।’ **॥** सुनकर महााजी तर्कसे प्रयुक्तित हो उठे और **॥** उनके कण्ठमुखासे देखात्त अजी विजय-पावसे प्रभाव पर प्रवर्धन करने लगे—

‘देवेरा ! मैं तो बर तपस करीतिये ।
देव । तपसे जगत्तरा मेरे लिये अन्न कोई नहीं है ।’
‘तपस करूँ कोरे—जीव जगत् रावे हैं, तपसे
करनेवा कोई खात नहीं है । जगत् तपस-तपसे
प्रधान करवे तपस हो । जगत् जगत् पर मर्किये, मैं
देवके लिये ही अन्न हूँ ।’

ब्रह्मासीने कहा—भगवन् । ॥ भव ॥ इत्युक्त्वा
 ॐ, तो मुझे ज्ञान कर दे, जिससे मैं मुक्ति ॥ सकूँ ।

भगवान् आदिश्वमे कदा—जगत्सि समुत्पन्नः ।
 आपद्ये प्रसन्ने सिद्धिः । भगवन् भगवन् भगवन्
 जगत्सि सृष्टिर्मा होगे ।

ब्रह्मचर्याने कष्ट—अनन्य ।  वि०२०
स्थापक होगा ।

मगवान् सुखं कोसैः—यिस मरुत मेरु मरु-कोस-
पद्म शृंगसे मुक्त उभय मरु रोग, मरु अस्थि-कण्ठसे अथ
शिरस विगत रोगे । पूर्व दिशाये ब्रह्म, उत्तरदिशाये इन्द्रियलोक
अग्नि, दक्षिणाये वध, नैऋत्यकोणेये मित्रा, पश्चिमाये यम
और वायव्यकोणेये धनु तथा उत्तर दिशये कुबेरका निवास
रोगा । ईशानकोणेये जीव अथवा मरुत नामने विष्णुका
निकष रोग ।

ब्रह्मजीने कहा—देव ! आज मैं तुम्हें **■** **कह**,
ये कुछ भी तुम्हें नहीं, बर **■** **आ** हो गया।

सुमन्य धूमि झेलो—उज्ज्वल ! इस प्रकार भावना
अद्विष्ट ब्रह्मजीको घर प्रदानकर उनके साथ गन्धर्वगान
पर्यन्त गये, जहाँ उन्होंने देखा—भूत-भावना शिव तीन
नगरोंमें संलग्न हैं । ये तेजसे युक्त श्वेतवस्त्र धारण कर रहे हैं ।
■■■■ शिवद्वारा पूजन-अर्चनको देखकर भावना काकर
■■■■ हो गये ।

सूर्यभगवान्को ब्रह्म—मीमा । ■ तुम्हारे अति प्रसन्न
हूँ । कस ! कर माँगो । मैं ■ देनेके ■ ■ ■ हूँ । इसपर
महादेवजीने सहाय्य ■ ■ कर सृष्टि ■ और कहा—‘देव ।
आज ■ कुछ करे । ■ जगत्पति है । संसारका तन्त्र
■ ■ है । मैं आपके अंशमें आपके पुत्रके रूपमें ■
हुआ हूँ । ■ की खों जो दान पत्त ■ अपने पुत्रके लिये करता
है । ■ वरदा सुखकर भगवान् सूर्य बोले—‘बोकार ! जो तुम
■ रहे हो, ■ ■ भी लगे नहीं है । मेरे लक्ष्मणसे तुम
पुत्र-रूपमें उत्पन्न हुए हो । जो तुम्हारे प्रसन्न हो ■ ■ माँगो ।’

महादेवजीये नमः—पावनम् ! यदि ॥ मेरे कपर
 ॥ ते मुझे अर्पण ॥ पति प्रदत्त करें, जिससे यक्ष,
 ॥ देव, दानव आदिपर ॥ प्राप्त ॥ सकुं और
 सुखके अर्पण प्रत्यक्ष ॥ सकुं । ॥ ठाम त्वान
 प्रदान करें । भगवान् सुर्वे 'देवा ही होगा' ॥ कि
 ॥ ॥ परम ॥ परम ज्योतिष्यकी पूजा प्रतिदिन करते ॥
 ॥ ॥ परम ॥ सुन्दर राम—विश्रुत होगा ।

मुझे ज्ञाने—महाराज । तदनन्तर भगवान् सूर्य
भगवान् विष्णुसे ॥ ॥ स्वात्मनाम् (मुक्तिनाथ-कोश) गये ।
॥ ॥ देखा ॥ ॥ कृष्णजीवन क्षरणकर शान्तचित्त हो
परम इच्छा तब कर रहे ॥ और हृदयसे भगवान् सूर्यनाथ ध्यान
कर रहे है । भगवान् भावतसे ॥ प्रसन्न होकर कहा—
‘विष्णो । ॥ आ गया है, मुझे देखो ।’ भगवान् विष्णुसे उन्हें
सिख सुनकर प्रसन्न ॥ और कहा—‘कगलप । ॥
रक्षा करें । मेरे ॥ ॥ । ॥ अत्यन्त ॥ पुत्र है । ॥
अपने पुत्रपर जैसी कृपादृष्टि रक्ता है, इसी ॥ ॥ भी मेरे
॥ दया-दृष्टि बचाने रको ।’

बचपन, दुर्घ्न कोले— भक्तको । मैं पुनारी
 संकट को हूँ । जो कुछ भी ले, माँग ले ।
 मैं यार करनेके लिये ही आया हूँ ।

विष्णु ध्यात्वान्ते कदा—धातवन् । कृतकृत्य
गन्तुं । मेरे सम्पन्न कोई भी नहीं है, क्योंकि संतुष्ट
होकर मैं घर देने आ गया। आप अपनी
और शत्रुओं पर प्रजित करनेको मुझे प्रणम्य तथा जैसे
होसताथा फालन कर सकूँ, ऐसा कर करे। मुझे इस
विषयस्य स्थान दे जिससे मैं सभी यशस्वी, बल,

वीर्य, यज्ञ और सुखसे सम्पन्न हो सके।

भगवान् सूर्य बोले—'तथातु' मन्त्रवाले ! तुम ब्राह्मणे छंटे और शिवके बड़े आराध हो, तुम्हें सभी देवता नमस्कार करोगे। तुम धैर्य परम बल और परम शक्ति हो, इसलिये तुम्हारी मूर्तमें अचल शक्ति रहेगी। जिस लोकोत्पन्न तुम्हें अर्चन किया है, वह लोको ही तुम्हारे लिये लोकोत्पन्न अलम्बनका कार्य करेगा। वह सभी अनुष्ठानोंमें रहता है दुष्टोंका विनाशक है। समस्त लोक इसे अवधार करते हैं।

सुषम्नु मुनि बोले—एवम् । इस प्रकार भगवान् भक्तकर भगवान् विष्णुको कर प्रदत्तकर अपने लोकमें बने गये और बड़ा, विष्णु तथा ब्रह्मसे भगवान् सूर्यवत्पुण्यकी पूजाकर क्षुधि, और संहर करनेकी शक्ति प्राप्त की। वह

सौर-धर्म-निरूपणमें सूर्यावधारका कथन

ब्रह्मजीकने पूछा—एवम् । तेजस्वी भगवान् सूर्यनामधर्मे वर प्रदत्त किया, पृथ्वीको उत्पन्न किया, जो ब्रह्मादि लोकलोकमें ब्रह्मलोकमें ब्रह्मलोकमें तथा समस्त जगत्के पालक, महाभूतेश्वर और लोकलोक में, पुराणोंमें तेजस्वसे स्थित एवं पुराणोंकी आज्ञा है तथा अग्निमें स्वयं स्थित है, जिसके सहस्रों मिर, सहस्रों वेद तथा सहस्रों चरण हैं, जिसके मुखसे लोकलोकमें ब्रह्म, ब्रह्मस्थलसे भगवान् विष्णु और लल्लटसे साक्षान् भगवान् शिव हैं, जो एवं अन्धकार-नाशक, लोकलोक स्थितिके लिये जो अग्नि, वैदिक, कुश, मुक्त, प्रेक्षाणी, सत आदिको उत्पन्न कर इनके द्वारा इन्द्र-धनुष-धनुष करते हैं, जो युगके अनुकूल एवं तथा क्षम, कर्मल, कर्मल, मुहूर्त, तिथि, धार, संवत्सर, शत्रु, कलशयोग, प्रमाण और अशुके उत्पन्नक तथा विनाशक है एवं परमात्मके नामसे जाने जाते हैं, वे ही महर्षि यहाँ पुत्रके रूपमें कैसे अवतरित हुए ?

ब्रह्मादि जिनकी उत्पत्ति करते हैं तथा वेद-वेदाङ्गोंमें जो और देवताओंमें प्रभु विष्णु हैं, जो लोकलोकमें लोक और अग्निमें तेजःस्वरूप हैं, मनुष्योंमें मन-रूपसे तथा उपलोकोंमें तप-रूपसे हैं, जो विमलमें विमल हैं, जो देवताओं और मनुष्यों-सहित समस्त लोकलोकोंके उत्पन्न करनेवाले हैं, वे

अन्धकार अग्नि धर्म, पुण्य और सभी प्रकारके पापोंका हैं। वह लोकलोक उत्पन्नक है और तीन देवता इस पूर्वक हैं। वह लोकलोकमें भुक्त धर्म, अर्थ और कामका संचयन है। वह धर्म, स्वर्ग, आरोग्य, मन-धाम्यको उत्पन्न करनेवाला है। जो व्यक्ति इस आख्यानको अतिदिन है अन्धकार जो तीन करता है, वह आरोग्य होकर भगवान् सूर्यके परमपदको प्राप्त होता है। पुत्रहीन पुत्र, विध्वंस धन, विनाश कर लेनेमें सूर्यके, प्रथम उनके किरणोंके समान हैं और अन्धकारलोक सुख योग कर अग्निवीर्य इन्द्र स्वयंको है।

(अध्याय १५२—१५६)

सूर्यावधारका कथन

देखिए देव भगवान् सूर्य विमलस्थित अतिरिक्त गर्भसे क्या उत्पन्न हुए ? एवम् । इन विमलस्थित मुझे महान् आश्चर्य हो रहा है, भगवान् सूर्यकी उत्पत्तिसे आश्चर्यचकित होकर ही मैं अग्रसे उनके आख्यानको पूछा है। महामुने ! भगवान् सूर्यके अल-वीर्य, परमपद, यज्ञ और उत्पन्नलोक तेजस्व आप वर्णन करें।

मुनि बोले—एवम् । आपने भगवान् सूर्यके सम्बन्धमें बहुत ही प्रश्न पूछा है। मैं स्वयंकी अनुसार कह रहा हूँ। आप उसे ब्रह्म-धीनपूर्वक सुनें।

जो भगवान् सूर्य सहस्रों नेत्रोंवाले, सहस्रों किरणोंसे युक्त और सहस्र मिर तथा सहस्रों हाथवाले हैं, सहस्रों मुकुटोंसे सुशोभित तथा सहस्रों भुक्तकोंसे युक्त एवं अव्यय हैं, जो लोकलोकमें कल्पक एवं सभी लोकलोकोंके प्रवर्धित करनेके लिये अनेक लोकलोक होते हैं, यही भगवान् सूर्य कल्पकलोक उत्पन्नक गर्भसे पुत्र-रूपमें उत्पन्न हुए। कल्पक और अतिरिक्त जो-जो पुत्र उत्पन्न होते थे, वे उसी क्षण मर जाते थे। इस पुत्र-विनाशको देखकर पुत्र-शोकसे दुःखी अतिरिक्त व्यक्तुल हो अपने धर्म महर्षि कश्यपके गर्भ। अतिरिक्त देख कि महर्षि कश्यप अतिरिक्त समान तेजस्वी, दण्ड धारण करने कुम्भ भृगवर्धन तथा कलकल धारण हुए भगवान् भास्करके सद्गुण देदीप्यमान

हो रहे हैं। इस प्रकारसे उन्हें स्वयं देवदत्त अर्द्धशतिका प्रदान करते हुए कहा—‘देव ! आज इस तरह निश्चिन्ता होकर बने रहें ? मेरे पुत्र उत्पन्न होते । मृत्युको भरोसे न रखें ।’ अर्द्धशतिका इस वचनको सुनकर अर्द्धशतिका कादयपत्नी आश्रितक गये और उन्होंने अर्द्धशतिका कादयपत्नीको बताया।

ब्रह्माधीने सदा—गुप्त । इमे पञ्चान् भस्वराके जगत्पुरुषं स्यान्नपर चत्न्या चक्षिरे । यत् पञ्चपरं सदा कथयन् ।
अदितिके साय विमानपरं । होकर सूर्यको
गये । उस समय सूर्यलोकाधी सभामें बहोँ वेद-ध्वनि हो रहा थी, बहोँ यज्ञ हो रहा था । ब्रह्मण वेदकी शिक्षा दे रहे थे । अक्षरतः पुराणोक्तं ज्ञाता, विद्याविराजद, श्रीमन्मन्त्र, वैश्वदेव, वेदाचार्य, लोकधीमान् आदि सभी सूर्यकी उपमाओं को लगे हुए थे । विद्वान् ब्रह्मण जप, तप, दान आदिमें संलग्न थे । उस सभामें उगमवाली भगवान् विश्वामित्रों का प्रत्यक्ष आदीने देखा ।
१. गुप्त कृतकी, अमृतोक्त गुप्त गुह्यवाच्य आदि भी बहोँप भगवान् सूर्यकी उपमाओं को लगे थे । दक्ष, प्रचेता, पुलह, मरीचि, भृगु, अत्रि, वसिष्ठ, नीलम्, नादव, अचारीश, तैम, पृथ्वी, स्वर्ग, ऋष, रत्न, गन्ध, प्रवृत्ति, विवृती, स्मृ-उपज्ञोपदिष्ट चारो वेद, ऋतु, संक्रम्य, आदि बहुतसे मूर्तिमान् भगवान् पातञ्जली की स्तुति-उपमाओं को लगे थे । अथ, धर्म, काम, मोक्ष, द्वेष, हर्ष, मोह, मत्सर, मन्, वैजय, मन्त्रोक्त, सौ, काम्य, विश्वकर्मा तथा अश्विनीकुमार आदि सुन्दर-सुन्दर कथनों भगवान् सर्वको गुणगान कर रहे थे ।

ब्रह्माग्निने पाण्डवन् मातृकारसे निवेदन किया— संभवन् । आप देवमन्त्रा आदिभिरेकं गर्भसे उत्पन्न होकर लोकस्य कल्याण कीजिये । इस त्रैलोक्यको अपने तेजसे प्रदीप्तिता कीजिये । देवताओंको शरण दीजिये । असुरोंको विनाश हई अग्नि-पुत्रोंकी रक्षा कीजिये ।

भगवान् सुखी कदा—अब जैसा [] रहे है, []
ही होगा। प्रसन्न होकर प्रार्थना [] देखी अतिरिक्त सब

■ आश्रमों वाले अपने और ■ अपने ■ अपने
करते हैं।

सुखन्दु मुनि बोले—महाराज । कस्तूरनारयण भगवान्
स्वर्ग अधिनित्ये गर्भसे उत्पन्न हुन्, जिससे तीनों लोकमेंसे सुख
का पद और ~~विजय~~ विजय हो गया देखताबोलेकी मुक्ति हुई
और उनके ब्रह्मचर्ये सभी लोगोंने ~~अज्ञान~~ अज्ञान त्याग हो गया ।

[illegible]

संवेदनशून्य गेब तथा इन्फ्रारेड क्षारक नवीने पुनः भागवान्।
सूर्यको पुनः-कथं प्रकाशित पर्वति कथं अतिरिक्त सप्त परम
संवेदन को गये एवं सप्त विषय इन्फ्रारेड क्षेत्र को गया तथा सभी
क्षेत्र भव्यभूत हो गये।

बचपन सूर्य खोले—माँ ! आपके पुत्र यह हो जाते
■ इसलिये गर्मकी मिट्टिके लिये ■ आपके यहाँ पुत्र-रूप में
उत्पन्न हुआ है ।

कुनि कोसे—एवम् । इस मगवान्
मरुतस्य वरके मरुतीने सृष्टि करनेवा वर प्राप्त
किया और मरुतमनुजने भी मगवान् माहुरको प्रसन्न कर
उन्ने मरुतस्ये प्राप्त का दिया । (अध्याय १५७—१५९)

ब्रह्मादि देवताओं द्वारा सूर्य की विराट्-रूपका दर्शन

महाराज स्वामीजी कहे ब्रह्म—मुने ! अपने भगवान् सूर्य की अद्भुत धरित्रूप दर्शन किया है, जिसका पूजन आदि देवता प्रतिदिन विधिपूर्वक करते रहते । तथा जिस ब्रह्म की ब्रह्मा, विष्णु, शिव और सभी देवता आराधना करते रहते हैं, उसे आप बताये ।

सुमन्तु मुनि बोले—एक बार भगवान् विष्णु और ब्रह्मजी हिमालय पर गये । वहाँ उन्होंने देखा कि भगवान् अर्धचन्द्र धारण किये भगवान् त्रिबल्लभजी पूजा कर रहे हैं । ब्रह्मा और विष्णुजी वहाँ अपने देवद्वार द्विजमान उन्हें प्रणाम किया और विधिपूर्वक उनकी पूजा की तथा उनसे कहा—'भगवान् ! आपलोगोंने भगवान् सूर्य की आराधना कर उनके किस चरित्रका दर्शन किया है । मुझे वही रूप बतलावें ।'

इसपर वे दोनों बोले—हमलोगोंने भी इस रूप का कल्पना नहीं देखा है । हमें इस रूप अद्भुत रूप की आराधना के सूर्य की समान उत्पन्न । अर्धचन्द्र पर एक साथ चरित्रा बालिये । इसपर दोनों ब्रह्म, विष्णु और शिवजी उदयाचल पर गये और वहाँ भगवान् सूर्यकाकाल की विधिपूर्वक आराधना करने लगे । तबसे दिव्य चरित्रक चरित्रा ललाकार ब्रह्माजी निहाल करने फिर से, ऊपर हाथ करके त्रिबल्लभ भगवान् प्रभु और शिव जी के करके प्रहसित रूप सेन करते हुए भगवान् विष्णु सूर्यदेवता दर्शन प्राप्त किये । लिये कठोर तप करने लगे । ब्रह्म, विष्णु और शिवजी के उक्त तपसे संतुष्ट हो भगवान् सूर्यदेवता को प्रणम्य होकर उनसे कहा—'आपलोग क्या कहते हैं ? मैं आपलोगोंसे संतुष्ट और पर देने के लिये उपस्थित हुआ हूँ ।'

उन्होंने कहा—गोपते ! हमलोग आपके दर्शनसे कुछ कृत्य हो गये हैं । पहले ही आपकी आराधना करने हमलोगोंने द्रुप ऋषि को प्राप्त कर लिया है । आपकी दक्ष से इन्द्रिय उदयित, त्वष्टा और विनाश करने में समर्थ है, इससे किसी प्रकारका संशय नहीं है, किन्तु देवदेव ? हमलोग आपके दुर्लभ रूपका दर्शन करना चाहते हैं ।

उनके बचनेको सुनकर लोकप्रसिद्ध भगवान् सूर्य ने उन्हें अपना परम दुर्लभ तेषां अद्भुत विराट्-रूप दिखलया । इनके अनेक सिर तथा अनेक मुख हैं, सभी देव तथा सभी लोक उसमें स्थित हैं । पृथ्वी पर, स्वर्ग सिर, अर्ध नेत्र, पैरों अंगुलियों चित्रा, हाथों अंगुलियों गुह्य, विष्टेदेव जंघा, यह मुख, अपसागण केत तथा तारागण ही इनके रौम-रूप में हैं । दाहिने दिशाई इनके कर्ण और दिक्पालगण इनकी भुजाई हैं । बायु नसिका, प्रसार ही शोक तथा धर्म ही मन है । सत्य कर्म, लक्ष्य सारलसी शिक्षा, मीमांसा महादेवी अदिनि और तत्त्व चोर्ध्वान् रत्न है । स्वर्गका द्वार नाभि, वैद्यानर अग्नि मुख, नभस्वन् ब्रह्मा इन्द्र और उदर महर्षि हैं, पीठ अर्द्धांशु तथा सभी संविद्या पद्मदेव हैं । समस्त रूप वीति ऐसे ज्योतिर्वा विर्मल प्रभ है । महादेव रत्न प्राण, कुशिरा संतुष्ट हैं । इनके उदर में गन्धर्व निज नाग हैं । लक्ष्मी, वैधा, धृति, कर्माणि विराट् इनके अदिदेवों में स्थित हैं । इनका परावर्तक परावर्त है । दो स्तन, दो मुख और चार अक्ष ही इनके हैं ।

सुमन्तु मुनि बोले—एक बार सचदेवभय भगवान् सूर्य की इस विराट् रूपको देवद्वार ब्रह्मा, शिव और भगवान् विष्णु परम प्रसन्न हो गये । उन्होंने बड़ी भद्रासे भगवान् सूर्यको प्रणाम किया ।

भगवान् सूर्य की कहा—देवी । आप सबकी प्रतिदिन उपासना करत होकर आप सबके कल्याण के लिये ज्योतिर्वा के द्वारा समाधि-गन्ध अपने इस विराट् रूपको दिखलया है । इसपर वे बोले—भगवान् ! आपने जो कहा है, उसमें कोई संदेह नहीं है । इस विराट् रूपका दर्शन पाना ज्योतिर्वा के लिये दुर्लभ है । आपकी आराधना करने तथा आपका दर्शन करने पर कुछ नहीं है । आपके समान इस लोक में दूसरा कोई देव नहीं है ।

एक बार ब्रह्मादि देवता परम उत्कृष्ट इस रूपका दर्शन कर इतित हो गये और उन्होंने भगवान् सूर्य की पूजा-आराधना कर परम सिद्धि प्राप्त की । (अध्याय १६०)



सर्वोपासनायक फल

सतानीकाने पूछा—मुने ! अपने चरित्रान् सुनि
विषयमें जो कथा, यह सत्य ही है, संस्कारके मूल कारण तथा
परम देवत भगवान् सूर्य ही है, मयोज्ये की देव प्रदान करते
हैं। भगवान् सूर्यनारायणके पूजनसे जो फल प्राप्त होता है,
जब उसे कालक्रमेण कथा करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन् । जो व्यक्ति समीपस्थ भगवान् सूर्यकी प्रतिष्ठा कर पूजन करता है, वह अमरत्व तथा भगवान् सूर्यकी स्तुतिप्रप्त प्राप्त कर लेता है । जो व्यक्ति भगवान् सूर्यका शिरस्कर कर सभी देवताओंका पूजन करता है, उस व्यक्तिके साथ भगवण करनेवाला व्यक्ति भी मरकटमयी है । जो श्रद्धा-युक्तिसूर्यका स्तुतिस्वरूप कर पूजन-अर्चन करता है, उसे यज्ञ, तीर्थ-यात्रा अर्पणा श्रेष्ठि पुन अधिक फल प्राप्त होता है तथा उसके सत्कुल, विदुल एवं कीदुल—इन तीनोंका उद्धार हो जाता है और इनस्त्रोत्रकी पुष्टि होता है तथा आश्रयणसे वह मुक्ति प्राप्त कर लेता है । अथवा राजन् यह दूसरे जन्ममें सप्तरी-जली वसुमतीका गया है । जो व्यक्ति निर्द्विज समीपस्थ जोय करकर सूर्यका पूजन-अर्चन है, पुत्र पुत्र पुत्र एवं इस स्त्रोत्रमें धन-धान्यसे परिपूर्ण होकर अमर्यो उपलब्धको

参考文献

जो व्यक्ति भगवान् सूर्यके विह्वल व्योमकी रचनाकर गन्ध, रूप, पुष्प, माला, चन्दन, फल आदि उपचारोंसे पूजा करता है, वह सब शरीरसे मुक्त हो जाता है और कोई डेरा नहीं पकड़ता। वह भगवान् सूर्यके समान प्रकाशपूर्ण हो अवश्य परको प्राप्त होता है। अपनी उन्नतिके अनुसार यक्षिकपूर्वक भगवान् सूर्यका मन्दिर निर्माण करनेवाला स्वर्गमायका आभूषण होकर भगवान् सूर्यके साथ निवास करता है। यदि साधन-सम्पत्ति होनेपर भी ब्रह्मा-यक्षिकसे स्तुति होकर मन्दिर आदिकर्म निर्माण करता है तो उसे कोई फल नहीं होता। इसलिये अपने कर्मका तौन त्याग करना चाहिये, उसकेसे दो भाग धर्म तथा अधार्थक्यमें बाँट करे और एक भागसे पीडाग्रस्तजन की। अन्ध-सम्बन्धियों सम्मान रहनेपर भी यदि कोई बिना यक्षिकके अपना मन्दिर भगवान् सूर्यके लिये अर्पण कर दे, तब भी वह मन्दिर, यक्षिक इत्यादि भक्तिहीन होता है; यद्यपि दुःख और नीचसे उत्पन्न होकर होता है, भगवान् सूर्यकी पूजा नहीं करता। आमतौर पर भगवान् सूर्यके अतिरिक्त और चीजें ऐसा देखते हैं जो अन्धमानी द्वारा दिला सके।

(अध्याय २६२-२६३)

विभिन्न पृथोकरा सूर्य-पञ्चमा पल्ल

सुभक्त्यु भुवि कोले—उच्चर ! अमिन तेजस्वी भगवान्
सूर्यको [] [] समय 'अय' अदि माङ्गलिक उद्देश्य
उच्चारण करना चाहिये [] शङ्ख, घेरी अदिके द्वारा
माङ्गल-ध्वनि करनी चाहिये। तीनों संश्लेषणों के वैदिक
ध्वनिमोले लेट्ट फल होता है। शङ्ख अदि माङ्गलिक कार्योंके
सङ्गते गीतधन करना चाहिये। जितने सज्जोत्क माङ्गल गीतधन
[] है, उतने युग सहस्र कार्य [] दिव्यरत्नेकर्मों कीर्तिहित होने
है। भगवान् सूर्यको [] गौके पञ्चागमसे ऊँच पञ्चपूत
गुरायुक्त जलसे स्नान करनेको ब्रह्मस्नान कहते हैं। कर्मों एक
नार भी ब्रह्मस्नान करनेवाला व्यक्ति सभी पापोंसे मुक्त होकर
सूर्यलेखमें प्रतिष्ठित होता है।

☞ पित्तवैके उदरघसे इतितल जलसे भगवान् सूर्यको खन ॥ ॥ है, उसके पितर भरकोसे मुक्त होकर स्वर्ग चले जाते है । मिट्टीके कलहाय अपेक्षा ताप-कलहासे खन कलहा से पुन ग्रेह होता है । इसी प्रकार चाँदी आदिके कलहाय खन करनेसे और अधिक फल प्राप्त होता है । भगवान् सूर्यके दर्जनेसे स्पर्श करना ग्रेह है और स्पर्शसे पूजा ॥ ॥ है और धृत-खन करना उससे भी ग्रेह है । इस लोक और परलोकमें ॥ ॥ होनेवाले पापोंके फल भगवान् सूर्यको धृतखान करनेसे नष्ट हो जाते ॥ ॥ पुण्य-श्रवणसे सात जन्मोंके पाप नष्ट हो जाते हैं ।

सौ शर (लक्ष्मण छः विजये) आय) प्रभाषसे

(जल, पद्मामृत आदिसे) स्नान करके 'स्नान' कह्यतः है। पचीस पल (लगभग डेढ़ किलो) से स्नान करना 'अपङ्ग-स्नान' कह्यतः है और दो पचास पल (लगभग एक सौ बीस किलो) से स्नान करनेको 'महास्नान' कह्यते हैं।

जो मन्त्र भगवान् सूर्यको पुष्प-फलसे युक्त अर्घ्य अर्पण करता है, वह सभी लोकोंमें पूजित होता है और स्वर्गलोकमें अनन्दिता होता है। **॥ अष्टाङ्ग अर्घ्य—**जल, दूध, कुसुम, आम्रभाग, ची, दही, मधु, ताल कनेरका फूल तथा एक पन्दन—इत्यादि भगवान् सूर्यको अर्पण करता है, इस प्रकार अर्घ्यके सूर्यलोकमें विहारा करता है। यह अष्टाङ्ग अर्घ्य भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय है।

बौध्देक पात्रसे अर्घ्य-दान करनेसे ही गुण फल मिष्टिके प्राप्त होते हैं, मिष्टिके पात्रसे ही गुण फल तबके पकते होते हैं और पालका एवं कमलके पात्रोंसे अर्घ्य देनेका फल प्राप्त होता है। तबकेपकते हुए अर्घ्य अर्पण करने तबका गुण फल होता है। सुवर्णपात्रके हुए दिये गये अर्घ्य सेवेक गुण फल प्राप्त होता है। इसी प्रकार कान्त, नैवेद्य, घृत आदिका इत्यादि विविध पदार्थों से विद्वत्पुरुष उत्तरेक श्रेष्ठ फल प्राप्त होता है।

अनेक वा द्वावि दोहोके समान ही फल मिलता है, किन्तु जो भगवान् सूर्यके प्रति भक्ति-भावनासे सम्पन्न रहता है, उसे अधिक फल मिलता है। वैभवा रहनेपर भी मोक्षप्राप्त जो पूर्व विधि-विधानके साथ पूजन आदि नहीं करता, वह लोकमें अज्ञान-विता होनेके कारण उसका फल नहीं प्राप्त कर पाता। इसलिये मात्र, फल, जल तथा पन्दन आदिसे विधिपूर्वक सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। इससे वह अन्तः परमार्थ प्राप्त करता है। इस अन्तः परमार्थके अर्थ ही मुष्प हेतु है। भक्तिपूर्वक पूजा करनेसे वह ही दिव्य कोटि का सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

धन्य! सूर्यको भक्तिपूर्वक अर्पण पत्र समर्पित करनेकेलिये दस हजार वर्षके सूर्यलोकमें निवास करता है।

यह—पलका सुन्दर पत्रा सूर्यको समर्पित करनेकेलिये ही कोटि करोड़ सूर्यलोकमें निवास करता है।

नमोः ! इन्को पुष्पोंसे करनेका पुष्प श्रेष्ठ है, इनको एक कमल-पुष्प श्रेष्ठ है। इनको कमल-पुष्पोंसे एक अगस्त्य-पुष्प श्रेष्ठ है, इनको अगस्त्य-पुष्पोंसे एक योग-पुष्प श्रेष्ठ है, तबसे कुछसे ही योग-पुष्प श्रेष्ठ है तथा इनके लगे-पगेसे अगस्त्य-पुष्प श्रेष्ठ है। तब पुष्पोंमें योगपुष्प ही श्रेष्ठ है। तब करनेके द्वारा जो भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, अन्तः परमार्थके सूर्यलोकमें सूर्यके समान श्रेष्ठता तथा परमार्थके श्रेष्ठता प्राप्त करता है। चनेली, गुलाब, चिन्म, केत मदार तथा श्वेत पुष्प भी माने गये हैं। नाग-चम्पक, सदाशिव-पुष्प, मुद्गर (योगदा) ये सब समान माने गये हैं। कर्पूरक किन्तु अर्घ्यके पुष्पोंको देवताओंपर अर्पण नहीं चाहिये। गन्धर्वों को ही देवताओं पर अर्पण करना चाहिये। पवित्र पुष्प तात्त्विक पुष्प है। अर्घ्यके पुष्प तात्त्विक है। श्वेत योगदा और कर्पूरक पुष्प अर्घ्य माने गये। अन्य पुष्पोंको दिव्य ही समर्पित करने चाहिये। अर्घ्यके पुष्प तथा अर्घ्य पदार्थ भगवान् सूर्यको नहीं अर्पण चाहिये। फलके न मिलनेपर पुष्प, पुष्प न मिलनेपर फल और इनके अभावमें तृण, गुल्म और औषध भी समर्पित किये जा सकते हैं। इन सबके अभावमें मात्र पूर्वक पुष्प-आवधनसे भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं। जो मात्र फलके पुष्प पत्रों से सुगन्धित मन्त्र-पुष्पोंद्वारा सूर्यकी पूजा करता है, उसे अन्तः फल प्राप्त होता है। इनको करवीर-पुष्पोंसे पूजा करनेकेलिये सभी पात्रोंसे उचित ही सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

अगस्त्यके पुष्पोंसे जो एक बार भी भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा है, वह दस लाख मोक्षप्राप्त फल प्राप्त करता है और उसे स्वर्ग प्राप्त होता है।

यन्त्री, रत्नमाल, चनेली, पुष्पाग, अशोक, केत, कचनार, अंबुका, करवीर, कलहार, शमी, तगर,

१-अर्घ्यः पुष्पाङ्गि पुष्पं दधि तथा मधु। तस्मिन् करवीरक तथा च पन्दरकम् ॥
अष्टाङ्ग एव अर्घ्यं च चिकित्सितः। तस्मिन् करवीरकस्य सन्धिपत्रम् ॥

कनेर, केसर, अगस्त्य, जक तथा कमल-पुष्पेन्द्रा
भगवान् सूर्यकी पूजा करनेवाला कोई सूर्य
देवीपूजन विमानसे सूर्यलोकमें प्राप्त । अथवा पुष्पी

जलमें उल्लास पुष्पेन्द्रा भद्रपूर्वक पूजन करनेवाला
सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है ।
(अध्याय १६३)

सूर्यवह्नी-अवस्था की महिमा

सुमन्तु मुनि बोले—उज्ज्वल ! अब आप भगवान्
सूर्यकी अत्यन्त सूर्यवह्नी-अवस्था विषयमें सुनें ।
सूर्यवह्नी-अवस्था करनेवालेको विशेषतः एवं प्रोत्साहित होकर
अभिधात-अवस्था पालन करते हुए भगवान् सूर्यकी पूजामें
लक्ष्य रहना चाहिये । ब्रह्मके अल्प और सन्निभ-भोगों तथा
राक्षसोंकी होना चाहिये । जान एक अवसरमें करते रहने
चाहिये । अधःपतनी होना चाहिये । मध्यममें
देवताओंका, पूर्वाह्णमें ऋषियोंका, अन्तराह्णमें प्रियतमोंका
संघर्षमें गृहस्थोंका भोजन किया जाता है । अतः इन सभी
कर्मोंका अवसरमकर सूर्यवह्नीके भोजनका समय नहीं हो
सकता है । मार्गशीर्ष मासके कृष्ण पक्षकी चौथीसे यह अवस्था
आरम्भ करना चाहिये । इस दिन भगवान् सूर्यकी 'असुमन्त'
माससे पूजा करनी चाहिये तथा रात्रिमें गेहूँका अन्नकर
विराहा हो विग्राम करना चाहिये । ऐसा करनेवाला कभी
अतिराग-वृद्धि फल प्राप्त करता है । इसी प्रकार चौथी
भगवान् सूर्यकी 'सहस्रानु' नामसे पूजा की तथा पूजा
प्राप्त करे, इससे वाञ्छितवृद्धि फल प्राप्त होता है ।
यात्रा मासमें कृष्ण पक्षकी चौथीसे 'असुमन्त-पान'
करे । सूर्यकी पूजा 'दिवाकर' नामसे करे, इससे मन्त्र फल
प्राप्त होता है । फाल्गुन मासमें 'मार्तण्ड' नामसे पूजाकर,
गेहूँका पान करनेसे अन्न वृद्धि सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित
होता है । चैत्र मासमें भास्करकी 'मित्रदान' नामसे भक्तिपूर्वक
पूजाकर हविष्य-भोजन करनेवाला सूर्यलोकमें अवतरण
लक्ष्य आनन्द प्राप्त करता है । वैशाख मासमें 'नन्दकिरण'
नामसे सूर्यकी पूजा करनेसे दस हजार वर्षोंतक सूर्यलोकमें
आनन्द प्राप्त करता है । इसमें पक्षेष्ट होकर रहना चाहिये ।

ज्येष्ठ मासमें भगवान् भास्करकी 'दिवास्वति' नामसे पूजा कर
ये-भुक्त अन्न-पान करना चाहिये । ऐसा करनेसे कोई
वैयर्थ्य फल प्राप्त होता है । अथवा मासके कृष्ण पक्षकी
चौथीसे 'असुमन्त' नामसे सूर्यकी पूजाकर, गोमयका अन्न
करनेसे सूर्यलोकमें प्राप्ति होती है । अथवा मासमें 'अर्धमा'
नामसे सूर्यका पूजाकर दुग्ध-पान करे, ऐसा करनेवाला
सूर्यलोकमें दस हजार वर्षोंतक आनन्दपूर्वक रहता है । भाद्रपद
मासमें 'भास्कर' नामसे सूर्यकी पूजाकर पञ्चगव्य-प्राशन करे,
इससे सभी पशुका फल प्राप्त होता है । आश्विन मासके कृष्ण
पक्षकी चौथीसे 'असुमन्त' नामसे सूर्यकी पूजा करे, इससे एक पल
गेहूँका अन्न करनेसे अन्नमेव वृद्धि फल प्राप्त होता है ।
कार्तिक मासके कृष्ण पक्षकी चौथीसे 'शत' नामसे सूर्यकी
पूजाकर दुग्धपान एक बार भोजन करनेसे राजसूय यज्ञका
फल प्राप्त होता है ।

एक अवस्था सूर्य-पतिविराट्पण कालमेंको बहुतसंभूत
कर्मका भोजन कराये तथा घण्टादि स्वर्ण और वस्त्रादि
समर्पित करे । भगवान् सूर्यके लिये बरले रंगकी दूध देनेवाली
गर्वा देनी चाहिये । जो इस अवस्था एक वर्षतक निरंतर
विधिपूर्वक सम्पन्न करता है, वह सभी धर्मोंमें विनिर्मुक्त हो
जाता है एवं सभी कर्मकाओंमें पूर्ण होकर राजराज कल्याण
सूर्यलोकमें अवस्थित रहता है ।

सुमन्तु मुनि बोले—उज्ज्वल ! इस कृष्ण-वह्नी-अवस्था
कर्मका सूर्य अन्नसे क्या खा । वह जल सभी पापोंका नाश
करनेवाला है । पतिविराट्पण भगवान् भास्करकी पूजा करनेवाला
मनुष्य कभी सेवकी भगवान् भास्करके अर्पित स्थानको प्राप्त
करता है । (अध्याय १६४)

उभयसंग्रही-अवस्था वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—उज्ज्वल ! अब मैं आपको वर्णन
अर्थ, वर्णन, मोक्ष इस चतुर्वर्गमें प्राप्ति करनेवाले भगवान्
सूर्यके उत्तम अवस्था कावस्था है । चैत्र मासके उपवासका

सर्वप्रकारको जो शक्ति (बल), ऐश्वर्य आदिसे बने फल तथा
दुष्कर्म करनेसे भोजन करता है और विशेषतः रहता है, सत्य
बोला है तथा दिनभर उपवास करता है, तीनों संघर्षोंमें

कुलीन, अलंकृता कन्या निर्धन विद्वान् द्विजको देव कन्यादान करि जात है। मध्यम या उत्तम नवीन कन्यादान पुरा कन्यादान कदा जाता है। एक मसमे दो सौ खालीस मासेकर^१ कन्या करना धान्द्रायन^२-व्रत कहलात है। सभी मसकोके अतः तथा तपस्वाभ्यास जितेन्द्रिय श्रवितो देवोसे सेवित जल-स्नान तीर्थ कहा जाता है। सूर्यसम्बन्धी स्वनैवेद्ये पुण्य-लेन कहा जात है। उन सूर्यसम्बन्धी मनेकरत श्रुति सूर्य-साधुयुक्को करता है। तीर्थेनि दान-देनेसे, उन्नत रूपसे एवं देवालय, धर्मशास्त्र आदि करता करता

सौर-धर्मकी महिमाका वर्णन, सूर्य-स्तुति

राजा ज्ञातकीकने कहा—सम्राज्येष्ट ! अथ सौर-धर्मका पुनः विस्तारसे वर्णन कीजिये।

सुमन्तु सुनि कोले—महामहो ! तुम क्या हो, इस लोकमें सौर-धर्मका तुम्हारे समान अन्य किछ भी राज नहीं है। इस सम्बन्धमें मैं आपको प्रचीन कालमें गुरु एवं ऋषिके बीच हुए संवादको पुनः प्रस्तुत कर रहा हूँ। अथ इसे ध्यानपूर्वक सुन।

अरुणने कहा—सम्राज्येष्ट ! यह सौर-धर्म अद्भुत-निम्न समयका अभिव्यक्त उद्भूत करनेकारण है। पवित्राथ ! जो लोग भक्तिभावसे भगवान् सूर्यका स्तव्य-कीर्तन और भजन करते हैं, वे परमपदको प्राप्त होते हैं। समाधिपथ ! जिसने इस लोकमें जन्म प्राप्तकर इन देवेश भगवान् मानकरकी उपासना की, वह संसारके प्रलय निम्न रहता है। मनुष्य-जीवन परम दुर्लभ है, इसे प्राप्त कर जिसने भगवान् सूर्यका पूजन किया, उसीका जन्म लेन सरल है। जो ब्रह्मा-भक्तिसे भगवान् सूर्यका स्तव्य करना है, वह कभी किसी प्रकारके दुःखका भागी नहीं होता।

जिन्हें महान् धोखेके भुन-प्रतिनी की कामना है तथा जो

है। अथ एवं निःकृत, दया, भस्व, दान, शील, तप तथा अन्धधन—इन अनेक अङ्गोंसे युक्त व्यक्ति श्रेष्ठ मान कहा जाता है। भगवान् सूर्यमें भक्ति, कला, सत्त्व, दत्तों इन्द्रियोक्त विनिग्रह तथा सबके प्रति मैत्रीभाव रखना सौर-धर्म है।

जो भक्तिपूर्वक पवित्रपुण्य लिखवाता है, सौ कोटि सूर्यलेखने होता है। जो सूर्यमन्दिरका करता है, उसे उत्तम स्वयम्भी प्राप्ति होती है।

(अध्याय १७१-१७२)

करता है अथवा स्वर्गीय जीवात्म-प्राप्तिके कष्टक है एवं जिन्हें अतुल वणि, योग, त्याग, यज्ञ, श्री, सौन्दर्य, अमर्त्यी कर्त्तव्य, धैर्य और धर्म आदिकी अभिलषा है, सूर्यकी भक्ति करने चाहिये।

जो सत्त्व ब्रह्मा-भावसे भगवान् सूर्यकी आराधना करता है, वह सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है। विविध आकारवाली इन्द्रियबल, विराज और राक्षस अथवा कोई भी उसे कुछ भी पीड़ा नहीं दे सकते। इनके अतिरिक्त कोई भी जीव उसे नहीं सत्त सकते। सूर्यकी उपासना करनेवाले मनुष्यके शत्रुणा गृह हो जाते हैं और उनके पशुधर्म विजय प्राप्त होती है। सौर कीर्तन होता है। अक्षरित्या उसका स्पर्शितक नहीं कर पायीं। मुक्तिसासक मनुष्यकी मन, आयु, यश, विद्या और सभी प्रकारके कल्याण-मङ्गलकी अभिवृद्धि होती है, उसके सभी मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं।

सम्राज्यने भगवान् सूर्यकी आराधना ब्राह्म-पदकी प्राप्ति की। देखोके ईश भगवान् विष्णुने विष्णुत्व-पदको सूर्यके अर्चनसे ही प्राप्त किया है। भगवान् शंकर भी भगवान् सूर्यकी आराधनासे ही जगन्नाथ को जाते हैं तथा उनके

१-युद्ध पक्षमें प्रतिदिन एक-एक युद्ध और एक-एक कालकी युद्धको निमित्तकर पहरन करनेसे दो सौ मस मसमे होते हैं।

२-धान्द्रायनके मूल्य वेद है—यजु-यजु, और श्रुतु-यजुयजु। यजु-यजुमें पक्षकी प्रतिपक्षमें पूर्णिकको पक्ष करने लेकर कपसः पदको हुए कपसःको कपसः दिया जाता है। पूर्णिकको प्राप्त कृष्ण पक्षमें कपसः एक-एक प्राप्त पदको हुए कपसःको अथवा पूर्णिकको श्रुतु, सत्यय ज्ञानात्मको प्रतिदिन दिया जाता है। प्रत्येक सौ दो सौ पक्षों का दो है।

प्रसन्नसे ही उन्हें महादेवत्व-पद प्राप्त हुआ है एवं उनको ही आराधनासे एक सहस्र नेत्रोंवाले इन्द्रने भी इन्द्रत्वको प्राप्त हुआ है। मनुष्यार्ग, देवगण, गन्धर्व, ऋषि, उरक, तक्षक और सभी सुरोंके समक भगवान् सूर्यकी सदा पूजा किया करते हैं। यह समस्त जगत् भगवान् सूर्यमें ही निज प्रतिबिम्ब है। जो मनुष्य अन्धकारराशक भगवान् सूर्यको पूजा नहीं करता, वह धर्म, धर्म, धर्म और मोक्षका अधिकारी नहीं है। पक्षिभेद। अप्रतिपक्ष होनेपर भी भगवान् सूर्यको पूजा सदा करता है। मनुष्य भगवान् सूर्यकी पूजा सदा करता है, उल्लेख जीवन व्यर्थ है। प्रत्येक वर्णक्रमसे देवर्षिदेव भगवान् सूर्यकी पूजा-उपासना करता है। परोक्ष करता चाहिये। जो सूर्यभक्त है, वे समस्त इन्द्रोंके मन्त्र करनेवाले, नीति-विधि-मुक्तचित्त, परंपरपरंपरा तथा गुरुकी अनुसरण करते हैं। वे अमात्य, बुद्धिमान्, अधिका, अन्धधर्मिक, विद्वान्, शास्त्र, स्वात्मनः, भद्र और निज करता है। सूर्यभक्त अल्पमात्री, धृष्ट, शत्रुघ्न, प्रसन्नमानस, नैतिकचारसम्पन्न और नाभिष्ययुक्त होते हैं।

सूर्यके भक्त दम्भ, मत्सरता, दुष्प्रवृत्ति एवं लोभसे रहित हुआ करते हैं। वे शास्त्र और कुरीतसे नहीं होते। जिस प्रकार कमलपत्र जलसे निर्मल रहता है, उसी प्रकार सूर्यभक्त मनुष्य विषयोमें कभी लिप्त नहीं होते। इन्द्रियोंके

उत्थिद क्षीय नहीं होती, तत्काल भगवान् सूर्यकी आराधना सम्पन्न कर लेने चाहिये। असमर्थ होनेपर इसे कर लक्षण और यह मानव-जीवन में व्यर्थ करता है। भगवान् सूर्यकी पूजाके सम्पन्न इस जगत्में अन्य कोई भी कार्यका कार्य नहीं है। अतः देवदेवेश भगवान् सूर्यका पूजन करें। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक शास्त्र, अन्न, प्रभु, देवदेवेश सूर्यकी पूजा करता है, वे इस लोकमें सुख प्राप्त करके परम पदको प्राप्त हो जाते हैं। सर्वप्रथम ब्राह्मणोंने अपने परम गुरु आराधनासे भगवान् सूर्यकी पूजा कर अज्ञान बंधन को छोड़कर एक वा, उसका भाव इस प्रकार है—

‘सर्वव्यापकम्, शास्त्र-विद्यसे युक्त, देवोंके मार्ग-प्रणेता सर्वव्यापक श्रीभगवान् सूर्यमें मैं सदा प्रणाम करता हूँ। देवदेवेश भगवान्, द्रोघन, बुद्ध, दिवाकर, विजयान्, दिवाकर और इन्द्रोंके भी ईश है, उनको मैं प्रणाम करता हूँ। समस्त दुःखोंके हर्ता, प्रमत्तघटन, उत्पन्न, करके मन्त्र, वर-प्रदाता, वरद तथा बरेण्य भगवान् विधावस्तुको मैं प्रणाम करता हूँ। अर्ध, अर्ध, इन्द्र, विष्णु, ईश, दिवाकर, देवेश्वर, देवरा और विधावस्तु नामधारी भगवान् सूर्यको मैं प्रणाम करता हूँ।’ इस मन्त्रिका जो निज जपण करता है, वह परम कीर्तिको प्राप्तकर सूर्यदेवको भक्त होता है।

(अध्याय १७३-१७४)

सौर-धर्ममें सांख्यिक कर्म एवं अधिवेक-विधि

गणकजीने पूछा—अरुण ! जो अर्ध-अधिवेक विधि एवं वेगी, बुद्ध मन्त्र तथा शत्रु आदिसे उत्पन्नित और विषयकसे गृहीत हैं, उन्हें अपने लिये क्या करना ? अथ इसे बतलानेकी कृपा करें।

बोले—विधि वेगसे विहित, मनुष्योंमें सेवित व्यक्तियोंके लिये भगवान् सूर्यकी आराधनाके अधिकार अन्य कोई भी कल्याणकारी नहीं है। अतः प्रहरेक घट

और उपधानके अक्षक, सभी योग एवं उभ-उपधानोंको समन करनेवाले भगवान् सूर्यकी पूजा करनी चाहिये।

गणकजीने पूछा—दिवसे ! अथवादिनीके शास्त्रों में परब्रह्मणे हो गया है, अथ मेरे इन भक्तोंको देखें। मेरे लिये क्या कर्म-सम कार्य उपयुक्त है ? जिससे मैं पुनः परब्रह्म हो जाऊँ।

अरुणजी बोले—गणक ! तुम सुद-विद्यसे अभ्यसरको

१-भगवन् । २-सर्वव्यापकम् । ३-उत्थिद । ४-क्षीय । ५-सदा ॥

६-इन्द्र । ७-विजयान् । ८-दिवाकरम् । ९-देवदेवेश्वर । १०-भगवन् । ११-दिवाकरम् ॥

१२-सर्वदुःखार्ह । १३-सर्वदुःखार्ह । १४-कर्म । १५-कर्म । १६-कर्म । १७-कर्म । १८-कर्म । १९-कर्म । २०-कर्म । २१-कर्म । २२-कर्म । २३-कर्म । २४-कर्म । २५-कर्म । २६-कर्म । २७-कर्म । २८-कर्म । २९-कर्म । ३०-कर्म । ३१-कर्म । ३२-कर्म । ३३-कर्म । ३४-कर्म । ३५-कर्म । ३६-कर्म । ३७-कर्म । ३८-कर्म । ३९-कर्म । ४०-कर्म । ४१-कर्म । ४२-कर्म । ४३-कर्म । ४४-कर्म । ४५-कर्म । ४६-कर्म । ४७-कर्म । ४८-कर्म । ४९-कर्म । ५०-कर्म । ५१-कर्म । ५२-कर्म । ५३-कर्म । ५४-कर्म । ५५-कर्म । ५६-कर्म । ५७-कर्म । ५८-कर्म । ५९-कर्म । ६०-कर्म । ६१-कर्म । ६२-कर्म । ६३-कर्म । ६४-कर्म । ६५-कर्म । ६६-कर्म । ६७-कर्म । ६८-कर्म । ६९-कर्म । ७०-कर्म । ७१-कर्म । ७२-कर्म । ७३-कर्म । ७४-कर्म । ७५-कर्म । ७६-कर्म । ७७-कर्म । ७८-कर्म । ७९-कर्म । ८०-कर्म । ८१-कर्म । ८२-कर्म । ८३-कर्म । ८४-कर्म । ८५-कर्म । ८६-कर्म । ८७-कर्म । ८८-कर्म । ८९-कर्म । ९०-कर्म । ९१-कर्म । ९२-कर्म । ९३-कर्म । ९४-कर्म । ९५-कर्म । ९६-कर्म । ९७-कर्म । ९८-कर्म । ९९-कर्म । १००-कर्म ।

१०१-कर्म । १०२-कर्म । १०३-कर्म । १०४-कर्म । १०५-कर्म । १०६-कर्म । १०७-कर्म । १०८-कर्म । १०९-कर्म । ११०-कर्म । १११-कर्म । ११२-कर्म । ११३-कर्म । ११४-कर्म । ११५-कर्म । ११६-कर्म । ११७-कर्म । ११८-कर्म । ११९-कर्म । १२०-कर्म । १२१-कर्म । १२२-कर्म । १२३-कर्म । १२४-कर्म । १२५-कर्म । १२६-कर्म । १२७-कर्म । १२८-कर्म । १२९-कर्म । १३०-कर्म । १३१-कर्म । १३२-कर्म । १३३-कर्म । १३४-कर्म । १३५-कर्म । १३६-कर्म । १३७-कर्म । १३८-कर्म । १३९-कर्म । १४०-कर्म । १४१-कर्म । १४२-कर्म । १४३-कर्म । १४४-कर्म । १४५-कर्म । १४६-कर्म । १४७-कर्म । १४८-कर्म । १४९-कर्म । १५०-कर्म । १५१-कर्म । १५२-कर्म । १५३-कर्म । १५४-कर्म । १५५-कर्म । १५६-कर्म । १५७-कर्म । १५८-कर्म । १५९-कर्म । १६०-कर्म । १६१-कर्म । १६२-कर्म । १६३-कर्म । १६४-कर्म । १६५-कर्म । १६६-कर्म । १६७-कर्म । १६८-कर्म । १६९-कर्म । १७०-कर्म । १७१-कर्म । १७२-कर्म । १७३-कर्म । १७४-कर्म । १७५-कर्म । १७६-कर्म । १७७-कर्म । १७८-कर्म । १७९-कर्म । १८०-कर्म । १८१-कर्म । १८२-कर्म । १८३-कर्म । १८४-कर्म । १८५-कर्म । १८६-कर्म । १८७-कर्म । १८८-कर्म । १८९-कर्म । १९०-कर्म । १९१-कर्म । १९२-कर्म । १९३-कर्म । १९४-कर्म । १९५-कर्म । १९६-कर्म । १९७-कर्म । १९८-कर्म । १९९-कर्म । २००-कर्म ।

१३-कर्म । १४-कर्म । १५-कर्म । १६-कर्म । १७-कर्म । १८-कर्म । १९-कर्म । २०-कर्म । २१-कर्म । २२-कर्म । २३-कर्म । २४-कर्म । २५-कर्म । २६-कर्म । २७-कर्म । २८-कर्म । २९-कर्म । ३०-कर्म । ३१-कर्म । ३२-कर्म । ३३-कर्म । ३४-कर्म । ३५-कर्म । ३६-कर्म । ३७-कर्म । ३८-कर्म । ३९-कर्म । ४०-कर्म । ४१-कर्म । ४२-कर्म । ४३-कर्म । ४४-कर्म । ४५-कर्म । ४६-कर्म । ४७-कर्म । ४८-कर्म । ४९-कर्म । ५०-कर्म । ५१-कर्म । ५२-कर्म । ५३-कर्म । ५४-कर्म । ५५-कर्म । ५६-कर्म । ५७-कर्म । ५८-कर्म । ५९-कर्म । ६०-कर्म । ६१-कर्म । ६२-कर्म । ६३-कर्म । ६४-कर्म । ६५-कर्म । ६६-कर्म । ६७-कर्म । ६८-कर्म । ६९-कर्म । ७०-कर्म । ७१-कर्म । ७२-कर्म । ७३-कर्म । ७४-कर्म । ७५-कर्म । ७६-कर्म । ७७-कर्म । ७८-कर्म । ७९-कर्म । ८०-कर्म । ८१-कर्म । ८२-कर्म । ८३-कर्म । ८४-कर्म । ८५-कर्म । ८६-कर्म । ८७-कर्म । ८८-कर्म । ८९-कर्म । ९०-कर्म । ९१-कर्म । ९२-कर्म । ९३-कर्म । ९४-कर्म । ९५-कर्म । ९६-कर्म । ९७-कर्म । ९८-कर्म । ९९-कर्म । १००-कर्म ।

(अध्याय १७४ । १६-४०)

दूर करनेवाले जगन्नाथ भगवान् आत्मस्थी पूजा एवं हवन

कलकत्ताजीने कहा— मैं विक्रमका [] [] सूर्यको पूजा एवं अभिषेक करनेमें असमर्थ हूँ । इसलिए [] न्यायिक विधिसे [] कार्य आग सम्पन्न हो करे :

अस्वास्थ्य की ओर—विस्तारबद्ध : स्वास्थ्यविषये []
 खेनेके कवच तुम इसके सम्बन्धमें समर्थ [] हो, अतः []
 तुम्हारे रोगकी दृष्टिको लिये [] (अभिज्ञान) कहिये।
 यह लक्ष-होम सभी पक्षों, [] तथा स्वास्थ्यविषये नाना,
 महामुष्मजनक, [] प्रदान करनेवाला, अथवा तुम-निर्वाण,
 महान् शुभकारी तथा विषय प्रदान करनेवाला है। यह सभी
 पैरोंकी हृष्टि प्रदान करनेवाला तथा पानान् सूर्यको
 प्रिय है।

इस [REDACTED] पूर्व-मन्त्रिालय अधीनस्थ गोपनीय
प्रतिष्ठान स्वीकृत अधिष्ठाता द्वारा जारी और सर्वप्रथम
दिनांक [REDACTED] को जारी [REDACTED] करें।

सामग्री । इस विधिपूर्वक जासूसीय प्रदान
अन्य 'अ-कृषि' इलाके तथा हवनक
सम्बन्धित करे । सीर-महादेवसे का काशी गयी है ।
काशी काशीके देवसे इस अधिपत्यको करे । यह सभी
काशी प्रभारसे शक्तिसे सिद्ध उपयोगी है ।

कवचके अन्तर दक्षिते लिखे विहित मन्त्रैश्च शतं
पठते पुनः कृत्वा कान्ता वसिष्ठे । त्र्यम्बके अभिनवि
भक्त्या सर्वं लोकं प्रीतिं करोति ॥ १ ॥

रघु कर्मण्ये वैभवे, सङ्कल्पिभवे, सङ्क

१- अक्षादेशांश	राज्य	जिल्ला	तहसील	ग्राम	समुदायिक	पृष्ठ
----------------	-------	--------	-------	-------	----------	-------

‘अभीष्टस्य साधनं यत्नः’—इत्यनेन अर्थः साधनं दे :

संस्कृतनाम	अङ्गनाम	कान्ताङ्गनाम	सं. सं. संख्या	वैयस्य	अङ्गनाङ्गनाम	सं.
------------	---------	--------------	----------------	--------	--------------	-----

‘आत्मसंस्कारः स्वतः’—इत्यस्य विवेकः स्वतः नै ।

वेबसाईट: www.dnyanesh.in | ईमेल: info@dnyanesh.in | फोन: 020-26133333 | पृष्ठ संख्या: 22

देवगिरी-राज्य विधानसभा २०११ पृष्ठ १०

‘सुखीनपदपदम मनाहं’—[मनो सुखीन मनाहं ।]

[illegible]

कठपुष्प अर्जुनः ॥ १ ॥

‘कुम्भकारभरणम् सत्तम’ — (पत्थरी चोली आच्छादि) रे ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
 ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

प्रमाणपत्र: श्रीमान विष्णुप्रसाद शर्मा

“कविशर्माजीनिरुपमाय कवयः” — इससे है।

[illegible]

“कर्मणाच स्वयम्” — इस मन्त्रसे ■■■ भावनी है।

गठनसंस्था	संस्थान	विद्यार्थीसंख्या	न.०	प्रमाणपत्र	संस्था	संस्था
-----------	---------	------------------	-----	------------	--------	--------

* 'आत्मनिष्ठता' का अर्थ है—आपने अपने अन्दर ही सब कुछ ढूँढ लिया है।

કોલેજ સેન્ટ્રલ ઓફિસ વિજ્ઞાન મહાવિદ્યાલય ગુજરાત રાજ્ય વિશ્વવિદ્યાલયો

'संस्कृत-संस्कृत'—इसके अर्थ है कि...

[illegible][illegible]

संस्थापक अध्यक्ष : श्री. वि. ए. शर्मा, अध्यक्ष, भारतीय प्रबंधन संस्थान, दिल्ली।
अध्यक्ष : श्री. ए. आर. कृष्ण, अध्यक्ष, भारतीय प्रबंधन संस्थान, चेन्नई।
उपाध्यक्ष : श्री. ए. जे. राव, अध्यक्ष, भारतीय प्रबंधन संस्थान, कोलकाता।
सचिव : श्री. ए. ए. अहमद, अध्यक्ष, भारतीय प्रबंधन संस्थान, मुंबई।
उपसचिव : श्री. ए. ए. अहमद, अध्यक्ष, भारतीय प्रबंधन संस्थान, मुंबई।

[illegible][illegible]

संकेतः

[illegible]

1. **संस्थापक अध्यक्ष** : श्री. **म. वि. नारायण** (म. वि. नारायण)

[illegible]

आपको बल, सौख्य एवं शक्ति प्रदान करें । हाथों बल एवं
क्षेत्र बल धारण किन्ने हुए, सर्व-अभयपुरुष, भगवान् सुर्वर्षी
कलकल करनेवाले, तीन नेत्रोंवाले गटीकर आपको कर्मों
उत्तम बुद्धि, आरोग्य एवं शक्ति प्रदान करें । विष्णुने मङ्गलके
कर्मण अभयपुरुष, यक्षोदर तथा महाकाय जिन अचल अद्वेग
प्रदान करें । नाना आपत्तियोंसे विमुक्ति नगण्य यज्ञोपवीतके
रूपमें धारण किन्ने हुए, संपन्न [] उदार, []
एकदन्त, उदार-सहस्र, गजसक्त, महाबलवान्, गर्वके
अध्यक्ष, गर-प्रदाता, भगवान् सुर्वर्षी कर्मण्ये तस्य,
उपद्रवज्ञ विनायक आपको महाशक्ति [] करें । इन्द्रजीने
समान आभावाले, शिरोधारी, प्रदीप्त विदूत करण करनेवाले,
नाथीसे विमुक्ति, [] कृष्ण करनेवाले तथा आत्मन
रूपवाले, मत्स्यके [] भगवान् शंकर [] विलो []
महाशक्ति प्रदान करें । नाना [] सुन्दर
बर्षोंको कारण करनेवाली, देवताओंकी कन्या, [] रसिकसे
नमस्कृत, स्वस्त सिद्धिधैर्यी प्रदानी, []
एकमात्र स्थान अगम्यात्त भगवती [] प्रदान

करें । विष्णु इक्ष्मरु कर्मवल्ली, धनुष-चक्र, सङ्ख्य तथा
पश्चिम अङ्गुलीसे [] हुई, सर्षा उपद्रवोत्थ []
करनेवाली, [] बाहुओंवाली, महामहिम-मर्दिनी भगवती
[] दुर्ग आपको शक्ति प्रदान करें । [] सुख,
अर्थलक्ष्मी, तीन नेत्रोंवाले, महावीर, सुर्वभक्त भूमिदि
आपको शिख कल्पन करें । विशाल कण्ठ तथा रुद्राक्ष-माला
[] किन्ने हुए, महाशक्ति उलकट पर्वतके नात करनेवाले,
त्र्यम्बकगर्भके सेवकरी, [] आराधनामें तत्पर
महायोगी कष्टोदर आपको शक्ति एवं कल्याण प्रदान करें ।
विष्णु अम्बरान-मातृकाई, अथ देव-मातृकाई, देवताओंका
पुत्रों मातृकाई जो संसारको बन्धन करने अस्वीकृत है और
सुर्वर्षीने तब रक्षी हैं, वे आपको शक्ति प्रदान करें । रौद्र
[] करनेवाले तथा रौद्र स्वाम्ये निवास करनेवाले वज्रगण,
अथ स्वस्त गन्धर्व, दिग्गजों तथा विदिराजोंने []
विजयपसे अस्वीकृत रहते हैं, वे सभी प्रसन्नचित होकर भी
हृत्त ही नहीं इस शक्ति (मैत्र) को प्रदण करें । ये आपको
विष्णु सिद्धि प्रदान करें [] आपकी बधाई रक्षा करें ।

अम्बरान्तरी दिग्बलकण्य देवताः ।

सुर्वर्षीण्य देवता उग्रदन्तय कर्षकीकृतः । शक्तिं कुर्वन् ये शिवे भातः सुसुखिनः ॥
ये सप्त देवताः त्रैलोक्ये चैतन्यमयीनि । आपने प्रदत्त कल्याणकीकृत ये ॥
विष्णु-पुत्राका कर्षकी दिग्बल्यु सम्पन्नः ।
जो वे श्रीकल्याः श्रीगुरुन् ये शक्तिः । सिद्धिं कुर्वन् ये शिवे भातः सन्तु सर्वतः ॥
देवतामी गन्त ये तु शक्तः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ।
दिग्बल्यीकृत श्रीकृत कल्याणकीकृतः । देवताः शक्तिं कुर्वन् ये शक्तिः स पुनः पुनः ॥
अत्रैव ये पुनः शक्तिं कुर्वन् ये शक्तिः । सुर्वर्षीकृत तस्य अङ्गुलीकृतः ॥
विष्णुकीकृत दिग्बल्यु अत्रैव कल्याणः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ॥
शक्तिं कुर्वन् ये शिवे प्रदत्तः शक्तिः स ॥
महाशक्तिः ये तु सप्त देवताः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ॥
देवताः शक्तिः ये तु शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ॥
दिग्बल्यीकृत श्रीकृत कल्याणकीकृतः । सुर्वर्षीकृत शिव पुर्वर्षीकृतः ॥
सः सुर्वर्षीकृत श्रीकृतः । शक्तिः । शक्तिं कुर्वन् ये शिवे स प्रदत्तः सुखिनः ॥
अपराधी पुत्री सप्त सुर्वर्षीकृत कल्याणः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ॥
शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ॥
तत्र देवताः श्रीकृत कल्याणकीकृतः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ॥
देवताः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ॥
सुर्वर्षीकृतः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ॥
अत्रैव शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ॥
तत्र शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः । शक्तिः शक्तिः ॥

प्राप्ति-विधानसे प्रत्यक्षपूर्वक करना चाहिये। दुर्भिक्ष, प्रणी उत्पत्तौमें तथा अन्धकृति आदिमें होमसमन्वित स्त्रोत्रसूक्तसे यन्त्रपूर्वक पूजन कर सुक्तसे प्रस्तावित हो भी, यधु, हिरल, चक्र एवं यन्त्रके साथ फलससे हवन एवं शान्ति करे और सत्यजन को बलि (नेत्रेण) प्रदान करे। ऐसा करनेसे देवतागण मनुष्यको कष्टमोक्ष कायमा करतों हैं एवं उनके लिये लक्ष्मीकी कृति करतें हैं। जो मनुष्य भगवान् दियाकरके इस प्राप्ति-अव्ययको पढ़ता सुनता है, वह राज्यें शत्रुपर विजयके हो सम्मानकी प्राप्ति कर लेकर अन्धकृत्य पीडन व्यतीत है। वह पुनः-पौरोमें शान्तिपूर्वक समस्त तेजस्वी एवं कर्षाधसूत्र जीवन-पावन करता है। धीर ! कर्षाधनके उद्देश्यसे इस (प्राप्तिव्यय) का कठ श्रम जाता है, वह वात-पित्त, वायुमन्त्र दोषोंसे पीडित नहीं होता एवं उसकी

न तो सर्विक टक्के कृत्य होती है और न अकारण्यं मृत्यु होती है। उसके जटिल विषय प्रभाव भी नहीं होता एवं जड़ता, व्यक्तत्व, मृत्यु भी नहीं होती। उत्पत्ति-मय नहीं रहता और न विच्छेदके द्वारा किंचि मय अविचार-कर्म स्वयं होता है। येन, यन्म, उत्पत्ति, व्यक्तित्वके सर्व आदि सभी इसके अवयवों प्राप्त हैं। सभी गन्तव्य तीर्थोक्त को विरोध करत है, उत्पत्ति कई गुण करत इस उत्पत्तिव्यवस्थाके अवयवों प्राप्त होता है। अन्य यज्ञोक्त एवं अन्य यज्ञोक्त करत भी उसे मिलता है। इसे सुन्दरतम भी सर्वतक व्यापारित नोरेण लेकर है। गौडव्यास, कुलस, ब्रह्मव्यासी, गुणव्यवस्था और उत्पत्तिगत, दीप्त, अर्थात्, विज्ञ तथा विद्यापी कर्तव्यके स्वयं प्राप्त करकेवल, दुष्ट, पापाचार्य, विपुलतम तथा पान्थकतक सभी इसके अवयवों विच्छेद पायकृत हो जाते हैं। यह उत्पत्ति उत्पत्ति उत्पत्ति परम पुरुषत्व है।

(अध्याय १३५—१४०)

विविध स्थिति-धर्मों ■■■ **संस्कारोक्त धर्माः**

राधा दत्तात्रीकाले जाड़ा—मन्त्र ! राधा प्रकटके जो लूत आदि धर्म है, उनके आनेकी प्रतीति कही हो आनन्ददायक है। मन्त्रपूर्वक आप देवता वन्दन करें।

सुमधुषी शैले—महाराज ! मायाका चक्रवर्ते अने
सार्थि अरुणासे जिन पाँच प्रकारके पयोधरे चारलका थ। ये
बर्षन भर रहा हूँ, माथ उन्हें स्पे :

भगवान् सूर्यजी कहते— गण्डवत् । स्मृतिप्रतिष्ठा धर्मका मूल सनातन वेद ही है। पूर्वमुक्ता ॥॥ स्वयं करण ही स्मृति है। स्मृत्यादि धर्म पाँच प्रकाशके होते हैं। ॥ कर्मोंका पालन करनेसे ॥ और मोक्षप्राप्ति होती है तथा इस स्वेच्छने सुख, यश और ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। महत्त्व वेद-धर्म है। दूसरा ॥ अश्रम-धर्म अर्थात् ब्राह्मण, गृहस्थ, ॥ और संन्यास। तीसरा है वर्णव्यवस्था-धर्म अर्थात् क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। चौथा है गुणधर्म और पाँचवाँ है नैमित्तिक धर्म—ये ही स्मृत्यादि पाँच प्रकाशके धर्म कहे गये हैं। धर्म और अश्रमव्यवस्था ॥ अपने कर्मव्यवस्था निर्वाह करते हुए कर्मोंसे सम्पन्न हो करन ही वर्णव्यवस्था और आश्रमधर्म कहलगा है। जिस वर्णव्यवस्था

गुणक ४४ है, यह गुणधर्म बढलता है। किसी
 गुणधर्म को धर्म कहा जाता है, यह धर्म
 है। यह धर्मधर्म धर्म धर्म, तथा गुणधर्म
 धर्म है।

विशेष और विशिष्ट-रूपसे [] दो प्रकारके [] हैं।
 स्मृतिर्वाच्य तत्त्वपरको है—दृष्ट-स्मृति, अदृष्ट-स्मृति,
 दृष्टदृष्ट-स्मृति, अनुवाद-स्मृति और अदृष्टदृष्ट-स्मृति। सभी
 स्मृतियोंका मूल वेद [] है। स्मृतिधर्मिक स्वयं-स्वानुग्रहावर्त,
 परमेश्वर, परमदेव, आर्वाचन्य तथा प्रसिद्ध आदि देश हैं।
 सरस्वती और दृष्टदृष्टी (कुम्भकोटके दक्षिण सीमावर्ती एक नदी)
 इन दो [] जो देश है वह वेद-निर्मित देश
 [] नामसे कहा जाता है। हिमाचल और विन्ध्यपर्वतके
 बीचके देशको जो कुम्भकोटके पूर्व और प्रयागके पश्चिममें स्थित
 है [] नामसे देश कहा जाता है। पूर्व-समुद्र तथा पश्चिम-समुद्र,
 हिमालय तथा विन्ध्यचल पर्वतके बीचके देशको आर्यावर्त
 कहा जाता है। जहाँ कृष्णसार भूग (कस्तूरी भूग)
 विद्यमान करते हैं और स्वयंभूतः निवास करते हैं, वह यक्ष्य
 देश है। इनके [] दूसरे अन्य देश म्लेच्छ-देश हैं जो

भी एकेदिष्ट श्राद्ध करना चाहिये। अन्नकरण तथा किसी पर्वपर जो श्राद्ध किया जाता है, उसे पर्वण-श्राद्ध कहते हैं। गौत्रोंके स्थिते किया जानेवाला श्राद्ध-कर्म गेह-श्राद्ध जाता है। पितरोंके तृप्तिके स्थिते, और सुखकी प्राप्ति-हेतु तथा विद्वानोंकी संतुष्टिके और भोजन कराया जाता है, वह पुत्रपण-श्राद्ध है। गर्भाधान, सीमन्तोन्नयन तथा पुंसवन-संस्कारोंके समय किया गया कर्माङ्ग-श्राद्ध है। माता आदिके दिन देवताके उद्देश्यसे भीके द्वारा किया गया हवनदि पार्व देविक श्राद्ध कहलाता है। शरीरकी वृद्धि, अश्वत्थिके निर्मिता गया औपचारिक श्राद्ध कहलाता है। सभी श्राद्धोंमें संहारसारिक श्राद्ध सबसे श्रेष्ठ है। इसे मृत स्मृतिकी विविधता करना चाहिये। जो व्यक्ति मातृकारिक श्राद्ध नहीं करता, उसकी पूजा न ही प्रहल करता है, न विष्णु, ब्रह्मा, रुद्र एवं अन्य देवतागण ही ग्रहण करते हैं। इसलिये प्रयत्नपूर्वक त्रैलोक्य मृत श्राद्ध श्राद्ध करना चाहिये। व्यक्ति माता-पिताका मातृक श्राद्ध नहीं करता, वह जोर सामिक नामक नरकमें प्राप्त करता है और अन्तमें सुकर-भेषिमें उत्पन्न होता है।

अरुणने पूछा—भगवन् ! मैं श्राद्ध श्राद्ध मुझको विधि, मास और पक्षको नहीं जानता, उस किस दिन श्राद्ध करना चाहिये ? जिससे वह भयकरभी न हो ?

भगवन्-शास्त्र की संक्षिप्त विधि

भगवान् आदिश्रवने कहा—अरुण ! रक्षिते श्राद्ध नहीं करना चाहिये। रक्षिते किया गया श्राद्ध एकही श्राद्ध कहलाता है। दोनों संध्याओंमें और सूर्यके अस्त होनेपर भी श्राद्ध निषिद्ध है।

अरुणने पूछा—भगवन् ! श्राद्ध किस प्रकार चाहिये और माता किन्हे स्मृत गया है ? नन्दीमुख-पितरोंका पूजन प्रसार करना चाहिये, इन्हें मुझे बतानेकी कृपा करे।

भगवान् आदिश्रवने कहा—कनकद्वैत ! मैं ब्रह्म-शास्त्र की विधि रक्षित है, उसे सुनिये।

भगवन्-शास्त्रमें पूर्वाह्न-कालमें अष्ट विद्वान् ब्राह्मणोंको

भगवान् आदिश्रवने कहा—पक्षिराज ! जो श्राद्ध-पितृके मृत्युके दिन, और पक्षको नहीं जानता, उस श्राद्ध-पितृके दिन सांख्यिक नामक श्राद्ध करना चाहिये। जो व्यक्ति मार्गशीर्ष और माघमें पितरोंके उद्देश्यसे विहित घोरमन्दिष्टाए घेरे पूजा-अर्चना है, और उचित प्रसाद होता है और उसके पितर भी संतुष्ट हो जाते हैं। फिर, गौ ब्राह्मण—ये मेरे श्राद्ध हैं। श्राद्धपूर्वक इनका पूजा करनी चाहिये।

वेद-विद्वान् और श्राद्ध प्राप्त किया श्राद्ध पितृकार्य और देव-पूजनदिमें नहीं लगाना चाहिये। वैश्वदेव कर्मों में और भगवान् आदिश्रवने पूजनमें हीन घोरवता ब्राह्मणों भी निम्न समझना चाहिये। जो वैश्वदेव कर्मों में श्राद्ध हो पितरों का श्रेष्ठ है वह मूर्ख नरकमें प्राप्त करता है, उसका अन्न-पक्क व्यर्थ है। शिव हो या अग्नि, सूर्य हो या विष्णु, वैश्वदेव कर्मों में सत्य आया हुआ व्यक्ति जाता होता है और वह अर्थात् स्वर्गमें मोक्षप्राप्त होता है। जो शिव निषिद्ध किया गया है श्राद्ध है उसे अतिथि कहते हैं। वैश्वदेव-कर्मों में सत्य जो न तो पहले कभी आया और न ही उसके पुनः अनेकों सम्भावना हो तो इस व्यक्तिमें अर्थात् जनना चाहिये। उसे स्वर्गात् विद्वान्के रूपमें ही समझना चाहिये।

(अध्याय १८३-१८४)

जो भी खाता है, उसे अन्नपूर्वक निर्दिष्ट करना चाहिये। इस प्रकार यज्ञाङ्गोंको उद्दिष्ट कर ॥ ॥ कर्त्तव्य पूजन ॥ चाहिये। नन्दीमुखको उद्दिष्ट कर ॥ उक्त यज्ञाङ्गोंको पूर्व पितरोंके रूपमें भोजन करना चाहिये। नन्दीमुख-आहुते ब्राह्मणोंको विधिवत् भोजन करकर उनकी ॥ करने चाहिये।

सगर्भो ! आहुते दीहिः अर्चय कर्त्तुं, कुतुष केन (एक

(अध्याय १८५)

सौरधर्मये शुद्धि-प्रकरण

भगवान् भावस्थे कदा—सगर्भ ! कदाकेसे नित्य पवित्र तथा मधुरभाषी ॥ ॥ उन्हें ॥ खनादिसे ॥ हो चन्दनादि सुगन्धित ॥ देवताओंका पूजन ॥ करना चाहिये। सूर्यको निचकोट्य गङ्गा देवता चाहिये और नम्र ॥ की नहीं ॥ चाहिये। मैथुनसे दूर रहना चाहिये। ॥ भूत तथा पिशाचक प्रतिष्ठा ॥ करना चाहिये। शक्तीक नियमोंके अनुसार ॥ करने चाहिये। शास्त्र-वर्गित कर्मानुष्ठानके ॥ भी ॥ नहीं ॥ चाहिये।

सगर्भपते ! अधश्च-पञ्चन सभी ॥ ॥ नियम ॥ हैं। शक्तीकी शुद्धि होनेपर ही कर्मेकरी ॥ ॥ है अन्यथा ॥ ॥ प्राप्तिमें संशय हो बना रहता है। अग्निसे दुष्ट, क्रियामें दुष्ट, कालमें दुष्ट, संसर्गमें दुष्ट, आश्रयसे ॥ तथा संहर्त्तव्य (सम्पत्तः निर्दिष्ट एवं अधश्च) पदार्थमें अधश्च दूषित इदम्के एवं कपटी भ्रातृभिः स्वकालमें परिवर्तन ॥ होता। लक्ष्मण, गान्ध, पञ्च, कुम्भमुक्त, वैष्णव (समेष्ट) तथा मूली (स्मल) आदि जात्य दूषित हैं। इनका ॥ नहीं करना चाहिये। जो वस्तु क्रियामें ॥ दूषित हो गयी हो अधवा प्रतिष्ठाके संसर्गसे दूषित हो गयी हो, ॥ ॥ करे। अधिक समयतक ॥ ॥ पदार्थ कालदूषित कहलगा है, ॥ ॥ होता है, पर टूटी तथा मधु आदि पदार्थ कालदूषित नहीं होते। सुरा, लक्ष्मण ॥ ॥ दिनमें अंतर म्पत्ती ॥ गायके दूधसे युक्त पदार्थ और कुतेह्मा स्वर्ग किये गये पदार्थ संसर्ग-दुष्ट बने जाते हैं। इन पदार्थोंका प्रतिष्ठा ॥ चाहिये। दुष्टसे ॥ विमलम् अर्चिसे स्पृष्ट पदार्थ आश्रय-दूषित ॥ जात है। जिस वस्तुके ॥ करने

कबे दिनका समय) और तिल—ये तीन पवित्र माने गये तथा तीन प्रसन्न-मोक्ष बने गये हैं—शुद्धि, उच्छेध और उच्छेध न ॥ एक ॥ धारण ॥ देव-पूजन और पितरोंके कर्म नहीं करने चाहिये। निम्न तारीय दत्त धारण किये पितर, देवता और मनुष्योंका पूजन, अर्चन ॥ भोजन ॥ सब ॥ ॥ होता है।

॥ ॥ पुण्य उत्पन्न हो जाती है, जैसे पुरीष (विद्या) के प्रति ॥ ॥ पुण्य उत्पन्न होती है—उसे ॥ नहीं करना चाहिये। ॥ संहर्त्तव्य दोषयुक्त पदार्थ कहा गया है। सौर, ॥ ॥ पञ्चन शक्तीक ॥ ॥ अनुसार ही ॥ ॥ चाहिये।

॥ ॥ दस दिन, ॥ ॥ दिन ॥ पञ्चदश दिन और एक दिनमें प्रेत-शुद्धि हो जाता है। सुतकाशीच तथा वरणाशीचमें दस दिनोंके भीतर किसी व्यक्तिके पड़ा भोजन नहीं करना चाहिये। दशग्राम एवं एकदशाहके भीतर जानेपर बारहवें दिन जान ॥ ॥ शुद्धि हो ॥ ॥ है। सप्तत्तर पूर्ण हो जानेपर ॥ ॥ हो शुद्धि हो जाती है। सपिण्डमें जन्म और मृत्यु होनेपर अशौच लगता है। दत्त आनेतकके बालककी मृत्यु हो जानेपर सप्तः शुद्धि हो जाती है। बृद्धकरणके पहले बालककी मृत्यु हो जानेपर एक दिन-रातकी अशुद्धि होती है तथा बृद्धकरणके बाद और पञ्चोपवीत लेनेके पहले मृत्यु होनेपर ॥ ॥ अशुद्धि होती है और इसके अनन्तर दशग्रामकी अशुद्धि होती है। गर्भ-स्राव हो जानेपर तीन शक्ति पञ्चत् जलसे स्नान करनेके ॥ ॥ शुद्धि होती है। ॥ ॥ (एवं सगोत्री) -बने मृत्यु होनेपर तीन अष्टोत्तरके बाद शुद्धि होती है। यदि केवल श्रव -पञ्च कलक ॥ ॥ तो स्नानपश्चात् शुद्धि हो जाती है।

द्रव्यको शुद्धि आगमें तपाने, मिट्टी और जलसे धोने तथा मल हटाने, प्रधानत्न करने, स्पर्श और प्रोक्षण करनेसे होती है। द्रव्य-शुद्धिके पश्चात् स्नान करनेसे शुद्धि होती है। अन्न-कपत्तव्य स्नान नित्य-स्नान है, प्रथममें ॥ ॥ करना कर्म्य-स्नान है तथा और शौचादिके पश्चात् जो स्नान किया जाता है वह वैभक्तिक स्नान है, इससे पापविकारों निवृत्ति होती है।

(अध्याय १८६)

ब्रह्माकी महिमा, सखोलक-मन्त्रका मन्त्रका तथा चौकी महिमा

असकने पुत्र—मगधन् अदिरुकेव ! मनुष्य किम
पुत्रकर्मका सम्पदन कर सार्ग जाते हैं ? कर्मका, तपेका,
साध्यायका, ध्यानका और ज्ञानका—इन [] कोने
सर्वोत्तम [] कौन [] ? इन [] फल है और इनको
कौन-सी [] प्राप्त होती है ? धर्म और अधर्मिक किन्तु ये
कहे गये हैं ? उनके साधन क्या हैं और उनसे कौन-सी मणि
होती है ? जल्दी पुरुषोंके पुनः पृथ्वीपर उदयेपर योगसे ज्ञेय
कर्मोंके कौन-कौनसे चिह्न सखोलक रहते हैं ? इस []
[] भवसागर तथा गर्भमें आगमन-करी दुःखसे [] मुक्ति
प्राप्त होती है ? इसे क्या मतलबसेकी पुनः करे ।

मगधान् सुखी खोलो—अरुण ! त्वर्ग []
(बोधा)के कर्मको देनेवाले तथा मन्त्रको समुद्रसे पान करने-
वाले, पापकारी एवं पुण्यकार [] सुखे । धर्मिक पूर्वमे तथा
मध्यमे और इसके अन्तमें ब्रह्म अवस्थित है । []
धर्म प्रतिष्ठित होता है, [] धर्म ब्रह्ममूलक है । वेद-मन्त्रोंके
अर्थ [] गूढतम है । उनमें प्रधान पुण्य करनेकर अधिष्ठित
है, अतः इनमें ब्रह्मके अन्तर्गत ही प्रथम स्थिति या मन्त्रक है ।
ये इस [] यक्षुसे [] देखे जाते । [] भी
भीति-भीतिके डगीको कह देनेपर तथा असंख्यक अर्थका
करनेपर भी धर्मिक सुखकाय वैदिक पापकायको नहीं प्राप्त कर
सकते । ब्रह्म परम सूक्ष्म धर्म है, ब्रह्म ब्रह्म है, ब्रह्म ज्ञान,
ब्रह्म तप, ब्रह्म ही त्वर्ग और बोधा है । यह सम्पूर्ण []
ब्रह्ममय ही है, अन्तर्गतमें सर्वस्य जीवन देनेका भी [] फल
नहीं होता । बिना ब्रह्मके बिना गया कर्म सफल [] होता ।
[] मन्त्रको ब्रह्म-सम्पन्न होना चाहिये* ।

हे शगजोह । अब और मन्त्रको किन्तुमें सुने । वेद
कल्याणमय मन्त्रक सखोलक नामसे विख्यात है । यह []
देवी एवं तीनों गुणोंसे परे एवं सर्वज्ञ है । यह सर्ववैदिकम् है ।
'ॐ' इस एककार मन्त्रमे [] मन्त्रक अधिष्ठित है । जैसे खोल

संसार-सागर अन्तर्गत है वैसे ही सखोलक भी अन्तर्गत और
[] खोलक है । जैसे व्याधियोंके लिये ओषधि
होती है वैसे ही यह संसार-सागरके लिये ओषधि है । मोक्ष
पानेवालोंके लिये मुक्तिका साधन और सभी अधोंका साधक
है । सखोलक मन्त्रक यह मेरा धर्म सदा उच्चारण एवं स्मरण
करने योग्य है । जिसके हृदयमें यह 'ॐ नमः सखोलकाय'
मन्त्र स्थित है, उसीसे सब कुछ पका है, सुना है और सब कुछ
अनुष्ठित [] है—ऐसा समझना चाहिये ।

धर्मिकोंने इस सखोलकको मारुतके नामसे [] है ।
उसके प्रति ब्रह्मपुत्र होनेपर पुण्य प्राप्त होता है और अन्तर्गतमें
कल्याण होता है । सुख-सम्पत्ती यक्षको कहनेवाले तुम्हारी
सुखिक सम्पन्न पुत्र करनी चाहिये । [] तुम भवसागरमें विपन्न
जलिया उद्धार कर देता है । सौभाग्यकी वीरल अलम्बे द्वारा
[] अन्तर्गतकी कहिले संगम मनुष्यको प्राप्त करता है, []
सम्पन्न तुम कौन होना ? जो धर्मको ज्ञानकी अवस्थामें
अन्तर्गत करते हैं, धर्म उनकी कौन पुत्रा नहीं करेगा । स्वयं
[] मन्त्रक (बोधा)की प्रतिके लिये देकाधिले सुखिक द्वारा
जो कर्म कहे गये हैं, वे अतिशय कल्याणकारी हैं । राग, द्वेष,
अहम्, क्रोध, काम, क्रूरता अनुसरण करनेवाले व्यात
[] हूँ जो कर्म मन्त्रक साधन होनेसे सुनिश्चित कहा जाता है ।
[] संसारके क्लेश-साधक मृदुल अलम्बवाले संस्कृत
कायसे [] तथा [] ? जिस कायके सुनेसे राग-द्वेष
अदिक ब्रह्म एवं पुण्य [] होता है, वह कठोर काय भी
अतिशय प्रोत्साहक है । स्मृति, महाभारत, वेद, महान्
प्राज्ञ [] धर्म-साधक न बन सके तो इनका कल्याणकाय
अर्थकी अन्तर्गत व्याप्ति करनेके लिये ही है । सहस्रों धर्मकी
अनु प्राप्त करनेपर भी शक्यक अन्त नहीं मिलता । [] सभी
[] छोड़कर [] तत्पन्न (परमात्म) [] ज्ञान कर
परमेश्वरके अनुकूल [] करना चाहिये । मनुष्योंके समर्थ

* ब्रह्मपूर्वः सप्त धर्मः ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः । ब्रह्मविद्यायाः धर्मः [] अधिष्ठितः ।

भूमिपरायणः सुखः । ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः । ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः । ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः ।

कायान्तरं भूमिपरायणः सुखः । ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः । ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः ।

[] धर्मः परः सुखः [] ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः । ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः ।

सर्वस्य [] धर्मः ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः । ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः ।

सर्वस्य [] धर्मः ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः । ब्रह्ममन्त्राध्यात्मिकः । (ब्राह्मण्य १८७।९—१३)

शरीरसे भी क्या स्वप्न है जो पारलौकिक पुण्य-परायने जीवन करनेमें असमर्थ है। जो सौंदर्यान्के माहात्म्यको उच्चारण करनेमें असमर्थ है, जो शक्तिस्मय और पवित्रता होने हुए भी मूर्ख है। इसलिये जो सौंदर्य-ज्ञानके सन्तानकी पवित्रतासे तनक खाता है, वही पवित्रता, समर्थ, और जिज्ञेन्द्रिय है। जो गुरुको सम्पूर्ण वृत्ति, धन और सुखों ऊपर देख कर भी अन्यथापूर्वक सौंदर्य-ज्ञानकी जिज्ञासा करता है अर्थात् करता हुए पूछता है तो उसे पद्मशर-मन्त्र उपदेश गुरुको नहीं देना चाहिये। जो भगवान् सूर्यके नक्षत्रपूर्वक विनम्र भावसे सुनता है और कहता है, वह उचित स्नानको प्राप्त करता है, अन्यथा उसके विजयीता नरकाकी पाता है।

जो भगवान् सूर्यके पद्मशर-मन्त्रसे विद्यापूर्वक मोदुन्-छायां सूर्यकी पूजा करता है वह मनुष्योंमें है। देवमुतेन्द्रा करेपर कीरसागरसे सभी मनुष्यका गौरव हुई—नया, सुमन, सुर्ध, सुजल सोभनावती। गौरव तेजसे सूर्यके जगल है। सम्पूर्ण मन्दारका करनेके लिये एवं देवताओंकी वृत्तिके लिये और मुझे स्नान करातेके लिये जगल हुई है। ये मेरा और तेरा स्थित है। गौओंके सभी अङ्ग पवित्र है। उनमें लगे रंग विहित है। गायके गोबर, मूत्र, गोरोचन, घृष, दही तथा घृत—ये छ पदार्थ परम पवित्र तथा सभी सिद्धिदायके देनेवाले है। सूर्यका परम विम बिलकवृक्ष गोमयसे ही उत्पन्न हुआ है, उस वृक्षपर कमलहस्ता लक्ष्मी विराजमान रहती है, अतः वह लीवुक कहा जाता है। गोमयसे फल उत्पन्न होता है और उससे कमल हुए है। गोरोचन परम मङ्गलमय, पवित्र और सभी कामनाओंको पूर्ण करनेवाला है। गोमूत्रसे सभी देवोंका

अक्षर-संक्षुप विद्वेषकर पावनसे लिये पोष्य एवं प्रियदर्शन सुगन्धित गुग्गुल उत्पन्न हुआ है। जगत्के सभी जीव कीरसे उत्पन्न हुए हैं। कामकाके सिद्धिके लिये सभी माहात्म्य वस्तु दाहसे उत्पन्न समझे। टेण्डवन अतिराय अमृत वृत्तसे उत्पन्न है, अतः घी, दूध, दाहसे भगवान् सूर्यको जान करना चाहिये। जनकर उज्ज गल और कदापसे स्नान करना चाहिये। फिर ईशतल जगल करताकर गोरोचनका लेपन एवं बिलकवृक्ष, कमल और नीलकण्ठसे पूजन करना चाहिये। तर्कदायक गुग्गुलसे भगवान् सूर्यको अर्घ्य प्रदान करे। दूध, दाही, मद्य, मधुके साथ उत्कट एवं विविध भक्ष्य पदार्थोंको निवेदन करे। इसके भगवान् पावनकी प्रदक्षिणा कर उसके करे।

जो दिनपति भगवान् भानुकी पद्म-पूजा करता वह इस लोकमें सभी कामनाओंको प्राप्तकर अपने कुलको इन्द्रोषी पीडितोंके जगल से जाता है। उनके वहाँ विजयित कर एवं उनके स्थानको प्राप्त करता है। भगवान् भस्करको पूजाने पर, घृत, घल, जल जो भी अर्पित होता है वह सब तथा सूर्य-स्नानकी गौरव भी सूर्यलोकको प्राप्त है। इससे कहेत नहीं है। देव, काल अक्षुण्ण प्रद्युम्नक मयत्रको दिव्य गण अल्प भी दान अक्षय है। हे : अर्घ्योन्मज्जमात्र सत्याको दिया अद्यापूर्वक दान सभी कामनाओंको पूर्ण करनेवाला है। जिसने अक्षुण्णी जलसे जान कर लिया और नीलकण्ठी मयसे मुक्त है, वह सभी पत्रोंमें उताय मयका मय है। जप, इन्द्रवदमय और संवम मनुष्यकी संस्कार-साधनसे पर उम्हरेवाले साधन हैं।

(अध्याय १८७)

एवं अतिथि-भाहृत्य-कर्मन, सौर-धर्ममें दानकी महत्ता और निर्णय पञ्च महापातक

साम्राज्याइन (भगवान् सूर्य) ने कहा—हे लोग ! जो प्राणी सूर्य, अग्नि, गुरु तथा महात्मको निवेदन लिये किन स्वयं जो कुछ भी मक्षण करता वह पण-मक्षण करता है।

गुरुय मनुष्योंके वृत्तिपर्यमे, पवित्रतासे, क्रोध और असत्य आदिके आचरणसे तथा पञ्चसुन-दोषसे पाप होते हैं। सूर्य, गुरु, अग्नि और अतिथि आदिके स्वरूप पञ्चमहायज्ञोंसे ये

१-योजन पयस्कय स्थान (पुला), अक्षर अर्द्ध, लक्षन (पक्षी अर्द्ध), मयकन अर्द्ध कुटने-पीसनेका (मिक्का, मिन्कट आदि), जल रक्तेय तथा शम्भू देनेका कर्म—इन्में मन्त्रको दो वृत्तोंमें रहती है। जल-गुरुयके लिये इन्में ही पञ्चमृत-दोष करता गया है।

और मुनियोंसे [] तबन पुनर्वसे कहे गये हैं। सूर्यमन्दिरसे भुक्त स्थानोंमें रहनेवालेको दिला कष्ट मोक्ष भी [] क्षेत्रके प्रधानसे अनन्त फलप्रद क्षेत्र है। सूर्याङ्गण, चन्द्रग्रहण, उदयपण, विषुव, व्यतीपात, संक्रान्ति—ये सब पुण्यकाल कहे गये हैं। इनमें दान देनेसे पुण्यको वृद्ध [] है। भक्तिभाव, परमश्रुति, धर्म, धर्मोपपन्न तथा श्रुतिवर्ति—ये [] श्रद्धाके [] हैं। श्रद्धापूर्वक विधानके साथ सुचरित्रको दिना [] एवं [] फलप्रद कहा [] है, [] पुण्यकी श्रद्धासे श्रद्धापूर्वक दान देने चाहिये। इनके विपरीत दिया गया [] भारवत्कण [] है। अर्थात् [] गुणवन्तको श्रद्धाके साथ थोड़ा भी [] क्या दान [] कष्टकाओका दूक और सभी [] करनेवाला होता है। मनीषियोंमें श्रद्धाको [] दान मान है। श्रद्धा [] दान, श्रद्धा ही परम तप तथा श्रद्धा ही सब और श्रद्धा [] उपवास है। अहिंसा, क्षमा, सत्य, महात्मा, श्रद्धा, [] धान, पक्ष, तप तथा ध्यान—ये दस [] सधन है।

पद्म-ह्री तथा [] अथवा [] गुरु, आत्मी, अज्ञात, विदेगमें गये हुए तथा प्रकृत पशुपत मन्त्रिकको श्रद्धा देनेवाला परमार्थ कदा [] है। ऐसे [] परित्याग कर देना चाहिये, किन्तु इसकी धर्म []

एवं पुनर्व अन्वयन नहीं करना चाहिये। उनका अन्वयन करना गुरुनिन्दके समान फलक माना गया है। बाह्यपक्षको करनेवाला, सूर्य-चान करनेवाला, सूर्य-चौर, गुरुको प्रत्याप्त दान करने-वाला एवं इनके साथ सम्पर्क रखनेवाला—ये पाँच महापतकी कहे गये हैं। जो शत्रु, द्वेष, भय एवं लोभसे महापतक अपमान [] है, वह महापतका माना गया है। जो [] करनेवालेको और शत्रुको मुक्तकर 'भैरे पासा [] नहीं है' ऐसा कहकर बिना कुछ दिये लौटा देता है, [] कष्टप्रदके [] है। देव, द्विज और गौके लिये पूर्वप्रदत भूमिक जो [] करता है, [] करता है। जो मूर्ख सौख्यनको [] उसका परित्याग कर देता है अर्थात् तदनुकूल व्यवहार नहीं करता, उसे सूर्य-चान करनेवालेके समान अनन्य चाहिये। [] परित्यागी, पात [] परित्यागी, कुकर्मके स्वामी, पित्रके [] सूर्य-पत्नीके अधिपको और पक्ष्यश्रेष्ठके [] करनेवाले, अपमन्य-सञ्जन करनेवाले तथा निरपराध [] नहीं होती। [] अनुवी अन्वयनसे अन्वयलेखन अधिपस्य प्राप्त होता है। अतः मोक्षप्राप्तिके भोग्यविधि [] परित्याग कर देना चाहिये। जो विरक्त है, शून्यचित्त है, वे सूर्यसम्बन्धी [] प्राप्त करी हैं। (अध्याय १८८-१८९)

पातक, उन्मत्तक, वधमार्ग एवं वधपतननका चर्चन

सप्तमशतिका धर्मज्ञान् सूर्यने कहा—अनन्त ! मनीषिक, अधिक तथा कथिक-वेदसे क्या अनेक प्रकारके होते हैं, जो नरक-प्राप्तिके कारण हैं, उन्हें [] सेवेमें रहना [] है—

गौश्रेष्ठके मार्गमें, वस्त्रों, नगरों और ग्रामों आग लगाना आदि सुपानके [] महापतक [] गये हैं। पुरुष, स्त्री, हाथी एवं घोड़ोंका [] करना [] केचरकुम्भोंके उल्टा फसलेको नष्ट करना, चन्दन, अमर, कम्पूर, कलशूरी, देवकी वज्र आदिकी चोरी करना और मलेहर (ध्वज) सलुवर अपहरण करना—ये सभी सुवर्णश्रेष्ठके [] करने गये हैं। [] अपहरण, पुन एवं [] तथा पवित्रीके प्रति दुराचरण, कुमारी कन्या और अन्तककी स्त्रीके साथ सहवास, सत्यार्थके साथ गमन—ये सभी गुरु-उन्मत्तक तपन (गुरुपत्नी-गमन)के समान महापतक माने गये हैं।

महापतको अर्थ देनेका [] देकर नहीं देनेवाले, सत्यपरीक्षी पक्षिक परित्याग करनेवाले, साधु, बन्धु एवं तपस्विषेष्ठका त्याग करनेवाले, गौ, भूमि, सुवर्णको प्रयत्नपूर्वक चुरानेवाले, वन्यजन्तुको [] करनेवाले, धन, धान्य, [] पशु [] चोरी करनेवाले [] अपूर्योक्षी पूजा करनेवाले—ये सभी [] हैं।

नरियोंकी रक्षा न करना, नरियोंको [] न देना, देवता, अग्नि, साधु, साध्वी, गौ तथा बाह्यपक्षी निन्दा [] पितर एवं देवताओंका उच्छेद, अपने कर्तव्य-कर्मका परित्याग, दुःशीलता, नविकता, पशुके [] राजःस्वल्पसे दुष्टकर, अधिप कोहन, घृष्ट [] आदि [] कहे गये हैं।

जो भी, महापत, सत्य-सम्पत्, तपस्वी और साधुओंके दुष्टक है, वे नरकवासी हैं। परित्रयसे तपसा करनेवालेका

छिद्रान्धेन करनेवाला, पर्यंत, गोशाला, अग्नि, जल, वृद्धोंकी छाया, उद्यान तथा देवचतुर्वर्त्ये कल-मूलका परित्यक्त करनेवाला, कर्म, अंधे तथा मंदसे उन्निष्ट पश्ये दोषोंके अन्धेनगमे ताम्र, पारुषिकपीक अनुगामी, मार्ग लेकनेवाला, दूसरेकी सीमाय अपहरण करनेवाला, [] करनेवाला, भूयोके प्रति अतिपाप निर्दयी, पशुओंके दान करनेवाला, दूसरेकी भुज बालोंके कम रंगकर सुकनेवाला, पीके करने अथवा उसे बार-बार बस देनेवाला, दुर्बलसे सहायता न करनेवाला, अतिजप मारसे [] और असमर्थ पशुको खेतनेवाला—ये [] गये हैं तथा नरकागामी होते हैं। जो धोषके विरुद्ध प्रहार भी मारनेके कारण किसीका [] चुपचा है, [] निहित ही [] जाना है। ऐसे पापियोंको मृत्युके उपरान्त [] शरीरकी प्रति होती है। यथार्थ अज्ञानसे पशुगत उसे फलनेकाले ले जाते हैं और वहाँ उसे बहुत दुःख देते हैं। अन्ध करनेवाले [] शाखा धर्मराज करते गये हैं। इस [] के पर-खीनानी हैं, सोरी करते हैं, किसीके गंध अन्धकपूर्ण व्यवहार करते हैं तो इस लोभकृत राक्ष उनके दण्ड देता है। पशु छिपकर पाप करनेवालोंको धर्मराज दण्ड देते हैं। अतः [] पापोंका आश्रित करना चाहिए। अनेक प्रकारके प्रकाश-प्रतिप्रकाशित होने पायाक नह हो गते हैं। अतिरिक्त, मनसे और वाणीसे किये गये पाप बिना भोगे अन्य किसी प्रकारसे कोई करनेमें भी नह हो सकते हैं। [] कर्त्तव्य रूप अथवा कर्म करता है, करता है या उसका अनुकरण करता है, वह अतम सुख [] है।

सहायसिलका भगवान् सुखी पुनः कथं—हे कामदेव ! पाप करनेवालोंको [] उनके विहित और संकल भोगना पड़ता है। गर्भस्थ, जायमान, कलक, कल, मध्यम, घृष्ट, स्त्री, पुरुष, नपुंसक सभी शरीरधारियोंके करनेवाले अपने किये गये गुण और अनुप करनेवाले भोगना पड़ता है। वहाँ सत्यवादी विप्रगुण आदि धर्मराजको जो भी गुण और अनुप कर्म बतलाते हैं, उन कर्मोंका कल [] करनेको अन्धत्व ही भोगना पड़ता है। जो सौम्य-हृदय, दया-समर्पित एवं नृपकर्म करनेवाले हैं, वे सौम्य पश्ये और जो पशुपुत्र नृप कर्म करनेवाले एवं पशुकरणसे [] हैं, वे पशु

उन्निष्ट-धर्मसे बह सहन करते हुए यमपुरीमें जाते हैं। कैवल्यपुरी सिवाये हजार बसती क्षेत्रमें है। गुण कर्म करनेवाले व्यक्तियोंको यह कर्मपुरी समीप ही प्रतीत होती है और सैद्यन्तसे जानेवाले पापियोंको [] दूर। यमपुरीका मार्ग अत्यन्त बन्दार है, वही बह निकले हैं और वहाँ कानू-हो-बालू है, वहाँ दलवारकी चारके समान है, कहीं नुमीसे पर्यंत है, वहाँ अन्धता बड़ी रूप है, वहाँ साध्या और वहाँ लोभकी बहने है। वही पुरी तथा पर्यंतसे गिराया जाता हुआ वह बड़े कर्त्तव्य प्रतीते पुल धर्मिं दुहित हो पात्र करता है। वहाँ उग्रदशक, वहाँ सैन्यरीते और वहाँ [] कानुपकर्म मार्गसे करना पड़ता है। वहाँ अन्धवराचका कर्मकाण्ड मार्गसे बिना किसी आश्रयके जाना पड़ता है। वहाँ जीमसे परिपक्व मार्गको, वहाँ राजाधिरसे परिपूर्ण मार्गसे, [] गत पर्यंतसे, [] मार्गसे और वहाँ [] गुजरना पड़ता है। इस मार्गमें [] सिंह, [] जाल, वहाँ कटुकेकाले चक्कर खीड़े, वहाँ चक्कर लेके, [] अजगर, वहाँ पदचर मक्षिकार, वहाँ विष-पशु [] मर्त्य, वहाँ विशाल करनेपत प्रमादी राजसमूह, वहाँ [] विष्णु, [] बड़े-बड़े भूगोलांत मण्डि, रीत [] कराने लकल लक महत् चक्कर व्याधिर्धाय उसे पीड़ित करती है, बड़े भोगता हुआ वही कर्त्तव्य यममार्गमें जाता है। उसपर कभी पक्षकर्मकी वृष्टि होती है, वहाँ विकली [] है तथा कभी कानुके कलत्रागामी वह उत्पन्नता जाता है और वहाँ भगवत्की वृष्टि होती है। ऐसे धर्मकर मार्गसे पक्षकर्म करनेवाले भूय-पक्षसे व्याकुल मूढ़ धर्मिकों कादुत करनेवालोंके और ले जाते हैं।

[] चप छोड़कर पुनः-कर्मका आश्रय करना चाहिए। पुनःसे देवत्व प्राप्त होता है और पापसे नरककी प्राप्ति [] है। जो छोड़े [] किये भी मनसे पापान् सुखी पुनः करता है, वह कभी भी यमपुरी नहीं जाय। जो इस पुनिकर्मका संधि प्रहारसे भगवान् भास्करकी पूजा करते हैं, [] पश्ये जैसे ही सिंह नहीं होते, जैसे कमलपत्र जलसे लिप्त नहीं होता। इसलिये सभी प्रकारसे भुवन-भस्करकी भक्तिपूर्वक आराधना करनी चाहिए।

साम्प्रती-कृताने दत्तयाचन-विधि-वर्णन

भगवान् सुखी साहू—विनाशनाशन अकार ! सौभाग्यवती होती है ।

अपमन्त्रण, विपुत्रकरण, [] तथा प्रह्वनकरत्वे सप्त
धगवान् सूर्यकी [] करनी चाहिये। सप्तमीसे तो [] तक
देवकी पूजा करनी चाहिये। सप्तमियाँ सप्त क्रमकी कष्टों वाली
हैं—अर्कसम्पुटिका-सप्तमी, मरिचि-सप्तमी, निम्ब-सप्तमी,
फलसप्तमी, अनेदन्-सप्तमी, [] तथा []
कर्मिक-सप्तमी। यद्यप्यस्य या मार्गमिषं यस्यां शुद्ध कर्माणि
सप्तमीको उपन्यास प्रत्यक्ष कथ्यन्ते चाहिये। अर्क अर्कान्तरे सिन्धे
मास और पक्षका नियम नहीं है। रात बीतनेसे जब अक्षय्य
शेष रहे, तब दत्तधावन करना चाहिये। यदुक्तो यदुक्तो
दत्तधावन करनेपर पुत्र-प्राप्ति, पैतृकसे दुःखकर, []
(वेद) और कुक्षी (मलकटिका) से [] रोगमुक्त,
विलम्बसे ऐश्वर्य-प्राप्ति, [] धन-संयम, कट्यको [],
अतिमुक्तसे अर्धप्राप्ति, अष्टकम्बक (अष्टक) से गुल्म
होती है। पीपलकी दानुवसे [] और [] प्रकम्बक []
[] लवण पक्वान्न अन्न [] है, प्रकम्बक संदेह नहीं।
शिखीकी दानुवसे विपल लक्ष्मी और शिखीके दानुवसे परम

अथर्ववेद विद्याके सुप्रसूयक वीरभवन
 संवत् २०७५ के विज्ञान विभाग मन्त्रालय शास्त्रके वृद्धम
 कार्यका कर करे—

■ **संसाधन-विज्ञान** **कारण** **च** **समाधाने** ।

ਸਿੱਖਿਅਕਾਂ ਦੇ ਸਮੇਂ ਸਿਰ ਪਾਏ ਜਾਣੇ ॥

(आगत २२३३३)

‘ममत्वं ! इत्थं हि जगन्ममत्वेनो प्रदानं ममदेवाले हि,
ममत्वं हि ममत्वं जगत्ता हि । हे दमस्तु ! मुने सिद्धि प्रप्त
ममत्वं ममत्वं ममत्वं हि ।’

इस समय तीन मंथन करके दग्धपायन करना चाहिए।

सूको दिन यवित होकर बाग्यन् सुर्वको प्रभाव कर यवेह
अन को । लवकान् अत्रिये हवन को । अकराह-कलमे मिनी,
गेवा और बलमे लानकर विधिपूर्वक नियमके साथ सृष्ट
बल धरन कर यवित हो, देवविदेव दिव्यभरती भविष्यलक
विधिमा बना और गवतीकर कर को । (अध्याय १३)

एवं नदियोंका पान करना ऐश्वर्य-प्रतिफल सुखक है। जो सदासे समुद्रको एवं नदीको साहसके ॥ ॥ करता है, ॥ पुत्र होता है। यदि ॥ पुत्रिणा भवन् ॥ देवता है, तो उसे अर्घ्यकी प्रति होती है। सुन्दर व्यक्तियों ॥ लभ ॥ है। मङ्गलकारी वस्तुओंसे ॥ होनेपर आशेय्य और भनकी प्रति होती है, इसमें कोई संदेह ॥ भगवान् ॥ महादेवमकरके दूरकर अपनी अन्तर ॥ प्रदान करते हैं, ॥ विधिपूर्वक पूजन ॥ पञ्च

विन सुखकर तन्ने प्रथम कर प्रदक्षिणा भवनी चाहिये । ॥ भगवान् भस्करकी पूजा करता है, ॥ उत्तम किन्नरोंसे वैद्यकर सूर्यलोचनको प्राप्त है। विधिपूर्वक पूजन करनेके ॥ उनके मष्टेष्ट करनेपर ॥ तथा हुक्म ॥ चाहिये ॥ दिन भगवान् सूर्यनारायणकी विधिपूर्वक पूजन ॥ ॥ ॥ अरु पीकर मत ॥ अक्षयस्नानी करते हैं, का सर्वत्र सुख देनेवाली है।

(अध्याय १९४—१९७)



सूर्यनारायणकी मूर्ध्नि, ॥ ॥ करनेका फल तथा आदित्य-पूजनकी विधियाँ

महाराज कालकीकने कहा—सुमन्तु पुनः। इस लोकमें ऐसे बर्षन देवता हैं किन्की पूजा-सुवि करनेके सभी मनुज सुप-पुण्य और सुलभ्य अनुभव करते हैं। सभी वर्गमें श्रेष्ठ कर्म कीज है ? आत्मेके विचारसे बर्षन पूजनीय है तथा ब्रह्म, विष्णु, रुद्र आदि देवता किन्की पूजा-अर्चना ॥ ॥ विना देवताको कहा जाता है ?

सुमन्तुजी बोले—उत्तम् ! मैं इस ॥ भगवान् वेदव्यास और महा ॥ उस संवादमें यह रहा है जो सभी पापोंका नाश ॥ तथा सुख प्रदान करनेवाला है, उसे आप सुनें।

एक समय गङ्गाके किनारे वेदव्यासजी बैठे ॥ वे । ॥ आश्रिते समान ज्ञानस्वप्नान्, तेजसे अदित्यके सम्पन्न, महात्मा नारायणतुल्य दिक्कापी दे रहे थे। भगवान् वेदव्यास महाभारतके कर्त्ता तथा वेदके अर्चकोंसे प्रभावित करनेवाले हैं और ॥ तथा राजर्षियोंके आचार्य हैं, कुटुम्बके ब्राह्मण हैं, तथा ॥ भी परामर्श्व हैं। इन वेदव्यासजीके पास कुङ्कुमेष्ट ॥ भीषकी आये और उन्हें प्रणम कर कहने लगे।

वीरविराटमहर्षि पूजन—हे महर्षिने पञ्चक ॥ आपने सम्पूर्ण वाङ्मयकी प्रवृत्ता मुझसे की है, किन्तु मुझे भगवान् भास्करके सम्बन्धमें संशय उत्पन्न हो गया है। सर्वप्रथम भगवान् आदित्यको नमस्कार करनेके पञ्चान् ही अन्य देवताओंको नमस्कार विद्या जाता है। इसमें क्या कारण है ? ये भगवान् भास्कर क्यों हैं ? पक्षोंसे उत्पन्न हुए हैं ? हे द्विजश्रेष्ठ ! इस लोकके कल्याणके लिये उस परम सत्यको कहिये । ॥ अपनेकी बड़ी ही अभिरक्षक है।

सं० ॥ पु० अ० ७—

महाराजकीने कहा—भीष । आप अनन्य ॥ विचारविधिवत् ॥ गये हैं, इसमें कोई संदेह नहीं है कि भगवान् ॥ पूजन-अर्चना सभी भिन्न और ब्राह्मण देवता करते हैं। सभी देवताओंमें अद्विष्ट भगवान् भास्करको ही कहा जाय है। वे मकर-मार्गके अन्तर्गतके दूरकर सब लोकों और दिग्गओंको प्रवर्तित करते हैं। ये सभी वर्गमें श्रेष्ठ धर्मस्वरूप हैं। ये पूज्याय हैं। ब्रह्मा, विष्णु, ॥ आदि सभी देवता ॥ भगवान् ॥ पूजा ॥ है। ॥ ही ब्रह्मण और कश्यपके पुत्र हैं। ॥ आदित्य हैं, इसलिये भी अद्विष्ट कहे जाते हैं। भगवान् आदित्यने ही सम्पूर्ण जगत्को उत्पन्न किया है। देवता, असुर, गन्धर्व, सर्प, राक्षस, पक्षी आदि तथा इन्द्रादि देवता, ब्रह्मा, रुद्र, कश्यप सभीके आदित्यकरा भगवान् आदित्य ही हैं। भगवान् आदित्य सभी देवताओंमें श्रेष्ठ ॥ पुत्रित है।

वीरविराटमहर्षि पूजन—पञ्चकमन्दन महर्षि ॥ ॥ भगवान् सूर्यनारायणका इतना अधिक प्रभाव है तो प्रातः, धन्य और स्वर्गधराल— इन तीनों कालोंमें एकशक्ति कैसे नहीं संवत् करते हैं तथा भगवान् आदित्य फिर कैसे चतुर्वर्त्त घूमते रहते हैं ? हे द्विजश्रेष्ठ ! यह उन्हें कैसे प्रसिद्ध करता है ?

महाराजकीने कहा—विनतय, सर्प, कृत्तिका, दानव आदि जो जेवसे उत्पन्न हो भगवान् सूर्यनारायणपर आश्रय करते हैं, भगवान् सूर्यनारायण उन्हें प्रवर्तित करते हैं। ॥ पुरुषार्थि फलस्वरूप भगवान् सूर्यन ही प्रभाव है। संसारमें ॥ पूजन भगवान् सूर्यन अन्धकार लेकर प्रवर्तित होता है। ब्रह्मण देवता सूर्यनष्टरमें स्थित रहते हैं। भगवान् सूर्यनारायणको नमस्कार

करनेवासे ही सभी देवताओंको समस्कर प्राप्त हो जाय है। तीनों कालोंमें संख्या करनेवाले ब्राह्मणजन भगवान् अर्द्धित्यको ही प्रणाम करते हैं। भगवान् भास्करके ॥ नौवे तहू भिन्ना ॥ हैं। अर्द्धतयी हस्त्य करनेवाला राहु विमानस्य अमृत-वटसे थोड़ा भी अमृत छलकनेपर उस अमृतको प्राप्त करनेके लोभको जब विमानके अग्नि संनिपट पहुँचता है तो ऐरावत प्रतीत होता है कि राहुने सूर्यनारायणको प्रसिद्ध कर दिया है, उसे ही प्रधान कहा जाता है। ॥ अर्द्धतयी भगवान्को ॥ नौवे तहू भिन्ना ॥ इन सप्तत्य, क्योंकि ये ही इस प्रकार जगत्का विनाश ॥ करवाते हैं। दिन, रात्रि, मूर्त अर्द्ध तथा अर्द्धित्य भगवान्को ही प्रणयने कर्तव्य ॥ हैं। दिन, रात्रि, धर्म, अर्द्ध जो ॥ ॥ इस संस्कारसे दृष्टिगोचर हो जा है, उन सबको भगवान् अर्द्धित्य ही कल्प करते हैं। ये ही इसका विनाश भी करते हैं। जो अर्द्धित्य भगवान् अर्द्धित्यकी भीतमूर्तक पूजा करता है, उस ॥ भगवान् अर्द्धित्यकी ही सेतुह होकर कर प्रदान ॥ तथा जल, धर्म, सिद्धि, और्वध, धन-काय, सुख, आय, सौभाग्य, आरोग्य, भय, बीम, पुत्र, पैसादि और मोक्ष और सब ॥ प्रदान करते हैं, इसमें संदेह नहीं है।

धीचने कहा—महात्मन् । अब आप मुझसे सौरचक्रिक कल्पना विधि सुनवाइए। कालक्रमेण भगवान् अर्द्धित्यकी पूजाकर मनुष्य सभी प्रयत्नके लोभको सुटकार प्राप्त कर लेता है।

आसानी बोले—जीव । मैं सौर-ज्ञानकी संक्षिप्त विधि बतला रहा हूँ, जो सभी प्रकारके पापोंको ॥ ॥ ॥ है। सर्वप्रथम पवित्र स्थानसे मृत्तिय प्रदान करे, तदनंतर उस मृत्तियको क्षीरमें लगाये। फिर जलको अभिमन्त्रित कर खान करे। पशु, सुखी आदिसे ध्वनि करते हुए सूर्यनारायणको ॥ चाहिये। भगवान् सूर्यके 'हूँ ह्रीं सः' इस मन्त्रकसे आवाहन करता चाहिये। फिर देवताओं ॥ प्रकियोग तर्पण और स्तुति करनी चाहिये। अगस्त्य लोक पितरोंका तर्पण करे। अनंतर संध्य-कन्दन करे। उसके बाद भगवान् भास्करको आज्ञासे जल देना चाहिये ॥ करनेके बाद मन्त्रकाल 'हूँ ॥ सः' ॥ ॥ ॥ 'सर्वलोकाय नमः' का जप ॥ चाहिये। जिस मन्त्रकालसे पूर्वमे ॥ है उस ॥ इदमदि नमः कर्तव्य चाहिये।

मन्त्रको इदमदि कर भगवान् सूर्यनारायणको आर्घ्य ॥ चाहिये। ॥ तत्कालमें गन्ध, स्थल चन्दन आदिसे सूर्य-मण्डल बनाकर उसमें करवीर (कनेर) आदिके पुष्प, कण्ठेटक, ॥, कुश, गिल, चावल आदि स्थापित कर कुटनेके पौड़ ॥ सप्त-पात्रको उठाकर सिरसे लगाये ॥ अर्द्धित्यक 'हूँ ह्रीं सः' इस मन्त्रकसे भगवान् सूर्यनारायणको आर्घ्य प्रदान करे। जो अर्द्धित्य इस विधिसे भगवान् अर्द्धित्यको आर्घ्य निवेदन करता है, ॥ सभी पापोंसे मुक्त हो जाय है। हजारों संकल्पितों, हजारों भयानकों, हजारों गैरुषों तथा पुष्कर एवं पुष्पको आदि ॥ जल करनेसे जो फल प्राप्त होता है, वह फल केवल सूर्यनारायणको आर्घ्य प्रदान करनेसे ही प्राप्त हो जाय है। सौर-दीक्षा-विधीन अर्द्धित्य ॥ कर भगवान् अर्द्धित्यको सत्सत्पर्यय आर्घ्य प्रदान करता है ॥ जो भी यही फल प्राप्त होता है, इसमें कोई ॥ नहीं है। फिर टीसको प्रदान कर जो अर्द्धित्यक आर्घ्य प्रदान करता है, वह ॥ इस संसार-सागरको पारकर भगवान् भास्करमें ॥ जाता है।

धीचने कहा—महात्मन् । आपने पाप-हरण करनेवाली ॥ को जल ॥, जल कृपाकर ॥ पूजा-विधि ॥, ॥ भगवान् सूर्यकी पूजा ॥ सही।

आसानी बोले—जीव । मैं अर्द्धित्य-पूजाकी विधि बत रहा हूँ, आप सुनें। अर्द्धित्यपूजाको चाहिये कि कान्छीसे चक्र होकर किसी शुद्ध स्थान स्थानमें ॥ पक्षककी पूजा करे। ॥ जेष्ठ सुन्दर अस्तनपर पूर्वाभिमुख बैठे। सूर्य-कणोंसे करन्धस एवं इदमदि-नमः करे। इस प्रकार अस्तमूर्द्धिकर कालकाल भगवान् सूर्यकी अपनेमें भावना करे। अपनेको भास्कर समझकर स्थण्डिलपर प्रभुकी स्थापना करके विधिवत् पूजा करे। दक्षिण-पार्श्वमें पुष्पकी टोकरी एवं वाम पार्श्वमें जलसे परिपूर्ण ॥ स्थापित करे। पूजाके लिये उपकल्पित सभी प्रथीभक्त अर्द्धित्यके जलसे स्नेहण ॥ पूजन करे, अनंतर मन्त्रवेत्ता एकवर्णित होकर सूर्यमन्त्रोंका जप करे।

धीचने कहा—महात्मन् । अब भगवान् सूर्यकी ॥ आर्घ्य-विधि बतलाये।

आसानी बोले—जीव । आप इस सम्बन्धमें सूर्यके

महा तथा विष्णुके मध्य हुए संवादके सुनें। एक बार महाजी मेरुपर्वतपर स्थित अपनी मनोबलसे मन्त्रसे सफलसे सूर्यपूर्वक बैठे हुए थे। उसी समय विष्णुभगवान्ने प्रणम कर उनसे कहा—'महान् ! आप भगवान् ।' कदापि और मण्डलस्थ भगवान् सूर्यस्तोत्रावली पूजा प्रवर्ध करनी चाहिये, इसे कहें।

महान्ने कहा—महान् ! अपने बहुत अम बल पूजे है, आप एकाग्रचित्त भगवान् पूजन-विधि सुनिये।

सर्वप्रथम शक्रोक्त शिवजी भूमिका विधिपर शोधनकर वेमार आदि मन्त्रोंसे हात आकरणोंसे मुक्त करीकामयविक्रम एक अहदलकमल बनाये। उसमें दीप्त आदि सूर्यकी शक्ति शक्तियोंको पूजादि-क्रमसे स्थानान्तरणकर स्थापित करे। जोकमें सर्वतोमुखी देवीकी स्थापना करे। दीप्त सूर्य, अंग, अंग, विष्णु, विष्णु, अमोघा, विष्णु और सर्वतोमुखी—ये ही सूर्यस्तोत्रावली है।

उपर भगवान् भगवान्ने करन चाहिये। 'अङ्गु पातयेद्वी' (यजु-७।४१) 'अग्निं कृते' (यजु-२२।१७) —ये मन्त्र अवाहन और उपस्थानके कहे गये हैं। 'आ कुर्वीत इक्ष्वा' (यजु-३३।४३) तथा 'इक्ष्वा' (यजु-२०।२४) इन मन्त्रोंसे भगवान् सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। 'अग्रे तारके' मन्त्रसे दीप्तदेवीकी पूजा करे। 'अक्षयवत् केतवी' (यजु-८।४०) 'सुधामदेवीकी, 'सामिर्विष्णुदेवी' (यजु-३३।३६) से अवाहि, 'प्रत्यक्षदेवाना' इस मन्त्रसे अवाहि, 'येन पातकं कृत्वा' (यजु-३३।३२) इस मन्त्रसे विष्णुदेवी, 'विष्णुदेवी' इस मन्त्रसे विमलदेवीकी पूजा करनी चाहिये। इसी प्रकारसे अमोघा, विष्णु तथा सर्वतोमुखी देवियोंकी भी पूजा करनी चाहिये। अनन्तर वैदिक मन्त्रोंसे साक्षात्-पूजन-पूर्वक मध्यमे भगवान् सूर्यकी पूजा करे। भगवान् सूर्य एक चक्रवाले रथपर बैठकर क्षेत्र कामलपर स्थित है। उनका रथ वर्ण है। वे सर्वाभरणभूषित तथा सभी लक्षणोंसे सम्पूर्ण और महत्तेजस्वी हैं। उनका चित्र वर्तुलकार है। वे अपने हाथोंमें और धनुष लिये हैं। ऐसे उनके स्वरूपका ध्यानकर नित्य श्रद्धा-चित्तपूर्वक उनकी पूजा करनी चाहिये।

भगवान् विष्णुने कहा—हे सूर्योत्त ! मण्डलस्थ भगवान् मन्त्रोंकी प्रतिस्पर्धामें प्रकटसे पूजा की जाए, उसे आप कदाकालकी कृपा करें।

महान्ने बोले—हे सुत ! आप एकाग्रचित्त-मनसे शक्ति-पूजन-विधिको सुनिये। 'इमे त्वे' (यजु-१।१) मन्त्रसे भगवान् सूर्यकी शिर-प्रदेशक पूजन करना चाहिये। 'अ-१।१।१' इस मन्त्रसे भगवान् सूर्यकी हाथकी पूजा करनी चाहिये। 'अ-१।१।१' (यजु-६।१६।१०) इस मन्त्रसे सूर्यभगवान्के दोनों कानोंकी पूजा करनी चाहिये। 'आ शिव' (यजु-८।४२) इस मन्त्रसे पुनःपुनः शिवकी पूजा चाहिये। 'योगे योगे' (यजु-११।१४) मन्त्रसे पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये। 'ससृष्टं कृत्वा' (यजु-६।२१) तथा 'इमे वे त्वे' (यजु-१०।७५।५) तथा 'ससृष्टोद्गाः' (यजु-७।४९।१) इन मन्त्रोंसे शिवकी पूजा लगाये। 'अ-१।१।१' (यजु-१२।११२) इस मन्त्रसे दुग्ध-आम, 'दधिविष्णुदेवी' (यजु-२३।३२) इस मन्त्रसे दधिविष्णु, 'देवीदेवी कृत्वा' (यजु-२२।१) इस मन्त्रसे कृत-आम तथा 'वा ओषधीः' (यजु-१२।७५) मन्त्रागत ओषधि-दान करायें। इसके बाद 'दधिवि' (यजु-२३।३४) इस मन्त्रसे भगवान्का उद्धारण करे। फिर 'वा मन्त्रे' (यजु-१६।१६) इस मन्त्रसे मुनः-दान करायें। 'विष्णुदे रथ' (यजु-५।२१) इस मन्त्रसे तथा तथा इससे ज्ञान करायें। 'अर्चं धर्माः' (यजु-१८।५०) इस मन्त्रसे अष्ट देव चाहिये। 'इमे विष्णुर्विष्णुदेवी' (यजु-५।१५) इस मन्त्रसे अर्घ्य प्रदान करन चाहिये। 'देवीदेवी' (यजु-२।२१) इस मन्त्रसे यज्ञोपवीत और 'कृत्वा' (यजु-२६।२३) मन्त्रसे मन्त्र-उपकरण आदि भगवान् सूर्यको चढ़ाना चाहिये। इसके पुनःपुनः करायें। 'सूर्यी सूर्य' (यजु-१।८) इस मन्त्रसे गुणुल्लङ्घित रूप दिक्कन चाहिये। 'सामिन्ने' (यजु-२९।१) मन्त्रसे ऐचना लगाये। 'दीर्घासुत' (यजु-१२।१००) इस मन्त्रसे ज्ञान (आरुता) लगाये। 'ससृष्टोद्गा' (यजु-३१।१) इस मन्त्रसे भगवान् सूर्यकी पूजा करन चाहिये। 'संवाचक' इस मन्त्रसे दोनों देवी और 'विष्णुदेवी' (यजु-१७।१९) इस मन्त्रसे

भगवन् सूर्यके सम्पूर्ण शरीरका स्पर्श करना चाहिये। 'श्रीः' 'हृदयैः' (यजु- ३१।२२) इस मन्त्रसे करता

हृत् विधिपूर्वक चमकान् सूर्यावकणका शब्दा-पठितपूर्वक पुनः-अर्चन करना चाहिये। (अथर्व १९८—२०२)

भगवान् भास्करके ज्योम-पूजनकी तथा अग्निहोत्र-माहात्म्य

विष्णु भगवान् पूजा—हे सुरेश्वर मनुजन् ! अब आप भगवान् अदित्यके ज्योम-पूजनकी विधि बतलावेंगे। अष्ट-भुजयुक्त ज्योमस्वरूप भगवान् प्रकर करनी चाहिये।

ब्रह्माग्नीने ब्रह्म—महाब्रह्म ! सुरा, चाँद, तारा, लोक आदि अष्ट पानुओंसे अष्ट भुजयुक्त ज्योम उसकी पूजा चाहिये। सर्वप्रथम उसके मध्यमें भगवान् भास्करकी पूजा करनी चाहिये। 'वज्रिहोम' इस मन्त्रसे अनेक प्रकारके पुनोन्ने करना चाहिये। 'सर्वलोकपालः' (यजु- २०।५०) 'शरीरतामसः' (यजु- १९।४९) वैदिक मन्त्रोंसे भुजोंकी तथा 'ज्योमस्तु सर्वलोके' (यजु- १३।५) इस मन्त्रसे ज्योमपीठकी करनी चाहिये। जो ब्रह्माग्नीने सद्य सद्य पार्ष्ण्ये हृत् करनेकाले ज्योम-पीठका भगवान् सूर्यके नयनका अर्चन करना पुनः करता है, सभी कर्मकारों पूर्ण हो जाता है इससे ब्रह्म ब्रह्म है।

भगवान् भास्करकी पूजा करके गुल्फों सुन्दर वस्त्र, मूला, सुवर्णकी अंगूठी, गंध, पुष्प, अनेक प्रकारके भक्ष्य पदार्थ निवेदित करने चाहिये। जो व्यक्ति इस विधिसे उपवास रखकर भगवान् सूर्यकी पूजा-अर्चना करता है, वह बहुत पुण्यका, बहुत धनवान् और कीर्तिमान् हो जाता है। भगवान् सूर्यके उत्पत्ति तथा दक्षिणायन होनेपर उपवास रखकर जो व्यक्ति उनकी पूजा करता है, उसे अष्टमेघ-पञ्च करनेका फल, विद्या, कीर्ति और बहुतसे पुत्रोंकी प्राप्ति होती है। चन्द्रबिम्ब और सूर्यग्रहणके अर्थात् उपवास रखकर भगवान् पूजा-अर्चना आदि करता है, ब्रह्मलोकमें प्रवेश होता है।

इसी प्रकार भगवान् भास्करके अग्निहोत्र

आदि विधि और वैदिक मन्त्रोंसे विविध उपवासेद्वारा उसकी पूजा करे। पूजनके अनन्तर ऋष्येदको पाँच ऋषयोंसे भगवान् अदित्यकी प्रार्थना करे। इसके बाद भास्करको अथर्व निवेदित करे। अनन्तर भगवान् सूर्यकी टीका, सुभक्त, जम्ब, घण्टा, विभूति, विमल, अमोघा, विद्युत् तथा सर्वलोकात्मके रूपकाले नौ दिव्य शक्तियोंका पूजन करे।

इस विधिसे भगवान् सूर्यकी करता है, वह इस लोक में सदा मनःकामनाओंको पूर्ण कर पाता है। पुत्र प्राप्तिकेलिये पूज तथा वन प्राप्तिकेलिये धन प्राप्त हो जाता है। कर्मकारोंके कर्म और वेदार्थोंके वेद प्राप्त हो जाता है। विष्णुमन्त्रसे भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, उसे जो चाहता है। इत्यादि ब्रह्माग्नीने हो गये।

भगवान् पुनः ब्रह्म—हे श्रीमान् ! अब आप ध्यान करने लक्षणका तथा भगवान् अदित्यके माहात्म्यका अवलोकन करें। भगवान् सूर्यका वर्ण अश्वत्थामुक्त होता है। वे पर्वतोंकी छेद भित्त हैं। सभी लक्षणोंसे सम्पन्न हैं। सभी अस्त्रयुक्तोंसे विभूषित हैं। उनके एक मुख हैं, दो पुत्र हैं। एक वस्त्र धारण करते हुए वे ग्रहोंके मध्यमें स्थित हैं। व्यक्ति तीनों समय एकग्रचित्त होकर उनके इस रूपका ध्यान करता है, शीघ्र इस लोकमें मनःशान्ति प्राप्त कर लेता है और सभी प्राणीसे कृपण तेजस्वी तथा वरदान् हो जाता है। छेद करके वज्रपा, एक वर्षिके पंगल, एक तथा इक्ष्वा-विहित वर्षिके बुध, पाँच वर्षिके बृहस्पति, अष्ट वर्षिके शक्र, एक वर्षिके मङ्गल, अज्ञानके सम्पन्न कृष्ण वर्षिके शनि, लज्जामयके सम्पन्न नील वर्षिके शुक और केतु बड़े गये हैं। इन सबके साथ ग्रहोंके अधिपति भगवान्

१-

पूजनका विधि बतलावेंगे।

प्राचीन काल में विष्णुदेव ने ब्रह्मदेव को पूजा की। ब्रह्मदेव ने विष्णुदेव को पूजा की। विष्णुदेव ने शिवदेव को पूजा की। शिवदेव ने भगवान् सूर्यको पूजा की। भगवान् सूर्यको पूजा करने से सब काम सफल हो जाते हैं। भगवान् सूर्यको पूजा करने से सब काम सफल हो जाते हैं। भगवान् सूर्यको पूजा करने से सब काम सफल हो जाते हैं।

सूर्यनारायणका जो व्यक्ति भजन एवं पूजन करता है, उसे दक्षिण की महासिद्धि प्राप्त हो जाती है, सभी देवता प्रसन्न हो जाते हैं तथा भगवदेवत्वकी प्राप्ति हो जाती है।

सूर्यनारायणके समान कोई देवता नहीं और न ही उनके समान कोई गति देनेवाला है। सूर्यके समान न तो कर्म हैं और न । सूर्यके समान न कोई धर्म है और न उनके समान कोई धन। सूर्यके अतिरिक्त कोई कर्म है और न कोई शुभचिन्तक ही है। सूर्यके समान कोई माला है और न तो कोई गुरु भी है। सूर्यके समान न तो कोई है और न उनके समान कोई पवित्र भी है। संसारे, देवताओं तथा पितरोंमें एक भगवान् सूर्य । कदापि, उनका ही लक्षण, अर्चन पूजन करनेसे परम सौख्यी प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणकी आराधना करता है, वह इस भवसागरको पार करता है। फलस्वरूप सूर्यके समान हो जानेपर राजा, बोर, ब्राह्म, सर्व आदि चीज़ा नहीं देते । राजाता और सभी दुःखोंमें भी निम्नलिखित है।

राज्यकारके दिन श्राद्ध-भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यनारायणकी पूजाकर । प्राप्त करनेवाला । प्राप्त करता है।



सप्त-सप्तमी • सप्त-सप्तमी-सप्तमी-सप्तमी •

कलानीकाने कहा—मैंने। भगवान् । प्रिय जिन अर्कसामुद्रिका आदि सब सप्तमी-सप्तमी करने पूर्वमें चर्चा की है, उनके कलानीकाने कृत करने।

सुप्रसन्नजी बोले—महाशय ! मैं सप्त सप्तमीके कर्त्तव्य कर रहा हूँ, उन्हें सुनिये। पहली सप्तमी अर्कसामुद्रिका है। दूसरी परिचयसप्तमी, तीसरी फलसप्तमी पाँचवीं अनोदनासप्तमी, छठी विजयसप्तमी तथा सप्तमी कर्त्तव्य नामकी सप्तमी है। इनकी संज्ञा विधि इस प्रकार है—

उत्तरायण या दक्षिणायनमें, श्राद्ध पक्षमें, सूर्यकारके । ग्रहणमें, ऐतिहासिकी नक्षत्रमें—इन सप्तमी-सप्तमीके प्रारण करना चाहिये। सतीके विवेचनमें, पवित्रता-सम्पन्न और मद्यपारो होकर सूर्यको अर्चनार्थ रत रत्ना चाहिये । जप-होमदिने । रहना चाहिये। सप्तमीके चाहिये कि पञ्चमीके दिन एकभुक्त रहकर षष्ठीके दिन विवेचनमें रहे । निन्दा पदार्थोंका भक्षण न करे। अर्क-सप्तमीके फलमें सप्तमी,

भगवान् सूर्यनारायणके भक्तिपूर्वक रूपमें जो संवत्सरमें विधिपूर्वक श्राद्ध करता है, वह सूर्यनारायणको प्राप्त होता है। जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक भक्तिपूर्वक रूपमें उपवास रहकर षष्ठी या सप्तमीके दिन विधिपूर्वक श्राद्ध करता है, वह सभी दोषोंमें निम्नलिखित । सूर्यनारायणके । होता है। जो सप्तमीके दिन । अथवा ग्रहणके दिन भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यनारायणकी पूजा करता है, उसकी सभी मनःकामनाएँ पूर्ण हो । है। ग्रहणके दिन भगवान् सूर्यनारायणकी पूजा करने उन्हें । है। भगवान् सूर्यनारायण परमदेव हैं और सभी देवताओंमें पूज्य हैं। उनके पूजा । व्यक्ति इच्छित फलको प्राप्त कर लेता है। धन वाञ्छितकारणों धन, पुत्र वाञ्छितकारणों पुत्र तथा मोक्षार्थोंको मोक्ष प्राप्त हो जाता है और । अमर हो जाता है।

सुप्रसन्नजीने कहा—एक ! भगवान् ऐसा महत्कर केदारनाथकी अपने स्थानको चले गये और भगवान् भी श्राद्ध-भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यनारायणकी विधि-विधानसे पूजा की। राम ! अब भी भगवान् भक्तिपूर्वक पूजा करें, इससे अपने । स्थान प्राप्त होगा। (अष्टमस्कंध २०३—२०७)

सूर्यनारायणकी पूजा । सप्तमीके तीसरी सप्तमी कर्त्तव्य करे। फलसप्तमीके फलमें सप्तमी करण चाहिये। अनोदना- । दिन प्राप्त । न करके उपवास करे। विजय-सप्तमीके । जप भक्षण कर उपवास करे। कर्त्तव्य सप्तमीके । कर्त्तव्य भोजनकर पञ्चविधि सम्पन्न । चाहिये। जो यन्त्र भक्तिपूर्वक इन सप्तमी-सप्तमीके करता है, । सूर्यनारायणको प्राप्त । होता है।

अर्कसामुद्रिका-सप्तमीके । भक्तिपूर्वक अथवा सम्पत्ति की । है। परिचय-सप्तमीके अनुष्ठानसे प्रिय पुत्रसिद्धि साथ बना रहता है। निम्नसप्तमीके फलमें सभी रोग नष्ट हो जाते । इसमें कोई संशय नहीं है और फल-सप्तमी-सप्तमी करनेसे कती अनेक पुत्र-पौत्रसिद्धि प्राप्त हो । है। अनोदना-सप्तमीके फलमें धन-धान्य, पशु, सुवर्ण, आरोग्य तथा सुख सदा सुख्य रहते हैं। विजय-सप्तमीका व्रत करनेसे शत्रुगण नष्ट हो जाते हैं। कर्त्तव्य-सप्तमीका विधिपूर्वक अनुष्ठान करनेसे पूजकों

करनेवाला पुत्र, अर्थात् कर्मका करनेवाला अर्थात् विद्या-प्राप्तिके कर्मका करनेवाला विद्या और राजकीय कर्मका करनेवाला राज्य प्राप्त करता है। पुरुष हो या स्त्री ॥ यज्ञको विधिपूर्वक सम्पन्न कर परमगतिको प्राप्त ॥ लेते हैं। उनके लिये तीनों लोकमें ॥ भी दुर्लभ नहीं है। उनके कुलमें न कोई अंधा होता है, न कुली, न नपुंसक और ॥ कोई विकलवृत्त तथा ॥ निर्धन। लोभवश, क्रमादवश या अज्ञानवश यदि मत्त-भङ्ग हो ॥ ॥ दिनका भोजन न करे और मुक्त न ॥ ॥ करे। पुनः उनके निम्नोक्तें प्रत्यक्ष करे।

सुधनुजीने कहा—एजन्! वैश्वदेव ॥ यज्ञोक्तीं भुङ्क्तु सप्तमिषोमं गोमयं, यज्ज्वरं, सुके पानं, दुधं अथवा भिक्षां भक्षणा कर ॥ एकभुक्त रात्रय उपवास करन

चाहिये। भगवान् सूर्यको पूजा कराल-पूज्य, ॥ प्रकारके कष, कन्दन, गुग्गुलु वृक्ष आदि ॥ उपचारोंसे करनी चाहिये तथा इन्हीं उपचारोंसे शिव ॥ भी पूजा कर उन्हें ॥ देकर संतुष्ट करना चाहिये। इससे ज़मीको ॥ उचितकालसे यज्ञोक्त फल प्राप्त होता है और यह सूर्यरोपणमें भूमिष्ठ होता है। वैश्वदेव कह प्रतीतिमें पूजित होनेवाले ॥ सूर्यके कारण ॥ इस प्रकार है—पंचमे विष्णु, वैराग्यमें अर्च्य, ऋद्धिमें विराट्कन्, आकाशमें दिवाकर, वायव्यमें पर्यन्त, भद्रपदमें वरुण, अश्विनीमें धार्तरथ, कार्तिकमें भार्गव, मार्गशीर्षमें मित्र, वैष्वमे पूषा, माघमें भग तथा फाल्गुनीमें ॥

(अध्याय २०८-२०९)

अर्कसम्पुटिका-सप्तपीडित-विधि, सप्तवी-अत-माहृत्ययमें श्रीभूमिका

सुधनुजी बोले—एजन्! फाल्गुन वारके शुक्ल पक्षकी सप्तमीको अर्कसप्तमी कहते हैं। इसमें पृथ्वीको उपवास ॥ जान करके गन्ध, पुष्प, गुग्गुलु, अर्क-पुष्प, लेप करवीर ऐसे चन्दमादिसे ॥ दिवाकरकी ॥ चाहिये। रविकी प्रमदात्मके लिये वैराग्यमें गुण्डक ॥ करें। इस प्रकार दिनमें भानुकी पूजा करके कार्य निरवरोध होकर उनके गन्धका रूप करें।

हस्तापीडयै पूजा—पूने। भगवान् सूर्यका धिय मन्त्र ध्येन-सा है? उसे ॥ और धूप-दीपका भी निवेदन करे जिससे उस पञ्चमय रूप करता हुआ मैं दिवाकरकी ॥ बन सकूँ।

सुधनुजीने कहा—हे भगवन् ! मैं इस विधिकमें संक्षेपसे कह रहा हूँ। सतीको चाहिये कि एकाग्रचित्त होकर वहनर-मन्त्रका जप, श्रेय तथा पूजा आदि सभी कार्य सम्पादित करे। सर्वप्रथम यथाशक्ति खगोल-मन्त्रका ॥ करना चाहिये। सौरी गायत्री-मन्त्र इस प्रकार है—'ॐ ॥ विद्महे स्यवरायै नमः'। गतः सूर्यः प्रचोदयान्।' इसे भगवान् सूर्यन स्वयं कथ्य है। यह सौरी गायत्री-मन्त्र परम ॥ है। इसका अष्टापूर्वक एक बार जप करनेसे हो पानव पवित्र हो जाता है, इसमें संदेह नहीं। सप्तमीके दिन ॥ एकाग्रचित्त हो इस ॥ जप को

॥ भीतपूर्वक वाचनकी ॥ करे। एजन्! यथाशक्ति अष्टापूर्वक ॥ अतःप्राप्त भोजन कराये। ॥ केजुली न करे। ॥ सूर्यके चित्त भद्रा-मन्त्रा ॥, उनके भोजन नहीं ॥ चाहिये। प्रालम्बन, वेग, अमृष, गुद्धमें शर्मे पूरा, दुध तथा दहीका भोजन करना चाहिये। इससे भास्कर भूत होते हैं। भोजनके पार्थ पदार्थ इस प्रकार हैं—कुलधी, मसूर, सेम मक्क भट्ठी। उदर अति, कड़वा ॥ दुर्लभमुक्त पदार्थ भी ॥ करने चाहिये।

अर्कसप्तमी 'ॐ वाचोदेवाय नमः' से पूजा कर अर्कसप्तमीको प्रत्यक्ष करें। फिर अन्नकर अर्क-पुष्पसे रविकी पूजा करके ॥ अन्नका भोजन कराये और 'अर्को ये प्रीयताम्' मन्त्रिक मन्त्रपर प्रमथ हो, ऐसा कहे। तदनन्तर देवताके सामुल ॥ ॥ ओङ्कारसे स्पर्श किये किन्तु निम्नलिखित पञ्चसे अर्कसम्पुटकी प्रार्थना करते हुए जलके साथ पृथ्वीभूमि होकर अर्कपुट निगल जाय।

ॐ अर्कसम्पुट पद्मे ते सुप्रा मेधस्तु मे सदा।

मन्त्रवि सुप्त नरे वै प्रसन्नम् विमले भव ॥

(भाष्य २१०।७३)

इस पञ्चम ॥ करते हुए जो अर्कका ध्यान ॥ है तथा अर्कसम्पुटका ॥ है, यह श्रेष्ठ रविको प्राप्त होता है।

दातसे स्पष्ट न किये जानेके कारण अर्कसमुद् अर्कसमुद्
कहलया है। जो इस विधिसे कर्मकर सुवर्णरूपका
प्रसन्नताके ॥ अर्कसुवर्णक सप्तमोऽध्यायः कहला है, ॥
मनुष्यका धन ॥ पौष्टिक अन्न तथा अन्न हो जाता है।
हे राजन् ! इस अन्नके अनुष्ठानसे स्वर्णका करनेका ॥
कौटुम्भिक कुश्रोगसे मुक्त हो गये तथा निर्दिष्ट प्राप्त की। स्वर्ण ही
कृद्गन्धक, ॥ अन्नक, ॥ अन्नक, ॥ तथा कृद्गन्धक
साम्भ—इन ॥ भी भगवन् सुवर्णकी भूषण करने और इस
अन्नके अनुष्ठानसे उनकी ॥ प्राप्त कर ली। यह
अर्क-सप्तमोऽध्यायः, ॥ पुष्पक तथा अन्य है।
अपने कल्याणके लिये इसका विधिपूर्वक अनुष्ठान करना
चाहिये।

सप्तमोऽध्यायः सुवर्ण—मुने ! स्वर्ण अर्कसे कर्णान्
सुवर्णकी पूजा करके जिस प्रकार निर्दिष्ट प्राप्त की, उसे तो मैं
बहुधा सुना है, किन्तु ॥ कौटुम्भिके किस ॥
आराधना कर निर्दिष्ट प्राप्त ॥ और वे कैसे कुश्रोगसे
मुक्त हुए, इसका मुझे ज्ञान नहीं है। वे कौटुम्भिक ॥ वे,
उन्हें कैसे कुछ हुआ ? हे हिजवेड ! किस प्रकार उन्होंने
देवादिदेव विचारकरकी आराधना ॥ ? इन ॥
संक्षेपसे सुनाये।

सुवर्णसुवर्णके कर्णान्—राजन् ! अपने बहुत ॥
विज्ञप्ता की है। इस विधिका आप भक्षण को। प्राचीन
कालमें हिरण्यनाभ आपके एक विद्वान् आचार्य थे। मैं अपने
पुत्रके साथ महाप्राज्ञ अन्नके आश्रमपर गये। वहाँ अनेक
आचार्यके साथ उनका शिष्यार्थ हुआ : शिष्यवर्ग कौटुम्भिक
एक आचार्यका वध हो गया। पुत्रके द्वारा शिष्यके मरण गया
देखकर भिलावे कौटुम्भिक परित्याग कर दिया। सबान् ॥
सुवर्णसुवर्णकी भी उनका सहितकर कर दिया : शिष्य और दुःखसे
दुःखी होकर वे दिव्य देवालयमें गये और उन्होंने अनेक
तीर्थोंकी यात्राएँ कीं, किन्तु ब्रह्महत्यासे मुक्ति न मिल सकी।
ब्रह्महत्याके कारण उन्हें कर्मका कुह नामक स्थितिसे प्राप्त कर
लिया। नाक, कर्ण आदि अङ्ग गल्यकर गिर गये : शरीरसे पीव
और रक्त बहने लगा। समस्त पृथ्वीपर घूमते हुए वे पुनः अपने

विधिपर आये। दुःखसे व्याकुलचित हो उन्होंने अपने
पितासे कहा—‘कत ! मैं पवित्र तीर्थों और अनेक देवालयोंमें
गया, किन्तु इस कुह ब्रह्महत्यासे मुक्त नहीं हो सका। प्रायश्चित्त
करनेपर भी मुझे इससे छुटकारा नहीं मिला है। अब मैं क्या
करूँ ? कहाँ जाऊँ ? कैसे ॥ रोगसे मुक्ति ॥ ? हे अन्न !
॥ कर्णान्-सप्तमोऽध्यायः ॥ कर्णिक करनेसे ॥ ब्रह्महत्याकापी
॥ मुक्तकरा मिले, ॥ उपस्थित आप शीघ्र बताने
॥ मेरा ॥ करे।’

हिरण्यनाभके कर्णान्—पुत्र ! पृथ्वीमें घूमते हुए तुमने
जो ज्ञान प्राप्त किया है, उसे मैं परीक्षामें जानता हूँ। तुम
अनेक तीर्थोंमें गये और प्रायश्चित्त भी किये, परंतु ब्रह्महत्यासे
मुक्ति न मिली, अब मैं एक उपाय बतलाता हूँ, उस उपायसे तुम
अन्धकार ॥ मुक्त हो जाओगे।

कौटुम्भिकके कर्णान्—विधो ! मैं ब्रह्मादि देवोंमें कितनी
उपासना करूँ ? मैं तो शरीरसे भी विकल हूँ, अतः ॥
॥ यथावत् आराधना मुझसे ॥ नहीं है, फिर ॥
॥ देवताको संतुष्ट कर सकूँगा।

हिरण्यनाभके कर्णान्—ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, ब्रह्म
आदि ॥ परितः ॥ परितः ॥ परितः ॥ परितः ॥
और इसी कारण वे स्वर्गलोकमें आश्रित हो रहे हैं। हे पुत्र !
॥ भगवान् सुवर्ण ॥ किसी भी देवताको नहीं जानता हूँ।
वे सभी स्वयत्तअर्थसे देनेवाले हैं। मात्र-पिता तथा सभीके
मन्त्र है, इससे कोई संदेह नहीं है। इसलिये तुम उनके मन्त्रका
जप करते हुए तथा आपवेदके मन्त्रोंका गान करते हुए
परितः ॥ आराधना करो और उनसे सम्बन्धित
इतिहास-पुराण आदिका जपण करो, इससे तुम्हें शीघ्र ही
उपसे मुक्ति मिलेगी ॥ तुम भीष्म प्राप्त कर लोगे।

सुवर्णसुवर्णके कर्णान्—राजन् ! आराधना करनेवाले महर्षि
कौटुम्भिके ब्रह्म-सम्बन्धित ॥ अपने पिताद्वारा निर्दिष्ट
सुवर्णसुवर्णकी विधिसे परितः ॥ परितः ॥ परितः ॥
की। भगवान् परितः ॥ सुवर्णके महर्षि कौटुम्भिक दिव्य मूर्तिमान् हो
गये और उन्होंने भगवान् परितः ॥ दिव्य मण्डलमें प्रवेश
किया। (अध्याय २१-२११)

१-सर्व कौटुम्भिक एक कर्णिक ॥ कर्णिक है। स्वर्णके-संक्षेपसे कौटुम्भिक ॥ कर्णिक और इस सप्तमोऽध्यायः ॥ है।
प्राप्त प्राप्ति की है। वे ॥ भी ॥ है। कौटुम्भिक कर्णिक-सप्तमोऽध्यायः ॥ कर्णिक एक हजार शिष्योंके विद्युत वर्ण है।

मरिच-सप्तमी-ज्ञात-कर्त्तव्य

सुमन्तुजीने कहा—हे मौर ! मैं तुम्हारे अर्कसम्पुटिका-
अन्यो संक्षिप्त विधि बतलायेंगे। एक मरिच-सप्तमीका कर्त्तव्य
कर रहा हूँ, इसमें मरिचका भक्षण किया जाता है। वेद वाक्यों
में 'ॐ नमः' यह महाबलदायी मन्त्र सप्तमां सूर्यसम्पुटिका को
है। इसका बारंबार स्मरण एवं जो कर्त्तव्य मानव एक कर्त्तव्य
में देवता भगवान् भक्तिकरका दर्शन प्राप्त कर होता है और
अन्यमें पवित्र मृत्युसे मुक्त हो सूर्यलोकांशों को प्राप्त करता
है। इसी अत्यन्तशुद्धमर्थ मरिच-सप्तमीके दिन सौर-मन्त्रों एवं
मुद्राओंसे हृदयादि अङ्गन्यास कर कर्त्तव्यमर्थ अर्पित करे।
भगवान्को अर्क प्रदान करे। विविध पुष्पोंको अर्पित करे।
ज्ञान कराये, नैवेद्य अर्पित करे। संयत होकर सूर्यलोकांशों को ग्रह
करे। ज्योतिषमुद्रा दिक्काल परीक्षण करे, भजन करे और
हृदयमुद्रासे भगवान्का विसर्जन करे। भगवान्को पूजन
कर्मोंमें तत्परा मुद्राओंको दिक्काल। मुद्राओंके साथ इस
है—विश्वामित्र, ज्योतिष, अक्ष, चण्डी, अर्किक, विष्णु,
तेजवी, गौरीशङ्करी, उषसिनी, सूर्यसम्पुटिका, महाकालिका, उदया,
मध्यमा, अस्तमिता, मालिनी, तर्जनी तथा कुम्भमुद्रा। इन
मुद्राओंके साथ जो भगवान् सूर्यको पूजा करता है, इससे वे

प्रसन्न हो जाते हैं। इस विधिसे ज्ञान भगवान् सूर्यको पूजा
करे। सज्ज ! तुम विधिसे भास्करको पूजा करो।
इस जो मरिच करता है, भगवान् सूर्यको
पूजाकरे। होता है। नृप ! इस विधिसे देवताको पूजा कर भगवान्को विधिपूर्वक
पूजन सप्तमीके दिन मन्त्रपूर्वक सूर्यका स्मरण करते
हुए होकर पूजन और पूजनसे पहले मरिचकी इस
करे—

ॐ कालोत्पन्नम् । विष्णुसामान्तम् ॥
हेता करकेसे अतीतों विष्णु सप्तमी
ज्ञान हो जाता है। यह मरिच-सप्तमी विष्णुसंगमदायिनी और
पुष्पको प्रदान करनेवाली तथा वसन्तकाली पूर्णिमा करकेवाली
है। एक वर्षका इस सप्तमी-ज्ञातवाचन करनेसे पुत्रपितृकोसे
विशेष नहीं होता। इसीसे महाकाहो। इस विष्णुसामान्त
मन्त्रोंको तुम भी करो। देवता मरिच-सप्तमीको
कर विष्णु या।
सप्तमी रात्रि चलने की इस सप्तमी
अर्पित किया। और करने भी इस सप्तमीके
साथ वसन्तकी सीताको प्राप्त किया।

(अध्याय २१२—२१४)

विष्णु-सप्तमी तथा कालसप्तमी-ज्ञातका कर्त्तव्य

सुमन्तुजीने कहा—हे मौर ! अब मैं तुम्हें विष्णु-सप्तमी
(वैशाख शुक्ल-सप्तमी)की विधि बतला रहा हूँ, अन्य तुम्हें। इसमें
विष्णु-पत्रका सेवन किया जाता है। यह सप्तमी सभी लक्षणों
व्याधियोंको हटानेवाली है। इस दिन ज्ञानमें अर्पितभक्त, सद्ध, पक्ष
और गदा धारण किये हुए भगवान् सूर्यका पूजन कर उनकी पूजा
करनी चाहिये। भगवान् सूर्यका मूल मन्त्र है—'ॐ
सर्वलोकाय नमः'। 'ॐ आदिशक्त्यो विष्णुसामान्त
धीमाहि। सूर्यः प्रणोदयन्।' यह सूर्यका गणने-मन्त्र है।

पूजामें सर्वप्रथम समर्पित-चित्त होकर प्रथमसूर्यका
मन्त्रपुत्र जलसे पूजाके उपचारोंका प्रोक्षण करे। अपनेमें
भगवान् सूर्यको भावना करके उनका पूजन करते हुए मन्त्रिका
हृदय आदि अङ्गोंमें मन्त्रका चिन्तन करे। सम्पूर्णज्ञान मुद्रासे

दिश-अंश प्रतीकांश करे। भूशोचन करण चाहिये। पूजाकी
थ विधि सन्ध्याके लिये अभीष्ट फल देनेवाली है।

पवित्र त्वान्में कर्मिकमुक्त एक अष्टदल-कमल बनाये,
उपर्ये अर्कचिह्न मुद्राके जल भगवान् सूर्यका जलपान करे।
वर्षा मन्तर-स्वरूप सर्वोत्कृष्ट भगवान् सूर्यको स्नान करावे।
मन्त्रपूर्णिमा भगवान् सूर्यकी स्थापना और ज्ञान आदि कर्म
मन्त्रोद्यम करने चाहिये। ज्योतिष दिशामें भगवान् सूर्यके
हृदयको, ईश्वरकोषोंमें सिरकी, नैऋत्यकोणमें एवं
पूर्वदिशामें टोने नेत्रोंकी स्थापना करे। इसके अनन्तर
ईश्वरकोणमें सोम, पूर्व दिशामें वेगल, आग्नेयमें बुध, दक्षिणमें
बृहस्पति, नैऋत्य दिशामें शुक, पश्चिममें शनि, वायव्यमें केतु
और उत्तरमें शुक्र की स्थापना करे। द्वितीय कक्षामें

परात्मानं सूर्यं तेजसे ॥ इन्द्रोऽपि अग्निदेवः—यत्नः, सूर्यः, अर्यमा, मित्रः, वरुणः, सविता, भक्ता, विष्णुस्तन्, लक्ष्मः, पूषः, सन्धः ॥ विष्णुको स्थपितः भवेत् । पूर्वमे इन्द्रः, ॥ पश्चिममे वरुणः, उत्तरमे कुम्भः, ईशानमे ईशः, अग्निदेवमे अग्निदेवः, वैश्वदेवमे विष्णुदेवः, वायव्यमे वायुः ॥ विजयः, जयन्ती, अपराजिता, रोगः, वायुर्गन्धः, रोगः, विजयः, महाशेता, राक्षः, सुवर्चस्व आदि ॥ अन्य देवताओंके सम्मुखमे यथास्थान ॥ करतः चर्चयेत् । सिद्धिः, कृतिः, सृष्टिः, उत्पत्त्यात्मिका तथा श्री इनको अपने दक्षिण ॥ स्थपितः करतः चर्चयेत् । प्रज्ञावती, मित्रः, इन्द्रः, कृतिः, चर्चः, विद्वद्भिः, कैर्गमासी तथा विभाज्यते ॥ देव-पुत्रोंको अपने ॥ भगवान् सूर्यं सत्तम ॥ चर्चयेत् ।

इस प्रकार भगवान् सूर्यं तथा उनके भीतरों एवं देव-पुत्रोंकी स्थापना करनेके अनन्तर मन्त्रपूर्वक पूजः, दीपः, शिरोधार्यः, चक्रः, पुष्प आदि उपचारोंको भगवान् सूर्यं तथा उनके अनुगामी देवोंको प्रदान करे । इस विधिसे जो भगवन्की सेवा अर्चना करता है, वह सभी कर्मकाण्डोंको पूर्ण एवं सूर्यलोकाको प्राप्त करता है । निम्नलिखित मन्त्राणां विन्यासी शिरोधार्यकर उसे भगवान्को निवेदित करके प्रार्थन करे—

तं निम्नः कर्तुमस्मादि अर्चयामि ॥ सर्ववीर्यः जाली ॥ मे ॥ सदा ॥

ब्राह्मण्य-अवस्थायां ब्राह्मण्य, पुराण-अवस्थायां विधिः, पुराणों तथा पुराणवाक्यक अतस्तन्मि भविष्या

सुमन्तुजीने कहा—उत्तर ! भविष्यपुराणके इस प्रकार ब्राह्मण्यके सुम्नेसे मान्य सम्पूर्ण कपोसे मुक्त हो जाता है तथा ॥ अथर्ववेदः, यजुर्वेद एवं उक्तस्य यज्ञो, ॥ शिर्व-प्राजाओं, वेदाङ्गस तथा पृथ्वीदान करनेका करतः प्रारंभ कर

‘ते निम्नः’ तुम भगवान् सूर्यके ॥ हो । तुम कर्तुः अप्रत्यक्षसे हो, तुम्हारे ॥ करनेसे मेरे सभी रोग सत्तमे स्थिते रह हो जायें और तुम मेरे स्थिते शास्त्रास्त्रसे हो जायें ।’

इस मन्त्रसे निम्नका प्रार्थन कर भगवान् सूर्यके समक्ष पृथ्वीपर बैठकर सूर्यपूजा कर ॥ करे । इसके ॥ यथाशक्ति ब्राह्मण्यको प्रार्थन करकर दक्षिणा दे । अनन्तर शेषतः-वाक् हो लक्ष्मण्यसे मन्त्र प्रार्थन करे । इस प्रकार एक वर्षतक इस निम्न-समक्षका प्रार्थन करनेवाला व्यक्ति सभी रोगोंसे मुक्त ॥ सूर्यलोकाको ॥ है ।

सुमन्तुजीने कहा—उत्तर ! पञ्चम मासके शुक्ल पक्षकी रात्रिके विधिपूर्वक उपवास कर भगवान् सूर्यकी सौर-पूजा करनी चाहिये । पुनः अष्टमीको अनन्तर दिक्पालकी पूजा कर साहजिकोंको कर्तुः, वारिपत्तः, पशुपुत्रः (विजयः) तथा उनके फलोंको भगवान्के सम्मुख रखना ॥ ‘यज्ञीयः श्रीधरः’ ऐसा कहकर इनमें साहजिकोंको निवेदित कर दे । यह फल-समक्षी कहलाती है । ‘सर्वं भगवन्, सत्तम च करतः सत्तमः ।’ ऐसा कहकर स्वयं भी उनकी ॥ भक्षण ॥ । इस फल-समक्षीका एक वर्षतक ॥ धीर-पूर्वक प्रार्थन करनेसे पुनः-पुनःकी प्राप्ति होती है ।

(अध्याय २१५)

१-पर्व भविष्यपुराणका यह कुछ भूतः तत्त्व होता है । इस स्थान-संक्षेपसे उपलब्ध अग्निदेव, विजय तथा कर्म्मिक संक्षेपका कृत भवे है । पुराण-विन्यास (वेदों)के कर्म्मकाण्डमे भविष्यपुराणके कर्म्म इन् कर्म्मिक अन्तर्गत कर्म्म आया है । वैजयन्तः पुत्रः सत्तम अग्निदेव-समक्षी, यज्ञः पुत्रः सत्तम विजय-समक्षी तथा पशुपुत्रः पुत्रः सत्तम कर्म्मिक-समक्षी कर्म्मी भवे है । विजय-समक्षीने सूर्यसंस्तव्यः श्रोत्रं यी पञ्च गतः है । इससे लगता है कि वेदोंके पक्ष भविष्यपुराणकी अर्चयामि एवं पूर्ण कृतः अर्चः सूर्यका भो । पुराणोंमे उपलब्ध ही इस समयकी प्रीति वह अर्चः कर्म्मिक हो गया है ।

२-इतिहासपुराणों मे कर्म्मकाण्ड ॥ पुनः ॥ वेदों ॥ कर्म्मकाण्डमे सुम्नेसे सर्वविधः ॥ ॥ उत्तराद्वैतः ॥ कर्म्मकाण्डमे विद्वत् ॥ कर्म्मकाण्ड ॥ सत्तमः ॥ पञ्चमे मे विन्यासे ॥ (ब्राह्मण्य २१५ : १४-१५)

इतिहासीकने पूछा—मगधन् । पञ्चभरत, सम्भवण एवं पुराणोक्त श्रवण तथा पठन [] करना चाहिये ? पुराण-वाचकको [] लक्षणा है ? भगवान् कालोत्कर्षक क्या स्वरूप है ? वाचककी विधिवत् पूजा करनेसे क्या फल होता है ? परकी सम्प्रतिपर वाचकोको क्या देन चाहिये ? इसे आज बतानेकी कृपा करें ।

सुपुत्रजी बोले—एकन् ! अपने इतिहास-पुराणके सम्बन्धमें अच्छी विज्ञप्ता की है । मगधको ! इस सम्बन्धमें पूर्वपरलम्बे देवागुह बृहस्पति तथा ब्रह्मर्षिके [] जो [] हुआ था, उसे आज श्रवण करें ।

प्रथम विशेष पवित्रपूर्वक इतिहास और पुराणका [] कर ब्रह्महत्यादि सभी पापोंसे मुक्त [] करता है । प्रथम होकर ज्ञात, साथ तथा शक्तिसे जो पुराणका श्रवण करता है, उस स्थितिमें ब्रह्म, विष्णु तथा महेश संतुष्ट हो जाते हैं । वाचकका भगवान् ब्रह्मा, सारंगका विष्णु और शक्तिमें महादेव प्रसन्न होते हैं । राजन् ! अब वाचकके विधानकी सुनिये । यज्ञ का पढ़नकर भुङ्ग होकर ब्रह्मिण्यपूर्वक तथा वाचक अभ्यसना बैठता है तो वह देवत्वका हो जाता है । असन ४ बहुत ठीक हो, १ बहुत नीचा । वाचकके आसनकी मध्य कट्ठा की जानी चाहिये । वाचकके अक्षरकोष्ठी व्यासपीठ कहा जाता है । पीठकी गुडकी अक्षत समझना चाहिये । वाचकके आमनसा सुनने-बोलनेकी कभी भी [] बैठना चाहिये । देवताओंकी अर्चना करके विशेषरूपसे ब्राह्मणकी पूजा करनी चाहिये । सभी समागत व्यक्तिओको साथमें लेकर पुराण-ग्रन्थ वाचकके स्थाने प्रदान करें । उस ग्रन्थकी स्तमसाक हो [] करें । [] श्रवणादि होकर श्रवण करें ।

ग्रन्थका सूत्र (भाग) वास्तुकि कहा गया है । ग्रन्थका पत्र भगवान् ब्रह्म, उसके अक्षर जनार्दन, सूत्र शक्ति तथा पवित्रार्थ सभी देवता है । सूत्रके मध्यमें अग्नि और सूर्य स्थित रहते हैं । इनके आगे सभी ग्रह तथा दिग्गर्ग अवस्थित रहती हैं । उनको

मेक कहा गया है । रिक्रमकको अक्षरका कहा गया है । ग्रन्थके ऊपर तथा नीचे रहनेवाले दो ब्रह्मफलक दाया-पुर्बाकीरूपमें पूर्व और पश्चिम हैं । इस प्रकार सम्पूर्ण ग्रन्थ देवका है और देवताओंद्वारा पूजित है । इसलिये अपने कर्त्तव्यको सम्पन्नके इतिहास-पुराणदि ग्रंथ ग्रन्थोंको अपने घरमें रखना चाहिये, उन्हें नमस्कार करना चाहिये तथा उनकी पूजा करनी चाहिये ।

राजन् ! वाचक ग्रन्थको प्रथम में ब्रह्मण कर ब्रह्मा, कण्डस, वासर्षिक, विष्णु, शिव, [] आदिको भीतपूर्वक [] करके ब्रह्मसन्निध होकर ओषधी शरमें अक्षरीका [] उच्चारण करने हुए तथा सतत स्मरणसे युक्त यथासमय यद्योचित रस एवं भावोंको प्रकट करते हुए ग्रन्थका पाठ करें । इस प्रकार वाचकके मुखसे जो श्रोता निधमः ब्रह्मपूर्वक इतिहास-पुराण और उन्मत्तस्वभाव सुनता है, वह सभी पापोंसे श्रुत कर सभी रोगोंसे मुक्त हो [] और विपुल पुण्यको प्राप्त कर वाचकके उत्तम और अद्भुत स्वर्गमें प्राप्त करता है ।

[] यह सामाजिकसे [] होकर वाचकके प्रदान करके [] सम्पन्न [] और ज्ञानकी संकल कर सुसमाहित हो वाचककी स्तुति सुने ।

मगधको ! व्यवहाररूप वाचकको [] करनेपर संशयके [] अथ कृपा भी नहीं बोलना चाहिये । कथा-कल्पना धार्मिक शक्ति या विज्ञप्ता उत्पन्न होनेपर वाचकको ब्रह्मपूर्वक पूजना चाहिये, क्योंकि व्यवहाररूप वाचक उत्तम गुरु [] कार्यशुद्ध है । वाचकको भी भलीभांति उसे समझना चाहिये, क्योंकि वह गुरु है, इसलिये उसके अनुग्रह करना उत्तम कार्य है । उसके अनन्तर 'तुम्हारा वाचकण हो' यह कहकर पुनः आगेकी कथा सुननी चाहिये । [] अपनी [] निबन्धन रखना चाहिये । वाचक ब्राह्मणकी ही होना चाहिये । प्रत्येक घरमें श्रवण करें तथा वाचककी पूजा करें, परीक्षाके पूर्व होनेपर वाचकको स्वर्ग प्रदान करें ।

१- इतिहासपुराणकी तुल्य पञ्चम विज्ञेयः । मुक्तो सर्वकर्मके महात्मनीर्षिके ७ सत्ये प्रसादात् [] सुविशुद्ध सुखेति च । तस्य विष्णुसत्त्व ब्रह्म सुखेति उन्मत्तस्वभाव ७ प्रकृते भगवान् [] दिवने तुम्हो इति । वाचकसत्त्व सर्व सुखेति तुम्हो विष्णु ७
२- इत्ये देवका श्रोतुं पूजाके देवपुत्रिणः । नमस्य पूजाके च [] विष्णुके च

(आद्यपर्व २१९ । ४७—४८)
(आद्यपर्व २१९ । ५८)

प्रथम प्रकरणमें वाचककी अपने इतिहास अनुसार कुछ करनेपर अग्निहोम-यज्ञका काल प्राप्त होता है। वाचकको आश्विनक प्रत्येक मासमें एक-एक प्रकारपर पूजन करनेसे सम्मानः अग्निहोम, ज्योतिहोम, सौम्यहोम, वायव्यहोम, वैष्णवहोम, माहेश्वरहोम, शुक्रहोम, अश्विहोम, उग्रहोम तथा अश्वमेध यज्ञहोम फल प्राप्त होता है। इस प्रकार यज्ञ-फलहोम कर यह निःसंदेह काल लोकमें प्राप्त करता है।

पर्यन्त सम्पत्तिपर गन्ध, धूप, चिड़िया तथा अद्वितीय पूजा करीये। सूर्य, सप्त, गन्ध, दक्षिण-वाय अदि वाचकको प्रदान कर वाचकको काल प्राप्त करना चाहिये। वाचकको कष्टकर दान देने योग्य सुख और कोई नहीं है, उसके इच्छाके आग्रहानुसार सभी शास्त्र रहते हैं। जो कष्टपूर्वक होता है, उसके विचार ही वर्षाकाल तक रहते हैं। देवोंमें सूर्य श्रेष्ठ है वैसे ही वाचकको वाचक श्रेष्ठ है। वाचक

काल कदा कदा है। विश्व देव, वायु, गन्ध, वायुमें ऐसा काल निकल करता है वह क्षेत्र क्षेत्र माना जाता है। वहकि निम्नसी काल है, कष्टार्थ है, इसमें संदेह नहीं। वाचकको प्रणामकरनेसे विश्व फलहोम होती है, उस फलहोम प्रति अन्य कर्मोंसे नहीं-कोलीन

वैसे कष्टार्थके सम्मान कोई दूसरा श्रेष्ठ नहीं, वाचकको सम्मान कोई नहीं, वाचकको श्रेष्ठ कोई देवता नहीं, वाचकको सम्मान कोई नहीं, पुत्र-वन्धनके सुख सुख नहीं, वैसे पुण्यकारक वाचकको सम्मान कोई वाचक नहीं हो। देवता, विद्वान् सभी कर्मोंमें यह फल पवित्र है।

कर्म! वाचक पुण्यकारककी विधि तथा वाचकको महात्म्यको वाचकको अनुसार पुण्यकारक एवं कष्ट कराना चाहिये। कर्म, दान, वायु, क्षेत्र, विद्व-पुत्र देवपुत्र सभी क्षेत्र कर्म विधि-पूर्वक अनुष्ठित होनेका काल प्रदान करते हैं।

(अध्याय २१६)

॥ अश्विहोमपुण्यकारकानि प्रथमः सम्पूर्ण ॥



१-पुण्यकारकानि तन्त्रे न द्वितीये प्रथमः। २-वैष्णव काल न देवो वाचकः। ३-वाचकको पुण्य न कर्म वाचकः। ४-पुण्यकारकानि न देवो वाचकः। ५-वाचकको पुण्य न कर्म वाचकः। ६-वाचकको पुण्य न कर्म वाचकः। ७-वाचकको पुण्य न कर्म वाचकः। ८-वाचकको पुण्य न कर्म वाचकः। ९-वाचकको पुण्य न कर्म वाचकः। १०-वाचकको पुण्य न कर्म वाचकः।

(अध्याय २१६। १०९-१११)

मध्यमपर्व (प्रथम भाग)

गृह्यसाम्य एवं [] पश्चिमा

अथ हि पुनर्नदीये पात्रान्ते त्वेककर्म

अथ हि च त्रितिरिहः समुत्पन्नक मुत्तरीः ।

अथ हि च त्रितिरिहः समुत्पन्नक मुत्तरीः

[] भक्तान्तेतिर्पातुमहिमन्तुः ॥

'संसारकी सृष्टि करनेवाले भुवनेक दीयकस्वरूप पात्रकन् भास्वरूपी [] हो । इत्याथ शरीरवाले प्रजापतिपुत्री भगवान् मुत्तरीकी उभय हो । मस्तकपर [] धारण [] इत् भगवान् वक्षकी उभय हो । सभीके मुकुटमणि तेजोमय पात्रकन् चित्तकन् (सूर्य) की [] हो ।'

एक बार पौराणिकमें श्रेष्ठ देवमूर्तक मूलकीने मुनिकोंने प्रजापतिपूर्वक पुताथ-संहिताके विषयमें पूछा । भुवनेक मुनिकोंके वचन सुनकर अपने गुरु सत्यवती-पुत्र महर्षि कण्वसमके कहने लगे । मुनिको ! मैं जगतके कारण जगत्-स्वरूपका धारण करनेवाले भगवान् हरिको जगत्प्रभु [] सर्वथा नम्र करनेवाली पुष्पकी दिव्य [] कहना हूँ, [] सुननेमें सभी पापकर्म [] हो जाने [] और [] प्राप्त [] है । द्विजगण ! भगवान् किङ्कके द्वारा कता गया ध्वजपातुल आत्मक एवम् आपुष्पाग्र है । अतः मैं उसके धन्वध-पर्वका धर्पन करता हूँ, जिसमें देव-भरिष्टा अष्टि इन्द्रपुर्न-कर्षक वर्णन है । उसे [] सुने—

इस मध्यमपर्वमें धर्म तथा ऋद्धिपदिकी प्रशंसा, आप-हर्मक निरूपण, विद्या-माहत्म्य, प्रतिम-निर्णय, प्रमिया-स्वप्नना, प्रमियात्मक लक्षण, काल-कल्पना, सर्ग-प्रमिसर्ग आदि पुराणक लक्षण, भूगोलक [] विधिषोका निरूपण, श्रद्धा, संकल्प, मन्त्रन्तर, मन्त्र, भगवत्समके कर्म, शान्तक माहत्म्य, भूत, भविष्य, सुप्त-धर्मनुत्पन्न, उद्य-नैव-निर्णय, प्रवर्धित अष्टि विषयोक्त भी सम्मिलित है ।

मुनियो ! तीनों अत्रार्थके मूल एवं उत्पत्तिक लक्षण गृह्यसाम्य ही है । अन्य [] इससे अधिक रहते हैं, अतः गृह्यसाम्य सबसे श्रेष्ठ है । गार्हस्थ्य-जीवन ही कर्त्तव्यमिति

जीवन है । धर्मरहित होनेपर अर्थ और काम इसका परित्याग कर देते हैं । धर्मसे [] अर्थ और काम उत्पन्न होते हैं, मोक्ष भी धर्मसे ही प्राप्त होता है, अतः धर्मको ही आश्रय करना चाहिये । कर्म, अर्थ और काम यही त्रिवर्ग है । प्रकृतान्तरसे ये त्रिवर्ग त्रिगुण अर्थात् सत्व, रज और तमोगुणत्मक हैं । सात्त्विक अथवा धार्मिक कर्मक ही [] उत्पत्ति होती है, राजस मध्य तत्त्वकसे [] उत्पत्ति है । उभयगुण अर्थात् तामस व्यवहारवाले निम्न भूमिको प्राप्त करते हैं । जिस पुरुषमें धर्मसे सम्बन्धित अर्थ और [] व्यवस्थित [] है, वे इस लोकमें सुख भोगकर मरनेके [] मोक्षमें प्राप्त [] हैं, इसीलिये अर्थ और [] कर धर्मक [] प्राप्ति करे । ब्रह्मकादयोनि कता है कि धर्मसे [] सब कुछ प्राप्त हो जाता है । स्वयं-अहम् अर्थात् सम्पूर्ण ब्रह्मका विष्णुके धर्म ही धारण करता है । धर्ममें [] शक्ति है, वह [] शक्ति है, वह [] है । कर्म [] जनने धर्म प्राप्त होता है—इसमें मंदार [] जनपूर्वक कर्मयोगक आश्रय करना चाहिये । प्रकृतिमूलक और निष्कृतिमूलकके भेदसे वैदिक कर्म दो प्रकारके हैं । जनपूर्वक त्याग सम्प्राप्त है, सम्प्राप्तियों एवं [] कर्म निष्कृतिपरक [] और गृहस्थोंके वेद-शास्त्रानुसृत कर्म प्रकृतिपरक हैं । अतः प्रकृतिक शिक्ष हो जानेपर मोक्षप्राप्तिको निष्कृत आश्रय लेना चाहिये, नहीं तो पुनः-पुनः संसारमें आना पड़ता है । श्रम, दम, क्लेश, दान, अत्येध, विषयोक्त [], सरलता या निष्कलता, निष्कोष, अनमुखा, तीर्थयात्रा, सत्य, संगोप, अहिंसकता, [] इन्द्रियग्रह, देवपूजन, विशेषरूपसे ब्राह्मणपूजा, अहिंसा, सत्यवर्धित, निन्दक परित्याग, शुभानुष्ठान, शौचधार, जलनिषेध टक—ये श्रेष्ठ आचरण सभी वर्णोंके लिये सामान्य रूपसे कहे गये हैं । श्रद्धामूलक कर्म ही धर्म कहे गये हैं, धर्म श्रद्धाभावे ही विधत है, श्रद्धा ही निष्ठा है, श्रद्धा ही प्रतिष्ठा है और [] ही धर्मकी बड़ है । विधिपूर्वक गृह्यधर्मक

वैष्णवलोका उससे दुर्गालोका । इसके सुवर्णमय, निराकार दिव्य ज्योतिर्मय स्थान है । उसके उत्तर भूतलोक स्थान । यहाँ भगवान् सूर्य रहते हैं । वे पश्चिमाभगवान् सूर्य ज्योतिर्मय चक्रके मध्यमें निवास करते हैं । वे घेरके ऊपर रातिचक्रमें करते हैं । भगवान् सूर्यका रथ-चक्र मेरु पर्वतकी छत-दिन कापुके कराया जाता हुआ ध्रुवका अक्षय रेखाक । अर्द्ध तथा यह वहाँ दक्षिणमें कल्प मार्गकी ओर प्रतिवहार चलते रहते हैं । इस और बुद्धिके रूपसे उनके इस

चन्द्रावत स्थित होता है, तब उसे परमेश्वर कहा जाता है । सूर्य, सोम, बुध और शुक शीघ्रगामी ग्रह हैं । दक्षिणायन धर्मसे सूर्य गतिमान होनेपर सभी ग्रहोंके नीचे चलते हैं । मन्दार उसके उत्तर गतिशील रहता है । सम्पूर्ण नक्षत्रमण्डल सोमसे ऊपर चलता है । नक्षत्रोंके ऊपर बुध और बुधसे ऊपर शुक, शुकसे ऊपर मंगल । ऊपर बुधस्थिति तथा बृहस्पतिसे ऊपर शनि, शनिके ऊपर शक्रमण्डल और ऊपर नियत है ।

(अध्याय ४)

ब्राह्मणोंकी मूर्तिपूजा तथा छन्दोवीस धर्मोक्त धर्षण

श्रीसुतजी बोले—हे द्विजोत्तम ! ब्राह्मण जन्मसे प्रभु हैं । उच्च और कच्च स्वरूपों के लिये तपस्याके द्वारा ब्राह्मणकी प्रथम सृष्टि की गयी है । देवगण इन्हींके मुखसे उच्च और पितृगण कच्च स्वीकार करते हैं । अतः इनसे प्रभु कौन हो सकता है । ब्राह्मण जन्मसे ही श्रेष्ठ हैं और सभीसे पूजनीय हैं । जिसके गर्वधन अर्द्ध अङ्गुलप्रमाण शक्राधिपतिसे सम्मान होते हैं, वही मन्त्र ब्राह्मण है । द्विजकी पूजाकर देवगण स्वर्गफल योग्यता प्राप्त करते हैं । अन्य मनुष्य भी ब्राह्मणकी पूजाकर देवत्वको प्राप्त करते हैं । जिसपर ब्राह्मण प्रसन्न होते हैं, उसपर भगवान् विष्णु प्रसन्न हो जाते हैं । केर भी ब्राह्मणोंके मुखसे स्वीकृत रहते हैं । सभी विषयोक्त स्मरण होनेके कारण ब्राह्मण ही देवताओंकी पूजा, पितृकार्य, विवाह, ब्रह्मकार्य, इक्षितकार्य, अश्वकर्म आदिके सम्पादनमें प्रशस्त हैं । ब्राह्मणके विना देवताओं, पितृकार्य तथा यज्ञ-कर्मोंमें दास, श्लेष और वरिष्ठ वे सभी निष्फल होते हैं ।

ब्राह्मणकी देवताका श्रद्धापूर्वक अभिषेकदन करना चाहिये, उसके कले गये 'दीर्घाचर्य' शब्दसे मनुष्य चिरजीवी होता है । द्विजश्रेष्ठ ! ब्राह्मणकी पूजासे आशु, यशस्वि और धनकी वृद्धि होती है । जहाँ जलसे विप्रोक्त पद-प्रशस्तन

नहीं किया जाता, वेद-प्रशस्तन उद्धारण नहीं होता और जहाँ स्नान, सप्ता और यज्ञिकी भूमि नहीं ऐस्य गृह प्रशस्तनके समान है ।

सकलजी मनुष्योंके दोष कलत्रवे हैं, विवेक स्थापनकर सुदृढपूर्वक निरस्त करना चाहिये— (१) अज्य, (२) विषय, (३) पशु, (४) पिशुन, (५) कृष्ण, (६) पवित्र, (७) मृद, (८) पृष्ठ, (९) दुष्ट, (१०) पूर, (११) इष्ट, (१२) कज्ज, (१३) अन्ध, (१४) अन्ध, (१५) अन्ध, (१६) कुष्ठ, (१७) दत्ता, (१८) पतन, (१९) कर्षण, (२०) दण्ड, (२१) नीच, (२२) जल, (२३) बाधाल, (२४) अपल, (२५) परलम्प तथा (२६) लोचनी ।

उपमूलक छन्दोवीस दोषोंके भी अनेक भेद-प्रभेद मतलब हैं । विवेक ! इन (छन्दोवीस) दोषोंका विवरण संक्षेपमें इस प्रकार है—

१. गुरु तथा देवताके सम्मुख भूता और कर देनेवाले, गुरुके सम्मुख आसनपर बैठनेवाले, यानपर चढ़कर लोच-बाध करनेवाले तथा तीर्थमें धर्मिक अवचरण करनेवाले—वे सभी अधम-संज्ञक दोषयुक्त व्यक्ति कहे गये हैं । २. प्रसरमें श्रिय और पशु खापी बोलनेवाले पर

१-युधिष्ठिर स्वीकृतो मन्त्रः । २-युधिष्ठिरः । ३-युधिष्ठिरः । ४-युधिष्ठिरः । ५-युधिष्ठिरः । ६-युधिष्ठिरः । ७-युधिष्ठिरः । ८-युधिष्ठिरः । ९-युधिष्ठिरः । १०-युधिष्ठिरः । ११-युधिष्ठिरः । १२-युधिष्ठिरः । १३-युधिष्ठिरः । १४-युधिष्ठिरः । १५-युधिष्ठिरः । १६-युधिष्ठिरः । १७-युधिष्ठिरः । १८-युधिष्ठिरः । १९-युधिष्ठिरः । २०-युधिष्ठिरः । २१-युधिष्ठिरः । २२-युधिष्ठिरः । २३-युधिष्ठिरः । २४-युधिष्ठिरः । २५-युधिष्ठिरः । २६-युधिष्ठिरः ।

२-३ १ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । २ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । ३ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । ४ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । ५ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । ६ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । ७ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । ८ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । ९ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । १० वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । ११ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । १२ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । १३ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । १४ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । १५ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । १६ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । १७ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । १८ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । १९ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । २० वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । २१ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । २२ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । २३ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । २४ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । २५ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः । २६ वेदश्रवणकीधर्मोक्तः ।

(मध्यमर्ष १।५।२२)

हृदयमे हारणहल विव धारण करनेवाले, कहते कुछ और है
आचरण कुछ और ही करते हैं—ये दोनों विषय-संज्ञक
दोषयुक्त व्यक्ति कहे जाते हैं। ४. मेधवर्धी चित्त कोट्टकर
सांसारिक विषयओंमें अग्र करनेवाले, हस्ति सेवसे रहित,
प्रथगमे रहते हुए भी अन्यत्र करनेवाले, प्रत्यक्ष देखने
छोड़कर अदृष्टकी सेवा करनेवाले । तत्त्वोंके स्वर-गतको
न जाननेवाले—ये सभी पशु-संज्ञक दोषयुक्त व्यक्ति हैं।
५. बलसे अपना छल-छात्रसे या मित्र प्रेयस प्रदर्शन कर
ठगनेवाले व्यक्तिको पितृस दोषयुक्त कहा गया है। ६. देव-
सम्बन्धी और पितृ-सम्बन्धी कर्मोंमें पशु करनेवाला
रहते हुए भी मृत्यु और अन्त आकाश भोजन करनेवाला
तुर्बुद्ध मानव कृपण है, उसे न तो स्वर्ग मिलता है और न मोक्ष
है। जो अग्रसप्त मनसे कुत्सित बलकृप एतन करता एवं अनेकों
साध सेवा आदिकी पूजा करता है, वह सभी कर्मोंमें कीर्तुण
कृपण कहा जाता है। निर्बुद्ध जिते हुए भी सुभक्त बलकृप
तथा शुच शरीरक मित्र करनेवाला कृपण कहलगा है।
७. माता-पिता और गुरुका त्याग करनेवाला, पतिव्रत-
रहित, पिताका साम्प्रत निःसंकोच भोजन करनेवाला,
पिता-माताका करनेवाला, भी सेता न
करनेवाला तथा श्रौत-मन्त्रिका स्नेह करनेवाला
कहलगाता है। ८. साधु आचरणका परित्याग कर झुठी सेवाका
प्रदर्शन करनेवाले, वेदसाधारी, देव-धर्मके द्वारा जीवन-कायन
करनेवाले, धार्मिक व्यक्तिग्राह्य अन्न करने
करनेवाले । कर्मका को को के धनसे जीवन-
कायन करनेवाले—ये सब गृह-संज्ञक व्यक्ति हैं—ये स्वर्ग
एवं मोक्षके अधिकारी नहीं हैं। ९. विप्रसक्त मन सदा कुछ
लगा है, अपनी हीनता देखकर जो लोभ करता है, निराधी
भीष्ट कुटिल है तथा जो हृदय और गृह सम्पत्तिका है—ऐसे वे
पति प्रवरके व्यक्ति गृह कहे गये हैं। १०. अन्तर्धर्म या निर्दिष्ट
आचारमें ही जीवन व्यतीत करनेवाला, पर्यवर्षोंमें त्रिपर,
त्रिपल, दुर्बलसमये मासक, मन्त्राधी, जो-सेही, सदैव दुष्टोंके
समय वार्तालयन करनेवाला—ऐसे सार प्रवरके व्यक्ति गृह
कहे गये हैं। १०. अनेक ही मधुर-मिष्टान्न भक्षण करनेवाले,
वस्तुके, संशयोके निन्दक, सुकरके समस्त वृत्तिकारे—ये

करनेवाले कहे जाते हैं। ११. जो निगम (वेद),
अगम (तन्त्र) का अध्ययन नहीं करता है और इनसे सुनता
ही है, वह पापका गृह कहा जाता है। १२-१३. श्रुति और
स्मृति ग्राहकोंके वे दो नेत्र हैं। एकसे रहित व्यक्ति काना और
हीन अन्ध कहा है। १४. अपने सहोदरसे
विवाद करनेवाला, माता-पिताके लिये उग्रिय वचन
करनेवाला कष्ट कहा जाता है। १५. शास्त्रकी निन्दा
करनेवाला, पुण्यलक्ष्मी, राजगामी, सुदृष्टेयक, सुदृष्टी एकीसे
अनकारण करनेवाला, गृहके वरपर एक हुए अन्धको एक बार
भी निन्दित या गृहके भाषा पाँच दिनोंतक निवास
करनेवाला व्यक्ति कष्ट दोषवाला कहा जाता है। १६. आठ
प्रकारके कुशोंमें समन्वित, त्रिपुष्टी, शत्रुसे निर्दिष्ट व्यक्तिदीके
साथ करनेवाला अधम व्यक्ति कुह-दोषयुक्त कहा
जाता है। १७. समान प्रमत्त करनेवाला, कुत्सित-
युक्त कर्तव्य करनेवाला दत्तावहारक कहा गया है।
१८. कुत्सित अन्धनी हुए भी चर्मक उपदेश
देनेवाला है। १९. गुरुजनकी वृत्तिके हाण करनेकी
तथा वस्ती-विवाही व्यक्ति यदि बहुत दिन
छोड़कर अन्यत्र विधाम करता है, वह कष्ट
(पशुस) है। २०. कोपका प्रदर्शन करनेवाला तथा
राम न होते हुए भी दण्ड-विधान करनेवाला व्यक्ति
(अन्ध) कष्ट पाता है। २१. ब्राह्मण, राजा और
देव-सम्बन्धी धनका हस्त कर, उस धनसे अन्य देवता या
संतुष्ट करनेवाला या उस धनका भोजन या अन्नकी
देनेवाला व्यक्ति करके नीच है, जो अन्न-अध्यात्ममें
सत्तर केवल पड़ता है, किन्तु समझता नहीं,
कर्मकर-शत्रुसक्त व्यक्ति पशु है, जो गृह और आगे
कष्ट कुछ है और करता कुछ और है, अनाधारी-दुराधारी है
वह नीच कहा जाता है। २२. पुण्यवान् एवं सज्जनोंमें जो
दोषका अन्वेषण करता है वह व्यक्ति सल कहलगा है।
२३. कर्मकीन व्यक्तिसे परिहृयसयुक्त वचन बोलनेवाला तथा
साथ निर्लज्ज होकर वार्तालयन करनेवाला
कहा जाता है। २४. पतिव्रतके पालनेमें तत्पर, मित्रोंके द्वारा
अन्धित परस्परके कोटनेके करने स्वयं भक्षण

करनेवाला, अर्थात् तुलका लेखक, मिट्टीके ढेरेंको
 घेदन करनेवाला, मांस भक्षण करनेवाला और अन्धको सँभलें
 आसक्त रहनेवाला व्यक्ति है। २५ ठेस,
 आदि न लगानेवाला, गन्ध और चन्दनसे सुन्ध,
 नित्यकर्मको न करनेवाला व्यक्ति मर्त्यमत्स है।
 २६, अन्यायसे अन्धके वर से लेनेवाला
 अन्धपसे कमानेवाला, शत्रु-निर्दिष्ट
 करनेवाला, देव-पुत्रक, राज, यज्ञि-मुला, अन्न, गौ, भूमि

तथा ईर्ष्याका इत्य करनेवाला सोयी (चोर) कहा जाता है।
 सख हो देव-चिन्तन तथा कल्याण-चिन्तन न
 करनेवाले, तथा पोषण करनेवाले और
 कर्तव्यका आचरण न करनेवाले एवं
 उपचाही समुचित व्यवहार न करनेवाले—ये
 सभी सोयी हैं। इन सभी दोषोंसे युक्त व्यक्ति रतत्पूर्ण नरकमें
 निरस्त करते हैं। इनका सम्पूर्ण ज्ञान समग्र हो जानेपर मनुष्य
 का कर होता है। (अध्याय ५)

माता, पिता एवं गुरुकी महिमा

श्रीगुरुजी कोले—हिचकोड़ ! कबो कभीक सिन्धे पित
 हो सबसे बड़ा उन्नत सदायक है। जिसके सम्मान गन्ध
 अपना बन्धु नहीं है, ऐसा वेदोक्त कथन है।
 गुरु—ये तीनों पथप्रदर्शक हैं, पर इनमें माता ही सर्वोपरि है।
 भ्रातृधर्म भी ब्रह्मरा: बड़े है, ये ब्रह्म-ब्रह्मसे ही विरोध आकरके
 पात्र है। दादाजी, अमाकास्य
 बलिपुत्र बड़ा दक्षिणको अपने देव पहिले,
 क्षत्रिणाथन और उवाचयनमें, विपुल
 सूर्य-प्रहणके समय सदायकी इन्हें भोजन करना पहिले।
 अनन्तर इन मन्त्रीसे इनकी वरन-वन्दन पहिले,
 कवीक धिधिवर्षक वन्दन करनेको ही सभी तीर्थोंका फल प्राप्त
 हो जाता है। स्वर्ग और अपवर्ग-कपी फलको प्रदान करनेवाले
 एक आद्य ब्रह्मस्वरूप पितको मैं नमस्कार करता हूँ। भिनकी
 प्रसन्नतासे सेश्वर सुन्दर रूपमें दिखती देत है, उन विराट् में
 तिलयुक्त जलसे तर्पण करता हूँ। पित ही जन्म देता है, पित
 ही धारण करता है, विवृण ब्रह्मस्वरूप है, उन्हें मिल पुन-पुन

नमस्कार है। हे पित ! आपके अनुग्रहसे लोकधर्म प्रवर्तित
 है, आप भवका है, आपको नमस्कार है।
 जो अपने उदाररूपी विचारमें सबे उसकी सभी
 करती है, पर प्रकृतिसंस्कार जननीदेवीको
 नमस्कार है। मात ! अपने बड़े कहसे मुझे अपने उदर-
 किया, आपके अनुग्रहसे मुझे यह संसार
 आपकी नमस्कार है। पृथिवीपर
 मिलने कि है उन सभी स्वरूपधृत
 आपको अपनी कल्याण-व्यक्तिके सिन्धे मैं नमस्कार करता हूँ।
 कि गुरुदेवके प्रसन्नसे मैं भगवत्की विज्ञा प्राप्त की है, उन
 फलसकलसे सेतु-स्वरूप दिव्यरूप गुरुदेवको मेरा नमस्कार है।
 अन्नब्रह्म ! वेद और वेदङ्ग-शास्त्रोंके तत्व आपमें प्रतिष्ठित
 है। आप सभी प्रणिधेकि आधार हैं, आपको येद नमस्कार है।
 ब्रह्मण सम्पूर्ण संसारके चलने-फिरने परम पावन तीर्थस्वरूप
 हैं। अतः हे विष्णुकपी भूदेव ! मेरा पाप नष्ट करे,
 आपको येद नमस्कार है।

१-सर्वभूतार्थप्रदिकात् ब्रह्मस्वरूपे पिते जगति । कबो जन्म कभीक फलको वे तर्पणः श्रीगुरुदेवकीः ॥

पितो नमस्कारः ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥
 मरुद्विजयसे लोकप्रसन्नः ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥
 या पृथिवीपर गुरु सब रक्षी सर्वः ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥
 गुरुका देव ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥
 पृथिवी यति तीर्थी सगुणनि सर्वः ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥
 गुरुदेवसद्वेद स्व ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥
 वेदवेदङ्गसकल तर्प ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥
 ब्रह्मणे जगती ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

द्विजे ! जैसे पिता श्रेष्ठ है, उसी प्रकार पित्रांक बड़े-छोटे भाई और अपने बड़े भाई भी पित्रांक समान ही मान्य एवं पूज्य हैं। आचार्य ब्रह्मर्षि, पिता प्रजापतिजी, तथा पुत्रोंकी और भाई अपनी ही मूर्ति हैं। पित्र मेरुस्वरूप एवं वसिष्ठ-स्वरूप सन्तान धर्ममूर्ति हैं। वे ही प्रत्यक्ष देवता हैं, अतः इनकी

आराधना करना चाहिये। इसी प्रकार पितामह एवं पिता (दादा-प्यदी) के भी पूजन-कटन, रक्षण, पालन और सेवाओं अत्यन्त महिम्न हैं। इनकी सेवाके पुण्योंकी तुल्यता कोई नहीं है, क्योंकि ये पिता-पिताके भी परम पूज्य हैं। (अध्याय ६)

पुराण-अवधारणकी विधि पुराण-व्यवहारकी महिमा

श्रीसुतजी बोले—ब्राह्मणे ! पूर्वजन्ममें पादोत्तमकी ब्राह्मणीने पुराण-अवधारणकी विधि विनियोग मुझसे पूछा था, उसे मैं आपको सुना रहा हूँ, आप सुनें।

इतिहास-पुराणोंके अतिपूर्वक सुननेसे ज्ञानरस उत्पन्न सभी पात्रोंसे मुक्ति हो जाती है, जो ज्ञान-स्वयं तथा रज्जिमें पवित्र होकर पुराणोंका अवगण करता है, उसपर ज्ञान, विष्णु और ईश्वर संतुष्ट हो जाते हैं^१। श्रुत-कटन इनके पढ़ने और सुननेवालेसे ब्राह्मणी प्रसन्न होते हैं तथा मार्कण्डेयमें भगवान् विष्णु और राममें भगवान् ईश्वर संतुष्ट होते हैं। पुराण-अवगण करनेवालेको सुख बड़ा धारण कर कृष्ण-भूतार्क तथा कुशल आसनपर बैठना चाहिये। अस्मन् न अधिक ऊँचा हो और न अधिक नीचा। पहले देवता और गुरुकी तीन प्रदक्षिणा करे, तदनन्तर दक्षिणार्थको चले। फिर ओम्कारमें अधिष्ठित देवताओंको नमस्कार करे एवं ज्ञात ^२ ^३ धर्मशास्त्र-ग्रन्थोंको भी नमस्कार करे।

श्रुताका मुख दक्षिण दिशाकी ओर और बायाँका मुख उत्तरकी ओर हो। पुराण और ^४ कथाकी मूर्ति कही गयी है। हरिवंश, रामायण और धर्मशास्त्रोंके अवगण करनेसे विपरीत विधि कही गयी है। ^५ निर्दिष्ट विधिको सुमन या पढ़ना चाहिये। देवतात्म्य या ^६ इतिहास-पुराणोंके वाचनके समय सर्वप्रथम ठस स्थान और ^७ तीर्थके माहात्म्यका वर्णन करना चाहिये। अन्ततः पुराणविक्रम करना चाहिये। माहात्म्यके अवगणसे गोदानका फल मिलता है। गुरुकी आज्ञासे पिता-पितृका अभिवादन करना चाहिये। ये वेदके सहाय, सर्वधर्ममय तथा सर्वज्ञानमय हैं। अतः द्विजश्रेष्ठ ! पिता-पितृकी सेवासे ब्रह्मकी प्राप्ति होती है।

पुराणार्थ पुराणोंका इराज करनेवाला प्राप्त होता है। वेदार्थ ग्रन्थों तथा तान्त्रिक ग्रन्थोंको स्वयं लिखकर उनका अध्ययन न करे। कथकोंको गाहिये ^८ वेदग्रन्थोंका विपरीत अर्थ न बताये और न वेदग्रन्थोंका असुद्ध पाठ करे। क्योंकि ये दोनों आत्मन पवित्र हैं, ऐसा करनेपर उन्हें पावमानी श्रद्धाओंका भी धार उप करना चाहिये। पुराणार्थिक प्रारम्भ, मध्य और अन्तस्मयमें ^९ मनमें ^{१०} करना चाहिये।

^{११} पुराणोंके विवेक-स्वरूप समझकर गन्ध-पुष्पदत्तसे ^{१२} पूजा ^{१३} चाहिये। ^{१४} अर्घ्यके विहितवाले (पञ्चगव्य) सुनने नग्नता वास्तुकीका स्पर्श सहायता चाहिये। इनका सम्मान न करनेपर दुष्ट होता है। अतः उत्सव कभी भी परित्याग नहीं करना चाहिये। ग्रन्थोंके ^{१५} भगवान् ^{१६} अक्षरोंको ज्ञानार्जन, अक्षरोंमें लगी मात्राओंको अक्षय्य वृक्ष, त्रिवर्णों में ईश तथा त्रिविधों में ब्राह्मणोंको सरस्वती सम्मान चाहिये।

पुराण-व्यवहारकी चाहिये कि पुराण-संहिताओंमें परिष्कृता सभी व्यास, वैशम्पैय आदि भद्रर्षियों तथा ईश्वर, विष्णु ^{१७} देवताओंको अष्टि, मध्य और अन्तस्मयमें ^{१८} करे। इनका स्मरण कर धर्मशास्त्रार्थवेत्ता विप्रको पुराणार्थिक एकप्रवृत्ति हो पठ करना चाहिये। स्वच्छकों स्पष्टश्रोत्रोंके उपकरण करते हुए सुन्दर धनिमें सभी प्रकरणोंके तान्त्रिक अर्थोंको स्पष्ट बतावना चाहिये। पुराणार्थ-^{१९} अवगणसे ज्ञान, शक्ति, वैश्य और शुद्ध विवेकतः अक्षय्य-वृक्षका फल ^{२०} करते हैं एवं सभी वयस्काओंको भी ज्ञान कर देते हैं ^{२१} सभी पात्रोंमें मुक्त

१-इतिहासपुराणकी ^२ विवेकतः। ^३ पुराणों ^४ अन्तस्मयमें या कथन

सर्वे शास्त्राश्च एवै शुद्धिर्द्वयं पुराणं च। तस्य विनियोगः तस्य सुनने प्रवृत्त्यर्थः ॥ (मध्यखण्ड, २।७।३-४)

निर्माण ■ संस्कार-कार्यके लिये श्वेतार्क-देखतान ■
हवनादि कार्य करने चाहिये । ■ उत्पन्न करने कार्य, पुनर्निर्माण
(नदी) ■ पवित्र जल तथा गन्धद्रव्य इत्यादि चाहिये ।

एकसदृश हाथका प्रसन्न आग तथा इससे अग्रे प्रगल्भता, मध्याम और इसके अग्रे प्रगल्भते निर्मित प्रसन्न कनिष्ठ अंग अंग है। देखनेवाले इच्छा करनेवालेको देवताओंकी प्रीतिभाके मागसे प्रसन्नता निर्वाण करने चाहिये।

नूतन [] निर्माण करनेवाला अपना जीवन []
 अपने रूपसे निर्माण करनेवाला [] अपने सम्पूर्ण कुशल
 उत्तर कर स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित होत है। धारी, कुप, []
 शरीरों तथा उसके निर्मित-स्थानमें जो धर्मिक कर-कर []
 या संकलित करता है, वह मुक्तिपथ प्राप्त करत रहत है।
 जहाँ धर्मों एवं देशताओंका निवास हो, उनके व्यवहारों स्थानों
 धारी, सात्विक आदिको निर्माण मानवोंको करत रहिते।
 नदीके तटपर और जंगलमेंके प्रचीन जंगल निर्माण न करे। जो
 मनुष्य [], [], [] नहीं करत, []

भय होता है तथा यह सम्पन्न भवने होता है ।
 अतः जनसंकुल गोपिके के लक्षण, मन्दिर, भद्रादिभ्यः पर लक्षण लक्षण पालिमे । उनके प्रादुर्भाव विधिके प्रतिष्ठित लक्षण पर प्राप्त है । अतएव प्रत्यक्षपूर्वक मनुष्य सम्पन्नोक्ति लक्षण शुभ सुसूत्रमे शान्तिके अनुसर मनुष्यपूर्वक लक्षण करे । भाग्यपूर्वक कविता, माध्यम लेख मन्दिरको मनुष्योक्त लक्षण विष्णुलोकाको प्राप्त होता है और प्रथम मनुष्योक्त लक्षण है । जो व्यक्ति गिरे हुए या गिर रहे अर्थात् जीवने मन्दिर लक्षण मनुष्य है, वह सम्पन्न मनुष्योक्त लक्षण प्राप्त करता है । जो

स्वर्णक सिन्धु, सिन्ध, सूर्य, ब्रह्मा, दुर्गा तथा लक्ष्मीनामधेय
आदिके मन्दिरोंका निर्माण करता है, यह अपने कुलका उद्धार
का बर्जित कल्याणक स्वर्णलोकाके निवास करता है। उसके बाद
बहसि मृत्युलोकमें अन्तर राजा या पुनर्जन्म पनी होता है। जो
मंगलकी शिखरसुन्दरीके मन्दिरमें अनेक देवताओंकी स्थापना
करता है, वह सम्पूर्ण विश्वमें स्वर्णीय हो जाता है और
स्वर्णलोकमें जन्म पूर्वजत होता है। जलकी अधिभा अपरम्परा
है। परोपकार या देव-कार्यमें एक दिन भी बिना पाया जलका
विचार न करता, शिखर, कार्यकुल, आचार्यकुलमें
अनेक शिखरोंका तार देता है। उसका ॥ ॥ ॥ हो
जाता है। अधिभुक्त दत्तात्रेय ॥ देवार्चन करनेसे अपना
उद्धार होता है तथा अपने शिखर-शत्रु आदि कुलियों भी वह तार
देता है। जलके ऊपर तथा ॥ (देवालय) के ऊपर रहनेसे
लिये कर ॥ अधिभे। प्रसिद्धित ॥ अधिभित्त
॥ कभी ॥ अधिभे। ॥ ॥
॥ पुजित देवशुद्धीको प्राप्तता नहीं करता
॥ उक्त कालका ॥ कालका ॥ शीघ्र नरककी प्राप्ति
होती है, परन्तु यदि मनुष्य या शत्रु उद्धार गये हों, अपना स्थान
॥ उद्धार पड़े या शिखर मचा हो तो ॥ पुनः
अधिका भिन्न विचारके करनी चाहिये।

ग्रन्थ सुदूरतक अम्बुधारे देवकीन्दर तथा देवगुहा आदि स्थिति नदी बताने लखिये । बाधमे इन्हें हटानेपर नक्षत्रहत्याका दोष लगता है । देवकाशदेवकी गौरीदेवके सामने पुष्करिणी आदि बताने लखिये । पुष्करिणी बगनेवाला अमृत फल प्राप्तकर स्वर्गलोकमें पुनः जीये नहीं जाता ।

(अध्याय ९)

■ ■ ■ अद्वैतिके निर्माणमें भूमि-सरीक्षण ■ ■ ■ वृक्षारोपणकी महत्विधा

सूक्तजी बोले—ब्रह्मणे ! देवमन्दिर, तद्वग
करमें सबसे पहले प्रमाणमुक्त भूमि की
भूमिकर संशोधन कर इस हाथ अथवा इसके
बैल्लेसे उसे जुतवाना चाहीये। देवमन्दिरके भूमिकर
सफेद बैल्लेसे तत्ता कूप, बाहीने उदितके लिये खले
बैल्लेसे जुतवाये। यदि वह भूमि ब्रह्म-बगके लिये हो तो उसे
जुतवानेकी आवश्यकता नहीं, मध्य उसे स्वयं कर लेन

चाहिये। उस पूर्वोक्त स्थानको तीन दिन जुतावना चाहिये। फिर हमारे पाँच प्रयत्नके [] होने चाहिये। देखभालमें तथा [] करने के लिये सारा प्रयत्नके आन्ध बरफ [] चाहिये। मृग, उड़द, पान, गिर, सँघा—ये पाँच त्रीहिण्डन हैं। मसूर और फल या चम गिरानेसे सारा त्रीहिण्डन होते हैं। (यदि ये बीज खेत, पाँच या सारा रातमें अमूर्तित हो जाते हैं तो उनके फल इस [] जानने चाहिये—तीन रातवाली भूमि उत्तम, पाँच

पूजन एवं हवन करना चाहिये। करिअं अनेक सिन्धे लख एवं होमका है। गृहस्थको कर्म नहीं करना चाहिये।

कुम्भोत्थ शकालानुसार संस्कार करना चाहिये। निम्न संस्कार किये होम करनेपर अर्घ्य-हवि कोरी है। अन्तः करके होमादि क्रियाएँ चाहिये।

कुम्भोत्थ ओम्कारपूर्वक अनेकान्, कुम्भोत्थ प्रोक्षण, विमूर्च्छिकरण तथा सुप्तमे अनेकित करण, अतिविह्वल करना, अतिविह्वलनी करना एवं संस्कार होने हैं। सुप्तमे करके अग्नि न रखने। भी अग्नि नहीं मीगकनी चाहिये। सुप्त एवं पवित्र व्यसितारा अग्नि प्रोक्षण करना चाहिये। संस्कार करे और उठे अतिविह्वल रहे। (१) और निम्न-बीज (बी) से प्रोक्षण करे और निम्न-पवित्रा घ्याय करे, इससे अग्नीष्ट है। इसके बाद आपुके सहारे करे। देखी भाग्यकीका और भाग्यकला अर्घ्य, पाठ, पूजन करे। अग्नि-पूज्यमे उपचान करे—

‘विमूर्च्छिकर का पत्र सविज्ञानम् यज्ञसामुनिने कारतामी है— हिरण्य, कनक तथा कुम्भम्’। समिधा-भेदसे निम्न विह्वल-भेदोंका वर्णन है, उनका उपनि विह्वलयोग करना चाहिये। बहुकपा, अतिरुपा और सारिकपा—इसका योग-कर्मा विह्वलयोग होता है। अज्यहोमसे हिरण्य, विह्वल (दुध, और मधु—इन समग्रम्) से हवन करनेपर कर्मा।

अग्नि-पूजन-विधि

सूतजी बोले—अग्निमे निम्न-विह्वल कर्मादिसे सभासिमे हवन हो जानेपर पणक्त अग्निदेवकी चेतन उपकारोंसे पूजा करनी चाहिये। यजुद्रा देवताओंकी पूजा हाथमे लाल पूजन से निम्न पढ़कर करे—

इष्टं सत्तिलसिक्कप्रीतिमुदीर्षितोभिर्वाक्यं वसवाम्।
तेषाम्कर्तव्यं यजमानस्य विनेत्रे यन्त्रोत्पत्तिं वदन्तीति वदतीति॥
(मन्त्रार्थ १।१८।३)

सुप्त क्षीरसे हवन करनेपर रत्न, वैदिक ग्रन्था, पुष्पहोममें बहुकपा और पाषाणसे हवन करनेमें कृष्णा, इन्धुमेयमें पयराग, पथरीयमें सुवर्णा और लोहित, मिस्त्रकपासे करनेपर केन्द्र, तिल-होममें धूमिनी, कण्डा करतिलका, पितृहोममें लोहितारवा, देवहोममें मनोजया गयी है। विन-विन समिधाओंसे हवन किया जाता है, उन-उम समिधाओंमें ‘वैधान्त’ नामक नियम रहते हैं।

अग्निमे मुक्तमे पणोकारपूर्वक आहुति पढ़नेपर अग्नि देवता सभी प्रकारका अभ्युदय करते हैं। मुक्तमे अतिरिक्त होय अहुति देनेसे अग्निष्ट फल होता है। वृक्षारुतिमे हिरण्य एवं अमृत आहुतिदोमे गन्ध, कप, कुम्भका, मुद्रपा, बहुकपा तथा अग्नि-रुपिका अतिरिक्त है। कुम्भके ऊपरमें अर्धत् मध्यमे अहुतिर्षा कर हुकर-उपर चाहिये। चन्दन, अगह, कद्रु, कदल तथा वृषिक (जूही) के समग्र अग्निमे अहुतिष्टा होता है।

विह्वल ज्वाल विह्वल-वृत्त-करणमे हो जलपुष्प होता है और धनका धन होता है। अग्नि मुक्त जाने तक धुआँ होनेपर भी चद्रम् अग्निष्ट होता है। ऐसी विह्वलमे अतिरिक्त करना चाहिये। पहले अहुतिष्ट आहुतिर्षा देकर भोजन करना चाहिये। अनन्तर पीसे मूल मन्त्रारा पवीत अहुतिर्षा देनी चाहिये। तीनों करारोंमे करे तथा वदन्ती-प्रीति-पूर्वक पणवान् विह्वली पूजा करे। (अध्याय २३—२५)

‘पणक्तम् हाथमे उत्तम (यज्ञपात्र), रत्न, वैदिक और अथवा-भुद्रा घारण किये हैं, देदीप्यमान सुकर्म-सदृश उत्तम स्वरूप है, कर्मलके ऊपर विराजमान है, नेत्र हैं तथा वे कटाओं और मुकुटसे सुशोभित हैं।’

मन्त्रार्थके पूर्व हारदेवोंमें यजमदेव, इन्द्र, तथा अतिरिक्त कर स्थापित करे। तदनन्तर आसन, पात्र, अर्घ्य, उपचामनीय गन्धादि उपचारोंसे पूजन कर मुद्राई प्रदर्शित करे। फिर सुवर्ण-वर्णवाले निर्मल,

अग्निमेव नाम होम-प्रणयोंका वर्णन

सुतजी बोले—ब्रह्मणे ! ॥ उपलब्धस्त-विधिके अनुसार किये गये विविध यज्ञोंमें अग्निमेव नामोंका वर्णन करता है । शतार्थ-होममें, पाँच सौ संख्यातकर्मों आहुतिवाले अग्निमेव कहिये ॥ गया है । ॥ प्रकार अग्न्य-होमोंमें विष्णु, तिल-वागमें वनस्पति, सहस्र-वागमें अयुत-वागमें हरि, सप्त-होममें वह्नि, षोडश-होममें इन्द्राग्न, शान्तिक कर्मोंमें वरुण, धारण-कर्मोंमें अन्न, निर-होममें अपर, प्रायश्चित्तमें द्रुताग्न तथा अन्न-वागमें वायु कहा गया है । देवप्रतिष्ठामें, यज्ञवाग, यमवाग पद्म-वागमें प्रजापति, धृवा-वागमें वायु, धारण्यमें इन्द्राग्न, गोदागमें अन्न, कन्यदागमें धेनुक ॥ तुल्य-पुन्य-दागमें धातव्यमसे अग्निदेव स्थित रहते हैं । ॥ प्रकार कृतेरत्नमें अग्निका सूर्य, वैश्वदेव-कर्मोंमें पावक, दीक्षा-प्रारम्भमें अजर्दन, दधीह्नयमें वज्र, प्रथमहोममें, पर्यदागमें अन्न, अस्विदागमें विश्वामित्र, राधाक्षममें मरुत, सीमन्तमें पित्राग्न, पुंसव्यमें इन्द्र, नामकरणमें पार्थिव, निष्कर्मणमें इन्द्रक, प्राशनमें सूर्य, बृहन्नकरणमें ब्रह्मन्, ब्रह्मोपदेशमें सम्पुत्राग्न, उपनयनमें सौमित्राग्न, सम्प्रवर्तनमें धनञ्जय, उदये ॥ सम्पुत्रे ॥ विष्णु तथा ॥ यज्ञमें सरीसृप नाम

है । अश्वमित्रका मन्त्र, रथमित्रका जातवेदस, गजमित्रका मन्दर, सूर्यमित्रका विष्णु, तैर्यमित्रका वरुण, ब्राह्मणमित्रका हविर्भुक् ॥ अनुभुक् है । द्यवाग्निमें सूर्य कहा जाता है । ॥ नाम पावक, गृह्यमित्रका धरणीवधि, वृतामित्रका नल ॥ सुत्तिकर्ममित्रका ताम्र वस्त्र है ।

विन इत्येवम होममें उपयोग किया जाता है, उनका प्रमाण होता है । प्रमाणके विना किसी नया इत्येवम होम परम्परायक नहीं होता । अतः ब्राह्मणके अनुसार प्रमाणका परिज्ञान कर लेना चाहिये । यौ, दूध, पाद्माग्न्य, दधि, मधु, सक्त, गुह, ईश, पशु-पुन्य, मुषरी, समिध, बीज, इन्द्राग्न, मय्य जयपुन्य और केसर, कर्मल, जीवन्ती, मातुलुङ्ग (बिजौटा नींबू), ॥ सुन्धक, ककड़ी, गुह्य, तिरुक्, तीन ॥ आदि अनेक होम-इत्य कहे गये हैं । पूर्वपत्र, जहाँ कहा समिध यज्ञेऽग्न्याग्नौ स्मिन् चाहिये । विलयन तीन पावक, किन्तु तिल-मिश्र नहीं होना चाहिये । इनमें पाक ॥ यस्ता य ॥ नहीं होनी चाहिये । ॥ निमित्त ॥ जलवाले ज्ञानिकर्म प्रशस्तीत वेदोक्त होवे चाहिये ।

(अध्याय १७-१८)

यज्ञ-कार्योंका स्वल्प और पूर्वाहुतिकी विधि

सुतजी बोले—ब्रह्मणे ! ॥ उपयोगमें अग्नेवाली सुवाके निर्माणमें—श्रीचर्च, दिग्गज, शीरी (दूधवाले वृक्ष) विल्व और खदिरके कष्ट प्रशस्त कहे गये हैं । यग-क्रियामें इनसे बने सुवाके उपयोगमें सिद्धि प्राप्त होती है । देव-प्रतिष्ठामें अश्विन्, खदिर और केसरके वृक्षमें भी सुवाके लिये प्रशस्तानें उक्तम कहा है । भुव्य प्रतिष्ठाम्बुकी, सप्तोशन तथा संस्कार-कर्मोंमें और यज्ञदिकमेंभी प्रयुक्त होता है । सुवाके निर्माणमें विल्व-कष्ट प्रधान ॥ चाहिये, परंतु उसके ग्रहणके ॥ आदि विधियाँ न हो । ॥ यज्ञको ग्रहण करनेवाला ॥ पहले उपवास करे और मध, ॥ आदि संधी वस्तुओंका परित्याग कर दे, स्त्री-सम्पर्कसे भी दूर रहे । एक काष्ठसे सुवा और सुक् दोनोंका निर्माण किया जा सकता है । ॥ निर्माण शक्यते विधिके अनुसार करना

चाहिये । दर्वी अर्थात् बनकुलका निर्माण स्वर्ण या तमिरे किया जाना चाहिये । यदि ब्राह्मणसे बनकुल बनानी हो तो गंधारी वृक्ष, तेंदुका वृक्ष और दूधवाले वृक्षके काष्ठसे बारह अङ्गुलकी कनवी चाहिये । उसका नीचेका पन्धल दो अङ्गुलका होना चाहिये । यज्ञ-साधनमें यह उपयोगी है । तमिरी बनकुल कार्पस लोले, यवः आघात किलेयि होती है और उसका पन्धल पाँच अङ्गुलका तथा लंबाई अठ्ठ हाथकी होती है । यही दर्वी (कस्तुरल) पायम-निर्माणमें उपयोगी है । अज्य-लोचनके लिये दस लोलेयि काष्ठमयी कस्तुरल होती है । इसके ॥ ब्राह्मणसे सोमस अङ्गुलके मापमें दर्वी (बनकुल) बनाने । अज्य-स्वाली तमिरी या मिट्टीकी भी हो सकती है ।

सुतजी बोले—ब्रह्मणे ! ॥ पूर्वाहुतिकी विधि

बतला रहा है, इसके अनुष्ठानसे यह पूर्ण होता है। अतएव पूर्णाहुति विधिपूर्वक करनी चाहिये। पूर्णवृत्तिके बाद यज्ञमें आवहित किये गये देवत्वओंको अर्घ्य देना चाहिये।

यदि वह अपूर्ण रहे तो यजमान **अपवित्त** हो जाता और वह पूर्ण फलप्राप्त नहीं होता। युक्तमें वह रत्नकर वज्रक, सूर्यको अर्घ्य देना चाहिये। यह सम्पन्न हो जानेपर ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये। तदनन्तर यजमान काये प्रवेष्ट कर कुल-देवत्वओंकी शायंज करे। शीघ्रा-यागमें पूर्णवृत्तिके समय 'सप्त ते' (यजु १७।७९), 'देहि ते' (यजु ३।५०), 'पूर्वा हवि' (यजु ३।४९) तक 'पुनस्तु' (यजु १९।३९) इन मन्त्रोंपर पाठ करे तथा निय-वैदिक यागमें 'पुनस्तु', 'पूर्वा हवि', 'सप्त ते' तथा 'देहि ते' — का पाठ करे। विद्वानोंको इनमें अपने कुल-परम्पराका भी विचार करना चाहिये। पूर्णाहुति **अक्ष** होकर **अव्यय** करना चाहिये, **अव्यय** नहीं। ग्रहहोम तथा शतहोममें एक पूर्णवृत्ति देने चाहिये। महलपागमें दो, अमृत-होममें चार, सप्तस पुनरीकमें **अमृत** पुन-होममें एक, शत इक्षु-होममें दो, गर्वाधान, अवाग्रजन, सीमन्तोन्नयन संस्कारोंमें और भार्याहोममें **अमृत** वैश्वदेव-यागमें एक पूर्णवृत्ति देनेका विधान है।

मन्त्रीधारणमें ऋषि-छन्द, विनियोगादिकर प्रयोग चाहिये। यदि इनका प्रयोग **अव्यय** हो तो **अव्यय** बनता होता है। 'सप्त ते' इस ब्राह्मण-मन्त्रके सर्वप्रथम ऋषि, अगती छन्द और अक्षि देवता है। 'देहि ते' इस मन्त्रके प्रजापति **अमृत** अनुष्टुप् छन्द और प्रजापति देवता है। 'पूर्वा हवि' इस मन्त्रके शालग्राम ऋषि, अनुष्टुप् छन्द एवं अक्षि देवता है। 'पुनस्तु' इस मन्त्रके पवन ऋषि, अगती छन्द देवता **अमृत** है।

इस रीतिसे वक्-वक् मन्त्रोंके उच्चारणके समय ऋषि, छन्द एवं देवत्वका स्मरण करना चाहिये। जप-कालमें मन्त्रोंकी **अव्यय** पूरी करनी चाहिये। निर्दिष्ट संख्याके बिना **अव्यय** **अव्यय** होता। अमृत-होम, लक्ष-होम और कोटि-होममें विन ऋषिभू ब्राह्मणोंका धरण किया जाय, वे **अव्यय** **अव्यय** हो जायेंगे। ऋषिचोकी संख्या अभीष्ट होमनुसार करनी चाहिये। प्रपन्नपूर्वक उनकी पूजाकर एवं टक्षिण ब्रह्मण कर उनके संतुष्ट करना चाहिये। इस प्रकार निर्दिष्टपूर्वक याग-कार्य करनेवाला पवित्र यजु, अदित्य और मरुत्वोंके द्वारा दिग्वलेकमें पवित्र होता है तथा **अव्यय** **अव्यय** नहीं निकल कर अपने में **अव्यय** करता है। जो **अव्यय** यागको बिना अर्घ्यात् निजसम-प्राप्तपूर्वक ईश्वरार्पण-बुद्धिसे लक्ष-होम करता है, वह अपने अभीष्टको प्राप्त कर परमपर प्राप्त कर लेता है। पुत्रार्थी पुत्र, धनार्थी धन, भार्याार्थी भार्या और कुम्भारी ज्ञान चोक्की प्राप्त करती है। एवमग्रह एवम लक्ष **अव्यय** **अव्यय** अमृत ऐश्वर्य प्राप्त करता है। जो पक्षिक निजसम-प्राप्तपूर्वक कोटि-होम करता है, वह **अव्यय** **अव्यय** जाता है। **अव्यय** **अव्यय** है कोटि-होम लक्ष-होमों की गुप्ता श्रेष्ठ है। ऋषिज् ब्राह्मणोंके **अव्यय** अर्घ्य भी होता बन सकता है। आत्मनोंमें कुरासन **अव्यय** गन्ध गन्ध है।

देवता पञ्चासनपर स्थित रहते हैं और वास **अव्यय** करते हैं, अतः पञ्चासनम् होकर ही अर्चना करनी चाहिये। 'देवो भूत्वा देव्यन् करोत' इस मन्त्रके अनुसार पञ्चासनस्थ देवत्वओंका अर्चना पञ्चासनस्थ होकर ही करना चाहिये। यदि ऐसा न किया जाय तो सम्पूर्ण **अव्यय** **अव्यय** छरण **अव्यय** लेती है।

(अध्याय १९—२२)

॥ अक्षय भवन सम्पूर्ण ॥



मध्यमपर्व

(द्वितीय भाग)

यज्ञादि कर्मोंके मण्डल-निर्माणका विधान तथा ऋषिवादि परिषद्‌के दर्शनका फल

सूतजीने कहा—ब्रह्मजगण ! अब मैं आपत्तियोंके पुराणोंमें वर्णित मण्डल-निर्माणके विषयमें कहूँगा, कुट्टिमन् स्वर्गिक क्षमसे नापकर मण्डलका माप निश्चित करे। फिर उसे तत्तत् स्थानोंमें विधि-विहित लाल अर्द्ध रंग भरें। उसमें देवताओंके अन्न-विशेष बाहर, मध्य और कोणमें स्थितकर प्रदर्शित करे। शम्भु, गौरी, [] एम और कृष्ण अद्वैतका अनुक्रमसे निर्देश करे। फिर सीमा-रेखाओंमें एक अक्षुण्ण ठीक-उन-उन अर्ध-भागोंमें वृक्ष करे। विष्णु और विष्णुके महाभागमें शम्भुसे प्रारम्भ कर देवताओंकी परिकल्पना— [] करे। अतिज्ञानमें रामपर्यन्त, अस्वत्थाममें कृष्णपर्यन्त और दुर्गाभागमें [] मण्डलका [] अधम ब्राह्मण एवं द्वाद न करे। सूतजीने पुनः कहा—अब मैं ऋषिवाक्य स्वरूप यत्नकरा हूँ। [] इसका [] पिलाता [] जो गोपनीय है। यह [] (पक्षी-विशेष) - पक्षीविशेष, मध्य-ऋषि और वनित-ऋषि-भेदसे तीन प्रकारका

[] है। इसका दर्शन सैकड़ों जन्मोंमें किये गये पापोंसे नष्ट करता है। मयूर, कृषक, सिंह, ऋषि और वनितों परम, सेतमें और कृष्णपर भूलसे भी देख ले तो उसको अप्सराएं धरे, ऐसा करनेसे दर्शनके सैकड़ों ब्राह्मणवर्जित पाप नष्ट हो जाते हैं। उनके पोषणमें कर्तव्य पिलायी [] और दर्शनसे घन तथा जाय [] है। [] महाकाय, कृषक महाशिवका, सिंह दुर्गाका, ऋषि नरयणका, वृषक त्रिभुवनदरी-लक्ष्मीका लभ है। [] यदि प्रतिदिन इनका दर्शन किया जाय तो पाहरोस मिट जाता है। इसीलिये प्रयत्नपूर्वक इनका पोषण करना चाहिये। सभी यज्ञोंमें सर्वोत्कृष्टमण्डल सभी प्रकारकी पुष्टि प्रदान करता है। सर्वशक्तिमान् ईशाने साधकोंके हितके लिये इसका प्रकाश [] है। सम्पूर्ण ब्रह्म-भागमें सर्वोत्कृष्टमण्डलका विशेष [] किया [] है और तत्-तत् स्थानोंमें तत्-तत् [] जाना है।

(अध्याय १-२)

यज्ञादि कर्मोंमें दक्षिणाका भाषाण, विधिवत् कर्मोंमें परिजपित

[] और कलश-स्थापनका वर्णन

सूतजी बोले—ब्रह्मजी ! [] कर्म दक्षिणाप्राप्त एवं परिष्कारकी [] नहीं करना चाहिये। ऐसा यज्ञ कभी सफल [] होता। जिस यज्ञका जो [] मतलबया गया है, उसके अनुसार विधान करने चाहिये। मन्त्ररहित यज्ञ करनेवाले व्यक्ति नरकमें जाते हैं। उनका [] होता, [] तथा जितने भी सहायोगी हों, वे सभी विध्वंस []।

अस्सी वषटों (कौंडियों) का एक पत्र होता है। खोलकर फणोंका एक पुराण [] जाता है, उसका पुराणोंकी एक स्वच्छपुष्ट तथा आठ जलमयुक्तमेंसे एक स्वच्छपुष्ट कटोरी जाती है, जो यज्ञ अर्द्धमें दक्षिणा दी जाती है। यदि ठाकुरोंमें अतिज्ञान-कर्मों दो स्वच्छपुष्ट, कृष्णोत्सर्गमें आधी स्वच्छपुष्ट (निष्क), कुत्तरी एवं आमलकी-यागमें एक स्वच्छपुष्ट (निष्क) दक्षिणा- रूपमें [] है। लक्ष-होममें चार स्वच्छपुष्ट, कोटि-होम

देव-ऋषि तथा ब्राह्मणके उत्सर्गमें अठारह स्वच्छपुष्ट दक्षिणास्वरूप देनेका विधान है। तद्वत् तथा पुष्करिणी-यागमें आधी-आधी स्वच्छपुष्ट देनी चाहिये। महादान, दीक्ष, कृष्णोत्सर्ग [] तथा-ब्राह्मणमें अपने विचयके अनुसार दक्षिणा देनी चाहिये। महाभरतके कथनमें अस्सी रत्नी [], अतिज्ञाकर्तृ, लक्षहोम, अमृत-होम तथा कोटिहोममें सौ-सौ रत्नी सुवर्ण देना चाहिये। इसी प्रकार शस्त्रोंमें निर्दिष्ट [] अतिज्ञानमें ही दान देना चाहिये, अपात्रको नहीं। यज्ञ, होममें [] करत, पूजा अर्द्धिके लिये शस्त्र-निर्दिष्ट विधिका ही अनुसरण करना चाहिये। यज्ञ, दान तथा अतिदि कर्मोंमें दक्षिणा (उत्सर्ग) देनी चाहिये। बिना दक्षिणाके ये कार्य नहीं करने चाहिये। ब्राह्मणोंका जब वरप किया जाय तब उन्हें रत्न, सुवर्ण, कटो अर्द्ध दक्षिणास्वरूप देना चाहिये। यज्ञ एवं

भूमि-दान भी विहित है। अन्यान्य दानों एवं यज्ञोंमें दक्षिणा एवं द्रव्यद्रोह अलग-अलग विधान है। विधानके अनुसार दक्षिणा देनेमें असमर्थ होनेपर यज्ञ-कार्यकी सिद्धिके लिये देव-प्रतिमा, पुस्तक, रत्न, गाय, धान्य, शिरस, फल एवं पुष्प आदि भी दिये जा सकते हैं। सूक्तकी पुनः कोसे—
 ऋद्धो ! अब मैं पूर्णपातक सम्मुख आता हूँ। उसे सुने।
 काम्य-होममें मुष्टिके पूर्णपातक है। ऋतु मुष्टे
 आत्मके एक मुखिकाव कहते हैं। पूर्णपातके
 निर्माण करना चाहिये। उन यज्ञोंमें कर कर
 दक्षिणा करे।

कुम्भ और कुम्भसंयोगे निर्माणके पारिवर्त्मिक इत प्रमाण है—सौम्योत्तर कुम्भके [] रौप्यमे, सर्वलोभकुम्भके लिये दो रौप्य, द्वाविंशहासके लिये त्रयो रौप्य, सहस्रर तथा मेरुपृष्ठ-कुम्भके लिये एक सौ तथा चार रौप्य, महाकुम्भके निर्माणमें द्विगुणित स्वर्णकाय, वृत्तकुम्भके लिये एक रौप्य, पञ्चकुम्भके [] कुम्भ, अर्धचन्द्र-कुम्भके लिये एक रौप्य, खंडिकुम्भके निर्माणमें [] सैन्धु तथा चात मन्त्र काय, रौप्यकायमें एक उदात्तमध्ये एक [] स्वर्ण, इन्द्रियजननमें [] दो [] पारिवर्त्मिक देना चाहिये। कम्भ-कुम्भ- (अर्ध गोलेका) निर्माताके दस वज्र (एक वज्र कायर अस्सी कीड़ी), इससे [] कुम्भके निर्माणमें एक [] (मन्त्रोक्त सौम्य वायु), सत्ता हाथके कुम्भ-निर्माणमें एक पत्र, वृत्तकुम्भके निर्माणमें अतिदिन दो पत्र, गृह-निर्माणमें अतिदिन एक रत्नी सोन, कोष्ठ बनवाना दो तो आधा पत्र, रंगसे रीझनेमें एक पत्र, ब्रह्मके रोपणमें [] डेढ़ पत्र पारिवर्त्मिक देना चाहिये। इसी तरह पृथक् [] अनेक रीतिसे पारिवर्त्मिकता विपन्न किया गया है। यदि नाशित सिरसे मुच्छन करे तो उसे दस पारिवर्त्मिक देनी चाहिये। विप्रेक्षे नव अवधिके रक्षणके लिये [] सप्त पत्र भी देना चाहिये। भास्के रोपणमें एक दिनका एक पत्र

परिचालनिक होता है। तैल और शर्करा से वर्जित खादकी मूल्यवर्धक सिध्दे [] [] [] देना चाहिये। इसमें खादकी लब्धवर्धक अनुसार कुल वृद्धि [] [] [] सकती []। मिट्टीके खोदनेमें, कुदरत बलनेमें, हस्त-दण्डके निर्वाहन तथा सहस्र पुष्प-बनानमें दस-दस कर्किको परिश्रमिक देना चाहिये। छोटी फल बसनेमें एक कर्किकी, बड़ी फाल बनानेमें दो [] [] चाहिये। कृषकका आधार फल या फलाने होना चाहिये। इन दोनोंके अन्तर्गत मिट्टीका ही आधार बनाया जा सकता है।

सुप्रसन्न पुनः बोले—ब्राह्मणे । जब मैं कलशार्चने के विषयमें विज्ञित था तब कलश करता हूँ, जिसका उपयोग करनेसे बहुत लाभ है और चारोंमें सिद्धि प्राप्त होती है । कलशार्चने सदा सब अस्त्रों पर भी प्रयुक्त होते हैं । कलशार्चने केवल ब्रह्म करनेसे ही सिद्धि नहीं होती, इसमें भस्म और पुष्पोंमें देवताओंका अस्त्राह्न कर उनका पूजन भी करना चाहिये—ऐसा न करनेसे [] सिद्धि [] प्राप्त है । बट, [] धन-वृक्ष और किरण-वृक्षके [] करणार्चने द्वारा रखें । कलश सोना, [] लोह या पीतलके बनाये जाते हैं । कलशका निर्माण [] अनुष्ठान करें । [] अर्घ्य, भिक्षा, नदी, सुन्दर एवं चरमों पुरित होना चाहिये । कलशार्चने निर्माणके विषयमें भी विज्ञित प्रमाण बालक [] है । [] चानके [] हुआ कलश उत्कृष्ट नहीं माना गया है । जहाँ देवताओंका अस्त्राह्न-पूजन किया जाय, ठीकीकी संश्लिष्ट कलशार्चनी [] करनी चाहिये । व्यक्तिगत करनेपर फलदायक अस्त्राह्न उत्पन्न कर लेते हैं । [] बनाकर [] ऊपर निर्दिष्ट [] [] [] [] वरुणादि देवताओंका अस्त्राह्न करने के समय पूजन करना चाहिये ।

(अध्याय ३-५)

[illegible]

२-प्रयत्नित बाण्डरने जम, पीसत, _____ अन्तर (कंस) — ये _____ मने मने है :

अष्टादशमुखात्मक पूजन करने चाहिये। अष्टादश और अष्टादश मासके गुह्य पक्षकी अष्टमीमें चण्डिकादेवीका प्रसन्नकरान करने अत्यन्त भक्तिपूर्वक पूजन कर चाहिये अतिशय वांछित। चैत्र मासके शुक्ल पक्षकी अष्टमीमें अनेक-पुण्यसे पुण्यसे भाग्यकी देवीका अर्चन करनेसे सम्पूर्ण श्रेष्ठ निम्न हो जाते हैं। अष्टमा मासमें अथवा सिंह-संक्रान्तिमें ऐतिह्यीय अष्टमी हो तो उसकी अत्यन्त प्रशंसा की गयी है। अतिशयसे तबभीमें पूजा करने चाहिये। अष्टमा मासके पक्षकी दसमीमें गुह्य आश्विनपूर्वक रात्रिकाले अष्टमेश्वरी स्तोत्र है। ज्येष्ठ मासके गुह्य पक्षकी दसमी अष्टमेश्वरी पञ्चमाली है। अष्टमा दसमी विजय और अष्टमा पञ्चमाली कहलानी है।

एकदशी-अतः करनेसे सम्पूर्ण धन यह हो जम्मे है। इस अगले दशमीको [] एक ही बार [] करना पड़िये। दूसरे दिन एकदशीमें जन्मस कर दुवदशीमें करना बदली चाहिये। दुवदशी तिथि दुवदश फाल्गुन लग्न करती है। चैत्र म्हालके शुक्ल पक्षकी त्रयोदशीमें अनेक कुम्हारि सम्प्रदायोंमें कामदेवकी पूजा करे। इसे जन्म-त्रयोदशी कहा [] है। [] मासके शुक्ल पक्षकी अष्टमी शनिवार या [] पक्षवसे युक्त हो तो गङ्गामें स्नान करनेमें सैकड़ों सुखलक्षण फल प्राप्त होता है। इसी मासके शुक्ल पक्षकी त्रयोदशी यदि शनिवार या श्रावणमासे युक्त हो तो १५ महामालकी-पर्व कहलाता है। इसमें किन्ही गन्ध, कपूर, चन्द एवं लाल अक्षत होता है। चैत्र मासके शुक्ल पक्षकी चतुर्दशी सम्प्रदायोंमें कहा जाती है। इस दिन धनुरीकी अग्नि कामदेवका अर्चन करना चाहिये, इससे उतम स्थान प्राप्त होता है। जन्म-चतुर्दशीका अतः सम्पूर्ण धनोक्त नाश करनेकरता है। इसे प्रतिपद्विक

मनुष्य अनन्त सुख करता है। भेत-चतुर्दशी (चतु-चतुर्दशी) को तपस्वी ब्रह्मचर्यको ध्यान और दान देनेसे मनुष्य मरत्येकमें नहीं जाता। परल्लुप्त मासके वृत्त्य पक्षकी चतुर्दशी नामसे और वह सम्पूर्ण पुर्ति करनेवाली है। इस दिन भारी पाहरोम जान करके अतिपूर्वक निम्नोकी अवकाश करनी चाहिये। वैन मासकी पूर्विका विना गन्ध तथा गुस्कारसे युक्त हो तो वह पक्षकी नहीं जाती है। यह अनन्त पुण्य प्रदान करनेवाली है। इसी प्रकार विराट्पक्ष नक्षत्रसे युक्त वैशाखी, महज्येष्ठी भादि मास पूर्विकारी होती हैं। इनमें गये ज्ञान, दान, जप, विध्य आदि परकार और प्रायिके विना संकृत विष्णुलोकको जात करते हैं। छविहारमें विरोध पुण्य प्रदान करता है। प्रकाश, जलजल-क्षेत्रमें महावीरी, पुष्पोत्तम-क्षेत्रमें महज्येष्ठी, सुवृत्त-क्षेत्रमें महापक्षी, वैद्यारमें महाप्राणी, बट्टीकनक्षेत्रमें महापक्षी, पुष्कर कमलकुम्भमें महावर्द्धिनी, अयोध्यामें तथा महावीरी, प्रकाशमें महामावी तथा पञ्चकालगुनी पूर्विका विना कल देनेवाली है। इन शुभशुभ कार्य किये जाते हैं, वे अक्षय हो जाते हैं। पूर्विका मौनुदी है, इसमें चन्द्रोदय-वसरमें अतिपूर्वक पूजा करनी चाहिये। प्रत्येक उदयकालको तर्पण और आहुतिक्रम अवाहय करना चाहिये। बरसके वृत्त्य पक्षकी अमावास्यामें प्रत्येक समयकी परविधि पूजा और अतिरिक्त रिज्जे करना चाहिये एवं नदीतीर, पर्वत, गोष्ठ, वृक्षान्त, वीरुत, अपने घरमें और बाहरमें दीपोंको सज्जन चाहिये। (अध्याय ४-८)

विष्णुस्वरूप वास्तोष्मतिरिव इमं सुखितो यथा है। इसका जो प्रत्यक्षपूर्वक निरन्तर करता है, उस प्रकाश जलने है और जो इतकमलके मध्य निवास करनेवाले भगवान् अधुना-विष्णुका ध्यान है, वह वैष्णवों सिद्धि प्राप्त करता है। यज्ञकर्मकी पूर्णतम आध्यात्मिक प्रकाश को तथा सुखी दक्षिणामं दे, अन्य साधकोंको भी सुखी प्रदान करे। प्रत्यक्ष और विष्णुकृत इवन करे। आचार्य और निरन्तर यज्ञमानस करलके जससे अधिपति : पूर्णतः देकर भगवान् सूर्यको अर्घ्य प्रदान करे। साधकोंकी लेकर

करने प्रवेश करे, अन्तर साधन-भोजन कराये। तीन, अन्य विष्णुओंका अपनी प्रतिके अनुसार सम्मान करे। फिर अपने मधु-मन्त्रोंके साथ स्वयं भोजन करे। उस दुष्ट, कर्तले पदार्थ, पुने तथा करे। विभिन्न पदार्थोंका उपयोग करे। उत्पन्न, मूल, कटिल, अन्य, मधु, धी, गुह, सोच मन्त्रके साथ मातुलु (विशेष कर्ष), कटिल, धात्रील एवं शिर और मरिच ऊर्ध्वसे करे पदार्थ सेवकों प्रदान कहे गये।

(अध्याय १०—११)

कुशाकण्डिका-विधान अग्नि-विष्णुओंके नाम

सूत्रजी कहते हैं—कहाये। अन्य विष्णुस्वरूप मन्त्राग्नि-विधि का रस है। अपनी वेदों पर प्रकाशके अनुकूल ही मन्त्राग्नि-विधि चाहिये। दूसरेकी प्रकाशके विधानसे याग-विशेषोंका अनुष्ठान करनेपर भयभीत होता है और विधिहीन नाश होता है। पुन, कन्या और आगे उसके होनेवाले पुत्रादि गुणनामसे कहे जाते हैं। यज्ञमन्त्रके किन्ते उपाय होते हैं, वे सब गुणनामसे कहे जाते हैं। उनके संस्कार, राग और उचितकर्म-क्रियाओंमें अपने मन्त्राग्निसे अनुष्ठान करना चाहिये। आचार्य द्वारा विहित कल्पको दक्षलक्ष्मीये कहा गया है। आचार्य इन मन्त्रोंमें तीन कुशाओंका परिष्कार करता है : जिस मन्त्रसे कुशा ग्रहण करता है, उसके शक्ति दत्त, अन्य और विष्णु देवता हैं। पृथ्वीके प्रोक्तकी 'भूमी' (यजु-१३।१८) इस मन्त्रका विनिर्माण करे : इस शक्ति दत्त हैं, गायत्री और जगती छन्द तथा देखते हैं। तीन कुशाओंको तर्जनी तथा अंगुलिसे पकड़कर ईशानकोणसे लेकर दक्षिण छोड़े हुए ईशानकोणतक वलम्बावृत्तिमें घुमाये तथा उनसे भूमिमें मर्दन करे।

परिलुप्त-विधि है। 'यः कर्त्तव्यः' (यजु-१६।१६) इस मन्त्रके द्वारा रोमयसे भूमिमें प्रवेश करे। तदनंतर (कैरवी लम्बाईसे करे स्वयंके द्वारा) रेखाचित्रा करे। पृथ्वीसे दक्षिणकी ओर तीन रेखाएँ खींचे। पहली रेखा दक्षिणकी ओर अन्तरा उतारकी करे। इसके विपरीत करनेपर अमंगल होता है। इसके बाद अगुह तथा अवर्धनासे उन तीनों रेखाओंमें मिट्टी भरें, इसे उद्धरण कहा है। इस समय 'विष्णुस्वरूपम्' (यजु-७।२३) इत्यदि कर्त्तव्य करे। कुशापुष्पोक्त अथवा पञ्चगव्य का पञ्चमोदक अथवा पञ्चरत्नयुक्त जलसे (अभिषिञ्चन) करे। अन्तर कर्त्तव्यसाधनभूत विष्णु स्वर्ग अथवा शैलामिका उन्नयन करे। अपने रखने स्थापित करे। इस क्रियामें 'वे मन्त्राग्नि' इस मन्त्रका पाठ करे। 'कन्यादाग्नि' (यजु-३५।१९) इस मन्त्रका उच्चारण करते हुए लायी गयी अग्निमेंसे कुशा आग निकालें और पैर दे, वह 'कन्यादाग्नि' कही गयी है। कन्यादाग्निका ग्रहण न करे। 'निरन्तर' इस मन्त्रसे उस अग्निमें आगदान।

पञ्चमं हवीकेतो एत एवेतो की : विष्णुस्वरूपके साधन : अभिषेकः ।
पश्चिमोदकः इत्यः पञ्चमंके कुशः कुशः पञ्चमी उन्नयनपरिष्कारपुनःपुनः ।
विपरी विपः उन्नयनपश्चि वैष्णवः पञ्चमी है पञ्चममन्त्रोदकविष्णुः ।
तो सब से है मन्त्र से कुश से कुशके ।
नके देवदेवविष्णु विष्णु उन्नयन यः अन्नमन्त्रोदक उन्नयन पञ्चमः ।
उन्नयनविष्णु उन्नयन पञ्चमं विष्णु उन्नयन यः पञ्चममन्त्रोदक यः पञ्चमः ।
आपनि ये विष्णुस्वरूपकुश इत्यन्तरे उन्नयनविष्णुः ।
उन्नयनविष्णु उन्नयनविष्णु दे वीर्य विष्णु पञ्च यः वैष्णवः ।
(अध्याय २।१२।१५४—१६३)

‘वैज्ञानिक’ (यजु. २६।७) इस मन्त्रसे कुछ अङ्गिमें अग्नि-स्थापन करे। ‘अध्वानि-’ इस मन्त्रसे अङ्गिमें प्रतिष्ठा करे तथा अग्निदेवको नमस्कार करे। अङ्गिके दक्षिणमें वरुण बिन्दे गये ब्रह्माको कुछके आसनपर ‘ब्रह्मन् ब्रह्म अध्विन्यताम्’ ब्रह्मकर बैठवे। उस समय ‘ब्रह्म अङ्गि-’ (यजु. १३।३) तथा ‘सोमं धेनु-’ इन दो मन्त्रोंपर करे। उत्तरभागमें प्रणीत-वाक्यसे स्थापित करे। ‘इयं मे वरुण-’ (यजु. २१।१) इस मन्त्रसे प्रणीत-वाक्यो जलसे भर दे। इसके अनन्तर कुछके बाएँ ओर कुश-परिभरण करे और वरुण (सविष्णु), धीति, अन्न, शिर, अप्स, भृगुवाक्य, फल, दही, दूध, पनस, करिसेल, मोदक आदि यज्ञ-सम्पत्तियों प्रत्येक पदार्थोंको वरुणवाक्य स्थापित करे। विष्णुवाक्यको एकहीसे बनीं सुधा तथा शमी, उज्जीपत्र, चरुवाक्य आदि भी स्थापित करे। प्रणीत-वाक्य स्वर्ग होय-वाक्यमें गौं ब्रह्म करे। काल-कुम्भको यज्ञपर्यन्त स्थिर रखना चाहिये। अग्नेयवाक्यसे पवित्रता मोक्षणी-पात्रमें स्थित करें। प्रणीत-वाक्य जलसे प्रोक्षणी-पात्रमें तीन बार जल छारे। प्रोक्षणी-पात्रको बाएँ हाथमें रखकर मध्यम तथा अनुजसे पवित्रता प्रत्येक कर ‘पवित्रं ते-’ (श्रु. ९।८३।१) इस मन्त्रसे तीन बार जल छिड़के, स्थापित पदार्थोंपर प्रोक्षण करे और प्रोक्षणी-पात्रको प्रणीत-वाक्य दक्षिण-भागमें पदार्थमय रख दे। अग्नेयवाक्यसे अन्तर्गते रखे। सोमसे अपस्त्रवाक्य निरसन करे। इसके बाद पवित्रकरण करे। एक जलसे हुए जलको अंगारेको लेकर अङ्ग्यवाक्य और चरुवाक्यसे ऊपर प्रथम करे। इस समय ‘कुशभिरि-’ (यजु. १४।२) इस मन्त्रपर फल करे। अनन्तर सुष्मको राखे

इसमें भक्षण कर अङ्गिपर तपये। सम्पत्तियों-कुशओंसे सुष्मको भूलसे अङ्ग्यवाक्य और सम्पत्तियों करे। इसके प्रणीतको जलमें तीन बार प्रोक्षण करे। पुनः सुष्मको उन्नपर तपये और प्रोक्षणीके उत्तरकी ओर दे। अङ्ग्यवाक्यसे सम्पत्तियों ले। चरुवाक्यसे तीन बार कर ले। ईशानसे दक्षिणवर्त होते हुए ईशानपर्यन्त चरुवाक्य करे। वरुण अग्निदेवका इस प्रकार ध्यान करे— ‘अग्नि देववाक्य रात वर्ण है, उनके तीन मुख हैं, वे अपने बाएँ हाथमें कमण्डलु तथा दाहिने हाथमें सुधा ग्रहण करते हुए हैं।’ इसके अनन्तर सुष्म लेकर हवन करे।

इस प्रकार सगुहोक्त विधिके द्वारा ब्रह्म तथा अङ्गिकोंका करण करना चाहिये। कुशपरिभरण-कर्य करके अङ्गिका पूजन करे। अन्तर, अङ्ग्यवाक्य, यज्ञवाक्य, वायुवाक्य, प्राजापत्य तथा विष्टकुर हवन करे। प्रजापति और इन्द्रके विधित दी अङ्गुतिर्वा अङ्ग्यवाक्य है। अग्नि और सोमके विधित अङ्गुतिर्वा अङ्गुतिर्वा चरुवाक्य है। ‘सूर्यः सः’—ये तीन वाक्यवाक्यवाक्य है। ‘अध्वानि-’ इत्यादि पवित्र वाक्य अङ्गुतिर्वा-वाक्य है। एक प्राजापत्य अङ्गुति तथा एक विष्टकुर अङ्गुति—इस प्रकार चरुवाक्य अङ्गुतिर्वा है। इस प्रकार चरुवाक्य अङ्गुतिर्वा हवन कर कार्य-विधितक देवताको उद्देश्यकर प्रधान हवन करना चाहिये। अङ्गिकी सात विष्टकुर कही गयी है, जिनके नाम इस प्रकार हैं—(१) श्रम्य, (२) वरुण, (३) रत्न, (४) अङ्ग्य, (५) सुष्म, (६) चरुवाक्य तथा (७) सती। विष्टकुर-देवताके ध्यान करनेसे सम्पूर्ण फलवाक्य प्राप्ति होती है।

(अध्याय १४—१६)

अधियासनकर्म एवं यज्ञकर्ममें उपयोज्य तत्तम ब्रह्मणः धर्मविज्ञाता

सूक्तजी कहते हैं—ब्रह्मणो । देव-प्रतिष्ठाके पहले दिन देवताओंका अधियासन चाहिये और अनुसूक्त अधियासनके पदार्थ—धान्य आदिभी प्रतिष्ठाकर भी कर लेना चाहिये। कलशके ऊपर गौं-प्रतीक स्थापना दिवपाल और यज्ञोक्त पूजन चाहिये। तथा उन्नतकी प्रतिष्ठामें प्रथमरूपसे ब्रह्मको, रत्न-वाक्य प्रयागमें वरुणकी, शीघ्र-प्रतिष्ठामें शिवकी और सोम,

सूर्य तथा विष्णु एवं अन्य देवताओंका भी पाद्य-अर्घ्य आदिसे अर्चना करना चाहिये। ‘ह्रस्ववि-’ (यजु. २०।२०) इस मन्त्रसे पहले प्रतिष्ठाको स्नान करे। स्नानके अनन्तर मन्त्रोद्घात गन्ध, फूल, फल, दूर्वा, सिंदूर, चन्दन, सुगन्धित तैल, पुष्प, चूरा, दीप, अक्षत, आदि उपचारोंसे पूजन करे। वरुणके अंश देवताका करे और अधियासन करे। सुरक्षा-कर्मोद्घात उक्त स्नानके

मध्यमपर्व (द्वितीय भाग)

उद्यान-प्रतिष्ठा-विधि

सुतजी कहते हैं—ब्रह्मणे । उद्यान अग्निमी प्रतिष्ठाने जो कुछ निदेश विधि है, अब उसे बता रहा हूँ, आपसे सुनूँ । सर्वप्रथम [] अग्नि पर उद्यान अष्टदल कमल बनवे । मकरके ईशानदेवको करणको स्थापनाकर ठाकर भाग्यम् गन्धाय और करणदेवकी पूजा करे । शरभकर मध्यम करणमें मूर्ध्नि प्रवेश पूजन करे । फिर पश्चिमदि [] ब्रह्म और अन्न [] मध्यमें करणकी पूजा करे । जलपूजित करणमें भगवान् [] आवाहन करते हुए कहे—‘करणदेव ! [] अन्नम् अन्नम् [] हूँ । विभो ! [] इमे सर्वा प्रदान को ।’ तदनन्तर पूर्वभागमें [] स्थापना कर तोरक [] पूजा करे और कर्णिक-देशमें भाग्यम् कर्णिकम् पूजन करे । भगवान् वासुदेव गुरु [] सदा है । [] जल कर हाथमें गङ्गा, यमुना, गदा और पद्म करके निकले हुए हैं । उनके वक्षःस्थलपर श्रीवास्त-पिङ्ग और कौस्तुभकी मुद्राविता [] तथा मस्तक सुन्दर मुकुटसे अलंकृत है । उनके दक्षिण कर्णमें भगवती कमला, वाम भागमें पुष्टिदेवी विराजमान है । सुगन्ध, सिद्ध, विजय, मध आदि उनकी स्तुति करते हैं । ‘विष्णो रराट्’ (यजु- ५।२२) [] मन्त्रसे भगवान् विष्णुकी पूजा करे । उनके [] संकर्षण-भक्त और [] आदि पत्नीयोंकी धूप, दीप आदि उपचारोंसे अर्चना कर प्रार्थना करे । उनके सामने पीप द्रव्य और गुग्गुलुका धूप प्रदान कर वृक्षविजित कीर्त्या तैयार लगाने । कर्णिकके दक्षिणकी ओर कमलके ऊपर स्थित सोमका प्रदान करे । उनका वर्ण गुरु है, वे जल-स्वरूप हैं, वे अपने हाथमें वरद और अभय-मुद्रा धारण करते हैं एवं केन्दुखी धारण करनेके लक्ष्य अलक्ष्य रोपित हैं । ‘इमे देवा’ (यजु- ९।४०) इस मन्त्रसे इनकी पूजा कर इन्हें वृक्षविजित भगवत् निवेद्य अर्पण करे । पूर्व आदि दिक्पठमें इन्द्र, अश्वत्थ, अश्वत्थ, वरुण, अग्नि, ईशान, तत्पुत्र तथा वासुकी पूजा करे । कर्णिकके वाम भागमें गुरु वर्णके मन्त्रके

[] (यजु- ३।६०) इस मन्त्रसे पूजन कर [] आदि प्रदान करे । भगवान् वासुदेवके लिये कर्णिकसे आठ, सोमके [] अष्टादश तथा निम्नके लिये दो खोरकी अहुतिर्वा दे । [] एक अहुति दे । ब्रह्म एवं करणके लिये एक-एक अहुति और [] दिक्पालके [] एक-एक अहुतिर्वा दे ।

[] विष्णुओं—कराली, धूमली, वीर, लोहित, वर्णवर्ण, अतिरक्त और पद्मरागको [] मन्त्रोंसे पूजा एवं मूर्ध्निविजित कर्णिकसे एक-एक अहुति प्रदान करे । इसी प्रकार अग्नि, [] इन्द्र, वृक्षी और अश्वीकके विहित यजु [] और-पुत्र ब्रह्मसे एक-एक अहुतिर्वा प्रदान करे । फिर गन्ध-पुष्पदिने [] पुष्प-पुष्प पूजा करके उग्रयुक्त तथा औरसुतका कर करे । अन्तर पूजनमें पत्नीपति कोन कराकर और [] कार्यकर [] उद्यानके मध्य भागमें गड़ दे । कुण्डे जल-भागमें सोम तथा कमलके लिये धजाओंको लग्य दे । ‘कोट्यज्जलम्’ (यजु- ७।४८) इस मन्त्रसे कुण्डका कर्मविध संस्कार करे । एक तीली सुईसे वृक्षके दक्षिण तथा वाम भागके दो पत्तीका छेदन करे । त्वग्रहीकी स्तुतिके लिये सधु अर्घ्यका वंश लगाने तथा कालक और कुमारिणीको धारणुअ किलने । [] सूत्रसे उद्यानके वृक्षोंको आवेष्टित करे । उन वृक्षोंके [] प्रदान करने और यह प्रार्थना-मन्त्र पढ़े—

वृक्षान् वृक्षवृक्षि आलेखत् पतितस्य य ।

ममके जलित गच्छे [] कर्ता धर्मं सिध्यते ॥

(यजु- ३।१।३२)

उत्तरमें यह कि विधिवत्क उद्यान अग्निमें लगावे गये वृक्षके ऊपरसे यदि कोई गिर जाय, गिरकर पर जाय या अस्थि टूट जाय तो उस पक्षका पापी वृक्ष लगानेवाला नहीं हो ।

उद्यानके दक्षिण पूजा आदि कर्म करनेवाले अश्वत्थकी सर्व [] पाय तथा दक्षिण प्रदान कर उनकी दक्षिणा करे । शरभको भी सर्व रक्त आदि दक्षिणामे दे । ब्रह्माको

भी दक्षिणा देकर संतुष्ट करे एवं अन्य सदस्योंसे भी प्रसाद करे। [] [] स्थापित अधिकारवाले कहलसे [] करे। सूर्यस्तसे पूर्व ही पूर्णहृति सम्पन्न करे। सम्पूर्ण कार्य पूर्णकर अपने घर जाय और मित्रोंके द्वारा खर्च कर, लक्ष्म, हयमील, नाचय, पुस्तोत्तम, वामदेव, धनचक्र और नारायण—इन सबका विधिकत् स्मरण कर पूजन कताये और महागणपतिप्रति दधि-मालका नैवेद्य समर्पित करे।

बहु अदि देवताओंकी पूजा करनेके पञ्चाङ्ग दक्षिणकी ओर 'स्वोना पृथिवी' (मनु० ४५।२१) इस पृथिवीदेवीका पूजन करे। मधुमिश्रित चक्रचक्रका चक्र चक्र करे। पृथिवीदेवी मुदा काञ्चन वर्णकी अम्बिकासे युक्त है। हाथमें वरद और अम्बामुद्रा धारण किये हुए है। सम्पूर्ण अलङ्कारोंसे अलङ्कृत है। परके नाम चक्रचक्रका पूजन करे। 'चक्रचक्रार्ज' (श्रौ० १०।८१।२) यह मन्त्र इसके पूजको धिनिपुत्र है। भगवान् चक्रचक्रका पूजन करे। हूल और रंजको धारण करणका है तथा शान्तप्रलय है। इन्हें मधु और मिहकली करि दे। अम्बिका कौण्डिन्यासक तथा मल्लसतम्बा पाठ करे। इसी पृथ्वी-देवी-

कर्मि मनु और जयस-पुल हविष्यसे आठ अश्वत्थिर्घे तथा अन्य देवताओंका एक-एक अश्वत्थि दे।

तख्तानके चारों ओर अमक बीच-बीचमें तख्तानकी रक्षाके लिये मेकॉप्य निर्माण करे, निम्ने बर्मेसेतु कहा जाता है। तख्तानकी दुइतरफे लिये विशेष प्रयत्न करे। बर्मेसेतुका निर्माण उससे इस प्रकार करना करे—

॥ अथ श्रीमद्भगवद्गीता ॥

प्रमाणित कर्मचारी द्वारा जारी किया गया है।

ये तान् प्रथित्यः जग्नि रक्षोः कर्त्तव्यः सेतव्यः ।

मेघदूतम् पद्मसूक्तम् मनीषा ■ लघुचरितम् ॥

(संख्या ३६४-४६५)

■ वह कि की कोश व्याप्त इस धर्मसेतु (मेड़) पर चलते समय गिर जाय, जिससे हाथ नो इस धर्मसेतुके निर्माणका कोई फाय मुझे न लगे। क्योंकि इस धर्मसेतुका ■ ये ■ अधिकृतिक लिये ही किया है। इस समयपर अनेकाने ज्ञानवाक्य ये धर्मसेतु बना करते हैं। वेदव्यय अदिने नो पुण्य प्राप्त होता है, वह पुण्य इस धर्मसेतुके निर्माण करनेपर प्राप्त होता है। (अध्याय २)

गोबर-भूमिके उत्सर्ग ज्ञानमेयी प्रतिष्ठा-विधि

(भारतमें पहले सभी काम-काजोंकी सभी [] दुलक खेबर-भूमि रहती थी । उसमें गाँव लखनऊ-लखनौ
 करती थी और वह भूमि सर्वसामान्यके ही धुमने-धिरनेके [] थी । [] उसमें अतिशय करते थे ।
 यह प्रथा अभी कुछ दिनों पहलेतक थी, पर अब वह सर्वथा लुप्त हो गयी है, इससे गो-धन्यता बढ़ी तबि हुई है । जिसका
 फल प्रकृति अनाच्छादि, जीवन मधुरता (मईवी), दुष्कालकी स्थिति, भूकम्प, [] और सर्वत्र निर्दोष लोगोकी हत्याके लक्ष्य
 परोक्ष तथा प्रत्यक्ष-रूपसे दे रही है । इसकी निवृत्तिका एकमात्र सम्बन्धन है [] पुरुषोत्तम महात्मा, गो-सेवा और
 आतिथ्यतापूर्ण आध्यात्मिक दृष्टिकोण पुनः अनुसन्धान और अनुसरण [] [] आजकी दशासे, जहाँ किसीको भी []
 भी स्थितिमें [] भी [] नहीं [] इससे और [] हो [] है । [] दुष्टिसे वह अन्धधाय विरोध
 महत्वका है और सभी घटकोंको अन्ततः प्रत्यक्षपूर्वक अपने-अपने काम-काजोंके नैतिक खेबरका या गो-प्रचार-भूमिका उत्सर्ग
 [] गो-संरक्षणमें सदा सैन्य करिये ।—सम्पादक]

सुतजी कहते हैं—ब्राह्मणे ! अब ■ गेहर-भूमिके विषयमें ■ रहा हूँ, आप सुने । गेहर-भूमिके उत्तार्ग-कर्मि उत्तार्गप्रथम लक्ष्यीके साथ भगवान् विष्णुकी शिक्षिके अनुसार पूजा करने चाहिये । इसी तरह ब्रह्म, रुद्र, कहरिक, करह, सोम, सूर्य और महादेवजीव क्रमशः विविध उपचारोंसे पूजन करे । हवन-कर्ममें लक्ष्मीनारायणकी तीन-तीन उद्गीर्तियाँ पैसे

टे। क्षेत्रफलके मध्यस्थित एक-एक लज्जाह्वी है। मोक्षभूमिका उत्तरी सरक के विधानके अनुसार गृष्णी स्थापना करे तथा [] अर्पण करे। यह गृष्ण लोच [] ऊँचा और नागलम्बेसे युक्त होना चाहिये। वसे [] हाथसे भूमिके माध्यमे चढ़ना चाहिये। अनन्तर 'विशेषा' (शृ० १०।१।६) इस प्रकार उच्चारण करे और 'नागास्थितसे उच्यते', 'अष्टनाम

नमः' तथा 'मौमाय नमः' कहकर कुम्भे लिये खज निर्दिष्ट करे। 'मौमि गुह्याय' (यजु- १३।१) इस शरभूर्ति-स्वरूप उस कुम्भो पक्षोपचार-पूजा करे। अन्तर्जम्भे अथ, और दक्षिण दे तथा होय एवं अन्य शक्तिशैलो भी अभीष्ट दक्षिणा दे। इसके पक्ष उस गोचरभूमिसे रा खोड़कर इस मन्त्रसे पढ़ते हुए गोचरभूमिसे उत्सर्ग कर दे—

विमललोकाकाया पावः सर्वोत्कर्षभूमिः ॥
गोचर एव प्रथम भूमिः समस्तान् भूतार्थिनः ।

(अथर्ववेद ३।२।१२-१३)

'विमललोकाकाय यह गोचरभूमि, गोचरक तथा गोई सभी देवताभ्योऽष्टा पूजित है, इसलिये कल्पवृक्षकी कल्पवृक्षसे मैंने यह भूमि गोचरके प्रदान की है।'

इस प्रकार जो समर्पित-पित होकर गोचरके लिये गोचरभूमि समर्पित करता है, वह सभी पापोंसे मुक्त होकर विष्णुलोकमें पुजित होय है। गोचरभूमिमें किसी संकल्प, पुण, गुल्म उगते हैं, उतने इकरो कर्त्तव्य वह सर्वालोकाय होता है। गोचरभूमिसे सौम्य मिलित चाहिये। उस भूमिसे रक्षाके लिये पूर्वमें वृक्षोका रोपण करे। दक्षिणमें सेतु (मेड़) बनाये। पश्चिममें कौटिली वृक्ष लगाने और उत्तरमें कुम्भ निर्माण करे। ऐश्वर्य करेये गोचरभूमिसे सीमाका लक्षण नहीं बन लगेय। इस भूमिसे कल्पवृक्ष और घाससे परिपूर्ण करे। मग्न या प्रथमके दक्षिण दिशामें गोचरभूमि खोड़नी चाहिये। जो व्यक्ति किसी अन्य प्रयोजनसे गोचरभूमिसे जोतता, वह नष्ट करता है, वह अपने कुलोका पतकी है और अनेक भद्र-कल्याणोंसे भोगे है।

जो भलीभांति 'गोचर-भूमि' एवं करता है, वह उस भूमिमें जितने पुण है, उतने समस्तक स्वर्ग और विष्णुलोकसे प्युत नहीं होता। गोचर-भूमि बाह्योका सेतु करे। वृक्षोत्सर्गमें भूमि-दान करता है। प्रेतयोनिसे शांति नहीं होता। गोचर-भूमिसे उत्सर्गके समय जो मण्डप बनाया जाता है, उसमें भगवान् वासुदेव और सूर्यका

पूजन तथा तिल, गुड़की आठ-आठ अहुतियोंसे स्नान करना चाहिये। 'ऐति के' (यजु- ३।५०) इस मन्त्रसे मण्डपके उत्तर पक्ष शुद्ध स्थापित करे। अन्तर सौर-सूक्त और वैष्णव-सूक्तका पठ करे। मण्डपके पक्ष आठ दिक्पक्ष देखकर अनेक चित्र या चित्रना बनाकर उन्हे पूर्वदि आठ स्थापित करे और पूर्वदि दिशाओंके अधिपतियों— इन्द्र, अग्नि, वायु, निर्ऋति आदिसे गोचरभूमिसे रक्षाके लिये प्रार्थन करे। प्रार्थनके बाद चारों दिक्पक्ष, मृग एवं पक्षियोंकी विशेषरूपसे भगवान् वासुदेवकी प्रसन्नताके गोचरभूमिसे उत्सर्ग चाहिये। गोचरभूमिसे नष्ट-पष्ट हो जानेपर, घासके जीर्ण हो जानेपर तथा पुनः घास उगनेके लिये पूर्ववत् प्रतिष्ठा करनी चाहिये, गोचरभूमि अथवा पृथ्वी। प्रतिष्ठान्तर्गत निमित्त भूमिके कोटने आदिमें कोई जीव-जन्तु मर उससे मुक्त पाय लगे, प्रसुप्त हो हो और इस गोचरभूमिमें करनेवाक मनुष्यों, वसु-पक्षियों, जीव-जन्तुओंका आनेके अनुमति निवार करवान से ऐसी भगवान्से प्रार्थना करनी चाहिये। अनन्तर गोचरभूमिसे किसीका पवित्र धागेष्टा सात बार अवर्धित करे। अनेक-काल तक 'सुतपात्री पुत्रिणी' (श्रु- १०।१३।१०) इस जाकाका पठ करे। अनन्तर आचार्यको दे। मण्डपमें श्राद्धोका भोजन कराये। दान, उभय एवं कृष्णको सेतु करे। इसके बाद मङ्गल-पानिके स्रव करने करये प्रवेश करे। इसी प्रकार तालव, कुआँ, भूप आदिकी प्रतिष्ठा करनी चाहिये, विशेषरूपसे उसमें कल्पवृक्षकी और नागकी पूजा करना चाहिये।

अहम्भे ! अब मैं छोटे एवं साधारण उपायोंकी प्रतिष्ठानके विषयमें बता रहा हूँ। इसमें मङ्गल नहीं चाहिये। बरिष्क शुभ स्थानमें दो हाथके स्थितिस्वरूप कलश स्थापित चाहिये। उत्तर भगवान् विष्णु और सोमकी अर्चना चाहिये। केवल अन्तर्जम्भे करण करे। सुत्रसे वृक्षोंको अवर्धित पुष्प-मालाओंसे अलंकृत करे। जलपात्रसे वृक्षोंको सींचे। पक्ष श्राद्धोका भोजन कराये।

१-गवा पक्ष कुम्भोका या विष्णुलोक। अन्तर्जम्भे प्रसन्नता का सर्वात्म्यवृक्ष॥

विस गोचर-भूमिसे सौ पाप और एक बेल स्थान तकसे विमल काते हो वह भूमि गोचर-भूमि कहलाती है। ऐसी भूमिसे दान करनेसे सभी पापोंका नाश होता है। अन्य कल्पवृक्ष, वृक्षोत्सर्ग, अन्तर्जम्भे आदि भूमिसे पठने पाप-३,००० दान पक्ष-चौड़ी भूमिसे यज्ञ गोचर है।

गृहोक्त कर्णवेध करने और संवत्सरपूर्वक करने दे। मध्य देशमें दूध स्थापित करे और दिङ्म-विदिशाओं तथा मध्य देशमें कदली-वृक्षका रोपण और विधानपूर्वक भीसे होय करे। फिर सिद्धकुन् इत्यम्

पूर्वकृत दे। पुष्करे मूल्ये धर्म, पृथ्वी, दिग्ग, दिक्पाल और यक्षकी पूजा करे तब आचार्यको संतुष्ट करे। दक्षिणामे गाय दे। सब कार्य विधानके अनुसार परिपूर्ण कर भगवान् सूर्यको अर्घ्य प्रदान करे। (अध्याय २-३)

अष्टम, पुष्करिणी तथा जलप्रशस्तेके प्रतिष्ठापनी

सूतजी बोले—बाह्यो ! अष्टम-पुष्करिणी करनी हो तो उसकी जड़के पास इत्य स्थली-चौड़ी एक वेदीका निर्माण कर, चन्दन आदिसे अर्पित करे। उसपर कमलकी एकत्र कर अर्घ्य प्रदान करे। प्रथम दिनकी 'तद्विषयः' (पञ्च ६।५) इस मन्त्रद्वारा कर गन्ध, चन्दन, दूर्वा तथा अक्षत समर्पण करे। चन्दन-मिश्रित श्वेत सूत्रसे कर्णशोको अवरोहित करे। प्रथम कलशके ऊपर गणेशजीका, दूसरे कलशपर ब्रह्माजीका पूजन करे। दिग्गओंके दिक्पाल और वृक्षके मूल्यमें नवग्रहोंका पूजन-अर्पण करे। वृक्षके मूल्यमें विष्णु, मध्यमें शिवर तथा आगे ब्रह्मकी पूजा कर हवन करे। सिंहव्रत-बलि दे। आचार्यको दक्षिण देकर वृक्षको जलधारासे सीधे, उसकी प्रदक्षिणा करे और भगवान् सूर्यको अर्घ्य निवेदित कर पर अष्ट भाजन

छेद दे। सम्पूर्ण कार्योंने सम्पन्न कर ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे। अष्टमशस्तेमें भस्कर, ब्रह्म, गीत, कूर्म एवं अन्य जलधारा प्रणी तथा कमल, ईश्वर आदि भी छोड़े। अनन्तर जलशयकी करे। तब और खोरी भी छोड़े। दूधकी धारा भी दे। पुष्करिणीको चारों ओरसे रत्नसूत्रसे अवरोहित करे। दीर्घको संतुष्ट कर चारों प्रवेश करे।

बाह्यो ! अब मैं नीलनी (जिस तालाबमें कमल हो), खड़ी तथा झट (गहरे कलशका) की प्रतिष्ठापनी सामान्य विधि बताय रहा हूँ। इन अष्टकी प्रतिष्ठा करनेके पहले दिन वाद्यम्, कलशदेवकी सुवर्ण-धनिया 'आगे' (पञ्च-११।५०) इस कलश करे, अनन्तर एक ही कमल-पुष्पीसे प्रतिष्ठापन पुष्पाधिवास करे। तत्पश्चात् कलशमें अन्तर पूर्वमुख की और कलशपर गणेश, ब्रह्म, शिव, ब्रह्म, विष्णु एवं सूर्यकी पूजा करे। वरुणके लिये भी और कलशमें अहुति दे। अन्य देवताओंको पुष्पद्वारा एक-एक अहुति प्रदान कर पायल-बलि दे। फिर नीलनी-खारी आदिक संवत्सरपूर्वक उत्सर्जन कर दे। मध्यमें सुवर्ण स्थापन करे। तदनन्तर गोदान दे और दक्षिण प्रदान करे। पूर्वकृतिके अनन्तर भगवान् सूर्यको अर्घ्य प्रदान करे और अपने धर्म प्रवेश करे।

बाह्यो ! अष्टम-पुष्करिणी करके सूर्यको अर्घ्य प्रदान करे। तदनन्तर गणेश, गुरुकुन्दका, अब और भस्करा समर्पित होकर पूजन करे। मण्डलके मध्यमें अक्षर-वर्तिका, अनन्त तथा कूर्मकी पूजा करे। तब सूर्य आदिक भी मण्डलमें पूजन करे। दूसरे पात्रमें पुष्करिणी उपकलसे भगवान् वरुणका पूजन करे। कमलके पूर्वार्ध पक्षमें इन्द्रादि दिक्पालोंकी, उनके आयुधोंकी तथा मध्यमें ब्रह्मकी पूजा करे। 'सूर्यः स्वः' इन तत्वोंकी भी पूजा करे। मण्डलके ऊपर भागमें नागरूप अन्तर्गत पूजा करे। इसके बाद हवन करे। अहुति वरुणदेवको दे फिर दिक्पालों, कलश, दिग्ग, दुर्गा, गणेश, ब्रह्म और ब्रह्मको करे। सिंहकुन् हवन करके बलि प्रदान करे। एक अष्टदल कमलके ऊपर रजत-प्रतिमा स्थापित करे और पुष्करिणी (कलश) की प्रतिमा स्वर्णकी बनाये और पूजनकर जलप्रशस्ते छोड़ दे। जलप्रशस्तेके मध्यमें बौद्ध अवस्थित करे। जलप्रशस्तेके बीचमें शक्तिक् होम करे। शैववागी मूर्ति भी जलप्रशस्तेमें

छेदो ! अब मैं वृक्षोंके प्रतिष्ठा-विधानका वर्णन करता हूँ। वृक्षकी स्थापना कर सूत्रसे परिबेष्टित करे, फिर उसके ध्वज पात्रमें कलश-स्थापना करे। कलशमें ब्रह्मा, सोम, विष्णु और वनस्पतिक पूजन करे। अनन्तर तिल और यवसे अन्न-अन्न अहुतिर्दा दे। कदली-वृक्ष तथा यूष्का उत्सर्जन करे, फिर लगभग गये वृक्षके मूल्यमें धर्म, पृथ्वी, दिग्ग, एवं वक्षकी पूजा करे तथा आचार्यको संतुष्ट करे। आचार्यको गोदान दे, दक्षिणा प्रदान करे। वृक्ष-पूजनके बाद भगवान् सूर्यको अर्घ्य प्रदान करे। (अध्याय ४-८)

घट, बिल्व तथा पूगीफल आदि वृक्ष-मुक्त आधानकी प्रतिष्ठा-विधि

सूतजी कहते हैं—ब्राह्मणे ! घट-वृक्षकी

वृक्षकी दक्षिण दिशामें उसकी जड़के पास तीन हाथकी एक वेदी बनाये और उसपर तीन कलश स्थापित करें। उन कलशोंपर क्रमशः गणेश, विष्णुकी पूजा करने होम करें। घट-वृक्षको विगुणित लकड़ोंसे अलङ्कित करें। बिल्वमें पत्र-क्षीर प्रदान करें और सुभक्षण अर्पण करें। घट-वृक्षके मूलमें बक, नाग, गन्धर्व, सिद्ध और गरुडन्त्योंकी पूजा करें। प्रकर सम्पूर्ण होकर विधिके अनुसार पूज करें।

बिल्ववृक्षकी प्रतिष्ठामें पहले दिन वृक्षका स्थापन करें। 'व्याघ्रको' (यजु- ३।१०) इस मन्त्रसे वृक्षको चरित स्थापित कर 'सुव्यवस्था' (यजु- २१।७) इस मन्त्रसे गन्धोदकद्वारा उसे चलाये। 'मे वृक्षो' इस मन्त्रसे वृक्षपर भक्त बहाये। 'नक्षिक' (यजु- २७।३९) इस मन्त्रसे भूष, बक तथा माला चलाये। तदनन्तर रुद्र, विष्णु, बुद्धि और धनेश्वर—कुम्भेश्वर पूजन करें। दूसरे दिन प्रातःकाल उठकर शाकानुसार निर्व्यङ्ग्यसे निवृत्त होकर घरमें सत्र ब्रह्मण-दम्पतीको भोजन कराये।

—०००—

मण्डप, मण्डपूष और पौसरले आदिकी प्रतिष्ठा-विधि

सूतजी कहते हैं—ब्राह्मणे ! मण्डपके

निर्मित निर्मित होनेवाले मण्डपोंकी प्रतिष्ठा-विधि बतलाते हैं। वह मण्डप शिलायुक्त हो या काष्ठयुक्त अथवा लृप्त-पण्डितसे निर्मित हो। ऐसी स्थितिमें अधिवासनके आरम्भमें भूष-लक्ष-मूर्त्तमें घट-स्थापन करें। उस कलशपर सूर्य, सोम और विष्णुकी अर्चना करें। 'आपो हि ज्ञा' (यजु- ११।५०) इस मन्त्रद्वारा कुशोदकसे तथा 'आप्तावस्य' (यजु- १२।११४) इस मन्त्रद्वारा सुगन्ध-जलसे शोषण करें। 'मन्त्रद्वारा' (श्रीसूक्त ९) इस श्रवासे चन्दन, सिन्दूर, आमला और अञ्जन समर्पण करें। फिर दूसरे दिन प्रातः वृद्धि-आद्य करें। प्रथम लक्षणवाले मण्डपमें दिक्पालकी स्थापना करें। मन्त्रमें वेदोंके ऊपर मण्डल विहित करें। उसमें सूर्य, सोम, विष्णुकी तथा कलशपर गणेश, नवग्रह आदिकी पूजा करें। सूर्यके शिष्य १०८ बार पायस-होम करें। विष्णु और सोमका उद्देश्य कर

बिल्वके मूलखटेद्वारे से हाथकी वर्तुलकर वेदीका निर्माण करें। उसको गेह तथा सुन्दर पुष्प-चूर्णोंसे रक्षितकर उसपर अष्टदश-कल्पकी रचना करें। वृक्षको लाल सूत्रमें पंध, सोत नैवेद्य देकर चरित करें। वृक्ष-मूलमें उत्तराभिमुख होकर अर्घ्य देकर दत्त, विष्णु, गणेश, शैव, अनन्त, इन्द्र, वनदेव, सोम, सूर्य तथा पृथ्वी—इनका क्रमशः पूजन करें। शिव और अश्वतथे तथा श्री एवं मातंग दे। पण्डितके शिष्य उड़द और चातका भोग लगाये। ग्रहोंकी तुष्टिके लिये चरितके नैवेद्य दें। बिल्व-पुष्पको दक्षिण दिशासे दूधकी पात्र प्रदान करें। दूधका आरोपण करें, वृक्षका कर्मव्यय-गंशकर करें और भगवान् सूर्यको अर्घ्य प्रदान करें।

रौद्र हाथकी लंबाई-चौड़ाईका हो, जिसमें मुखी या अर्घ्यके फलदायक वृक्ष लगे हों तो ऐसे मण्डपकी प्रतिष्ठामें वाल्मीक्यलकी रचनाकर वाल्मु भदि देवताओंका पूजन करके पायस-कर्म करें। विशेषरूपसे विष्णु एवं प्रज्ज्वलित अर्घ्य देवताओंका पूजन करें। वृक्षको अर्घ्य दें।

(अध्याय ९—३९)

मण्डप-मण्डपूष एवं पायस-बलि दें। वास्तु-देवताका पूजन करें और उनको अर्घ्य देकर विधिवत् आर्घ्य प्रदान करें, फिर उस मण्डपको मकरन्दपूर्वक योग्य ब्राह्मणके शिष्य समर्पित करें। उसे विधिवत् दक्षिणा दें और सूर्यके शिष्य अर्घ्य प्रदान करें। लृप्त-मण्डपमें विशेषरूपसे वास्तुदेवताके साथ भगवान् सूर्यकी पूजा करें। एक घटके कर्दाशका पण्डितको मण्डपकी पूजा कर बिल्व-चरित दें। ईशानकोशमें स्थापित कर सभी दिशाओंमें ध्वजा फहराये।

पौसरले दो बार हाथसे लेकर सोलह हाथके मण्डपमें निर्मित मण्डपूषकी एवं पौसरले तथा कुर्द आदिकी प्रतिष्ठा-विधि बतला रहा है। इनकी प्रतिष्ठामें गर्ग-तिरान यज्ञ करवा चरित्वे। पौसरलेके पश्चिम भागमें श्वेत कुम्भपर भगवान् कलशको स्थापित कर 'मयत्री' मन्त्र तथा 'आपो हि ज्ञा' (यजु- ११।५०) इन मन्त्रोंसे उन्हें स्नान कराना चाहिये।

एकाह-प्रतिष्ठा ■■■ **खाली** अति देवियोंकी प्रतिष्ठा-विधि

सहस्रजीने कहा—आइयो! कलिकुम्भमें उसका
 सामर्थ्यवान् कथित देवता आदिकी प्रतिष्ठा एक दिनेमें कर
 सक्यता है। किस दिन प्रतिष्ठा करनी हो उसी दिन विष्णु काहन
 भुजधिव्यास कराये। जब सूर्य मगगान् उत्तरायणमें हो,
 प्रतिष्ठादि कर्म करने चाहिये। [] [] [] []
 वसन्त ऋतुमें यज्ञका आरम्भ करना चाहिये। नवम्यन अर्द्ध
 भूर्तिमेंके बराबर वेद है। गङ्गानन अर्द्ध देवताओंकी प्रतिष्ठा
 विहित कालमें हो करनी चाहिये। बुद्धिमान् मनुज विप-
 स्तिपक्षमें विपुल होकर आधुनिक कर्म करे। अन्नका
 आह्वयोंमें भोजन कराये। [] यज्ञ-गृहमें प्रवेष्ट करे। []
 प्रत्येक कुम्भमें ऊपर भगवान् गणेश, नवग्रह तथा दिक्पालोंका
 विधिपूर्वक पूजन करे। वेदीपर घण्टाका सिन्धु और उनके
 धरिजराका पुष्प करे। सर्वप्रथम भगवान् विष्णुको []
 तीर्थ, समुद्र, नदियों [] जल, पहाड़, पहाड़का,
 सह-मूर्तिकाविहित जल, [] तैल, ककरो-इत्यादि []
 पुष्पोंद्वारा स्नान कराये। गुरुजी, आर्य, राजा, कर्मान तथा
 कदलीरके पत्र-पुष्पीमें उनकी पूजा करे। इसके बाद भूर्तिमें
 श्रेण-प्रतिष्ठा सम्पन्न करे। तत्पश्चात् विधिपूर्वक हवन करे।
 आह्वयोंकी प्रतिष्ठाद्वारा वेदाङ्कक पराङ्गी प्रदान करे।

ब्राह्मणों। अतः ही कबली जाति मन्त्ररतितन्त्रोक्तों की प्रशिक्षण एवं अभिषेकशस्त्रोक्तों से विभिन्न विधि कसतन रहा है। प्रशिक्षणों में दिन देशीयों की प्रतिमात्र अभिषेकसन कर अन्तर्भूतमिक शब्द करे। सर्वप्रथम भगवत्कीर्ति प्रतिमात्रो कसतनपुनः अन्तर्भूतमिक

पञ्चमण्डले ॥ करायें । कुम्भके ऊपर भगवती दुर्गाको ॥
॥ करे । तदनन्तर पुर्तिकी प्राप्ति-प्रतिष्ठा करे । मिल्ख-पशु
॥ मिल्ख-फलमेसे रौ अहुतिर्पा दे । दक्षिणामे सुवर्ण प्रदान
करे । पञ्चवती कालिका और तणकी प्रतिमाओंकर अस्त्र-
हस्त अर्चन करे । पञ्चवतीको बना प्रस्फुरके सुगन्धित
झण्डेसे तीन दिनतक स्नान करायें और कैला अर्पण करे ।
उत्तिके कलहवार तीन दिनतक प्रातःकालमे देवीको अर्चन करे
फिर कन्धेओझा सुगन्धित जलसे पञ्चवतीको स्नान कराये ।
अउये दिब भी उत्तिके विदेव पूजन करे एवं पायस-होम करे ।

(अध्याय १८-१९)

दि. ०५.०५.२०२०

सूतजी ■■■ है—सद्गुरु ! ■■■ ■■■ प्रसन्नके
अपसमुक्तों, उत्सवों एवं उनके फलसौख्य वर्णन ■■■ रहा है।
आपलोग ■■■ होकर सुनें। जिस व्यक्तिजी लग-कुम्हली
अथवा मोक्षमें पाम-प्रदोष्य योग को ■■■ जाति कर्मा-
च्छहिये। दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम—ये तीन प्रकारके उत्सव
होते हैं। ग्रह, नक्षत्र आदिसे जो अनिष्टको उत्पन्न करते हैं
यह दिव्य उत्सव कहलाता है। उत्सवगत, दिव्यसौख्य तब

(गण्डर्वलोक के ऊपर, सूर्य-जगह के पूर्व-गार्ह पड़नेवाले दिक्पथी टेन), अन्तर्यामि गन्धर्वनामक दर्शन, सण्डकृष्टि, अन्धकृष्टि, अतिशृष्टि आदि अपारिजयन्य हैं। जलमयसे, वृक्षों, रत्नों तथा धृतीसे प्रकट होनेवाले भूकल्प आदि उत्पन्न भीम वस्तु कहल्यते हैं। मन्तरिक्ष एवं दिव्य वस्तुओंका प्रभाव एक सप्ताहतक रहता है। इसकी शक्तिके लिये तत्काल उक्थ पुरज चहिये अन्यथा ये बहुत कारणाक

रिन्दे बुधवारके दिन बुध ग्रहके ज्येष्ठमे देवी, मधु, धी तथा अण्डमर्गकी सभिषा एवं चउसे 'अण्डमर्ग' (मनु-१५।५४) इस मन्त्रद्वारा दस हजार अङ्गुलित्व देवी चढ़िने : बुधकी सुवर्णकी प्रतिमा तथा पयस्विनी नाम ब्राह्मणको दानमें देनी चाहिये।

पशुओका अङ्गमर्ग अङ्गमर्ग और उन्से संवत्सिन्धोकी उत्पत्ति, जी, अदिका सहस्र तुल्य हो जन्म, गृहस्थान्तरा सहसा दूत, अङ्गमर्ग किल्ली तथा मेघमर्ग नक्षत्रों ज्येष्ठ कुलेदना और इनकर कारण चढ़ने, ये सभी लोग जहाँ दिखायी दें, जहाँ सः सहितके भीतर हो परम विद्वान् होता है—कोई जन्म मर जाता है या कुटुम्बमें कलह होता है तथा अनेक व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। विरह-वृक्षम गृह और गृहकी एक साथ देव उन्से रिके तथा आकाशके रिके इतिहासक होता है। अण्डमर्ग उन्से विपरीत जाता है। ये गृहस्थजीवनित लोग हैं। इनका इतिहास देव कुलस्थिते विभिन्न शांति-होम करना चाहिये तथा पयस्विनी नाम एवं गृहस्थकी दान करके चाहिये।

रक्षसद्वारा बड़ेका जल पीनेका देवः शिव, शर्करा, तिल, चिदी, माधवभूष, उदर-फल, चामर आभास होना; चरमें ताँबा, कपसा, लोहा, सोना तथा पीतल आदिका रक्षा दिखायी देनेका आभास होना; ऐसे उत्पन्न धनके गृहमें देवी सम्पन्न होती है और अनेक अङ्गुलित्व होती हैं, राजा भयेकर उपद्रव तथा कलहमें पड़ जाता है। गौ, अश्व सेककेका विनाश होता है। दानकीलके छोड़कर दैतिके दैतिके निकलना, उत्पन्नके सम्पन्न दैतिके निकलना—ये भी दोषकारक है। चढ़नेमें, पढ़नेमें बादलके गरजनेकी सुनकी दे गृहस्थकी विपत्तिकी होती है—ये गृहस्थजीवनित लोग हैं। इनकी राक्षसके रिके कुलस्थिते दिन दही, मधु, भृगुभुक्त शमीपत्रसे हवन करे तथा दो सफेद मक्ख, पयस्विनी हो गौ, और सुवर्णकी शुद्धकी प्रतिमाका दान करना चाहिये।

भद्रिकी जमीन यदि रात पयस्विनी अथवा पुनित दिक्कली दे तो जहाँ भी उत्पन्नकी सम्पन्न है। आकाशमें जलनी हुई दिक्कली दे गौ-गुह्यकी

और राहमें दिक्कली सम्पन्न होती है। सभी अङ्गुलित्व और मन्त्र रक्षितों हो जायें; छापी, छोड़े, फलवाले होकर हिसक हो जायें; लक्ष्मी रिके नगर तथा गाँवमें सभी उत्पन्न हो जायें; गौ, चरिच आदि पशु अन्धवास उत्पन्न मचाने लगे; घरमें दरवाजों में और अङ्गुली प्रवेश करे तो अनुप सम्पन्न चाहिये; इससे उन्-पेड़ और चन-हानि होती है। ये उत्पन्न अङ्गुलित्व सम्पन्न चाहिये। शांतिके रिके सन्ने तथा इतिहासके दिन 'सं मे देवी' (मनु-३६।१२) इस मन्त्रसे दस हजार अङ्गुलित्व देनी चाहिये और चउसे भी हवन करना चाहिये। बीरसे उत्पन्न गाय, दो बकर, भेडा, चिदी, अङ्गुली प्रतिमा रिके देनी चाहिये।

कादलके गारों बिना लाल-पीली शिलाबुद्धिके विपत्तिकी देव, जिनके बुद्धिके शिला-कुलना दिक्कली देव, इन्द्रधनु तथा इन्द्रधनुका गिरना, दिक्के विपत्तिके तथा रिके उत्पन्न होना, एक बीरका दूसरे बीरके अङ्गुलित्व पृथक् दिक्क, ऐसे लोग होकर देवमें राक्षसी बुद्धि तथा बल उत्पन्न एवं युद्ध होता है। और अङ्गुलित्व इन्द्र मन्त्र होता है, जल पड़ है। अङ्गुलित्व जलकी जल दिक्कली पड़े तो राहमें महान् दिक्क होता है। जल पड़ता हुआ दिक्कली दे और गिर अथवा पड़कर बिजली गिर जाय तो उसका जीवन दुर्लभ हो जाता है; दरवाजोंके बिजली अथवा लक्ष्मी अङ्गुलित्व भूम दिक्कली दे तो भूभुक्त भय होता है। आकाशमें बलपत्त, अङ्गुली जलकी मध्य बुद्धि, नगरके मध्य किसी अङ्गुली भट्ठालक दिक्कली देव, राजा से जाते समय उर अङ्गुलित्व उदर बैठ जाना; स्थित लिङ्गका गमन करना; भूभुक्त, अङ्गुली-भूभुक्त होना; बिना समय बुद्धिमें चर-भूत लक्षण—ये सभी राहुजन हैं। इनकी अङ्गुलित्व दही, मधु, धी, दूध, जल आदिसे चढ़ा चाहिये' (मनु-२७।१९) इस मन्त्रद्वारा रक्षिकके दिन दस हजार अङ्गुलित्व राहुके रिके दे, चउसे करे। पयस्विनी कपिल गौ, अतसी, तिल, ईस और गुग्गुलु ब्राह्मणको दानमें दे। पयस्विनी करे। इससे सारे दोष-पाप नष्ट हो जाते हैं।

प्रतिसर्गपर्व

(प्रथम खण्ड)

[वास्तवमें भविष्यपुराणके ■■■■■ सर्गकाल प्रतिसर्गपर्वमें ही अंतिमर्ष हुई थीकती है । वेदांशुकीर्ण सभी पुराणोंका मुख्य लक्षण है— 'वेदांशुकीर्णं वेदी पुस्तकं महाप्रमाणम् ।' यह विचार सभी पुराणमें प्राप्त होता है । भविष्यपुराणमें ■■■■■ वर्ष स्थानोंपर ■■■■■ पर प्रतिसर्गपर्वकी आधुनिक इतिहासका वर्ण प्रसन्न ■■■■■ दिया है । अग्नी-धारती और अग्नि इतिहासमें त्वारीक (करीब) कहते हैं । सभी ■■■■■ (विधि, धर्म) समपूर्वक हुआ है । अग्निमें भी इतिहासका सभी नाम प्रमाणित है । तत्काल दुष्टोंके कारण प्रसन्न भवता है । एक क्षणिक बाद दूसरी क्षणिक कारण-प्रसन्नता लगे हुए है— जैसे— 'इहो वास्तु वेदी तु पुत्र इति । यो वास्तु सत आ वास ।' इसीलिये किसी एक कारणका ही वर्णन इस पुराणमें ■■■■■ होता है । ■■■■■ अग्निमें वास्तु-कारणों केवल मन्त्रमन्त्र ही इतिहास-निर्देशक वास्तु रहा है और सभी सम्प्रदायोंके लक्षण, वेदांशु आदिमें टीकाओंके राज्य अग्निवा आलेख बन रहा है । वादमें वहीपुत्री उवाचोंके वेदांशु ■■■■■ वर्णन करता है । प्रसन्न ■■■■■ सुष्टिके ■■■■■ वास्तुकीर्ण सम्प्रदाय, विष्णुपुराण, कर्णपुराण, महाप्रमाण, ■■■■■ सत्य अन्य ग्रन्थों एवं ऐतिहासिक वैदिक वेदोंमें भी सहायता ली गयी है ।—सम्प्रदाय]

समस्तपुराणके सम्प्रदायका वर्णन

वास्तवमें महाप्रमाण का ही वर्णन करेगा ।
■■■■■ वास्तुकी ■■■■■ वादी सम्प्रदायकी ।
'भागवतम् नर-वास्तवमें महाप्रमाणका भागवतम् श्रीकृष्ण एवं उनके सत्य मन्त्रों अर्चन, ■■■■■ वास्तुकी सम्प्रदायकी वास्तुकी ■■■■■ उनके वास्तुकी वर्णन वास्तुकी वेदांशुकीर्ण मन्त्रमन्त्र का महाप्रमाण पुत्र, ■■■■■ और महाप्रमाण ■■■■■ सत्य नामों वास्तुकी सम्प्रदाय का वर्णन वास्तुकी ।'

महाप्रमाण आचार्य इतिहासकी पुत्र— पुत्र । वास्तुकी आचार्य वास्तुकी ■■■■■ नामों महाप्रमाण ■■■■■ किसी दिन वास्तुकी ■■■■■ वास्तुकी आचार्यकी सम्प्रदायकी वर्णन-वर्णन रहा हुए ? अन्य उनके वास्तुकी सम्प्रदायकी ■■■■■ करे ।

सुष्टिकी बोले—वेदांशुकीर्णमें वास्तुकी ■■■■■ तीसरे दिन वास्तुकी मुष्टिकी प्रमाण वेदांशुकीर्ण मन्त्र मन्त्र हुए । उन्होंने सरपू नदीके तटपर दिव्य भी वास्तुकी तत्काल भी और उनकी वास्तुकी उनके पुत्रोंमें रहा इतिहासका वर्णन हुआ ।

■■■■■ वास्तुकी उन्होंने दिव्य सम्प्रदायकी वास्तुकी । रहा ■■■■■ भागवतम् विष्णुकी परम मन्त्र वे । उन्होंने वास्तुकी ■■■■■ वास्तुकी वास्तुकी सम्प्रदायकी ■■■■■ विष्णुकी हुए, ■■■■■ इतिहासकी वे ■■■■■ नाम अर्चन ■■■■■ वे ■■■■■ सम्प्रदाय वे ■■■■■ सम्प्रदाय । ■■■■■ विष्णुकी ■■■■■ और ■■■■■ वे ■■■■■ विष्णुकीर्णों की वर्णन वर्णन अर्चन वेदांशु ■■■■■ की वास्तुकी सम्प्रदायकी । उनके पुत्र वास्तुकी हुए । ■■■■■ वास्तुकी ■■■■■ सम्प्रदाय वास्तुकी । उनके पुत्र ■■■■■ हुए, उन्होंने वेदांशु वास्तुकी वे ■■■■■ सम्प्रदाय । अनेकों पुत्र वास्तुकी ■■■■■ हुए । ■■■■■ वास्तुकी ■■■■■ वास्तुकी सम्प्रदायकी और ■■■■■ पुत्र ■■■■■ हुए, ■■■■■ वास्तुकी ■■■■■ वास्तुकी सम्प्रदायकी । उनके पुत्र और हुए, उन्होंने ■■■■■ वास्तुकी की ■■■■■ सम्प्रदाय । उनके पुत्र वास्तुकी हुए, विष्णुकी ■■■■■ वास्तुकी वे ■■■■■ वास्तुकी सम्प्रदायकी । महाप्रमाण पुत्र वास्तुकी हुए, ■■■■■ ■■■■■ एक ही ■■■■■ । उनके पुत्र वास्तुकी हुए । (इन्होंने वास्तुकी वास्तुकी नगरी ■■■■■ वे ■■■■■ सम्प्रदायकी ■■■■■ वास्तुकीर्ण वर्णन अर्चन तत्काल, ■■■■■)

पर्वतसहित समुद्रमें मिलीन रही । ऐक्यकारणके प्रकाशसे समुद्र
सुख पाये, फिर मूर्धनि अंगुलके ठेकसे भूमि स्पर्शकृत होकर
दीकने लगी और चीन [] और पुनर्जय [] दुर्ग अद्विष्टे

समस्त हो गयी । भागवत् सुदीपकरी मयामे [] लेकर
आकरही लगी, भाग्यं बरिष्ठ और चीनो मर्त्यके लोकके साथ
पुनः पुनर्जय [] गये । (अध्याय २)

द्विपर पुनर्जय के चन्द्रवंशीय [] कृतान्त

पुनर्जय वीरवन्दे पुनः—लोकदर्शक ! []
बताइये कि महाराज संवत् १ विंश सप्तम पुनर्जय []
उन्होंने [] समस्तके राज्य किया [] अर्द्धमे चीन-चीन
रचा हुए, [] सप्त [] जाये ।

सुवर्णी खेले—महर्षे । महाराज महाराज महाराजके
कृपा पक्षसे प्रवेदसी विधिसे पुनर्जयके दिन मुनिके साथ
प्रतिष्ठानपुर (क्षेत्र) में आये । [] कई दण्ड दण्ड
विशाल प्रसादकर निर्माण किया, जो ईश्वरमें आश कोरक का
देव विष्णुब्रह्मा लगभग था । महाराज संवत् १ चीन कोरक
या चीन कोरके केकने प्रतिष्ठानपुरको अत्यन्त सुन्दरता एवं
स्वच्छतापूर्वक बसाया । एक ही समयमें (पुनर्जय पुनः)
पुनर्जय वंशमें प्रगत प्रसेन और पुनर्जय एक समस्त सुलेन
मधुर (मधुर) [] हुए । [] अत्युत्तम
(दाही रत्नचाल) मन्देन (अथ, [] ईश्वर) के
राजक हुए । प्रमत्तः प्रमत्तके साथ प्रमत्तके मन्त्र कर्तृ
गयी । [] संवत् १ दस हजार वर्षोंका राज्य किया । इनके
कद उनके [] अर्द्धक हुए, [] भी दस हजार []
किया । [] पुनः पुनर्जयके निमित्त प्रमत्तके
आये समस्तके [] पुनः और प्रमत्तके
सुर्षपत हुए । उनके पुनः अर्द्धशतक, अर्द्धशतकके पुनः
इन्द्रावन्त और [] हुए । इन्होंने भी प्रमत्त
अपने निमित्त कुछ कम ही दिनेक बन्ध किया । दिनेकके
पुनः [] और [] पुनः [] हुए ।
भारतवासके पुनः विजयन्त, उनके पुनः इन्द्रावन्त और उनके
पुनः वैकर्तन हुए । [] पुनः अर्द्धशतक, उनके []
मार्तण्डकाल और मार्तण्डकालके पुनः विजयार्थ तथा उनके
अत्युत्तम हुए । अत्युत्तमके पुनः सुवर्ण, सुवर्णके पुनः
तण्डित और [] पुनः विजयार्थ [] विजयार्थके पुनः
विजयानुर्जय, उनके [] और वैकर्तके [] इन्द्रावन्त

हूए । [] पुनः वैकर्तर्तन, [] पुनः [] और
इन्के पुनः वनकत हुए । वनकतके पुनः मेलकतत,
मेलकततके अत्युत्तम, इनके वैकर्त और वैकर्तके
पुनः प्रमत्त हुए । [] मर्द्धशतक, [] पुनः
अत्युत्तमके पुनः [] पुनः [] पुनः हुए ।
मर्द्धशतके पुनः इन्द्रावन्त, [] वानुवर्ण, इनके
विजयानुर्जय [] [] इन्द्रावन्त हुए । इन्द्रावन्तके
पुनः वैकर्त, [] कर्तव्यन [] कर्तव्यनके पुनः
प्रमत्त हुए । [] पुनः अर्द्धशतक और इनके विजयार्थ,
इनके संवत् और संवत्के पुनः वैकर्त हुए । वैकर्तके
पुनः संवत्, इनके अर्द्धशतक, अर्द्धशतके पुनः प्रमत्त और
[] पुनः [] हुए । प्रमत्तके पुनः अर्द्धशतक, इनके पुनः
[] अत्युत्तम [] अत्युत्तमके पुनः अर्द्धशतक
हूए । [] अर्द्धशतक, इनके [] वानुवर्ण, इनके वैकर्त
[] पुनः हुए ।

महाराज पुनर्जय [] इन्द्रावन्तके भारत मन्त्रके पुनः
हूए, [] प्रमत्त सुदीपकरी पुनर्जय तत्त रहते थे । महाराज
महाराज महाराजके अर्द्धशतके पुनर्जय समूर्ण पुनर्जय प्रमत्त
इन्द्रावन्तके महाराजके महाराजके अर्द्धशतके पुनर्जय और उनके
पुनः प्रमत्त हुए । प्रमत्तके पुनः प्रमत्त हुए । प्रमत्तके पुनः
मन्त्रक हुए, [] अत्युत्तम इन्द्रावन्तके पुनर्जय संवत्
[] । उनके पुनः वैकर्त, उनके पुनः सुवर्ण और सुवर्णके []
[] हुए, [] दस हजार [] राज्य किया ।
[] पुनः प्रमत्त, प्रमत्तके [] प्रमत्त हुए ।
इन्द्रावन्तके प्रमत्त होकर इन्हें स्वर्ग [] किया । []
[] प्रमत्त [] हुए, उन्होंने दस
हजार वर्षोंका महाराज संवत् किया । इनके पुनः मन्त्रक
हूए । महाराजके पुनः विजयन्त, विजयन्तके [] मन्त्रक हुए ।
महाराजके अर्द्धशतक इन्द्रावन्तके महाराजके साथ पुनः

कश्यपने कहा—‘महत् ! [] गुह्यस्य अपरस्य कल्याणाय क्यो नही होती ? देख ! आप सब संसारके महा हैं, फिर मुझे जगत्से बाहर क्यों मानी है ? देख ! देवताओंके लिये धर्मश्रीहियोंको आप क्यों नहीं मारी है ? [] मोहित क्योंजिये और उतम संस्कृत [] अम्ब ! आप अनेक [] हैं, कुम्भारसम्पन्न हैं, आपने भूतलोकको बना है। दुर्गमको आपने [] देवीको मारकर जगत्से मुक्त करना किया है। मातः । [] दम्प, मोह तथा पर्यन्त गर्वका [] मुक्त करें और दुष्टोंका [] संसारके प्रथम करें।’

इस स्तुतिसे प्रसन्न होकर सरस्वतीदेवीने उन कश्यप मुनिके कानों में निवासकर उन्हें ज्ञान प्रदान किया। वे मुनि [] देशमें चले गये और उन्होंने कई स्थानोंमें [] का [] द्विजम्बा बना लिया। सरस्वतीके अनुग्रहसे इन लोगोंके उपासना सदा मुनिवृत्तिमें तत्पर मुनिवृत्त कश्यपको [] किया। उन आदीश्वरी देवीके करारान्ते बहुत [] हुई। कश्यप मुनिका राज्यकाल एक ही बात कहो [] रहा। राज्यपुत्र नामक देशमें आठ हजार द्वाद हुये। उनके राजा अर्ध पुत्र हुए। उनमें ही मागधकी उत्पत्ति हुई। मागध नामके पुत्रका अभिषेककर पुत्र चले गये। वह सुनम्न वृद्धोष्ठ प्रौढक उत्ति शक्ति प्रसन्न हो गये। फिर ये पौराणिक सूक्तमें मन्मथर कर किष्किके ग्यान्तमें तत्पर हो गये। वह वर्षात्क ध्वजमें रहकर वे ठठे और नित्य-नैमित्तिक क्रियाओंके सम्पन्न कर पुनः सुक्रीके पास गये और बोले—‘लोमहर्षणाजी ! आप अथ मागध राजाओंका वर्धन करें। किन्तु मागधोंने वरिष्ठाग्यमें राज्य किया, हे व्यासशिष्य ! अन्य हमें यह बतावे।’

सूतजीने कहा—मागध-प्रदेशमें कश्यपपुत्र भागधने पितासे [] राज्यका भार वहन किया। उन्होंने अम्बेदिशको अलग कर दिया। पाञ्चाल (पंचाल) से पूर्वार्ध देश मागध देश [] जात है। मागधकी अनेक दिशमें वसित

(उत्तिष्ठ), उत्तिष्ठमें अम्बेदिश, नैऋत्यमें आनर्त (गुजरात), पश्चिममें सिन्धुदेश, पश्चिम दिशमें वैज्य देश, उत्तरमें मरदेश और ईशान्यमें कुशिन्य देश है। इस प्रकार मागधदेशका उन्होंने चार दिशोंमें इस देशका नामकरन करवाया मागधके पुत्र [] किया था। अनन्तर राजाने यज्ञके द्वारा बलरामजीको प्रसन्न [] इसके पालकवर्य बलरामके अंगसे त्रिभुजागका जन्म हुआ, उसने [] वर्षात्क राज्य किया। उसे कालकाजी नामका पुत्र हुआ, उसने उसे वर्षात्क राज्य किया। उसे लोमधर्मा [] पुत्र हुआ, उसने असी वर्ष राज्य किया। [] पुत्र हुआ, [] सत्त वर्षात्क राज्य किया। उसके केन्द्रिक नामक पुत्र हुआ, उसने सप्त वर्षात्क प्रसन्न किया। उसे मज्जतीरु (मज्जतीरु) नामक पुत्र हुआ, उसने पचास वर्षात्क राज्य किया। उसका पुत्र दर्पक हुआ, उसने बालीस वर्षात्क राज्य किया। उसे उदयक नामका पुत्र हुआ, उसने तीस वर्षात्क प्रसन्न किया। इसका पुत्र मन्दसर्धन हुआ, उसने बीस वर्षात्क प्रसन्न किया। मन्दसर्धनका पुत्र मन्द हुआ, उसने पित्तके तुल्य वर्षात्क राज्य किया। मन्दके प्रनन्द हुआ, जिसने दस [] राज्य किया। [] पठनन्द हुआ, उसने अपने [] तुल्य वर्षात्क ही राज्य किया। इससे राजानन्द हुआ, उसने बीस वर्ष राज्य किया। उसके पितामन्द हुआ, उसने [] राजान वर्षात्क राज्य किया। उसका पुत्र दीधानन्द हुआ, उसने भी पित्त [] समान राज्य किया। दीधानन्दका पुत्र यज्ञमेग हुआ, उसने अपने पिताके आधे वर्षात्क (दस वर्ष) राज्य किया। उसका पुत्र श्रीरामन्द और उमका पुत्र मङ्गलन्द हुआ। दोनोंने अपने-अपने पिताके समान वर्षात्क [] किया।

इसी समय कश्यपने हीकर स्मरण किया। अनन्तर ब्रह्मिष्ठ गौतम नामक देवताकी कश्यपसे उत्पत्ति हुई। उसने ब्रह्मचर्यके संस्कृतकर पहण मङ्ग (वर्षालयसु) में मचार किया और दस वर्षात्क राज्य किया। उससे शाक्यमुनिकन [] हुआ, उसने भी [] वर्षात्क राज्य किया। उससे

१-कश्यप लेखक आगे उदयककक मागधके [] है, [] उदयक भी।
२-इसने राजगुहसे उत्पन्न राजकाजी भागधे किन्तु कश्यप और उदयक [] वरिष्ठाग्य या वरुण []। इसके आगेके सम्पन्न वरुणसे ही परमव [] करते थे।
३-यहसि आगे [] उदयककक वर्णन है, किन्तु ही राजकाजी वरिष्ठाग्य भी।

शुद्धोदन नामक पुत्र हुआ, उसने **कर्कश** राजसूय किया। उससे शक्यसिंहका वंश हुआ। कलिमुगके दो हजार वर्ष व्यतीत हो जानेके बाद इसादिमें उसने राजसूय किया। कलिके प्रथम चरणमें सैन्दर्यान्ते उसने विनष्ट कर दिया और सब कर्कश उसने राज्य किया। उस समय **ब्रह्म** सभी बौद्ध हो गये। विष्णुस्वरूप उसके राजा होनेपर वैष्णव राजा थे, वैष्णव ही भजा हो गयी, क्योंकि विष्णुकी शक्तिके अनुसार ही सबकुछ धर्मकी प्रवृत्ति होती है। जो मनुष्य मर्यादित इस्वी इसलिये जाते हैं, वे उनकी कृपाके प्रभावसे वैष्णवके भागी हो जाते हैं। शक्यसिंहका पुत्र बुद्धसिंह हुआ, उसने तीस वर्ष राज्य किया। उसका पुत्र (विष्णु) चन्द्रगुप्त^१ हुआ, जिसने परसीदेशके राजा सुलूष (सेल्युकस) की पुत्रीके साथ किया। **मगध** बौद्धधर्मका प्रचार किया। उसने सब कर्कश राजसूय

। चन्द्रगुप्तका पुत्र बिन्दुसार (मिन्धसार) हुआ। उसने भी **विष्णु** समस्त राज्य किया। उसका पुत्र अशोक हुआ। उसी समय **अन्यमुज्ज** देशका एक ब्राह्मण **अश्व** पर्वतपर चला गया और वहाँ उसने विभिन्नपूर्वक ब्राह्मण सम्पन्न किया। वेदपत्रोंके प्रभावसे सबकुछसे **सर्वज्ञ**की उत्पत्ति हुई—**प्रमर**—**कम्पर** (समवेदी), **वपह्वि**—**वैष्णव** (कृष्णकृष्णवैदी) **विशेदी**—**गहरा** (सुद्ध वनवेदी) और **परिवाक** (अधर्मावेदी) **वे**। **वे** सब देशवास-कुलमें **गहरा** **कम्पर** होते थे। **अशोक**के वंशजोंको अपने भव्य कर भारतवर्षके सभी बौद्धोंसे नष्ट कर दिया।

अन्तर्गत प्रमर—परमर राजा हुआ। उसने सब योजन विस्तृत अम्बकाली नामक पुरीमें किया लेकर शुक्रपूर्वक जीवन **किया**। (अध्याय ६)

महाराज विक्रमादित्यके वीरप्रकाश उपनाम

सूतजी बोले—इतना ! विक्रम पूर्वके अस-पराके क्षेत्र (प्रायः आजके पूरे कुन्देलकण्ड एवं कंठलकण्ड)में **परमर** नामका एक राजा हुआ। **समीप** कलिप्रकाश नगरमें शहर अपने परक्रमने बौद्धोंको **प्रतिष्ठा** कर पूरी **प्रतिष्ठा** का की। राजपुत्राधिके क्षेत्र (दिल्ली नगर)में **चन्द्रगुप्त**—**वैष्णव** नामक राजा हुआ। उसने **सुन्दर** नगरमें राजका सुक्रपूर्वक राज्य किया। उसके राजकीये पुरी **विष्णु** थे। अन्तर्गत (गुहरात) देशमें **शुक्र** नामक राजा हुआ, उसने **शुक्रवर्ष**का राजधानी **किया**।

श्रीनक्षत्रीने कहा—हे महाभाग ! अब **अश्व** अभिव्यञ्जो राजाओंका वर्णन करें।

सूतजी बोले—महाभाग ! इस समय **अश्व** हो गया है। **आमल्ये** भी भगवान्का ध्यान करें। अब मैं योद्धा विश्राम करूँगा। यह सुनकर **भुविग** **कम्पर** विष्णुके ध्यानमें लीन हो गये। लम्बे अन्तरालके बाद ध्यानमें उठकर सूतजी पुनः बोले—**महाभाग** ! कलिपूर्वके मैत्रीय **वे** वर्ष व्यतीत होनेपर प्रमर नामक राजाके राज्य कायम **काम्य**

किया। उन्हें **महामर** (मुहम्मद) नामक पुत्र हुआ, जिसने **प्रमर** राजसूय-मालाके अधीने समस्तक राज्य किया। **पुत्र** हुआ, उसने भी **विष्णु** **सुलूष** कर्कशक राज्य किया। उसे देवदूत नामक पुत्र हुआ, उसके गम्भीरसेन नामक पुत्र हुआ, जिसने पञ्चम कर्कशक राज्य किया। वह अपने पुत्र **शुक्र**का अधीनके सब जन चला गया। शत्रुने तीस कर्कशक राज्यका संचालन। उसी समय देवराज **इन्द्र**ने वीरमती नामक एक देशवासको पृथ्वीपर भेजा। शत्रुने वीरमतीसे गम्भीरसेन **पुत्र**का ज्ञात किया। पुत्रके जन्म-समयमें **अम्ब**से पुनर्जात **और** देवताओंमें दुन्दुभी बजायी। सुक्रपर **वैष्णव**-मन्द जायु बहने लगी। **सम्पन्न** अपने शिष्योंमार्फत **शिकृष्टि** नामके एक ब्राह्मण तपस्याके लिये **और** **शिव**की उदराधनासे वे शिवस्वरूप हो गये।

तीस हजार वर्ष पूर्ण होनेपर **अश्व** कलिमुगका अग्रगमन हुआ, सब शक्यके किनास और **अध्व**धर्मकी अभिवृद्धिके लिये **वे** **शिकृष्टि** **गुह्य**के निवासभूमि कैरजसे भगवान् **पृथ्वी** **नमसे** **प्रसिद्ध**

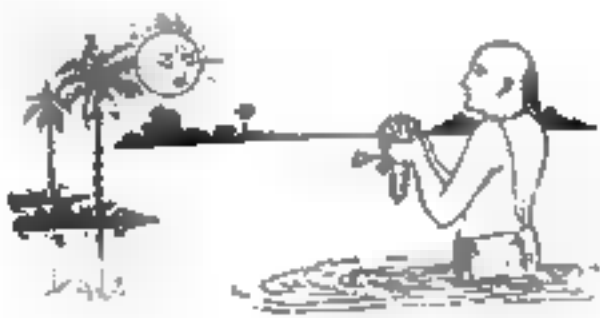
१-अब **वे** फिर पटलिपुत्रके राज्यका वर्णन **काम्य** और यह चन्द्रगुप्त ही कर्कशक परमर राजा **किया**। जिसने परमरके **अन्य** देशोंपर अधिकार किया था, जिन्हें **महामर** **अश्व**के बौद्ध देश **काम्य** **किया**। **दिले** वे सभी देश **वे** ही **अश्व**से थे। **पहले** अपने वर्णन है। चन्द्रगुप्तने ही सेल्युकसकी पुत्रीसे **किया** **किया**।


~~~~~

हुए । वे अपने माता-पिताको उन्नन्द देनेकाले थे । वे बचपनसे ही मन्त्रं बुद्धिमान् थे । बुद्धिविपारद विद्वान्मदित्य चर्च वर्गकी ही भाव्यावस्थामें तप करने वनमें चले गये । कष्ट कष्टोंक प्रयत्नपूर्वक तपस्व कर वे ऐश्वर्य-सम्पन्न हो गये । उन्होंने अम्बावती [ ] नगरीमें अक्षर [ ] मूर्तिसे समन्वित, भगवान् शिवद्वारा अभिरक्षित [ ] और दिव्य सिंहासनको सुशोभित किया । भगवती पर्वतोंके श्रृंग में एक वीराल उनकी रक्षायें सदा तपस रहता था । उस वीर एवाने महाकालेश्वरमें जकर देवाफिदेय पड़तेवकी पूजा की और अनेक ज्वांसे परिपूर्ण वर्ण-सम्पन्न निर्माय किया ।

जिसमें विविध रङ्गोंसे विपूजित अनेक धातुओंके स्तम्भ थे । रौनकनी ! उसने अनेक लज्जाओंसे पूर्ण, पुष्पाभित स्थानपर अपने दिव्य सिंहासनको स्थापित किया । उसने वेद-वेदङ्ग-परंगत मुख्य ऋषियोंको बुलाकर विधिवत् उनकी पूजाकर उनसे अनेक वर्ण-सम्पत्ती सुनीं । इसी समय वीराल नामक देवता ऋष्यनक्षत्र तप कारण कर 'आफनी जय हो', इस प्रकार कहता हुआ वहाँ अक्षा और उनका अभिवादन कर आसनपर बैठ गया । उस वीररत्नने राजसे कहा— 'राजन् ! यदि आपको सुनेकी इच्छा हो तो मैं आपको इतिहाससे परिपूर्ण एक रोचक अख्यान सुनवा दूँ', इसे आप सुनें । (अध्याय ७)

॥ प्रतिसर्गवर्ग, [ ]



१-भारतवर्षमें विद्वान्मदित्य अमल चर्मट राजा, पोरवारी और लकी-मरुवारी राजा हुए हैं । सन्त अन्दि पुराणों, मूलकाया और इतिहासपूर्वक, विद्वान्मदित्य, काश्मीरसंग, कुल-कोक [ ] उनका परिच वर्णित है । जब इधर कैशिकों कीरासक दूसरे भगवने इनका वर्ण अक्ष है । वेने विष और विद्वान्मदित्य अन्दि अनेक विद्वान्मदित्यकी वचं की हैं, का वे महाराज विद्वान्मदित्य उन्नयनीके राजा हैं और कर्तव्य, अमरिष, महर्षि, वेदराज पञ्चम, पटकर अन्दि नक्षत्र इन्की से राजसम्पत्ति दिव्य विद्वान्मदित्य की । विषकी आगे-छिने छोटे डरमा नाले हैं । राजा भोउने नक्षत्र कर्तव्य अक्ष-सम्पन्न लकीने अपनी सत्पत्ति वेने ही नक्षत्रोंसे अलंकृत कर्तव्य प्रथम किया था ।

## प्रतिसर्गपर्व

(द्वितीय खण्ड)

स्वामी एवं सेनककी परस्पर भक्तिका आदर्श \*

(राजा रूपसेन तथा)

सुखी बोले—महामुने ! एक

सर्वप्रथम भगवान् शंकरका ध्यान किया और फिर महाराज विष्णुआदिपते इस कहना प्रारम्भ किया—

राजन् ! एक मनोरंज सुने। राजाके कानमें सर्वसमृद्धिपूर्ण वर्षमान भरमें रूपसेन नामक एक धर्मात्मा राजा रहता था। उसकी पत्नीसह तनिका नाम विदुष्यात्मिका था। एक दिन राजाके दरबारमें खीरकर नमस्कार एक क्षत्रिय गुरी व्यक्ति अपनी पत्नी, कन्या एवं पुत्रके साथ वृत्तिके लिये उपस्थित हुआ। राजाने उसकी चित्तवृत्ति देखते देखते सुनकर एक महान् स्वर्णमुद्रा देकर राजाके सिंहाद्वारपर रहनेके कर्णमें उसकी नियुक्ति की। कुछ दिन बाद राजाने अपने गुप्तचरसे पूछा कि वह स्थितिका पता लगाना तो ज्ञात हुआ कि वह राज्य बड़ा, तीर्थ, तथा विष्णुके मन्दिरमें वर्षमें तथा सप्त, ब्राह्मण एवं अनाथोंमें वितरित कर देनेसे अपने परिवर्त्तनका पालन करता है। इससे प्रसन्न राजाने उसकी स्थायी नियुक्ति कर दी।

एक दिन मायी रातमें मूसलधार पड़ने, कदलपत्ती गरज, समक एवं झंझावतसे राजाके कानमें सीमा घर कर रही थी, इसी समय रूपसेनसे किसी चोरकी करुणाकन्दन-ध्वनि राजाके कर्णमें पड़ी। राजाने सिंहाद्वारपर उपस्थित खीरकरसे इस स्दन-ध्वनिप्र पता लगानेके कहा। लेकर चल, उसके भयकी अशंका तथा उसके सहयोगके लिये एक तलवार लेकर गुप्तरूपसे स्वयं उसके पीछे लग गया। खीरकरसे स्मरणमें पहुँचकर एक स्त्रीके वहाँ रोने देखा और उससे ज्ञात इसका कारण पूछा, तब उसने कहा कि 'मैं इस राजाकी

सखी—पहलकी हूँ—इसी मासके अन्तमें राजा रूपसेनकी मृत्यु होगी। राजाकी मृत्यु जानेपर मैं अन्धध होकर वहाँ जाऊँगी—इसी चिन्तसे मैं रो रही हूँ।

राजाके दीर्घायु होनेका उससे ज्ञात हुआ इसपर वह देखी बोली—'यदि तुम अपने पुत्रकी वलि चन्द्रिकादेवीके स्वयमे दे सको तो राजाके आयुकी रक्षा हो सकती है।' फिर मा, खीरकर उलटे पाँव घर लौट आया और अपनी पत्नी, पुत्र तथा सहकर्षण जगत्कर इनकी सम्पत्ति लेकर उनके चन्द्रिकाके मन्दिरमें जा पहुँचा। भी गुणरूपसे उसके पीछे-पीछे चलता रहा। खीरकरने प्रार्थना कर अपने स्वामीकी आयु बढ़ानेके लिये अपने पुत्रकी वलि बड़ा दी। चन्द्रिका कटा मिर देखकर दुःखसे उसकी चन्द्रिका हृदय पिटीरु हो गया—वह मर गयी और इसी मास भी चल बसी। खीरकर इन तीनोंका शव लेकर भी राजाकी आयुकी वृद्धिके लिये वलि देने लगा।

राजा यह सब देखा था। उसने देखीकी प्रार्थना कर अपने जीवनसे धर्म बताते हुए अपना तलवार चन्द्रिकाके लिये उर्ध्व हो तलवार छोड़ी, तब ही देखीने प्रकट होकर उसका हाथ पकड़ लिया और बोली—'राजन् ! मैं तुमका बहुत प्रसन्न हूँ, तुम्हारी आयु तो सुरक्षित हो गयी, तुम अपनी इच्छानुसार कर जाँग लो।' राजाने देखीसे कहा कि 'तुम्हारे कितानेकी प्रार्थना की। 'तयास्तु' कहकर देखी अन्तर्धान हो गयी। राजा प्रसन्न होकर चुपके-से चन्द्रिकाके मन्दिरमें आकर लेट गया। इधर खीरकर भी चक्रित होता हुआ और देखीकी कृपा हुआ अपने पुत्रकी वलि परिकारकी सोचकर राजाप्रसन्नके सिंहाद्वारपर

\* भक्तिकर्णमें राजाके कानमें 'मैत्रल-चन्द्रिकाकन्दन' या 'मैत्रलकीकीकी' की कड़वी, जो विष्णु-वैष्णव-संस्कारके अन्तर्गत प्रसिद्ध हैं, उनका मूल चन्द्रिकाकन्दन होता है। ये कड़वी जो-मुन्नेकि अन्तर्गतित एवं अन्तर्गत अन्तर्गतके स्वर्णका होने का, जो लोक-व्यवहारकी दृष्टिसे विचित्र, भी हैं। उनमेंसे कड़वी काँ की जा रही है।

■ गया।

अनन्तर राजने वीरवारको बुलाकर राजने नरिने तदनकर वाराण पूछ, तो वीरवारने कहा—‘राजन् ! यह तो कोई चुड़ैल थी, मुझे देखते ही अद्भुत गयी। कोई बात नहीं है।’ वीरवारकी लक्ष्मिपति और देवाकर राज स्वसेन अत्यन्त प्रसन्न हुआ और अन्यथा किन्हा वीरवारको पुत्रसे कर दिया तथा उसे अपना मित्र बना लिया। इसी कथा कहकर वैष्णव हाथ हो गया। वैष्णवाने राजा को पूछ—‘राजन् ! इस कथाने राजने एक दुखरेके लिये अपने उत्सर्ग किया, सबसे अधिक कीड़ और तबल है वह क्या बताइये।’

### अज्ञान-पुत्री

वैष्णवाने कहा—‘राजन् ! अज्ञान नामकी कलत्र चन्द्रसममें इत्यन्त महाबल नामकी विष्णुत अत्यन्त बुद्धिमान तथा वैदिक-मन्त्रोक्त ज्ञान एक राजा गया। उसका स्वविभक्त हरिदास नामका एक दूत था। पत्नी भक्तिमत्ता समुद्र पुत्रीकी सेवामें तबल थी। पत्नीमालाकी सभी विद्याकीमें परमज्ञान अत्यन्त समझ आत्मत रूपकी एक बुद्धि, अत्यन्त बल था महादेवी। एक दिन महादेवीने अपने मित्र हरिदासके कहा—‘तब ! अब मुझे ऐसे योग्य पुत्रको दीखिना, जो तुममें मुझसे भी समझ हो, अन्य किसीको नहीं।’ अपनी पुत्रीकी बात सुनकर हरिदास बड़ा प्रसन्न हुआ और ‘देख हो होगा’—कहकर हरिदास राजाभक्तने अन्त और उसने एवाकर अभिप्रेत किया। तदनन्तर राजने कहा—‘हरिदास ! तुम मेरी समुद्र तैलंग देशके राजा ब्रह्मन्त्रके पत्त जाओ और कुशल-समाचार जानकर रीति ही मुझे बताओ।’ आज्ञा पाकर राजा हरिदासके पत्त गया और उसने तबले अपने स्वामी महादेवका कुशल-समाचार बताया। कुशल-समाचार जानकर राजा ब्रह्मन्त्र अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसने हरिदाससे पूछ—‘ब्रह्मन् ! आप विद्वान् हैं, मुझे यह बताये कि ब्रह्मन्त्र अज्ञान हो क्या, यह कैसे मरूप होगा ?’

हरिदासने कहा—‘राजन् ! जब वेदोंकी मर्मादृष्टि न

राज कोरने—यद्यपि सभीने अपने-अपने वर्तमान अद्भुत अद्भुत कर्मिण्य किया, फिर भी स्नेह ही सबसे प्रतीत होता है, क्योंकि वीरवार राजसेवक था, उसे अपनी सेवाके प्रतिफलमें स्वर्णमुद्राएँ मिलती थीं, उसने स्वर्णमुद्राएँ दुष्टोंमें उत्सर्ग किया, वीरवारकी भी, धर्मसेवी थी, इसलिए उसने अपने प्राणोक्त : अपने भाईमें प्रेम था, पुत्रका अपने वा, स्वभावगत होता ही है, किन्तु राजा अद्भुत अद्भुत किया, कि ये एक स्वभाव भी अपना प्राणोत्सर्ग करनेको उद्यत हो गये, अतः उनकी सेवाका तबल बड़ा तबल है।

जे वेदोंत बने विपरीत लगे, अज्ञान अज्ञान ही स्नेहात्मक रहे हैं। अज्ञान ही मित्र है, ऐसे हुए अज्ञान गया हो, अज्ञान जहिये। राजन् ! पापकी सेवा है (असत्य), पुत्र दुःख क्या गया है। दुःखकी है दुष्टि, बलीबुद्धमें घर-घरमें व्याप्त रहेगी। सभी राजा बलीभूत हो सभी ब्रह्मन्त्र पास हो जायेंगे। ब्रह्मन्त्र-बर्ग बलीभूत ही अत्यन्त तबल ब्रह्मन्त्र महादेवके प्राप्त करेंगे। बिना लज्जासे रहित होनेसे सेवाका स्वीकार प्राप्त करनेवाले होंगे। पुत्री निष्कल (सत्त्वशून्य) हो जायगी। ऐसी सत्त्वत बलिने कि बलिबन्ध हो है, किन्तु बलीबुद्धमें मनुष्य पापका शरणमें जायेंगे, वे ही अन्तरसे रह, अन्य कोई नहीं।

सुनकर हरिदास हुआ और उसने उसे बहुत-सी देकर किन्हा तथा राजा महाबलको सम्पूर्ण देकर अपने महलमें और भी शिविले उसी समय बुद्धिबोधित नामक बुद्धिमान ब्रह्मन्त्र वहाँ आया और उसने अपने विनिष्ठ विद्वान् हरिदासके सामने प्रदर्शन किया—‘अब ब्रह्मन्त्रने मन्त्र जपकर देवीकी उपाधना और एक

महान् आश्चर्यजनक शीघ्रग नामक विद्वान् प्रवृत्तकर हरिदासको दिखाएगा। विद्याओंसे मुग्ध होकर हरिदासने उसे अपनी कन्याके योग्य समझकर उसका वरण कर दिया।

हरिदासका पुत्र न मनुजन् । वह विद्वान्प्रवृत्तकरके हित्ते अपने भुक्तके बर्हा गया था, अब वह अपने कुम्भे विद्याओंके पत्र चुक तो गुरुदक्षिणके हित्ते धार्यन करने लग्य। सुने उससे कहा—‘अरे मनुजन् ! तुने, तुम गुरुदक्षिणके रूपमें अपनी बहिन महादेवी मेरे दैवज्ञ पुत्र धीमन्को समर्पित कर दो।’ ‘ठीक है’—ऐसा कहकर मनुजन् अपने घर आ गया।

इधर हरिदासकी पतिप्रसन्नने श्रीशक्तिव्य नामन नामक एक विद्वान् । शब्ददेवी काय कलत्र कुराल एवं शक्तिविद्याका ज्ञाता था, उसकी विद्यारसे प्रभावित होकर अपनी कन्याके लिये शिक्षण, तत्पुल आदिके द्वारा प्रवृत्ति कर उसका वरण कर लिया।

समय आनेपर पिता, पुत्र तथा महाद्वारा वरन किये गये तीनों गुणवान् ब्राह्मण महादेवी नामवाली उस कन्याके कलत्रके हित्ते हरिदासके पहा आ पहुँचे। इसी बीच एक राक्षस अपनी मायासे उस कन्या महादेवीका हरण कर विद्वान्प्रवृत्तकर चला गया। यह समाचार जानकर ये तीनों कन्याधी दुःखी होकर रोने लगे। अब उनमेंसे गुणपुत्र धीमन् नामक दैवज्ञ विद्वान् ब्राह्मणने पता पूछा गया तो उसने कि वह कन्या विद्वान्प्रवृत्तकर राक्षसद्वारा हरण कर ले गयी है। तदनन्तर उस कन्याकी प्रतिपत्ति हित्ते द्वितीय

बुद्धिर्बलवन् नामक ब्राह्मणने अपने द्वारा बनाने गये आश्चर्यकारक विद्वान्पर दोनों विप्रोंको बैठकर विद्वान्प्रवृत्तकर पहुँचाना। यह शब्ददेवी काण्डको वल्लभनेमें निजुन कन्या ब्राह्मण तीसरे ब्राह्मणने धनुषपर काण्डका संधान किया और काण्डसे उस राक्षसको मार डाला। ये तीनों कन्या महादेवीको प्राप्य कर उसी स्थानमें बैठकर उज्ज्विनीमें वापस आये।

यहाँ पहुँचकर तीनों ब्राह्मण अपने-अपने कार्यका महत्त्व कहते हुए कन्याके कार्यात्मक कायकला होनेके लिये परस्परमें करने लगे, यह निर्णय नहीं हो सका कि कन्याका विवाह किसके साथ हो।

तब विद्वान्प्रवृत्त पूछा—‘राजन् ! क्या कि इन तीनोंमें विवाहका अर्थात् कन्या प्राप्य करनेका अधिकारी कौन ?’

राजन् । कहा—जिस विद्वान् गुरुके पुत्र कन्याका यह पता बताया कि वह राक्षसद्वारा विद्वान्प्रवृत्तकर पहुँचायी गयी है, वह ब्राह्मण कन्याके हित्ते निजुनपुत्र है और जिस दूसरे ब्राह्मण बुद्धिर्बलवन्ने अपने पत्रकलाद्वारा नामकी कन्याको पहा पहुँचाया, वह भीकि समान है, किन्तु जिस नामन नामक ब्राह्मण धनुषने शब्ददेवी काण्डमें राक्षसके साथ युद्ध कर उसे मार गिराया, जो ब्राह्मण इस कन्याको प्राप्य करनेका योग्य अधिकारी है।



### समान-वर्णमें विवाह-सम्बन्धका अधिकार (विलोकसुन्दरीकी कथा)

कैलास पुनः बोला—राजन् ! अब मैं एक दूसरी कथा सुनाता हूँ। चम्पापुरी (चाम्पलपुर) प्रसिद्ध कवी श्री, वहाँ चम्पाकरा नामका एक बलवान् और धनुर्विद राज रहता था। उसकी रानीका नाम था सुलोचना। उसके क्रितिक-सुन्दरी नामकी एक कन्या उत्पन्न हुई। उसका मुख चन्द्रमाके समान, भीहि धनुषकी प्रपञ्चके समान, नेत्र मृगके समान तथा शब्द कोकिलके समान थे। राजन् ! उस बालामें देखत भी विवाह करना चाहते थे, अन्य धनुषीकी तो बात ही क्या ? उसके स्वयंवरमें लोकप्रियुत सभी राजा तथा देवता इत्र,

कुंजर, भयंकर और कम आदि देवता भी धनुषका शस्त्रे धारण करके आये। उनमेंसे इन्द्रदत्ते कन्याके पिता राज चम्पाकरसे कहा—‘राजन् ! मैं सभी राजाओंमें कुराल हूँ, समान एवं मनोरम हूँ, आपकी पुत्रीको मुझे समर्पित कर दे।’ दूसरे बर्मादत्ते कहा—‘राजन् ! मैं धनुर्विदमें कुराल एवं मनोरम हूँ, आप अपनी कन्या मुझे समर्पित करें।’ तीसरे कहा—‘राजन् ! मेरा धनपात है, मैं सभी प्राणियोंकी प्राप्य जानता हूँ, मैं गुणवान् और रूपवान् भी हूँ। आप अपनी कन्या मुझे समर्पित कर सुखी होऊँ।’







लिये उसने प्रार्थना भी की। अन्तमें कन्याके पिता मल्लवर्धनजी जीमूतवाहनसे उसका विवाह करा दिया।

एक मल्लवर्धनका पुत्र विष्णुवन्धु एक दिन अपने बहनेई जीमूतवाहनके साथ गन्धर्वदन पर्यटन गया। वहाँ अपने नर-नारयणको प्रणम करके उसी विशालपर भगवन् विष्णुका पावन गङ्ग आया। उस समय शङ्खपूठ जगन्नी मत्ता, जहाँ जीमूतवाहन था वहाँ विस्मय कर रही थी। वहाँके कनकचन्दनको सुन्दर दीनकरसल जीमूतवाहन दुःखी होकर सीध ही वहाँ पहुँचा। शृङ्गको आकाशम देकर उसने पूछा— 'तुम मैं से रही हो ? तुम क्या कह है ?' यह बोली— 'देव ! आज मेरा पुत्र गङ्गका पथ करने, उसके विद्योगके कारण दुःखसे व्याकुल मैं से रही हूँ।' यह सुन्दर उस जीमूतवाहन गङ्ग-विशालपर गया। उसे गङ्ग पकड़कर अवधरायें से गया। जीमूतवाहनकी पत्नी कनकचन्दन अवधरायें गङ्गके द्वारा भक्षण करने उसे हुए अपने पतिको देखकर दुःखसे रोने लगी। परंतु विष्णु वन्दे जाने जाते उस जीमूतवाहनको मलय-कन्ये देखकर 'अर ! और जीमूतवाहनसे कहने लग— 'तुम को क्या भये ?' इसपर वन्दे कहा— 'शङ्खपूठ काजी मत्ता दुःखी थी, उसके पुत्रकी रक्षके लिये मैं तुमसे पास आया।' अब वह घटना गङ्गके पास आया और कहने लग— 'पुण्ड्रसगर ! आपके भोजनके लिए मैं आया हूँ। मत्तामते ! इस मनुष्यको जोड़कर मुझे अपना बनाइये।' जीमूतवाहनकी मङ्गलता और परोपकारकी

देखकर गङ्ग अत्यन्त प्रसन्न हो गया और उसने विष्णुवन्धु जीमूतवाहनको घर दिये। 'अब मैं आगेसे कभी शङ्खपूठके वंशजको नहीं खाऊँगा। ब्रेह जीमूतवाहन ! तुम विष्णुवन्धुकी कटीमें ब्रेह उग्य प्राप्त करेंगे और एक लाख वर्षक अनन्दका उपयोग कर वैकुण्ठ प्राप्त करेंगे।' इतना कहकर गङ्ग अन्तर्हित हो गया और जीमूतवाहनने पितृसे उग्य प्राप्त किया तथा अपनी पत्नी कनकचन्दनके साथ उग्य-पूछ प्रोगकर अन्तमें वह वैकुण्ठलोकाको चला गया।

वैतालने पूछा— भूषे ! अब मैं बताइये कि शङ्खपूठ तथा जीमूतवाहन—इन दोनों का क्या मत प्राप्त हुआ और दोनोंमें कौन सत्य था ?

उत्तरा बोला—वैताल ! शङ्खपूठको ही मङ्गल फल प्राप्त हुआ; क्योंकि उपकार करना तो उन्नत स्वभाव ही होता है। एक जीमूतवाहनने शङ्खपूठके लिये पक्षि अपना जीवन देकर मङ्गल बना एवं उपकार किया, इसीके फलस्वरूप गङ्गने प्रसाद होकर उसे उग्य एवं वैकुण्ठ-प्रतिष्ठा कर प्रदान किया। एक होनेसे जीमूतवाहनका जीवन-दान (उपकार) रक्ष करके अन्तर्गत आ जाता है। अतः उसका त्याग शङ्खपूठके लिये एवं सत्यके लिये महत्त्वपूर्ण नहीं समझ होता, परंतु शङ्खपूठने विषय होकर अपने शत्रु गङ्गको अन्ध सरीर समर्पित कर एक महान् धर्मार्थ उसके लिये किया। अतः शङ्खपूठ सत्यके बड़े फलका अधिकारी होता है। वैताल उसके उत्तरसे संतुष्ट गया।

### सत्यमयें यन्त्रेयोनकी महता (गुणवत्तकी कथा)

वैतालने पुनः कहा—एक ! उद्विगीने यन्त्रेयोन एक था। उसके लिये देवर्षी नमक था। देवर्षीका गुणकर था। वह, जो दूत, मद्य आदिक व्यसनी था। वह गुणकरने विष्णुवन धन दूत आदिने दिया। उसके बन्धुओंने उसका दिया। वह पुण्ड्रिफ इधर-उधर भटकने देवयोगसे गुणकर सिद्धके अन्तर्गते आया, वहाँ कहीं

उसके एक योगिने उसे कुछ खानेको दिया, किन्तु भूखसे खिंचित होते हुए भी उसने उस अन्नको पिताप आदिसे दूषित प्रक्षेप नहीं किया। योगिने उसके लिये एक यक्षिणीको बुलाया। यक्षिणीने गुणकरका अतिशय-स्वागत किया। तत्पश्चात् वह वैराग्य-विशालपर चली गयी। उसके विद्योगसे विह्वल होकर गुणकर पुनः योगिनेके पास आया। योगिने यक्षिणीको आकृष्ट करनेवाली



विद्या गुणावरणों प्रदान की और कहा—‘कहा ! तुम चाहेस दिनरात जलमें स्थित रहकर अभी तकने इस शुभ मन्त्रका अर्थ करो । ऐसा करनेपर यदि तुम मन्त्र सिद्ध कर लोगे तो मन्त्रकी शक्तिके प्रभावसे वह बलिणी तुम्हें प्राण दे जायगी । गुणकरने वैसे ही किन्तु वह बलिणीको प्राप्त नहीं कर सका । अन्तमें विपन्न होकर योगीकी [ ] अपने घर ही रह आया । उसने अपने माता-पिताको सम्झकर कर वह [ ] बित्तही । दूसरे दिन प्रातः वह गुणकर संन्यासियोंके एक कठमे गया और वहाँ शिष्य-रूपमें रहने लगा । [ ] स्थित होकर उसने [ ] हो [ ] प्राप्त करके [ ] बलिणीको बताये गये मन्त्रका पुनः जब कुछ प्रारम्भ किया, पर बलिणी फिर भी नहीं आयी, जिससे उसे बड़ा क्रोध हुआ ।

कैलासने ज्ञानविज्ञानसे राजासे पूछा—‘[ ] गुणाकर अपनी प्रिया बलिणीको क्यों नहीं प्राण बन सका ?’

राजा बोला—‘सर्वकार । साधककी सिद्धिके लिये तीन अवश्यक गुण होने चाहिये—मन, जगत् तथा शरीरका ऐक्यत्व । [ ] और [ ] किन्तु वह [ ] परलोकमें सुखान्त होता है । जगत् और शरीरसे [ ] करण सुन्दर होता है । वह इस जगत्में अधिक [ ] है

### समानमें समान-भाव रत्ने

(पुनः पुनः कहानी)

कैलासने पुनः कहा—‘राजन् । विष्णुदेवने कलदा नदीका एक विशालत राजा रक्ता था । एक दिन वह एक मुगल पीछा करते हुए एक जगहमें [ ] गया। जलमें वह एक सरोवरके पास पहुँच और वहाँ उसने अपनी सखीके साथ कमल-पुष्पोंका [ ] एक सुन्दर भुवि-कन्याको देखा । उसके [ ] रूपको देखकर राजा ने उसे अपनी रानी बनानेका निश्चय किया । वह कन्या भी राजाके देखकर प्रसन्न हुई । दोनों परस्पर प्रीतिपूर्वक एक दूसरेको देखने लगे । उसकी सखीसे राजा ने जब उस कन्याका नाम पूछा, तब उसने कहा कि वह एक मुनिकी कन्या है । [ ] कन्याके पिता वहाँ [ ] पहुँचे । मुनिने देखकर राजाके किम्बदन्तियों से पूछा—‘पुनः ! उद्यम क्यों करता है ?’

और परलोकमें अधिक फलपद होता है । मन और शरीरके [ ] किन्तु वह कर्म दूसरे जगत्में सिद्धि प्रदान करता है; परंतु मन, [ ] और शरीर—इन तीनोंकी सम्यक्तासे सम्पादित [ ] इस जगत्में [ ] फल प्रदान [ ] और अन्तमें मोक्ष [ ] प्रदान करता है । अतः साधकको कोई भी कार्य अवश्य मनोबलसे [ ] चाहिये ।

गुणकरने [ ] दो [ ] बड़े कष्टपूर्वक मन्त्रका [ ] किन्तु, [ ] दोनों [ ] साधनमें मनोयोगकी कमी रही । [ ] और तथा पञ्चवि-सेवन आदिमें शरीरका योग [ ] और [ ] जब भी होता [ ] किन्तु गुणाकरका मन मन्त्रमें न [ ] बलिणीसे लग्न हुआ था । इसी [ ] मन्त्र- [ ] न [ ] सका । शरीर और [ ] छोटे [ ] योग न करनेके कारण गुणाकर बलिणीको [ ] न कर [ ] किन्तु [ ] तो [ ] था, पलता [ ] वह वह हुआ और [ ] होकर बलिणीको प्राप्त किया । इससे वह सिद्ध हुआ कि [ ] भी सर्वव्यापी पूर्ण [ ] मन, [ ] और शरीर—इन तीनोंका ही [ ] अवश्यक [ ] इनमें भी धनका योग काम आवश्यक है ।

इसमें महामनीषी मुनि बोले—‘राजन् । अवश्य [ ] परलोकमें, महाप्राप्तकी रक्षा और दण्ड करना यही मुख्य धर्म है । मन्त्रकीको जगत्प्राप्त देनेके समान [ ] दान नहीं है । उद्यमोंको दण्ड देना चाहिये । पुण्यजनोंकी पूजा करनी चाहिये । [ ] [ ] मन्त्रमें निश्च [ ] रक्षना चाहिये । [ ] देनेमें समान-भाव रक्षना चाहिये, भक्त्या नहीं करना चाहिये । देवताकी पूजामें कल-कल एवं कलकल से [ ] कल-कल-कल सत्यका आश्रय ग्रहण करना चाहिये । गुह [ ] जनोंकी भूमामें इन्द्रिय-निग्रह एवं सम्पत्तिविरताका विशेष ध्यान रखना चाहिये । दान की समय मृदुताका आश्रय [ ] करना चाहिये । छोटे-से भी हुए निम्न कर्मको बहुत [ ] समझकर सर्वथा उससे विरत रहना चाहिये’ ।

ऐसा [ ] उस मुनिने अपनी [ ] किन्तु राजकुमारके साथ कर दिया। उमा उसे लेकर अपनी राजधानीकी ओर चला। मार्गमें उसने एक कठपुतली को बिलाने किया। उसी [ ] उसका पता [ ] जानेके [ ] एक राक्षस वहाँ आया और कहने लगा कि 'तुम दोनों को यहाँ स्थान अप्रविष्ट न करने दिया है, मतः मैं तुमलोगोंको खा जाऊँगा।' उसके कथन श्रवणपर उसने पुनः कहा—'यदि तुम किसी सत्त पक्षी ब्रह्मण-बालकको [ ] [ ] दिले प्रकृत करो तो मैं तुम्हें छोड़ दूँगा।' उमा राक्षसको वचन देकर अपनी पक्षीके साथ महलमें चला आया।

दूसरे दिन उमाके भविष्यको सब समझकर वह सुनयन। भविष्यके परमवर्षपर उमाके [ ] ब्रह्मणको एक लक्ष स्वर्ग-मुद्रा देकर [ ] मध्यम पुनर्-राक्षसको [ ] [ ] लिये [ ] कर लिया। इस ब्रह्मणपुनर्- [ ] [ ] अपना बलिदान देना स्वीकार कर लिया। राक्षसपक्ष उसी

लेकर सभी राक्षसोंके पास पहुँचे। ज्यों [ ] बलिदानक [ ] [ ] से वह ब्रह्मणक बालक पहले हँसा और फिर [ ] [ ] देने [ ]

बैतालने पूछा—'उम् ! बताओ [ ] मृत्युके समय [ ] ब्रह्मण-बालक [ ] क्यों हँसा और ब्रह्मणे फिर क्यों रोया ?'  
राक्षसने कहा—'बैताल ! [ ] पुन पिताको [ ] होता [ ] और [ ] पुन माताको प्रिय होता है। इसलिये माता-पिताको [ ] [ ] जनकर और [ ] कोई [ ] न देखकर [ ] अश्रुसे मध्यम पुनर् [ ] शरण ग्रहण की, परंतु अपनी पक्षीके प्रिय चाहनेवाले [ ] निर्दयी उमा हृदयको [ ] कुपुतली तत्पश्चात् देखकर उस ब्रह्मणकुमारको पहले [ ] [ ] और फिर [ ] यह उमा शरीर भयम राक्षसको बस होगा, [ ] लेकर [ ] दुःखी [ ] उमा स्वर्से रोता [ ] [ ] करने लक्ष। बैताल उमाके इस उधारे बहुत क्रोध हुआ।

## उमारे काम, समझने उमा

### [ ] बुढ़ाईकी कथा

बैतालने उमाके पुनः कहा—'उम् ! रणवीर जयपुरमें वर्षभय नामका एक राजा था। उसके [ ] वेदवेदाङ्गशास्त्र विष्णुस्वामी नामका एक ब्रह्मण विद्वान् कथा था। वह राजा-कुमारका पाल था। उसके लक्ष पुत्र थे, [ ] विभिन्न व्यसनोंमें लगे रहने थे। वे बैताल निर्दिष्ट कार्य करते थे, बैताल ही उनका नाम भी [ ] [ ] [ ] मय। पालक भूत भूतकर्म था, दूसरा व्यभिचारी, तीसरा विधवा और चौथा नास्तिक था। संयोगसे दुर्भाग्यवश वे सभी निर्धन हो गये। एक बार वे सभी अपने पिता विष्णुस्वामिके पास गये। उन लोगोंने विनयपूर्वक उन्हें 'अशक्त किन्तु और कहा—'पिताजी ! हृत्पलोग्रही सभी कैसे नष्ट हो गयी ?'  
कहा—'भूतकर्म ! भूतकर्म वनको नष्ट कर देता है। वह [ ] मूल है। भूतकर्मसे व्यभिचार, चोरी और निर्दयता आदि उत्पन्न होते हैं। यह महान् दुष्टविनाशकारी है। भूतकर्म

करनेके कारण तुम्हारे शत्रुका नाश हुआ।' यह सुनकर उसने कहा—'पितावर ! आप [ ] कृपा धन-प्राप्तिकर सभी कार्य करवाये।' पिताने कहा—'तीर्थ और वनके प्रधानसे तुम्हारे पास [ ] हो जायेंगे। [ ] अपने माता-पिताकी बाँधीपर [ ] रो, उनका कहना मानो।' तदनन्तर पिताने द्वितीय पुत्रसे कहा—'पुत्र ! तुम व्यभिचारी हो। वैश्याका संग बड़ा अशुभ है। तुम इस अशुभ [ ] त्यागकर ब्रह्मचर्यपूर्वक ब्रह्मराज्य हो। ब्रह्मचर्यव्रत धारण [ ]। तृतीय पुत्र विधवासे कहा—'पति और यदि सदा पापकी वृद्धिके भरण है, इनके [ ] [ ] तीर्थ-वर्ष [ ] और नरकगामी होगे, इसलिये तुम देवार्चनकर जगत्प्रति, सर्वोत्थ भगवान् विष्णुके निमित्त शत्रुको स्वीकृत कर गौन होकर भोजन करो' और अपने नास्तिक पुत्रसे कहा—'तुम देवनिन्द्य आदि नास्तिक-कार्यको छोड़कर [ ] नास्तिक-आर्चक अवलम्बन

अनादि दण्डदण्डपूर्वक [ ] भवेत्, किन्तु यदिने पिता सकल दण्डनको॥  
संपत्ता सुरक्षित [ ] उमा कुपुतली। कुपुत [ ] [ ] संक्षिप्त-कथा॥

(प्रतिपादन २।११।५७)





सुति करता हूँ।'

श्रीराम सदाशिवन सकलनी सौतामिनी लक्ष्मीनन्द

कौशिकमुखापराधुनयुक्तं पौनःपुन्यं कृतम् ।

कथे कथापदमुक्तं सुतारं भक्तमुक्तमन्तरं

समुद्रेन हनुका य भरोनकोविता कथयन् ॥

(प्रतिस्पर्ध २।२४।५)

'ओ भगवन् कथानके निघन हैं, [ ] पालकमल  
कन्दनीय है, [ ] अनुकम्प [ ] वो  
लक्ष्मणजीके साथ रहते हैं और यथा श्रीसीतसे सम्बन्ध है  
तथा [ ] श्रीजनकान्दिनेजीके मुक्त-कथनकी [ ]  
विशेषभावसे देखते रहते हैं, उन राजा, हनुक तथा भक्तसे  
संबन्ध, पुनःपुनःकृत [ ] करनेवाले, [ ] सुते  
एकमेव श्रीरामचन्द्रजी [ ] कथना करता हूँ।'

सुतजीने कहा—प्रियो ! [ ] मैं अपने [ ]  
राजाओंके [ ] सम्बन्ध [ ] वर्णन करता [ ]  
उसे आकर्षण प्रमाण करें। यह [ ] कथनकी  
सम्पूर्ण [ ] विवरा करनेकर, [ ] पूर्ण  
करनेकर, देवताओंका अभिषेक, राजाओंका अभिषेक,  
विद्वानोंको आश्रित करनेकर तथा [ ] कथने सत्संगकी  
चर्चाकर है।'

प्रियो ! एक समय होगी [ ] नरदजी अपने  
कथनकी वचनसे विविध [ ] प्रमाण करते हुए इस  
मृत्युलोकमें आये। यहाँ उन्होंने [ ] कि अपने-अपने [ ]  
[ ] कथने अनुसार संसारके प्रणीत तन्त्र प्रकटके करनेसे एवं  
दुःखोंमें दुःखी हैं और [ ] अथि एवं [ ] यथा है।  
यह देखकर उन्होंने सोचा कि कौन-सा ऐसा उपाय है, जिससे इन  
प्राणियोंके दुःखका नाश हो। ऐसा विचारकर वे विष्णु-  
लोकमें गये। यहाँ उन्होंने [ ] गदा, [ ]  
पद्ममालासे अलङ्कृत, प्रसन्नमुख, शक्त, पद्म [ ] तथा  
सनतकुमारदिसे संसृत भगवान् नारायणका दर्शन किया। उन  
देवाधिदेवका दर्शनकर नरदजी उनकी इस प्रकार सुति करने  
लगे—'वन्द्य और मनसे किन्ध लक्षण पर है और [ ]  
अनन्तराधिकार्य है, अर्थात्, पद्य और अपनेसे [ ] है, ऐसे

महान् अन्तर्निर्गलसक्य अथ परमात्मको [ ] है।  
सभीके अर्द्धिपुन लोकोपकारपरयन, सर्वत्र व्याप, तपोमूर्ति  
[ ] [ ] चर-चर [ ] है।'

[ ] नरदजी सुनि सुनकर भगवान् विष्णु  
कोले—देव ! [ ] किस कारणसे यहाँ आये हैं ? आपके  
[ ] कौन-सी विपत्ति है ? महाभाग। [ ] सभी बातें  
कहने। मैं [ ] उपम कर्तुं।

नरदजीने कहा—प्रभो ! लोकोंमें प्रलय करता हुआ  
वै मृत्युलोकमें गया था, यहाँ मैंने देखा कि संसारके सभी  
जन्मे अनेक प्रकारके क्लेश-तापसे दुःखी हैं। अनेक रोगोंसे  
ग्रस्त हैं। उनकी बीमारी दुर्दशा देखकर मैं मनमें बड़ा बड़ा दुःख  
और [ ] सोचने लग कि किस उपायसे इन दुःखी प्राणियोंका  
उद्धार होगा ? भगवन् ! उनके कथनानके लिये आप कोई  
श्रेष्ठ [ ] सुगम उपाय [ ] कृपा करें। नरदजीके इन  
[ ] सुनकर भगवान् नारायणने सब-सामु राखीसे  
[ ] अभिनन्दन किया और कहा—'नरदजी ! किस विषयमें  
[ ] एक [ ] है, [ ] मैं आपकी एक समाधान प्रत  
करता हूँ।'

भगवान् [ ] सत्यपुत्र और वेदपुत्रोंमें किमुल्लक्षणमें  
[ ] प्रदान करते हैं और आपमें अनेक [ ] धारणकर फल  
देते हैं, परंतु कतिपयमें सर्वज्ञानक भगवान् सत्यनारायण  
प्रत्यक्ष फल देते हैं, क्योंकि यन्कि चर पाद हैं—सत्य, शौच,  
तप और दान। इनमें सत्य ही प्रधान धर्म है। सत्यपर ही  
लोकका व्यवहार टिका है और सत्यमें ही भद्र प्रतिष्ठित है,  
इतिहासे [ ] भगवान् सत्यनारायणका व्रत परम श्रेष्ठ  
[ ] है।'

नरदजीने पुनः पूछा—भगवन् ! सत्यनारायणकी  
[ ] क्या फल [ ] और इसकी क्या विधि है ? देव !  
कृपयाकर ! सभी बातें अनुकूलपूर्वक सुने बतावें।

श्रीभगवान् कोले—नरद ! [ ] पूछकर  
[ ] एवं [ ] चतुर्मुख तथा भी बलवान्ने समर्थ नहीं  
हैं, [ ] संशेकमें मैं उसका फल तथा विधि बतला रहा हूँ,

**आप से —**

सत्यनाशककाले अतः एवं पुनश्चसे [ ] [ ] [ ]  
और पुनश्चन व्यक्ति पुनश्चन् से जाता है। तन्मन्त्रा [ ]  
[ ] मन्त्र कर लेता है, दुष्टिनीन व्यक्ति दुष्टिसम्भार से जाता  
है, बन्दी बन्धनमुक्त से जाता है और भवर्त व्यक्ति निर्भय हो  
जाता है। अथिवा क्या ? व्यक्ति किस-किस वस्तुओं द्वारा  
करता है, उसे वह सब [ ] से जाती है। इसीप्रकार भुने !  
मनुष्य-जन्ममें प्रतिपूर्वक सत्यज्ञानमयी जननम् अन्तर्भव  
करती चाहिये। इससे वह अपने अभिप्रायित वस्तुओं निःसन्देह  
हीन [ ] मन्त्र [ ] लेता है।

हल सत्यनाथायन-काको कस्तेकाते काको काको  
 यह प्रगतः दण्डायनपूर्वक जानकार पत्रि हो जाय । हाको  
 तुलसी-मंगरीको लेकार काको काको भगवान् श्रीरामा इस  
 प्रकार ध्यान करो—

[illegible]

31 32 33-34

‘सबन मैयके समान असल निर्राज, बहुभुज, अर्था वेह  
पीली चकको [ ] करवेयले, प्रसन्नमुख, नवीन कपडोके  
समन मैयको, सनक-सनकद्विसे [ ] मगलान्  
महाभारत में भाग विधान करत हूं। देख ! [ ] आपके  
सत्यत्वमयके कारणकर सत्यप्रत्यये आकषी पूज्य करीत।  
आपके रमणीय [ ] सुनकर आपके प्रसन्न आर्षाद्  
आकषी प्रसाधक] मैं भेदन करीत।’

इस प्रकार माने **सर्वकारने विधिपूर्वक**  
 भगवान् सत्यनाथशक्ती पूजा करनी चाहिये। पूजने भव  
 कंदमल रखने चाहिये। कदली-साम्र और कंदकार रखने  
 चाहिये। सर्वप्रथमतः भगवान् शक्तेश्वरको पुष्पसुगंध (मक-

३१। १-२६) इत्य पञ्चमूला आदिसे पत्नीप्राप्ति ज्ञान  
 घटन । । । । । भक्तिपूर्वक उत्तरी अर्चना  
 करते चाहिये। अनन्त भाग्यवत्से निज । । ।  
 करते हुए प्रणम करते चाहिये—

नमो भगवते वासुदेवाय श्रीमद्वेदः

ॐ नमः शिवाय ॥ ॐ नमः शिवाय ॥ ॐ नमः शिवाय ॥

(अभिप्राय २।२४।३०)

■ **बालक** सारदेवको नामकार है, मैं व्यापक  
 इस व्यक्त करता है। आप बर्ग, अर्थ, काम और मोक्ष—  
 इस चतुर्विध पुण्यको **बालक** करनेवाले हैं, आपने बार-बार  
 कहा है।

[illegible]

नरदजीने कहा—मगवन् । आज ही आपकी आत्मासे पुनर्जन्ममें इस सन्देश-वस्तुसे मैं [ ] बतलाऊँगा । यह [ ] नरदजी से पृथ्वीपर प्रत्यक्ष [ ] करने चले गये और मगवन् नरपञ्चदेव अन्तर्धान हो काशीपर्वतमें चले जाये ।

(अध्याय २४)

[ सत्यमेव जयते - सत्यमेव जयते ]



## सत्यनारायणसत-कथायें शतानन्द ब्राह्मणकी कथा

सुखी बोले—ऋषिदे ! भगवान् नारायणने कृष्णपूर्वक देवर्षि नारदजीद्वारा जिस प्रकार इस किस्म, अम मैं उस कथाको सुना हूँ, आपसो मुने—

लोकप्रसिद्ध कवरी नगरीमें एक श्रेष्ठ विद्वान् सत्यनन्द थे, जो विष्णु-सत्परायण थे, वे गृहस्थ थे, वे तथ ब्रह्म-पुत्रक थे। वे विश्व-वृत्तिसे जगत् जीवन-कर्म करते थे। कल नाम शतानन्द था। कल समय में विश्व यौवनके लिये आये थे। उन विद्वान् एवं जगत्परायण शतानन्दको मार्गमें एक बृद्ध ब्राह्मण दिखायी दिये, जो सचकत् इरी ही थे। उन बृद्ध ब्राह्मणवेचधारी शीइरिये ब्राह्मण शतानन्दसे पूछा— 'द्विजश्रेष्ठ ! आप किस विधिवसे जगत् ?' शतानन्द बोले— 'सौम्य ! अपने पुत्र-कलशकीरके चरण-चोकमें धन-यशस्वकी चाम्नासे ।' पास का पड़ा है ।

नारायणने कहा— द्विज ! कल कल विष्णु दीर्घकालसे विश्व-वृत्ति है, इसकी विभूतिसे लिये सत्यनारायणसत करिबुगमें उठता है। इसलिये मैं कलके अनुभार आध भगवान् चरणोंकी शरण-शरण करे, इससे शरण, शोक संसारोंका विनाश होता है और मैं चरण होता है।

कल्याणपूर्ति भगवान्के इन शतानन्दसे पूछा— 'वे सत्यनारायण क्यों हैं ?'

ब्राह्मणस्यसारी भगवान् बोले— नारायण करनेवाले, सत्यव्रत, सर्वत्र व्याप्त रहनेवाले तथा निरुद्ध वे देश इस समय विप्रका रूप चरकर लुप्त हो गये हैं। इस महान् दुःखकी संसार-सागरमें पड़े हैं। ऋषिदे ! भगवान्के चरण नीकारूप हैं। बुद्धिमान् व्यक्ति हैं, वे भगवान्की शरणमें जाते हैं, किन्तु विश्वमें व्याप्त विषयबुद्धिवाले भगवान्की शरणमें जाकर इरी संसार-सागरमें पड़े रहते हैं। इसलिये ऋषि ! संसारके कल्याणके लिये विविध उपचारोंसे भगवान् सत्यनारायण-

पूज, आराधना ध्यान करते हुए तुम इस वक्तमें प्रयत्नमें लगे हो।

विष्णुकी भगवान्के पैर कहते ही उस शतानन्दने लम्बे लम्बे नीलवर्ण, सुन्दर चार भुजाओंमें शङ्ख, चक्र, गदा तथा पद्म लिये हुए और पीताम्बर धारण किये हुए, नवीन किशोर कमलके समान नेत्रवाले तथा मन्द-मन्द मधुर मुसकानवाले, कमलामुक्त और चैरिके द्वारा सुशोभित चरण-कमलवाले पुण्यवत भगवान् नारायणके लक्ष्य दर्शन किये।

भगवान्की कान्ति सुने और इनका श्रवण दर्शन करनेसे उस विप्रके सभी अङ्ग पुनःकृत हो उठे, अङ्गोंमें प्रेमाश्रु भर आये। उसने भूमिपर गिरकर भगवान्को सहाय्य प्रणाम किया और गद्गद कान्तिसे वह उनकी इस प्रकार स्तुति करने लगा—

सत्यनन्द, जगत्के चरणोंकी चरण, अनाद्योक्त चक्र, कल्याण-पद्मलये देनेवाले, देनेवाले, पुण्यरूप, अमर तथा अमर होनेवाले और आधिपतीय, अविनाशिक आध्यात्मिक लीने प्रयत्नके तपोव्रत समूल भगवान् सत्यनारायणको मैं प्रणम करता हूँ। इस संसारके सत्यनारायणके नमस्कार हैं। विश्वके चरण-चोक करनेवाले शृद्ध सत्यनारायणको नमस्कार हैं तथा करनेवाले कल महाकल्याणरूपको नमस्कार हैं। सम्पूर्ण सत्त्व करनेवाले आत्ममूर्तिलरूप हैं भगवान्। आचरने नमस्कार हैं। कल मैं भक्त हूँ गया, पुण्यवान् हो गया, अमर मेरा जन्म लेना अफल हो गया, जो आगम-अंगेवर अमर मुझे प्रत्यक्ष दर्शन हुआ। मैं अपने भगवन्की कला सराहना करूँ। जाने मेरे किस पुण्यकी वजह से पता चला, जो मुझे आपके दर्शन हुए। अभी ! अपने इस मन्द-बुद्धिके शरीरको दिव्य।

लोकप्रसिद्ध ! रणपते ! किस विधिवसे भगवान् सत्य-

१-दुःखकी विनाश करनेवाले ऋषिदे ! भगवान्के चरणोंकी शरण-शरण करे, इससे शरण, शोक संसारोंका विनाश होता है और मैं चरण होता है। (जीतार्जुन २।२५।१०)

२-प्रणमः भगवान्के चरणोंकी शरण-शरण करे, इससे शरण, शोक संसारोंका विनाश होता है और मैं चरण होता है।

अमरः भगवान्के चरणोंकी शरण-शरण करे, इससे शरण, शोक संसारोंका विनाश होता है और मैं चरण होता है।

सत्यनारायणसत-कथायें शतानन्द ब्राह्मणकी कथा





विन्यदेशके स्नेहपूर्ण उनके शत्रु हो गये। उस समय  
स्नेहसे आस-शर्मादाय भयानक बुढ़ हुआ। उस बुढ़ाये  
राजा चन्द्रचूड़की विराहल चतुर्दशीसे सेना अधिक नष्ट हुई,  
किन्तु बूढ़-बुढ़ाये विपुल सत्त्वान् (शतानन्द)   
हुई। बुढ़ाये दम्भी स्नेहसे फास होकर राजा चन्द्रचूड़ अन्ध  
होकर अकेले ही कर्म चले गये। तोषटके  
इधर-उधर घूमते हुए वे कशीपुरीमें पहुँचे। यहाँ उन्होंने  
कि घर-घर सत्यनारायणकी पूजा और वह  
नगरी इन्द्रधनु के समान ही समृद्धिमान हो गयी है।

वहाँकी समृद्धि देखकर चन्द्रचूड़ विस्मय हो गये  
उन्होंने (शतानन्द) महाराजके सत्यनारायण-पूजाकी भी सुनी,  
अन्धकारसे सभी रहित एवं धर्मसे समृद्ध गये थे। चन्द्रचूड़  
भगवान् सत्यनारायणकी पूजा करनेवाले शतानन्द  
(शतानन्द) पास गये और उनके कहनेपर सत्यनारायण-पूजाकी विधि पूछी तथा अपने राज्यप्रद  
काका भी बालाजी और कहा—'महान् । लक्ष्मणपुरी भगवान्  
व्रतार्दन जिस व्रतसे प्रसन्न होते हैं, वह व्रत करनेवाले उस  
व्रतकी मालाकर आज मेरा उद्धार करे।'

शतानन्द (शतानन्द)ने कहा—'उम्ह !  
भगवान्को प्रसन्न करनेवाला सत्यनारायण व्रतक का  
है, जो सधमा दुःख-शोकदिव्य कष्ट-कष्टक

प्रसन्न, सौभाग्य और संततिदा प्रदाता सर्वत्र  
विन्य-प्रदायक है। उम्ह ! जिस किसी भी दिन प्रदोषकालमें  
इन्के पूजन अर्चना अर्पण करना चाहिये। बदलीदलके  
समयसे पवित्र, खेरणोंसे अलंकृत एक मण्डपकी स्थापना  
उसमें पाँच कलाखेकी स्थापना करनी चाहिये और पाँच ध्वज  
लगाने चाहिये। कहींकी चाहिये कि उस मण्डपके मध्यमें  
एक एक रमणीय वैदिककी रचना करवाये।  
उम्ह लक्ष्मणपुरी पवित्र शिलायुग भगवान् नारायण (शतानन्द)  
को स्थापित कर त्रैभक्तिपूर्वक चन्दन, पुष्प आदि उपचारोंसे  
उनकी पूजा करे। भगवान्का ध्यान करते हुए धूमिपर  
हस्तकर सात रात्रि व्यतीत करे।

चन्द्रचूड़ने ही भगवान्  
सत्यनारायणकी पूजा की। प्रसन्न होकर रात्रिमें  
भगवान्ने राजाको एक कला लताकार प्रदान की। शत्रुओंको  
मह करनेवाली लताकार शत्रु कर राजा लक्ष्मणपुरी शतानन्दको  
कर अपने नगरमें गये तथा ६ हजार स्नेह  
दशुओंको मारकर उनसे अपार धन प्राप्त किया और नर्मदाके  
पक्षेपर पुनः भगवान् पूजा की। वे राजा  
लक्ष्मणपुरी पूर्विकको और भक्तिपूर्वक विधि-विधानसे  
भगवान् अर्पणदेवकी पूजा करने लगे। उस व्रतके प्रभावसे वे  
लक्षों वर्षोंके अधिपति हो गये और साठ वर्षक राज्य करते  
हुए अन्तमें उन्होंने विजयलोकको प्राप्त किया। (अध्याय २६)

( सत्यनारायण-व्रत-कथाका दूसरा )

सत्यनारायण-व्रतके प्रसंगमें लक्ष्मणपुरीकी

धुतजी बोले—'श्रमिके ! अब इस सम्बन्धमें सत्य-  
नारायण-व्रतके आचरणसे कृतकृत्य हुए निरालोक कथाको  
समाप्तकी बात है, कुछ निन्दन्य व्रतसे लक्ष्मणपुरी  
काटकर नगरमें लाकर बेचा करते थे। उन्मेंसे कुछ  
कशीपुरीमें लक्ष्मी आये। उन्होंने एक बहुत पक्ष  
विष्णुदास (शतानन्द) के अध्रममें मन्त्र। यहाँ  
उसमें जल पिबे और देखा कि लक्ष्मणपुरी भगवान्की पूजा  
कर रहे। निम्न शतानन्दका वैभव देखकर वह चकित हो  
गया और सोचने लग—'इतने दण्ड काटनेके अपार वैभव कहसि  
गया ? इसे तो अजकक

लक्ष्मणपुरी ही देखा था। अब यह इतना महान् वनी कैसे हो  
गया ?' इसपर उसने पूछा—'महाराज ! आपके यह ऐश्वर्य  
कैसे प्राप्त हुआ और आपके निर्मलतासे मुक्ति कैसे मिली ?  
यह कहनेका मत करें, मैं सुनना चाहता हूँ।'

शतानन्दने कहा—'भाई ! यह सब सत्यनारायणकी  
अलङ्कारकाल है, अन्धकारसे क्या होता।  
भगवान् सत्यनारायणकी अनुकम्पके बिना किंचित् भी  
नष्ट नहीं होता।

निवासे उनसे पूछा—'महाराज ! सत्य-  
भगवान्का क्या महत्त्व है ? इस व्रतकी विधि क्या है ? अप

उनकी पूजाके सभी उपचारोंका वर्णन करे, क्योंकि उपचार-  
संघ-महात्म्य अपने हृदयमें सबके लिये समान भाव  
रखते हैं, किसीसे कोई [ ] का नहीं निकले ।

श्रीमानन्द बोले—एक [ ] बात है, केदारकोटके  
मणिपूजा नगरमें रहनेवाले तथा चन्द्रचूड़ की उल्लङ्घना करने  
और उन्होंने मुझसे भगवान् सम्प्रसादन-ज्ञान-कण्डके  
विधानको पूछा । हे विष्णुपुत्र ! इसपर [ ] जो [ ]  
था, उसे तुम सुने—

सकल पापसे [ ] निष्कलामभावसे किसी भी [ ]  
भगवान्की पूजाका मनमें संकल्पकर उनकी पूजा [ ]  
चाहिये । तथा फिर गोपूजके कर्णको मनु तथा सुगन्धित कानों  
संस्कृतकर [ ] जपमें भगवान्को उर्जन करना चाहिये ।  
भगवान् सत्यनारायण (शिवराज्य) [ ] पञ्चपुत्रोंसे [ ]  
करकर चन्दन आदि उपचारोंसे उनकी पूजा [ ] चाहिये ।  
श्याम, अप्स, संभाव, दधि, दुग्ध, चातुर्गन्ध, पुष्प, धूप, दीप  
तथा नैवेद्य आदिसे भीतिपूर्वक भगवत्पूजा पूजा करनी  
चाहिये । यदि वैधव्य रहे तो और अधिक उसका एवं समस्तोंसे  
पूजा करनी चाहिये । भगवान् भीतिसे विमान प्रसन्न होते हैं,  
तब विपुल इच्छासे प्रसन्न नहीं होते । भगवान् सम्पूर्ण चिह्नके  
आमंत्र एवं आपाकप्रथ हैं, उन्हें किसी वस्तुकी [ ]  
नहीं, केवल मातेकि [ ] ब्रह्मसे अर्पित की हुई वस्तुको [ ]  
ग्रहण करते हैं । इसीलिये दुर्गाधनके द्वारा भी उन्हेकाही  
राजपूजाको छोड़कर भगवान्ने त्रिपुराकी अग्रिमसे अन्न  
शक्-भाभी और पूजाको ग्रहण किया । सुताम्हने  
तन्मूल-कणको स्वीकार कर भगवान्ने उन्हें मनुष्योंके लिये  
सर्वथा दुर्लभ सम्पत्तियाँ प्रदान [ ] दीं । भगवान् केवल

अतिपूर्वक [ ] अपेक्षा करते हैं । गोप, गुप्त, वणिक्,  
व्याध, इन्द्रजन्, विभीषणके अतिरिक्त अन्य कुक्षसुर आदि दैत्य  
भी नरकणके रक्षिण्यसे [ ] कर उनके अनुग्रहसे शत्रु [ ]  
अनन्तपूर्वक रह रहे हैं ।

निवारपुत्र । [ ] सुनकर [ ] राजा चन्द्रचूड़ने  
पूजा-सम्पत्तियोंको एकत्रितकर आदरपूर्वक भगवत्पूजा [ ]  
[ ] कलसिकप से अपना वह हुआ इत्य आदरकर आज भी  
अनन्त हो रहे हैं । इसलिये तुम भी भीतिसे सत्यनारायणकी  
[ ] [ ] : इससे तुम इस लोकमें सुखको प्राप्त कर  
[ ] भगवान् विष्णुका रक्षिण्य [ ] करोगे ।

[ ] सुनकर वह निराद कुतकुल हो गया । विप्रश्रेष्ठ  
राजपुत्रोंसे [ ] कर [ ] घर आकर वसने अपने  
[ ] [ ] ही-लेकाका [ ] बलाया । उन सबने भी  
[ ] हो ब्रह्मपूर्वक वह प्रतिज्ञा की कि जब काशको  
केवल इत्येवोंको जितन भन प्राप्त होगा, उससे अपने सभी  
कन्य-कन्यकोंके साथ ब्रह्म एवं विधिपूर्वक ग्रथ साथ-  
नरकणकी पूजा करोगे । उस दिन उन्हें कह [ ] पहलेकी  
अपेक्षा भीगुना बन निम्न । पर [ ] सबने सारी बात  
विशेषमें कान्धी और फिर सबने मिलकर आदरपूर्वक भगवान्  
सत्यनारायणकी पूजा [ ] और [ ] अर्चना किया [ ]  
भीतिपूर्वक भगवत्पूजा ब्रह्म सबको [ ] [ ] लय भी  
[ ] किया । पूजाके प्रभावसे पुत्र, पत्नी आदिसे तन्मिता  
[ ] पृथ्वीपर इन्द्र और ग्रेह ज्ञान-दुष्टिको प्राप्त  
किया । त्रिपुरा [ ] उन सबने चयष्ट भोगोंका उपभोग किया  
और अन्तमें [ ] सभी [ ] भी दुर्लभ  
वैभवकायको प्राप्त हुए । ( अध्याय २७ )

[ सत्यनारायण-कण्डका अष्टमः ]

१-सर्वार्थ सत्यनारायणका नाम । न [ ] [ ] विधिपूर्वकविधानम् ।  
(अध्याय २ । २७ । ८)  
२-३ सुवेदुल्लसन्तीर्यक्य केवलम् यत् । यत्किन् भीतः पूर्वं न यत् ननुपुत्रम् कश्चित् ।  
दुर्गेधनपुत्रा [ ] राजपुत्रा महर्षिः । त्रिपुराकायने [ ] कान्ते विपुः ।  
सुताम्हनेदुर्गाका नामक भक्तुदुर्गाका । सन्तोषप्रदः । तत्त्वा भीतिप्रदानेदेवको ।  
[ ] गुणो [ ] इन्द्रजन् रक्षिणीकः । येन [ ] दैत्य कुक्षसुरकण्डकः ।  
नरकणिके रूप केदारकोटि पदकः ।  
(अध्याय २ । २७ । १५—१९)



भगवान् सत्त्वगुणधर्मकी पूजा करनेवाँ । वह इस भूल ही गया । उसने पूजा नहीं की ।

कुछ दिनोंके बाद वह अपने जन्मस्थानके साथ निकलकर निमित्त सुदूर नर्मदाके दक्षिण तटपर गया और वहाँ व्याघ्रचरित होकर बहुत दिनोंतक ठहरा रहा । पर वहाँ भी उसने सत्त्वगुणकी पूजा प्रकार की ठहराई नहीं की और श्रीभगवान् भगवान्के प्रकटीकृत भाषन बनकर वह अनेक संकटोंमें पड़ा हो गया । एक समय कुछ एक निराश्रित राजाओंके राजपुत्रोंसे बहुत-सा रूप्य मिलकर उनके पास पहुँच गया । राजाओं के राजपुत्रों ने राजपुत्रोंके मुँहपर बहुत फटकवा और कहा कि 'यदि तुमसेगेनी लालचकर सब धन यहाँ से निकालकर ले जाओ । तुमही भगवान्कीके लिये तुम्हें मृत्यु-दण्ड दिया जायगा ।' इसपर राजपुत्रोंने सर्व प्रत्यक्ष भगवान् की, परंतु प्रत्यक्ष करनेपर भी वे इन चोरोंका पक्ष नहीं लेंगे सोचकर सभी एकजिह्व होकर विचार करने लगे—'अच्छे ! किन्तु क्या है, चोर तो मिला नहीं, धन नहीं मिला, अब क्या हमलोगोंके साथ मार डालेंगे ?' इस प्रश्न-मोहमें आया होगी । इसलिये अब तो यही बेवस्था है कि 'भगवान् भगवान् नर्मदा नदीमें डूबकर मर जाय । क्योंकि नर्मदा

प्रभवसे ही निरालस होना होती ।' वे सभी राजपुत्र अपने-अपने ऐसा निश्चय करके नर्मदा नदीके तटपर गये । वहाँ उन्होंने उस सब्बु चण्डिकाके देखा और उसके कंधोंमें मोतीकी माला भी देखी । उन्होंने उस सब्बु चण्डिकाके ही खोर समझ लिया और वे सभी असल होकर उन दोनों (सब्बु चण्डिका और उसके जन्मदा) को बन्धनपूर्वक पकड़कर उनके पास ले आये । भगवान् सत्त्वगुणधर्म की पूजा करनेमें लालच आश्रय लेनेके कारण चण्डिकाके अधिकृत हो गये थे । इसी कारण उन्होंने भी विचार किने कि वह ही अपने संकटोंको अद्वैत दिया कि इसकी सारी सम्पत्ति बच कर खजानेमें आया कर दो और इसे इकट्ठी लालच के लिये डाल दो । सोचकर ही भगवान् कातर किया । चण्डिकाकी बातोंपर किसीने कुछ भी ध्यान नहीं दिया । अपने जन्मस्थानके साथ वह चण्डिका अपना दुःखित और निराश्रित करने लगे—'हा पुत्र ! मेरा धन अब यहाँ पड़ा गया, मेरी पुत्री और मैं ही ?' अधिकृतता से देखो । इन दुःख-सागरोंमें निपन्न हो गये । इस संकटसे इसे पार करो ? मैं बर्ष एवं भगवान्के विरुद्ध आचार्य किया । वह कभीके प्रभव है ।' इस प्रकार विचार करते हुए वे समुद्र और आकाश की दिनोंतक के लिये जीवन संकल्प अनुभव करते रहे । (अध्याय १८)

( भगवान्भगवान्-भगवान्भगवान् भगवान् )

सत्त्व-धर्मिक भगवान्भगवान्  
( लीलाधर्मी रूपे कथा )

सुखीने कहा—अधियो ! आध्यात्मिक, अधिभौतिक तथा आधिभौतिक—इन तीनों जगत्को धर्म करनेवाले भगवान् विष्णुके मङ्गलमय चरित्रों से सुनी है, वे सत्त्व धर्मिकों के निवास करते हैं, किन्तु जो नहीं ग्रहण करते—उन्हें विस्मृत कर देते हैं, उन्हें नरक प्राप्त होता है । भगवान् विष्णुकी पक्षिण्ड कर्म कर्म (लक्ष्मी) है । इनके पुत्र हैं—धर्म, यज्ञ, राजा और चोर । वे सभी लक्ष्मी-धर्म है अर्थात् वे लक्ष्मीकी इच्छा करते हैं । आराधकों और अधिधर्मियोंको जो दान है, वह है, वह जाया है, उसके लिये उनकी आवश्यकता है । लक्ष्मी और स्वयंके द्वारा जो देवपुत्र और भिक्षु किन्ना जाय है, वह

वह जाय है, उसने बनकी अपेक्षा होती है । धर्म और यज्ञकी करनेवाला राजा कहलाता है, इसलिये लक्ष्मीकी लक्ष्मी—बनकी अपेक्षा रहती है । धर्म और यज्ञकी नष्ट करनेवाला चोर कहलता है, वह भी धनकी इच्छासे करता है । इसलिये वे किन्ती-न-किन्ती रूपमें लक्ष्मीके हैं । परंतु जहाँ रहता है, वहाँ धर्म है । वह भी स्थिर-रूपमें रहती है ।

चण्डिका सत्त्व-धर्मसे बहुत गया था (उसने सत्त्व न अधिकृत-भगवान् की) इसलिये उस चण्डिकाके भरोसे सारा धन करवा लिया और घरमें चोरी की गयी । चोरी की लीलाधर्मी

एवं पुत्री कल्याणकीके साथ अपने वस-आश्रयण तथा मकान  
बेचकर जैसे-तैसे जीवन-भरण करने लगी।

एक दिन उसकी कन्या कलावती भूखसे बड़बुल होकर किसी ब्राह्मणके घर [ ] और वहाँ उसने ब्राह्मणको भगवान् सत्यनारायणकी पूजा करते हुए देखा। ब्राह्मण स्तब्धेयकी प्रार्थना करते हुए देखकर उसने भी भगवान्को [ ] की—‘हे सत्यनारायणदेव ! मेरे पिता और यही यही शरण आ जायेंगे तो मैं [ ] आपकी पूजा करूँगी।’ उसकी बात सुनकर ब्राह्मणोंने कहा—‘ऐसा ही होगा।’ इस प्रकार ब्राह्मणोंने आकासनयुक्त आशीर्वाद प्राप्त कर वह अपने घर वापस आ गयी। खिमेने देरसे लैटनेके बाद सोचने उससे [ ] हुए पूछा कि ‘बेटी ! इसकी यतनाक तुम कहाँ रही ?’ इसपर उसने उसे प्रसन्न देते हुए निम्नलिखितवाची पूजा-वृत्तिकाको बतलाया और कहा—‘माँ ! मैंने कहाँ सुन कि भगवान् [ ] करीबुद्धिसे प्रसन्न पद देनेवाले हैं, उनकी पूजा धनुष्याग सदा करते हैं। माँ ! मैं भी उनकी पूजा करने चाहती हूँ, तुम मुझे आज्ञा प्रदान करो। मेरे पिता और स्वामी अपने घर आ जायें, यही मेरी कामना है।’

रात में ऐसा धन्य है । प्रतः ।  
 शीलपाल नामक एक अधिपत्ये । धन प्राप्त करनेकी  
 इच्छासे गयी और उसने कहा—'क्यों ! क्यों बन दे,  
 जिससे मैं भगवान् सत्यनाथमण्यकी पुत्र ।' वह  
 मुनिकर शीलपालने उसे पथ निरूपण । और कहा—  
 'कलावती । तुम्हारे पितृव्य कुछ श्रेष्ठ रोष का, मैं उनके ही  
 वापस कर रहा हूँ, इसे देखकर आज मैं उद्योग हो गया ।' वह  
 कहकर शीलपाल गया-तीर्थमें आइ करने सदा भय । कन्धने  
 अपनी ही शीलवतीके साथ उसे प्रत्यसे कल्याणकर सत्य-  
 नाथमण्य-नामक । प्रत्य-पक्षिसे विधिपूर्वक अनुष्ठान किया ।  
 इससे सत्यनाथमण्य भगवान् संतुष्ट हो गये ।

■ नर्मदा-तटवासी राजा अपने राजकुमारों को कहा था। ■ अन्तिम प्रहरमें ब्रह्मण-वेणुधारी पण्डित सत्यनारायणने स्वयं उससे कहा—‘राजन्! तुम उठकर उन निर्दोष पणिकोंको क्षमामुक्त कर दो। वे टीने बिना अपराधको ही बंदी बना हिम्मे गये हैं। यदि तुम ऐसा नहीं करोगे तो तुम्हारा कल्याण नहीं होगा।’ इतना ■ के

अनर्जित । गये। राजा मित्रसे सहसा बल उठ्य। वह पराक्रमक से स्पर्श करने लगा। प्रसन्न-मग्न राजा अपनी सभामें अचानक और उसने अपने मन्त्रीसे देखे गये स्वप्नका फल पूछा। महामन्त्रीने भी राजासे कहा—‘उज्ज्व ! कड़े आश्चर्यकी है, मुझे यों आज ऐसा ही स्वप्न दिखायायी पड़ा। अतः [ ] [ ] उसके जामदग्नीने बुलाकर भलीभाँति पूछ-ताछ कर लेनी चाहिये।’ राजाने उन दोनोंको बेदी-गृहसे बुलवाया और पूछा—‘तुम दोनों क्यों रहते हो और तुम क्यों [ ] ?’ [ ] साधु धनिक्केने कहा—‘उज्ज्व ! [ ] राजपुरुष नियामी एक धर्मि हैं। मैं व्यापार करनेके लिये यहाँ आया था। पर दैवतरा आपके सेवामें हमें जोर सम्हालकर पकड़ लिया। [ ] येद न्यायता है। [ ] अपराधके ली हमें नहीं-मुक्तकी चेष्टा लगी है। [ ] हनु दोनों जोर नहीं है। आज बलीभाँति विचार कर लें।’ उसकी बातें सुनकर राजाको बहुत पछताप [ ] उन्होंने उन्हें बन्धनमुक्त कर दिया। अनेक उपकारसे उन्हें आनन्दित कर भोजन कराया और वस्त्र, आभूषण [ ] उनके सम्मान किया। साधु धनिक्केने कहा—‘उज्ज्व ! [ ] अनेक [ ] है, [ ] मैं अपने [ ] जान कहता हूँ, आप मुझे अज्ञ दे।’ इसपर राजाने [ ] [ ] [ ] के साथ साधु धनिक्केने नैका रतीं अदिसे परिपूर्ण बनका दी। फिर वह साधु धनिक् अपने नामाङ्कके साथ राजद्वारा सम्मानित हो द्विगुणित धन लेकर राजपत्नी और बच्चा।

साधु वणिक्ने अपने पत्नी को प्रत्यक्ष किया, पर पत्नी सत्यवाक्यका पूजन वह उस समय भी भूल गया। पत्नीका लज्जित होने का कारण यह था कि वह देते हैं, पुनः उपलब्ध है। पत्नीका वह अन्तर उससे पूछा—‘साधु ! तुम्हारी इन नीकियों का क्या है ?’ इसका साधु वणिक्ने उत्तर दिया—‘अपने देने के लिए कुछ भी मेरे पास नहीं है।’ नीकियों केवल कुछ लक्ष्यों के पते पर पड़े हैं। साधु वणिक्ने ऐसा करने पर उपलब्धि का—‘ऐसा ही होगा।’ इत्यादि पत्नी अन्तर्धान हो गये। उनके ऐसा कहते ही नीकियों केवल केवल पते हो लगे। साधु देखकर साधु अन्तर्धान वणिक् एवं विनिर्दिष्ट हो गया, उसे पूर्ण-सी आ गयी। वह अनेक प्रकारसे विचार करने लगा। होनेके सम्बन्ध



गया। हवाके बेगसे हिलते हुए केलोंके पत्तेके समान लगीं। हा नय ! हा कच ! कचकच करने लगी और कहने लगी—‘हे विद्यार्थ ! अपने मुँह परिते विपुल कर मेरी आश तोड़ दी। वरिष्के विन खींच जीवन अमूर्त एवं निष्फल है।’ कलाकली ऊर्ध्वस्वरे भगवान् सत्यनारायणसे बोली—‘हे सत्यस्वरे ! हे भगवान् सत्यनारायण ! मैं अपने वरिष्के वियोगमें जलमें डूबनेवाली हूँ, आप मेरे अमराग्रीवोंके हाथ करें। प्रकट कर मेरे प्राणोंकी रक्षा करें।’ (इस प्रकार वह अपने पादुकाओंको लेकर जलमें प्रवेश करनेवाली हो गई)। समय अक्षयशायी हुई—‘हे साधे ! तुम्हारी पुकारें पर प्रसन्नकर प्रसन्न किया है। यदि वह पुनः पर ककर ब्रह्मपूर्वक प्रसादको प्रहण कर ले तो उसका भी नैकसहित चर्चा दीखेगा, किन्तु यह करो। इसपर

ले करकलीने वैरा की किया और उसे उसका प्रति पुनः अपने नैकसहित दीखने लगा। फिर क्या था ? सभी परस्पर आनन्दसे मिले और पर आकर सद्यु वणिक्ने एक लाख मुद्राओंसे बड़े समारोहपूर्वक भगवान् सत्यदेवकी पूजा की और आनन्दसे रहने लगे। पुनः कभी भगवान् सत्यदेवकी उपेक्षा नहीं की। इस प्रकारसे पुनःपुनःसमन्वित अनेक उपयोग सभी स्वर्गलोक चले गये। इस प्रकारसे ही मनुष्य वरिष्पूर्वक मुक्ता है, भी विष्णुका अलगत मित्र है।

सुखी बोले—विधिगो ! मैंने सभी बातोंमें श्रेष्ठ सत्यनारायण-वत्तके कल्याण कल्याणके मुक्तसे निकलत हुआ यह जल कलिकावलीमें अतिशय पुण्यकर है।

(अध्याय २९)

[ अक्षयशायी-प्रसन्न-कलाकली ]

(सत्यनारायण-प्रसन्न-कलाकली सम्पूर्ण)

विदुशर्मा और उनके चरित्र—क्यावि, पाणिनि और बरहस्पति आदिकी

कविपीने कहा—भगवान् ! दुःखोंके विचार करनेवाले जनोंमें सर्वश्रेष्ठ सत्यनारायण-वत्तके सम्प्रेषणसे मुक्त, अगले धर्मस्वैयं ब्रह्मचर्यका महत्त्व चाहते हैं।

सुखी बोले—विधिगो ! कलिपुत्रों विदुशर्मा कलाकली एक श्रेष्ठ ब्राह्मण । वह वेदवेदङ्गोंके गणकोंके सम्प्रेषण या और पापकर्मोंसे रहता था। कलिपुत्रोंके समयको देखकर वह बहुत चिन्तित हुआ। उसने स्वयं कि किस आश्रमके द्वारा श्रेष्ठ कल्याण होगा, क्योंकि संन्यास-मार्ग दम्भ और पाशव्यके द्वारा प्राप्त हो गया है, वानप्रस्थ तो समाप्त-स्त हो बस, कहीं-कहीं ब्रह्मचर्य रह है, किन्तु गार्हस्थ्य-जीवनका कर्म सभी कर्मोंमें श्रेष्ठ मान

कर है। अतः इस चर कलिपुत्रोंमें मुझे गृहस्थ-धर्मका पालन करके विवाह करना चाहिये। यदि चाह्यसे अपनी मन्त्रोंके अनुसार आश्रम करनेवाली भी मिल जाती है, तब मेरा जन्म सफल एवं कल्याणकारी हो जायगा। इस प्रकार विचार करते हुए विदुशर्माने उत्तम पत्नी प्राप्त करनेके लिये भगवत्की चन्द आदिसे पूजाकर स्तुति की।

विदुशर्माकी स्तुति सुनकर देवी प्रसन्न हो गयीं और उन्होंने कहा—‘हे दिव्यश्रेष्ठ ! मैंने तुम्हारी स्त्रीके रूपमें विष्णुवत्ता ब्रह्मणकी कन्याको निर्दिष्ट है।’ तदनन्तर विदुशर्मा उस देवी ब्रह्मचरिणीसे विवाह करके मनुष्यों करते हुए गृहस्थ-धर्मानुसार जीवन-यापन

१-नमः पशुकी स्त्रीकी वैराकरी को । विदुशर्माकन्याकी सुखी को नमः ॥

भद्रकालकन्या । इन्द्रकली । नमः । अक्षयशायीसुखी ।

पुण्यकली सुखी नमः । विदुशर्मा सुखी नमः । अक्षयशायी ।

नमः । विदुशर्मा । सुखी नमः । कली । अक्षयशायी । नमः ।

विधि । सुखी । नमः । अक्षयशायी । सुखी । नमः । (अक्षयशायी २ । १० । १०—१४)

करने लगा। [ ] [ ] जन्मेवाले उसे घर पुत्र उत्पन्न हुए। जिसके नाम थे—शत्रु, यशु, स्वयं वरुण अर्थात् : शत्रुके पुत्र व्याधि थे, जो न्याय-रक्षण-विशालद थे; यशुके पुत्र लोकविशुद्ध मीमांस हुए। स्वयंके पुत्र पाणिनि हुए जो व्याकरण-शास्त्रमें परंगत थे और अर्थात्के पुत्र धरुचि हुए।

एक सन्तान वे धारें विदुरात्मके स्वयं लगन देशके अभिषेधित राजा चन्द्रनुत्तमके सन्तानमें गये। अतिशय सम्मानपूर्वक राजाने [ ] लोकोक्त पूजन- [ ] पूजा—'द्विकाल'। कौन-सा ब्रह्मचर्यव्रत श्रेष्ठ है? इसपर व्याधिने कहा—'महाराज ! [ ] व्याधि उस परम पुण्यदेवकी न्यायपूर्वक कृतकर्ममें उत्तम [ ] है, वह श्रेष्ठ ब्रह्मचारी है।' मीमांसने कहा—'उद्यन् ! जो श्रेष्ठ व्यक्ति यज्ञमें ब्रह्म आदि देवताओंका यजन करता है [ ] रोचना आदिसे उत्तम वर्त्तन एवं सर्वत्र आदि करता है तथा भगवान्के प्रसादको ग्रहण करता है, [ ] ब्रह्मचारी है।' यह सुनकर पाणिनिने कहा—'उद्यन् ! कष्ट, अनुत्तम [ ] वर्त्तित रहतेसे या परा-नम्यता, मध्यम [ ] [ ]

### मार्गमें पाणिनिका इतिवृत्त

व्याधिनीने पूजा—भगवान् ! सभी तीर्थों, राजों [ ] धर्मसाधनमें उत्तम साधन क्या है, [ ] [ ] लेकर मनुष्य बलेश-सागरको पार कर ज्ञान और भुक्ति प्राप्त कर ले ?

सूतजी बोले—प्राचीन कालमें सबके एक [ ] पुत्र थे, विनय नाम पाणिनि थे। कालके श्रेष्ठ [ ] शिष्योंने [ ] पराजित एवं लज्जित होकर [ ] [ ] गये। [ ] सभी तीर्थोंमें स्नान तथा देवता-पितृदेव दर्पण करते हुए वे वैदर्भ-क्षेत्रका [ ] पानकर भगवान् शिवके ध्यानमें तनक हो गये। पतोंके अज्ञानपर रहते हुए वे सत्यव्रतमें जल प्रदान करते थे। फिर उन्होंने दस दिनका जल ही [ ] [ ] बदले [ ] [ ] दिनोक्त केवल बाधुके [ ] अज्ञानपर रहकर भगवान् शिवका ध्यान करते रहे। इस प्रकार जब अष्टादश दिन [ ] हो गये तो भगवान् शिवने क्रोध होकर उनसे कर

[ ] [ ] तिष्ठ, धातु एवं गयोसे [ ] सूत्रपाटीसे [ ] [ ] अष्टधन्य करनेवाला सच्चा ब्रह्मचारी है और यही [ ] प्राप्त करता है।' यह सुनकर धरुचिने कहा—'हे भगवन् ! जो व्यक्ति उपनीत होकर गुरुकुलमें निवास [ ] हुआ दण्ड, केस और [ ] भिक्षार्थी वेदाध्ययनमें उत्तम [ ] हुए गुरुजी अश्रुके अनुसार गुरुके गृहमें निवास करता है, [ ] ब्रह्मचारी कहा गया है।'

इसके पक्षमें [ ] सुनकर विदुरात्मने कहा कि 'जो गृहस्थ-कर्ममें उत्तम हुआ शिरो, देवताओं और अतिथियोंका सम्मान करता है और इन्द्रिय-संयमपूर्वक शत्रुकायमें ही पारमार्थिक त्यागप्रवृत्त करता है, यही मुख्य ब्रह्मचारी है।' यह सुनकर [ ] कहा—'स्वामिन् ! परमव्रतके लिये आपको [ ] कथन उचित, सुगम और उत्तम धर्म है, यही धर्म ही मत है।'

यह कहकर वह [ ] विदुरात्मकत शिष्य हो गया और [ ] अपने स्वर्गस्नेहको प्राप्त किया। विदुरात्मने भी भगवान् [ ] करते हुए शिष्यत्व पर्यन्त जाकर योगध्यान-कठन [ ] गया। (अध्याय ३०)

मौनेको कहा। भगवान् शिवकी इस अमृतमय कर्णिके [ ] उन्होंने गुरु [ ] सर्वेश, सर्वशिक्षेश, निरीक्षकस्वाम इत्यादि इस [ ] स्तुति की—

'महान् महान् नमस्कार है। सर्वेश्वर सर्वहितकारी भगवान् शिवको नमस्कार है। अभय एवं विद्या प्रदान करनेवाले, नदी-ध्यान भगवान्को नमस्कार है। पापका विनाश करनेवाले तथा समस्त [ ] एवं समस्त मेषाकूपी दुःखोंका हरण [ ] तेजःसम्पन्न मनसापूर्ति भगवान् शिवको नमस्कार है।' देवेश ! यदि अन्न प्रसन्न हैं तो मुझे मूल विद्या एवं परम रक्षण-दान [ ] करनेकी कृपा करें।

सूतजी बोले—यह सुनकर महादेवजीने जलन होकर 'अ इ उ ए' आदि मङ्गलकारी सर्ववर्णायाम सूत्रोंको उन्हें प्रदान [ ] जनस्वी सरोवरके सत्यरूपी जलसे जो राग-द्वेषरूपी भलका [ ] करनेवाला है, उस [ ] प्राप्त करनेपर



अर्थात् उस [ ] [ ] जन्मालय करनेपर सभी तीर्थोंका फल [ ] [ ] जाता है। यह महान् मानस-ज्ञान-तीर्थ [ ] साक्षात्कार करनेमें समर्थ है। पाणिने ! मैं यह तुम्हें प्रदान किया हूँ, इससे तुम कुशल [ ] जाओगे। [ ] कहकर भगवान् उद् अन्तर्हित हो गये और [ ] अपने घरपर आ गये। पाणिनिने सत्रपाठ, धातुषष्ठ, गणपठ और

सिंहवास-ऊपर शालाकर निर्माण निर्माण  
 प्राप्त किया।<sup>1</sup> अतः धर्मकोश ! मनोमय जनतीर्थकर  
 अकल्पन कहे । उन्होंने कल्पजन्मपी सर्वोत्तम तीर्थमयी  
 प्रकट हुई है । गङ्गासे न कोई दुःख है और  
 न आगे कोला ।

(अध्याय ३६)



**कोपरेवले जलिन-प्रारंभार्थे श्रीगुरुभगवत्-प्राणम्**

शुद्धजी बोले—महामुने शौनक ! एक  
कोपदेव नामके रहते थे। कृष्णवर्ण और  
वेद-वेदाङ्गपरंगत थे। उन्होंने गोप-गोविन्दोंसे  
कुन्दवन-तीर्थमें जाकर देवप्रियदेव जनार्दनकी शरणप्राप्त की।  
एक वर्ष बाद भगवान् श्रीहरिने प्रसन्न होकर उन्हें  
ज्ञान प्रदान किया। उसी ज्ञानके द्वारा उनके हृदयमें भगवद्गीता  
कथाका हुआ। जिस श्रीकृष्णदेवकीने सुविश्वम्  
परिहित्वा सुनाया था, उस समस्तमें मोक्ष-सम्पन्न  
कथाका बोधदेवने हरि-लोकप्राप्त नामसे पुनः कथित किया।  
कथाकी सम्यक्प्रणाली जनार्दन भगवान् विष्णु प्रकट हुए और  
बोले 'महामते ! पर श्रीगो ! बोधदेवने श्रीराय मोक्षमयी  
वाणीमें कहा—'भगवान् ! आपकी समस्तकर्म है। सम्पूर्ण  
संसारपर अनुग्रह करनेवाले हैं। आपसे देव, मनुष्य, वस्तु-वस्ती  
सभी निर्मित हुए हैं। मरनेसे दुःखी प्राणी भी इस करिष्णुपुत्रसे  
आपके नामसे पुनर्जन्म होते हैं। यहहीं वेदव्याख्यानविषय  
श्रीमद्भागवतका ज्ञान तो आपने मुझे प्रदान किया है, पुनः  
पर प्रदान चाहते हैं तो इस भगवत्कथा पर श्रद्धापूर्वक  
ध्यानसे करें।'।

भीष्मगह्वान् बोलें—बेपदे ! सभ मगलान्  
 शंकर पार्वतीके सभ दम्भ और पाकपट्टे युक्त बौद्धिक राज्य  
 प्राप्त होनेपर कशरीमें उद्यम भूमि देखलज कई रिपत हो गये ।  
 भगवान् शंकरने आनन्दपूर्वक करते कह्य—हे  
 सविधानन्द ! विधे ! हे मगलसे अनन्द कल

[illegible]

(अध्याय ४२)



६-सुनखटि    ७-सुनखटि    ८-सुनखटि    ९-सुनखटि    १०-सुनखटि

सिद्धार्थः ॥ कुरु परं विनिर्वाणकम् ॥

श्रीदुर्गासप्तशतीके आदिचरित्रका महात्म्य  
(कल्पवर्णिका की कथा)

पूजा—सूतजी महाराज ! उस राजा  
ब्रह्मसंहारको यह बतलानेकी कृपा करें कि जिस राजाके पाठ  
करनेसे वेदोंके पाठ करनेका [ ] ज्ञान [ ] पान  
विनष्ट होते हैं ।

सूतजी बोले—अग्निन्ने ! इस विषयमें ज्ञान एक कथा  
सुनें । राजा विक्रमवर्धनके राज्यमें एक राजा रहता था ।  
उसकी स्त्रीका नाम था कर्मिणी । एक बार वह राजा  
श्रीदुर्गासप्तशतीका पाठ करनेके लिये अन्त्य गन्धर्व  
हजार [ ] [ ] कर्मिणी [ ] अपने [ ] अनुकम्प  
करनेवाली थी, परन्तु न राजापर निर्दिष्ट कर्ममें प्रवृत्त हो गयी ।  
परन्तु : उसे एक निम्न पुत्र उत्पन्न हुआ, जो व्याघ्रकर्ण नामसे  
विशिष्ट हुआ । वह भी अपने माताके अनुकम्प [ ] करनेवाला  
था, धूर्त था तथा वेद-पाठसे रहित था । उस राजाके अपनी  
और एवं पुत्रके निर्दिष्ट कर्म [ ] परम्परा भ्रमण करने देकर  
उन दोनोंको धरते [ ] [ ] लगे [ ] लगे लगे  
हुए विन्ध्याबल पर्वतपर अतिदिन [ ] करते लगे ।  
जगदम्बरके अनुग्रहसे अन्तमें वह जीवन्मुक्त हो गया ।

[ ] ने दोनों माता-पुत्र (कर्मिणी और व्याघ्रकर्ण)  
पूर्वपरिचित निम्नदेके पास चले गये और वही निम्नस [ ]  
लगे । वहाँ भी वे दोनों अपने निर्दिष्ट आचरणको छोड़ न सके  
और इन्हीं बुरे [ ] धन-संग्रह करने लगे । व्याघ्रकर्ण  
चौर-कर्ममें प्रवृत्त [ ] गया । ऐसे ही भ्रमण करते हुए देवयोगसे  
एक दिन वह व्याघ्रकर्ण देवीके मन्दिरमें पहुँच । वहाँ एक [ ]  
ब्राह्मण श्रीदुर्गासप्तशतीका पाठ कर [ ] में । दुर्गापठके  
आदिचरित (प्रथम चरित्र) के विनियुक्त पाठका [ ]  
उसकी दुष्टबुद्धि धर्मनश हो गयी, परन्तु : धर्मबुद्धि-सम्पन्न उस

व्यक्तिको उस [ ] निम्नस शिष्यत्व ग्रहण कर लिया और  
अपना सारा धन उधे दे दिया । गुरुकी आज्ञासे उसने देवीके  
पदपद्म स्पर्श किया । [ ] प्रभावसे उसके शरीरसे  
पद्मसमूह कृमिके रूपमें निकल गये । तीन वर्षतक इस प्रकार  
जप करते हुए वह निम्नस ग्रेट द्विज हो गया । इसी प्रकार  
मन्त्र-जप [ ] आदि चरित्रका पाठ करते हुए उसे नष्ट कर्म  
[ ] हो गये । तदनन्तर वह [ ] वराहीमें चला आया ।  
पुनः एवं देवीसे पूजित महादेवी अन्नपूर्णाका उसने  
चेष्टादि उपकारोंके द्वारा पूजन किया और उनकी इस प्रकार  
सुति करें—

विष्णुवन्दकी पराधमवदरी सौम्यवन्दकी  
निर्दुष्टादिकल्पवन्दकी कर्मिणीपुत्रीवदरी ।  
नन्दनवन्दकी व्याघ्रवन्दरी निम्नवदरी सुन्दरी  
विष्णु केहि कृष्णवन्दकी मातात्रयपूर्णेवदरी ।।  
(जीतारण्य २।११।१९)

इस सुविन [ ] ही [ ] धर जपकर भ्रमणमें [ ]  
[ ] हो गया । अन्तमें उसके सम्मुख अन्नपूर्णा  
[ ] और उसे चम्पेदम्ब [ ] प्रदाय कर  
अर्चयित [ ] [ ] वह बुद्धिमान् [ ]  
[ ] राजा विक्रमवर्धनके भ्रात्रा आचार्य हुआ । यज्ञके  
[ ] योग धारण कर [ ] गया ।

[ ] [ ] अन्नसंहारको देवीके पुण्यसय आदि-  
चरित्रके महात्म्यको बतलाय, जिसके प्रभावसे उस [ ]  
[ ] कर्मिणीका [ ] पापयोग सिद्धिमें प्राप्त कर  
[ ] [ ]

(अध्याय ३३)

श्रीदुर्गासप्तशतीके महात्म्यचरित्रका महात्म्य  
(कल्पवर्णिका की कथा)

सूतजी बोले—रौतक ! [ ] [ ] [ ] [ ]  
हिसापरमाण्व मद्य-मांस-पक्षी पीन्यधर्म नामका क्षत्रिय राजा [ ]  
मारा हो गया और युवकत्वमें [ ] मृत्यु हो

[ ] [ ] एवं अधर्मचरित्रके कारण मरणकर  
मारा हो गया और युवकत्वमें [ ] मृत्यु हो

१- 'हे वराहीपुत्री' अन्नपूर्णेवदरी । २- 'हे नन्दनवदरिणी' मातृदेवसे अन्न [ ] करनेवाली है [ ] सौम्यवन्दकी विधान  
और समस्त [ ] वह कर क्षत्रिय धर देववाली है । हे सुन्दरी ! अन्न सम्पूर्ण [ ] [ ] दूर करनेवाली,  
विष्णुका धारण-योग करनेवाली [ ] [ ] अनुग्रह करनेवाली है । [ ] 'नन्दन' अन्न मुझे निम्न [ ] करें ।

गयी । संयोगवशा उसने कभी [ ] भी [ ] था ।  
[ ] पुष्पके प्रभावसे इतना निकृष्ट पक्षी भी [ ]  
गया । दूसरे जन्ममें वही राजनीतिप्रसमना प्रणमका विरुद्ध  
राजा महानन्द हुआ और उसे अपने पूर्वजन्मकी पूरी सृष्टि थी ।  
अतिशय समर्थ बुद्धिमान् कात्थकन (चरत्तक) का वह शिष्य  
हुआ । देवी महालक्ष्मीके बीचसहित मध्यम चरित्रका कला  
महानन्दको उपदेश देकर ब्रह्मायन रूप विष्णुस्वरूपता का चिह्न-  
उपासनाके लिये चले गये । इधर राजा भी प्रसिद्ध [ ]  
कस्तूरी, चन्दन आदिके फूल कर श्रीदुर्गासप्ताहके मध्यम

चरित्रका पत्र करने लगा । बारह वर्ष व्यतीत होनेपर राजिनी  
उत्पन्न [ ] [ ] : अपने शिष्य महानन्दके  
पास [ ] और [ ] विधिपूर्वक सत्सवाप्तीपाठ  
कराया । कलात्मक सनातनी [ ] महालक्ष्मी प्रकट हु-  
ए और राजाको कर्म, कार्य, कर्मसहित मोक्ष [ ] दे दिव्य । इस  
[ ] महानन्दने [ ] समान अष्टौष्ट परलोक  
उपानेन कर अपने देवताओंसे नमस्कृत [ ] पान लोकको  
जान भिन्न ।

(अध्याय १४)

## श्रीदुर्गासप्ताहकी [ ] महीमाके प्रसंगमें

### योगाचार्य भूर्वि पतञ्जलिन्का चरित्र

सुताजी बोले—मनेक कतुअंके द्वारा विहित [ ]  
[ ] पर्यन्त महाविद्वान् उपपन्न पतञ्जलिमुनि [ ] थे ।  
वे वेद-वेदङ्ग-तन्त्र एवं गीता-साङ्ख्य-परमार्थ थे । वे विष्णुके  
प्राप्त, सत्त्ववाच्य एवं व्याकरण-महाभाष्यके रचयिता [ ]  
गये हैं । एक समय वे [ ] अन्य तीर्थों गये । [ ]  
उनका देवीप्राप्त कात्थकनके [ ] राजाके पुत्र । एक  
वर्षतक राजाचार्य बनते रहा, अन्तमें पतञ्जलि [ ]  
गये । इससे [ ] [ ] इस प्रकार  
[ ] की—

जसो [ ] महामूर्ति सर्वमूर्ति [ ] नमः ।

शिवायि सर्वमाङ्गल्यं विष्णुभाष्ये [ ] नमः ॥

लक्ष्मण महा बुद्धिस्थं मेधा [ ] विष्णुवती ।

शक्तिस्वामी [ ] नमो नमः ॥

(प्रतिसर्ग २।३५।५६)

'महामूर्ति [ ] नमस्कार है । सर्वमूर्तिलक्ष्मणीको  
[ ] है । सर्वमाङ्गल्यरूपा विष्णुदेवीको [ ] है । वे  
विष्णुभाष्ये । तुम्हें नमस्कार है । वे [ ] बुद्धि, मेधा,  
बुद्धि, मेधा, [ ] तथा कल्याणकरिणी हो । तुम्हीं नमो के,

[ ] है, तुम्हें नम-नम [ ] है ।'

इस स्तुतिसे [ ] होकर भाग्यती [ ]  
जाकीने कहा—'विप्रोक्त ! तुम एकाग्रचित्त होकर मेरे [ ]  
करना [ ] करो । [ ] तुम [ ] ही ज्ञानको  
प्राप्त करोगे । कतुअं । कलायान तुमसे प्राप्त हो जायेंगे ।'  
इस [ ] सुनकर पतञ्जलिने विष्णुआदिदेवीके  
समक्ष जाकर सत्सवाप्ती अराधना की और वे प्रकट हो  
गयीं । इससे उन्होंने पुनः शाकाधीन करवाचनको पराजित कर  
दिया, [ ] कृष्ण-अन्न और चरित्रके प्रचारमें  
सुलक्ष्मकला [ ] भी [ ] बढ़ाया । भाग्यती  
विष्णुभाष्यकी कृपासे वे योगाचार्य अथवा चिरजीवी हो गये ।

पुनिये । इस [ ] दुर्गासप्ताहकी उत्तर चरित्रकी  
महीमा निम्नलिखित हुई । जब आगे आपलोग क्या सुनना चाहते  
[ ] वह कहेंगे । सभीका कल्याण हो, कोई भी दुःख प्राप्त न  
करे । गच्छाम्यस्य, पुण्डरीकाक्ष महावान् विष्णु मङ्गलदायक है ।  
कल्याण विष्णु मङ्गलमूर्ति है । [ ] होकर [ ]  
इतिहास-समुच्चयमें [ ] सुनता है, वह परमगतिको  
प्रेत है । (अध्याय १५)



॥ प्रतिसर्गार्थ [ ] सम्पूर्ण ॥



## प्रतिसर्गपर्व (तृतीय खण्ड)

[ पवित्रपुराणके प्रतिसर्गपर्वका तीसरा खण्ड और कुम्भारत अर्थात् और कदल (उदयसिंह) के जयचक्र एवं पृथ्वीराज चौहानकी खैर-गुणओंसे परिपूर्ण है। इस पदरचित अष्टाक्षर वीरकाव्य बहुत प्रचलित है। इसके मुंदेलखण्डी, धोखपुरी आदि खण्ड हैं, जोड़ा-जोड़ा पेट है। कथाओंका मूल प्रतिसर्गपर्व होता है; अथवा रचना है; जब कथा लोकजनके अनुसार अतिशयोक्तिपूर्ण-सी होती है, तब ऐतिहासिक दृष्टिसे गहननी है। यही प्रस्तुत किया गया है।—सम्पादक ]

### आस्था-खण्ड [ आस्था-अज्ञानी कथा ] का उपक्रम

**कविधीरै भूख—**सूतजी महाराज ! अपने महाराज विश्वासालोकके इतिहासका वर्णन किया। कल मुझे सकल उनका शासन, धर्म एवं न्यायपूर्ण भा और तबसे समकाल इस पृथ्वीपर रहा। जलजान। इस समय भगवान् श्रीकृष्णने सीतादी की थी। आप उन सीताओंके इमलीगोले वर्णन कीजिये, जल सर्य है।

#### श्रीसूतजीने भूख-सराजपूजाका कथा—

नारायण भगवान् तर की न्योचनम्।

सरस्वती जल ततो सकलद्वीपके।

१।२।३।

'भगवान् तर-नारायणके अवतारस्वरूप भगवान् श्रीकृष्ण एवं उनके सखा नरसिंह अर्जुन, उनकी सीताओंको पकट भगवती सरस्वती तथा सरस्वती वर्णन करनेवाले वेदव्यासजी ने नमस्कार कर अष्टादश पुराण, रामायण और महाभारत आदि जब नामसे व्यवहित कथोक्त कथन करना चाहिये।'

मुनिगणों। पवित्र महामृतके वैभव मन्वन्तरके अट्टाईसवें छाप मुझे अन्तमें पुनरोदय महायुद्ध हुआ। उसमें युद्ध कर दुर्धमध्वी सभी पण्डितोंने अठारहवें दिन पूर्ण किया की। अन्तिम दिन भगवान् श्रीकृष्णने कलजी दुर्धमको जलजल कोनकी सनातन शिवजीकी मनसे इस प्रकार सुनि की—

जलजलकी, सब भूतोंके स्वामी, कर्ण, कलकल, जगद्वर्ता, पाप-विनाशक कर ! मैं उसको कर-कर

करता हूँ। भगवान् ! आप मेरे पक्ष पाण्डवोंकी रक्षा कीजिये।

इस सुनिसे भगवान् संकर नदीपर आकर जे हाथों विरुद्ध लिये शिवजीकी रक्षाके लिये गये। उस युद्धकी आज्ञासे भगवान् श्रीकृष्ण इतिहास और सरस्वतीके किन्ने खाते थे।

अथवा, पंड (कृतार्थ) और कुम्भारत—वे तीनों पाण्डव-शिवजीके पक्ष में और उन्होंने मनसे भगवान् कधी कर उन्हें प्रसन्न कर लिया। इसपर भगवान् संकरसे उन्हें पाण्डव-शिवजीमें प्रवेश आज्ञा दे दी। कलकल अथवा भगवान् संकरद्वारा प्राप्त तलवारसे बृहस्पति आदि षोडशी इत्यादि कर दी, फिर यह कुम्भारत और कुम्भारतके साथ खाद्य करण गया। यहाँ एकमात्र पार्वत सुत ही बचा रहा, उसने इस जनसंहारकी सूचना पाण्डवोंको दी। आदि पण्डितोंने इसे शिवजीके कृत्य समझा; वे क्रोधसे शिवजीके गये और अपने आमुषीसे देवाधिदेव भिन्नकीसे युद्ध करने लगे। पौन आदिद्वारा प्रयुक्त अन्न-शक शिवजीके शरीरमें समाहित हो गये। इसपर भगवान् शिवने कहा कि तुम श्रीकृष्णके उपरसक हो अंतः हमारे द्वारा तुमलोग रक्षित हो, अन्यथा तुमलोग पक्षके कोष्य थे। इस अपराधका फल तुम्हें कश्चित्कालमें जय लेवन योगना पड़ेगा। ऐसा कहकर वे अदृश्य हो गये और पण्डित बहुत दुःखी हुए। वे अपराधसे मुक्त होनेके लिये भगवान् श्रीकृष्णकी शरणमें आये। निःशस्त्र पण्डितोंने श्रीकृष्णके साथ एकाग्र मनसे संकरजीकी सुति की। इसपर





कर्मक [ ] किया और अन्तमें सर्गलोक [ ] किया। विष्णुलोकके मध्यमें [ ] पुष्पधूमि है, वहाँ आर्यलोक उठेनि देवा-मर्त्यादयः [ ] किया। विष्णुगिरि और खड़े हैं।

### देवराज एवं कसराज आदि राजाओंका [ ]

**सृष्टिजीने कहा—**भोजराजके लक्ष्मिपुत्रके पञ्च उलके वैतसे सात [ ] हुए, पर से सभी अत्यन्त, मन्द-बुद्धि और अल्पज्ञेयस्त्री हुए तथा तीन सौ वर्षके भीतर ही मर गये। उनके राज्यकालमें पृथ्वीपर छोटे-छोटे अनेक राज हुए। कौशिक नामके राजावें उनके वंशमें तीन राजा [ ] जो दो सौ वर्षके भीतर ही मर गये। दसवाँ जो [ ] नामक [ ] हुआ, उसने कल्पक्षेत्रमें धर्मपूर्वक अपना राज्य चलाया। अन्तर्लोकमें चन्द्रमुखापर राजा चन्द्रचक्रवर्त शासन था। तैमलयन्त्रके उत्तर अन्तर्लोक इन्द्रप्रस्थपर राजा था। इस गङ्गासे गङ्गा और सत्ये (जनपदी) में बहुतसे राज हुए। अग्निविराजक विराजक मुकुट हुआ और [ ] बहुतसे [ ] हुए। [ ] (गङ्गासागर), पश्चिममें बह्मिक, उत्तरमें तीन देश और दक्षिणमें सैतुबन्ध—इनके बीचमें साठ राजा भूजल [ ] [ ], जो महान् बलवान् थे। इनके राज्यमें—सर्वा आग्निहोत्र करनेवाली, गौ-ब्राह्मणका [ ] तथा उपर युगके समान धर्म-धर्म करनेमें निपुण थीं। सर्वत्र उपर युग ही मालूम पड़ता था। पर-परमें प्रभु बन तथा जन-जनमें धर्म विद्यमान था। प्रत्येक गाँवमें देवराजोंके मन्दिर थे। देश-देशमें यज्ञ होते थे। प्रत्येक धर्म-धर्मका सभी तरहसे [ ] करते थे। उपरके [ ] ऐसा धर्मचरण [ ] बलिने प्रपणीत होकर प्रत्येकके साथ नीलचक्र परितपर [ ] [ ] शरण ली। वहाँ उसने कहा [ ] [ ] की। इस ध्वजध्वजाकक तच्छब्दसे उसे भगवान् श्रीकृष्णचक्रवर्त दर्शन हुआ। उसने सब भगवान् श्रीकृष्णका दर्शन पकर उसने मनसे उनकी [ ] की।

**बलिने कहा—**हे भगवान् ! आप मेरे साहस्र दण्डवान् [ ] [ ] करें। मैं रहा खींचिये। हे कृतनिधे ! मैं आज्ञाई शक्तमें आया हूँ। आप सभी पापोंका विनाश करते हैं। सभी कर्मोंका निर्माण करनेवाले आप ही हैं। संप्रभुगणों [ ] [ ] वे, जेठमें राजधर्म, ह्यारमें पीतवर्णिक वे। मेरे सख (बलिपुत्र)वे भग्न कृष्ण-कर्मके हैं। मेरे पुत्रोंमें प्रत्येक होनेपर [ ] [ ] धर्म-धर्म स्वीकार किया [ ]। मेरे राज्यमें लोके करने हुए, मन्त्र, धर्म, की-हस्त आदि होना [ ]। परंतु अग्निविराजमें पैदा हुए सौम्योंने उनका विनाश कर [ ] है। हे जनार्दन ! मैं आपके चरण-कमलकी शरण हूँ। बलिपुत्राजी [ ] [ ] तुम्हारे भगवान् श्रीकृष्ण मुलकउपर करने लगे—

‘बलिराज ! मैं तुम्हारी राजके [ ] अंशकपरमें [ ] अन्तर्लोक में, वह पैदा जरा भूमिमें भगवत उन [ ] [ ] विजरा करेगा और [ ] [ ] राजाओंकी [ ] करेगा।’ यह कहकर भगवान् अद्भुत हो गये और प्रत्येकके साथ वह बलि [ ] असम हो गये।

उसने बलिकर इसी प्रकार सम्पूर्ण बलिकर बलि [ ] [ ] परचक्र और चक्रवर्तीकी [ ] हुई। अन्तमें पृथ्वीरज भीकने भीगति [ ] की तथा सहीधूमि (मोहनपद्मोती) अपने उस पुत्रुल्लेखितके पक्षिक राजस [ ] बलि बहुत-सा [ ] लूटकर अपने देश [ ] [ ] ।

॥ प्रतिसर्गपर्व, तृतीय स्कन्ध सम्पूर्ण ॥

•••••





## भुवनकोशिका संक्षिप्त वर्णन

■ **बुधधिरने पूछा—**भगवन् ! वह जगत् प्रतिष्ठित है ? कहाँसे उत्पन्न होता है ? इसका किससे स्त्रय होता है ? इस विश्वका हेतु क्या है ? पृथ्वीपर कितने लोग, समुद्र ■ कुलप्रचल हैं ? पृथिवीपर कितना प्रमाण ■ ? कितने भुवन हैं ? इन सबका ज्ञान वर्णन करे ।

■ **भगवान् श्रीकृष्णने कहा—**सहस्रम् ! आत्मे जो भूत है, वह ■ पुरुषका निबन्ध ■ किन्तु संसारमें भूमेने हुए वेने जैसे भुक्त और जो अनुपपन्न किया है, उनका संक्षेपमें मैं वर्णन करता हूँ। सर्ग, प्रविसर्ग, यश, ■ और यशानुवर्तित—  
■ पाँच लक्षणोंसे ■ पुराण कहा जाता है<sup>१</sup>।

अनप । ■ पाँच लक्षणोंसे ■ (बुद्धि) - के ■ ही विशेषणसे सम्बद्ध है, इसीलिये इसका मैं संक्षेपमें ■ हूँ।

अव्यक्त-प्रकृतिसे ब्रह्मत्व-बुद्धि उत्पन्न हुई। ■ त्रिगुणात्मक अहंकार उत्पन्न हुआ, अहंकारसे पञ्चगुण, पञ्चगुणोंसे ■ महाभूत ■ भूमेने बरकर-जगत् उत्पन्न हुआ है। स्वप्न-जगत्प्रत्यक्ष अर्थात् बरकर जगत्के मह होनेपर अल्पभूतिविषय विष्णु रह जाती है अर्थात् सर्वत्र भक्त परिष्कार रहता है, उससे भूगतात्मक ■ उत्पन्न हुआ। भूत समष्टिके बाद उस अणुके दो भाग हो गये। उसमें एक कण पृथिवी और दुसरा भाग आकाश हुआ। उसमें जलपुत्रे येक आदि पर्वत हुए। नदियोंसे नदी अर्द्ध हुई। मेघ पर्वत सेतल हजार योजन भूमिके अंदर प्रविष्ट है और चौदसों हजार भूमिके ऊपर है, बत्तीस हजार योजन मेघके शिखरका विस्तार है। ■ भूमिसे वर्णित मेघ है। ■ अणुसे आदिदेवता आदित्य उत्पन्न हुए, ■ जन-कलसे वायु, मध्यकाले विष्णु और सप्तकालमें रुद्ररूपसे अन्वेषित पड़े है। एक आदित्य ही तीन कणोंको धारण करते हैं। वायुसे परित्य, अग्नि, अक्षिरा, पुरुष, पुलक, मनु, वृत्, ■ और जल—ये नौ मानस-पुत्र उत्पन्न हुए। पुरुषोंने इन्हें ब्रह्मपुत्र कहा गया है। ■ दक्षिण ओगूटेसे दक्ष उत्पन्न हुए और

■ ओगूटेसे प्रसूति उत्पन्न हुई। दोनों दम्पति ओगूटेसे ■ उत्पन्न हुए। उन दोनोंसे उत्पन्न हर्षक अर्द्ध पुत्रोंसे देवर्षि अर्द्धने सृष्टिके लिये उत्पन्न होनेपर भी सृष्टिसे विरत कर दिया प्रकल्पित दक्षने अपने पुत्र हर्षकको सृष्टिसे विमुक्त देवकन ■ अर्द्ध जगत्काली साठ कन्याओंको उत्पन्न किया और ■ उन्होंने दस धर्मको, तेरह कल्पको, सत्त्वित कल्पको, ■ ब्रह्मपुत्रको, दो कृष्णको, चार अरिष्टनेमिको, एक पुत्रको और एक कन्या संकरको प्रदत्त किया। फिर इनसे बरकर-जगत् उत्पन्न हुआ। मेघ ■ तीन भूमेनेर ■ विष्णु ■ निराला जगत्: वेदाङ्ग, वैकुण्ठ ■ कैलास ■ तीन पुरीष हैं। पूर्व आदि दिक्षुओंमें इन्द्र आदि ■ गरी है। विष्णु, हेमकूट, निबन्ध, मेघ, नील, ■ और भूगतात्म—ये सत्त जगत्पुत्रोंमें कुल-पर्वत हैं। जगत्पुत्र लक्ष कोश प्रमाणवाला है। इसमें नौ वर्ण हैं। जम्बू, शङ्ख, पुण्ड्र, श्रीक, उल्लसित, गोमेद<sup>२</sup> तथा पुष्कर—ये सत्त द्वीप हैं। ये सत्तों द्वीप सत्त समुद्रोंसे परिबद्धित हैं। क्षर, दुग्ध, इक्षुरा, सुय, दधि, घृत और स्वादिह जलके सात समुद्र हैं। ■ द्वीप ■ अवस्था एक त्रिगुण है। भूमेने, पुष्करने, सारने, म्हालेक, जललेक, तपोलेक और सप्तलेक—ये देवताओंके निवास-स्थान हैं। सत्त ■ है—अतल, महातल, भूमितल, सुतल, ■, रसतल तथा तलतल। इनमें हिरण्यक अर्द्ध दामन और चासुकि अर्द्ध जग निवास करते हैं। हे बुधधिर ! सिद्ध और ■ भी इनमें ■ करते हैं। स्वाधभुव, स्वारेविष, जल, जम्बू, रैका और चासुन—ये क मनु व्यति हो गये हैं, इस समय वैवस्वत मनु वर्तमान हैं। ठीक पुत्र और ■ वह पृथिवी परिष्कार है। खरड आदित्य, अष्ट वसु, ■ और दो अक्षि-भुवन—ये तैत्ति स देवता वैवस्वत-मन्वन्तोंमें कहे गये हैं। विप्रकितिले दैवगण और हिरण्यकसे दन्तगण उत्पन्न हुए हैं।

■ और समुद्रोंसे समस्त भूमिपर प्रमाण प्रवास कोटि

१-सर्ग ■ अन्वेषण ■ भूमेनेपुत्रोंसे तीन पुत्रों पञ्चगुण<sup>३</sup> (अंतर्यामी २।११)

२-अप ■ सभी पुत्रोंके ■ गोमेद अर्द्ध है, यह जगत्क ■ है।

योजन है। गौक्षकी तरह यह धूमि है। इसके चारों ओर छेकालेक-पर्वत है। वैश्विक, प्रकृत, और नियम—ये चार प्रकारके प्रलय हैं। जिससे इस संसारकी उत्पत्ति होती है। प्रलयके समय जमीनें इसका हैं। जिस प्रकृत अनुकूल वृक्षोंके पुष्प, और फूल होते हैं, उसी प्रकार संसार अपने उत्पत्ति होता है और अपने समयसे लीन होता। सम्पूर्ण विश्वके लीन होनेके बाद महाभार केद-प्रलयोंके द्वारा पुनः इसका करते हैं। हिंस, अहिंस, मृदु, कुर, धर्म, अधर्म, असत्य आदि अनेक इस प्रकार

हैं। धूमि जलसे, जल तेजसे, तेज वायुसे, वायु आकाशसे रचित है। अहंकारसे, अहंकार महत्त्वसे, महत्त्व प्रकृतिसे और प्रकृति उस अधिनामी पुरुषसे परिष्कृत है। इस प्रकार अन्त उत्पत्ति और नष्ट होते हैं। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, नक्षत्र तथा सिद्ध आदिसे समन्वित चरित्र-कर्म नष्टकर्म कीर्तिमें अवस्थित है। निर्मल-बुद्धि तथा अन्त-वर्णकाले मुनिगण इसके और आत्मा-वर्णकाले आत्मा आत्मा खाया उन्हें है।

(अध्याय २)

### नारदजीके विष्णु-व्याख्या दर्शन

पुनर्जन्म पूजा—परायण! यह विष्णु-व्याख्या की प्रथा किस प्रकारकी है? जो इस प्रकार-व्याख्या के प्रयोगोंमें करती है।

परायण जीवन्मते कदा—परायण! जिसके रूप नारदजीने क्षेत्रज्ञमें नारायणका दर्शन करनेके लिये गये। वहाँ क्षेत्रज्ञात्मक दर्शन कर और उन्हें प्रसन्न-मुद्रा में देखकर उनसे निवेदन की। परायण! आपकी भावा कैसी है? कहाँ रहते हैं? कृपया उसका मुझे दिखायें।

परायणजीने इसका कदा—नरद! देखकर क्या करोगे? इसके अतिरिक्त जो कुछ कहो हो वह भाँगे।

नारदजीने कदा—परायण! अपनी व्याख्या ही दिखायें, अन्य अभिलषा है। नरद-नरद आकाश किया।

नारायणने कहा—अन्त, अन्त इसी प्रकार देखें। यह नारदजी कीगुणी क्षेत्रज्ञमें बसे। जहाँ परायणने एक ब्राह्मणका रूप धारण किया। निम्न, ब्रह्मोत्पत्ति, कमण्डलु, मृगधर्मको धारण करुणकी पक्षिणी हाथोंमें पकड़कर केद-कट करने लगे और अन्त नरद उन्होंने पञ्चशर्मा रस किया। इस नरद नरद नारदके साथ जम्बूद्वीपमें आये। वे नरद केवर्षी नदीके तट पर स्थित विदिशा नामक नगरीमें गये। उस धन-धान्यसे समृद्ध उद्योगी, गाय, गैर, बकरी पशु-पालनमें तत्पर, कुक्किर्षको धलीपक्षी करनेवाला खीरका

नमक का तैल करता था। दोनों सर्वप्रथम ठहरेके घर गये। उसने इन विदुषों ब्राह्मणोंका आसन, अर्घ्य आदिसे स्मर-सत्कार किया। फिर पूछा—‘यदि आप उचित हो अनुसार मेरे बाईं आसन भोजन करें। यह मुझका बृद्ध ब्राह्मणका नाम परायणने इसका कहा—‘धूमकी अनेक पुत्र-पौत्र हो और सभी व्यापार एवं तत्पर रहे। तुम्हारी बेटी और पशु-धनकी निधि वृद्धि हो’—यह मेरा है। इतना वे दोनों कहसि लगे। वहाँमें गाँवके तट पर वैश्विक नरद नरदकी व्याख्या एक दरिद्र ब्राह्मण रहता था, वे दोनों उसके पास पहुँचे। वह अपनी बेटीकी विवाहमें लगा था। परायणने उससे कहा—‘हम बहुत दूरीसे आये हैं, अब हम तुम्हारे अतिथि हैं, हम भूखे हैं, हमें भोजन कराओ।’ उन दोनोंको सबसे तेज़र वह ब्राह्मण अपने पत्नी आया। उसने दोनोंको खान-भोजन अति करवा, अन्ततः सुकपूर्वक उत्तम शय्यापर शयन आदिकी व्यवस्था की। प्रातः उठकर परायणने अहंकारसे कहा—‘हम तुम्हारे घरमें सुकपूर्वक रहे, अब जा रहे हैं। कृपया हमें कि तुम्हारी बेटी निष्कल हो, तुम्हारी संततिकी हो’—इतना कहकर वे कहसि चले गये।

नरदजीने पूछा—परायण! विदुषने आपकी को सेवा नहीं की, किन्तु उसके अपने उत्तम घर दिया। इस ब्राह्मणने ब्रह्मसे अपनी बहुत सेवा की, किन्तु उसके अपने ब्राह्मणोंके रूपमें शयन ही दिया—ऐसा अपने



भग्वी किसी भी प्रकार नहीं टल सकती<sup>१</sup>। ■ जोड़-बिड़ल होकर आसू टपकता है, कोई रोता ■ ■ प्रसन्नतासे नाचता है, ■ मनोहर गीत गाता है, कोई धनके लिये अनेक उपाय ■ है, इस तरह अनेक प्रकारके जलन्धी रचना ■ रहता है, अतः यह संसार एक नाटक है और ■ उस नाटकके पात्र हैं।

■ तमदेस देकर भगवान्ने ■ ■ कहा—'नरदजी । तुमने विष्णुकी मया देव ली । उठो ! अब अनन्तर अपने पुत्र-पौत्रोके अर्थ देकर और्ध्वरेखित कुल्य करो । यह मया विष्णुने ■ ■ है ।' इतना ■ उसी पुण्यविधियों नरदको ज्ञान करवा । ज्ञान करते ही श्री-कृष्णके छोड़कर नरदमुनिने अपना ■ फलन कर ■ ; राजासे भी अपने भग्वी और पुत्रोपेतोके साथ देवा कि

### ● दोषोक्त सर्वान

व्यापार्य पुत्रिहितने पूछा—भगवन् ! यह भी किस कर्मसे देवता, यमुज और यमु अदि योनियोने उत्पन्न होता है ? बालभार्यमें कैसे पुत्र होता है और किस कर्मसे युक्त होता है ? किस कर्मके फलस्वरूप ■ ■ राजा भर्षासक्य कह रहन करता है ? गर्भमें क्या करता है ? ■ कर्मसे रूपवान्, धनवान्, पण्डित, पुमान्, ■ और कुलीन होता है ? किस कर्मसे रोगरहित जीवन व्यतीत करता है ? कैसे सुकपूर्वक मरता है ? शुभ और अशुभ फलस्वरूप भोग कैसे करता है ? हे विप्रलम्भते ! ये सभी विषय मुझे बहुत ही गहन मालूम ■ है ?

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महाराज ! ज्ञान ■ देवयोनि, विश्वकर्मासे मनुष्ययोनि और पाद-कर्मसे यमु ■ होता है । ■ और अचर्माके निधायो बुद्धि ही भ्रमण है । पापसे पापयोनि और पुण्यसे पुण्ययोनि प्राप्त होती ।<sup>२</sup>

शत्रुकारणके समय दोषवर्तित शुक्र वायुसे ■ कीके रक्तके साथ मिलकर एक हो जाता है । शुक्रके साथ ही कर्मके

नटनधारी, यज्ञोपवीतधारी, दण्ड-कम्पकलु लिये, वीणा धारण किये हुए, बद्धकीके ऊपर पड़ा एक तेजस्वी मुनि हैं, यह मेरी ■ नहीं है । उसी समय भगवान् नरदका हाथ पकड़कर अवतरण-धर्मासे कम्पकने केतवीय आ गये ।

भगवान्ने नरदसे कहा—देवर्षि नरदजी ! आपने मेरी आज्ञा देव ली । नरदके देवसे-देवतो ऐस ■ भगवान् विष्णु अवर्तित हो गये । देवर्षि नरदजीने भी वैसकर ■ प्रकृत ■ और भगवान्की आज्ञा प्राप्त कर ■ लोकमें भूमने लगे । ■ ! ■ विष्णुपापाका हमने ■ वर्णन किया । इस मायके ■ संसारके जीव, पुत्र, स्त्री, ■ मर्दिने ■ होते-गाते हुए अनेक ■ है ।

(अध्याय ३)

अनुसर शेरत ■ यह होता है । एक दिनेमें शुक्र और ■ मिलकर फलन ■ है । पाँच रातमें ■ फलन हुए हो जाता है । रात रातमें बहुत मांसपेयी बन जाता है । पीछ दिनेमें वह मांसपेयी धांस और रुधिरसे व्याप्त रूपमें दुद ■ जाता है । पचास दिनेमें उसमें अङ्कुर निकलने है । एक महीनेमें उन अङ्कुरोके पाँच-पाँच पाग—श्रीवा, सिर, कंधे, पुङ्खवा साथ उदर ■ जाते हैं । यह मांसमें लकी अङ्कुरोका ■ मैनुल्य बन जाता है । पाँच महीनेमें मुत्र, मल ■ और बननेते है । छ महीनेमें दन्तवर्धिका, नख और बलके छिद्र बनते हैं । सातवें महीनेमें गुदा, लिङ्ग भयवा ■ और नाभि बनते हैं, संक्षिप्त उत्पन्न होती है और अङ्गोंमें संक्षेप भी होता है । अठारवें महीनेमें अङ्ग-प्रसन्न सब पूर्ण हो ■ है और सिरमें केत भी आ जाते हैं । माताके भोजनकर रस ■ बालकके जरीमें पहुँचाया रहता है, उसीसे उत्पन्न वेदन होता है । सब गर्भमें स्थित जीव सब सुक-दुःख ■ है और यह विचार करता है कि 'मैंने अनेक योनियोमें ■ और करेकर भूयुके अधीन हुआ और सब जन्म

१-कललमविस्तृतु यमु शुक्रलोकाभरोयु विस्तृतमप्यसु सुमेयम् ।

मनीषधिविश्रलैः करोतु रात्रं कद्रभिः कद्राभौ नम विष्णुविरोधिनः । (उत्तरपर्व ४ । ९५)

२-शुभैर्यत्नकरोति विद्वैर्धनुषाः करोतु । अङ्गुलीः कर्मावर्तयितुर्धर्मयोगेन ।

प्रधानं बुद्धिपदान् कर्मकर्मिण्यने । पत्नी ■ पुत्रं पुत्रेन ■ (उत्तरपर्व ४ । ९७)





परस्पर सम्पर्क व्याप्त होती है। अतः निम्न दुःख देखे हैं।  
 धनके सम्पादनमें दुःख, धनके रक्षण करनेमें दुःख,  
 फिर उसके व्यय अतिरिक्त दुःख हैं।  
 भी सुखदायक नहीं है। चोर, जल, अग्नि, रक्त और स्वयंसे  
 भी धनवालोंके अधिक भय रहता है। मरतमें अन्धकारमें  
 तेजनेपर पानी, धूमिर कुत्ते आदि खोज और अन्धमें पकड़ी  
 आदि का जाते हैं, इसी प्रकार धनवालों भी सर्वत्र खो  
 होती है। सम्पत्तिके अर्जन करनेमें दुःख, सम्पत्तिके  
 बाद मोक्षरूपी दुःख और नाश हैं। अनेक तो जलरक्त दुःख  
 होता ही है, इसलिये किसी भी कालमें धन सुखदायक नहीं  
 है। धन आदिकी कामनाएँ ही दुःखदायक कारण हैं, इसके  
 विपरीत सम्पत्ताओंसे निःस्पृह रहकर परम सुखान् भूत हैं।  
 हेमन्त ब्राह्मणे रक्षितक दुःख, धीमये दण्डक तापक दुःख  
 और ब्राह्मणे इन्द्रावता तथा दुःख हैं।  
 इसलिये बरत सुखदायक नहीं है। दुःख  
 विदेश-गमनमें दुःख, गर्भवती को दुःख,  
 प्रसवके समय दुःख, पितृकी दण्ड, देव आदिमें पीड़ने  
 दुःख। इस प्रकार जो भी सदा व्यापक रहता है। कुटुम्बिकोंके  
 यह विश्वास रहता है कि मैं गढ़ हो गयी, बेटी सुख नहीं, तेजकर

नरक, भयमें योग्यमान अज्ञा है, खोके अभी संतान हुई है,  
 इसके लिये रखें खीन कन्येगण, कन्येके लिये आदिकी  
 विना—इस प्रकार विचारें कुटुम्बिकोंके कारण  
 खोके विनसे उनके खोल, शुद्ध बुद्धि और सम्पूर्ण गुण ना  
 है, जिस तरह कछे घड़ेमें जल घटके साथ  
 जल नष्ट जाता है, तथा गुणैरहित कुटुम्बी मनुष्यका  
 देह नष्ट हो जाता है।

राज्य सुखदायक साधन है। जहाँ मिल सन्धि-  
 विना सभी रहते और पुत्रसे राज्यके  
 धन है, देश भी है।  
 भय है। जिस प्रकार एक मांस-  
 कुत्तेके परस्पर भय है, वैसे ही  
 सुखी नहीं है। ऐसा कोई राज्य नहीं जो सबको  
 जीतकर सुखपूर्ण करे, दूसरेसे रहता है।  
 लोकप्रियताके पुत्र कि 'महापुत्र' यह  
 लोभ लेकर अन्ततः दुःखी ही है। जो पुत्र  
 और मात, दान आदिमें लक्ष्य रहते  
 हैं, सुखी हैं।

(अध्याय ४)

### प्रकारके पापों एवं पुण्य-कार्यका फल

धर्मवान् श्रीकृष्णके द्वारा—पराक्रम । अथ  
 चोर नरकमें गिरते हैं और अनेक प्रकारकी  
 पातकी भोगते हैं। इस अधम पाप और अर्थ  
 कहते हैं। विनाशिके घेदसे अन्धकार घेद रहित है।  
 स्मृत, सूक्ष्म, अतिस्मृत रूप में इन पापोंके  
 हैं। परंतु वहाँ ये केवल बड़े-बड़े पापोंके संश्लेषों का  
 करता है—परकीय विनाश, दूसरेका अग्नि-विनाश और  
 अकार्य (हुजूम) में अभिनिवेश—ये तीन प्रकारके पाप  
 पाप । अभिनिवेश, अग्नि, पत्निय और

अर्थवान् ब्राह्मणे—ये पाप पाप हैं। अधम-  
 पाप, धर्म, अकार्य (असंयमित जीवन व्यतीत  
 और परक-हरण—ये चार पापिक पाप हैं। इन  
 पापोंके नरकमें हैं।  
 घेद होते हैं। जो पुण्य कर्मके सागरसे उद्धार  
 करनेवाले पापोंके धर्मवान् विष्णुसे द्वेष है,  
 नरकमें पड़ते हैं। महाहत्या, सुपुत्र, सुवर्णकी खोरी और  
 गुप्त-पापगण—ये चार पाप हैं। पापोंके घेदने-  
 करनेके सम्पर्कमें रहनेवाले मनुष्य पापोंका महापातकी गिरा

२-अर्थवान्की दुःखार्थिकताके लक्ष्यः अथ दुःखार्थिकताः

कीयः सतिरुक्तः अकार्यः । परमार्थिकता निम्न पुण्यः प्राप्नुयति ।

३-अकार्यः कर्म-विधिः । सते य विनाश पापिकार्य सर्वं विनाशः ।

विशेषार्थः समस्त विधीषु । घेदकर्मकेवलसे सदा द्वेषः पुण्यकर्मः ।

४-पाप सर्वार्थिकताः । पापार्थिकताः सर्वार्थिकताः ।

(उत्तरार्ध ४। २१२—२२४)

है। वे सभी नरकमें हैं।

अब वे उपपातकोंका वर्णन करता है। महात्म्यको पदार्थ देनेकी प्रतिज्ञा करके फिर नहीं देने, महात्म्यका धन इतर करना, अस्वभाविकता, अतिशयोक्ति, अस्मिता, कृतज्ञता, कृतघ्नता, अतिराग, अतिद्वेष, अपने पुत्रोंको देव, परब्रह्मण, कुम्भीगमन, स्त्री, पुत्र आदिमें से बना, स्त्री-बन्धन करना, स्त्रीकी रक्षा न करना, श्राव लेकर न चुकाना, देवता, अग्नि, सूर्य, गौ, कृष्ण, राजा और पवित्रताकी निन्दा करना आदि उपपातक हैं। इन पापोंको करनेवाले पुण्यकोश से वंचित होते हैं। वे भी पातक्य होते हैं। इन पापों का करनेवाले मनुष्योंको ब्रह्मके बाद यमराज नरकमें ले जाते हैं। जो मूलमें पाप करते हैं, उनके पुण्यमेंकी अन्तर्गत अनुसूचित करना चाहिये। मन, कर्मा, कर्मोंके बाद करते हैं एवं दूसरोंसे मिलते हैं। अथवा पाप करते हुए पुण्यको अनुमोदन करते हैं, वे सभी नरकमें जाते हैं और जो उद्यम कार्य करते हैं, वे स्वर्गमें सुखसे आनन्द भोगते हैं। अशुभ कर्मोंका अनुपपन्न और शुभ शुभ फल होता है।

महात्म्य। यमराजकी सहाय्य शुभ-अशुभ कर्मोंका विचार विचित्रता आदि करते हैं। इनमें स्वर्ग कर्मोत्तर फल भोग्य पड़ता है। इसीलिये शुभ कर्म ही करना चाहिये। किन्तु गये कर्मोंका फल भिन्न भिन्न प्रकार का नहीं होता। धर्म करनेवाले सुखपूर्वक और और पापी अनेक प्रकारके दुःखोंका भोग करते हुए कर्मोंका करते हैं। इसीलिये सदा धर्म ही करना चाहिये। जीवन किन्तु ही एक चलाकर वैभवात्मापुत्रों पहुँचता है। पुण्यकर्मोंको इतना बड़ा धर्म निकट ही जान पड़ता है और पापोंको किन्तु बहुत दूर ही जाना है। पापी करते हैं, इसमें स्त्रीकी बर्तन, केकाड़, पत्थर, कीचड़, गन्ध और तलवारकी चारों समान तीक्ष्ण फल पड़े रहते हैं और लोकोकी सुन्दर विचारी रहती हैं। उस मार्गमें कहीं अग्नि, कहीं सिंह, कहीं व्याध और कहीं-कहीं पतितार, सर्प, कृषिक आदि दुष्ट वस्तु भूमि रहते हैं। कहींपर उन्मत्त, लीन और बड़े बड़े दुःख देते रहते हैं। उस मार्गमें कहीं लम्बा है और न बल। इस प्रकारके भयंकर मार्गसे समस्त पापोंको छोड़कर नरकमें नरकमें नरकमें पहुँचते हुए ले जाते हैं। उस समय अपने कर्म

आदिमें रहित वे प्राणों अपने कर्मोंको सोचते हुए रोते रहते हैं। मृत और पक्षरोंके घरे उनके कष्ट, तालु और ओष्ठ हैं। समस्त उन्हें बार-बार करते हैं और अथवा सर्वलोकों काँचकर सींचते हुए ले जाते हैं। इस दुःख भोगते-भोगते वे समस्तकर्म पहुँचते और अनेक यमराज भोगते हैं।

पुनः उद्यम मार्गसे सुखपूर्वक पहुँचकर सौम्य-स्वल्प धर्मोत्तर दर्शन करते और वे उनका बहुत आनन्द करते हैं, कहते हैं कि महात्म्यको ! आपलोग धन्य हैं, दुःखोंका उपकार है। आपने सुखकी प्राप्तिमें बहुत पुनः किया है। इस उद्यम विमानपर बहुत स्वर्गको । यमराजको प्रसन्नचित्त अपने मित्रों देकते हैं, परंतु लोग उन्हें भयानक कर्मों देकते हैं। यमराजके समीप । यमराज बुरा कृत्य-कर्म मूलमें रहते हैं और भयंकर शक्तिरत्न तथा भारण किन्तु धर्मपूर्ण लोग नहीं बैठे देते हैं। पुण्यकर्मोंके समस्त अपने लक्ष्योंमें लीक, मृत, अशुभ, पाप, बर्तन, बल, उद्यम धर्म किन्तु रहते हैं। पापी यमराजको इस कर्मों विचार देकते और यमराजके समीप बैठे हुए विचित्रता प्रदर्शित करते । पुनः ऐसे ? पुनः अशुभ है, गर्विते घर-किन्तु स्वर्ग किन्तु है, और अनेक प्रकारके पुनः किन्तु है। अब उन कर्मोंका फल भोगे । सुन्दरी रक्त । इस उद्यमोत्तर तर्जनी विचित्रता यमराजको आनन्द देते हैं इनको ले नरकमें अग्निमें दो ।

स्वर्गमें फलरत्न अन्तर्गतके दण्ड आह्वय करोड़ । यमराज है । यमराज कहीं उनके कर्मोंकी सहाय्यमें टींग देते और लीकमें मन लेता उनके कर्मोंमें जीव देते हैं। उस कोशसे उद्यम सब टूटने लगता और वे अपने अनुपम कर्मोंको यादकर लेते और चिन्तिते हैं। तभीसे हुए युक्त लीक-दण्डसे अनुपमसे यमराज उन्हें करते हैं और । उनके देहोंमें हो जाता तब





चाहिये, पापसे [ ] चाहिये। पुण्य कर्मोंसे देखकर प्रज्ञा होता [ ] और पाप करनेसे नरककी प्रति होतो है। जो परपुण्य सर्वानुभावसे [ ] शरणागते [ ] है, [ ]

सिद्धा जलनी तरह पापोंसे लिप्त नहीं होते। इसलिये इन्द्रसे कृत्स्न परितोषक ईश्वरकी आराधना करने चाहिये [ ] सभी [ ] मिलकर बचना चाहिये। (अध्याय ५-६)

### ब्रह्मपञ्चासकी महिमामें ब्रह्मव्रतवासी कावा

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महात्म ! मैंने जो [ ] नरकोक्त विज्ञानसे वर्णन किया है, उन्हें [ ] नौकासे मनुष्य पार कर सकता है। ब्रह्मव्रत [ ] दुर्लभ मनुष्य-जन्म पाकर ऐसा कर्म करना चाहिये, जिससे ब्रह्मव्रत न करना पड़े और यह जन्म भी स्वर्ग न जान और फिर जन्म [ ] न लेना पड़े। जिस मनुष्यकी धीर्माँ, दम, ब्रत, उपवास आदिकी परम्परा बनी है, वह भस्मेकमें उन्हीं कर्मोंके ब्रत सुख भोगता है। ब्रत तथा स्वाध्याय न करनेवालेकी कहीं भी प्रति नहीं है। इसके विपरीत ब्रत, स्वाध्याय करनेवाले पुण्य सदा सुखी होते हैं। इसलिये ब्रत-स्वाध्याय [ ] करने चाहिये।

उक्त । यहाँ एक प्राचीन इतिहासका वर्णन करता हूँ—  
पौराणिक सिद्ध किया हुआ एक सिद्ध अति भयंकर विप्लव रूप धारण कर पृथ्वीपर विचरता था। इसके लिये ओष्ठ, दूटे दाँत, पिच्छिल नेत्र, चपटे कान, फटा मुक, लम्बा पैर, देढ़ पैर और सम्पूर्ण अङ्ग कुम्पन थे। [ ] मूलप्रारम्भिक नामके एक ब्राह्मणने देखा और उससे पूछा कि आप स्वर्गसे क्या [ ] और [ ] प्रयोजनसे यहाँ आपका [ ] हुआ ? [ ] आपने देवताओंके विरुद्ध मोहित करनेवाली और स्वर्गकी अलंकार-व्यवस्था [ ] देखा है ? अब आप स्वर्गमें जायें तो स्वर्गसे कहें कि अवशिष्टपुण्य [ ] ब्रह्मण पुण्यका कुदाल फूटता था। ब्राह्मणका वचन सुनकर सिद्धने खिन्न हो पृष्ठ कि 'ब्राह्मण ! तुमने मुझे कैसे पचकाया ?' वह ब्राह्मणने कहा कि 'महात्म ! कुम्पन पुण्यके एक-दो अङ्ग विप्लव होते हैं, पर आपके सभी अङ्ग देढ़ और विप्लव हैं।' इसलिये [ ] अनुमान किया कि इनका रूप गुप्त किन्ने कोई स्वर्गिक निवासी सिद्ध ही हैं। ब्राह्मणका वचन सुनते ही वह

सिद्ध काति अन्तर्धान हो गया और कई दिनोंके बाद पुनः ब्राह्मणके समीप आया और कहा—'ब्राह्मण ! हम स्वर्गमें गये और इनकी सभामें जब नृत्य हो चुका, उसके बाद मैंने स्वर्गलये स्वर्गसे तुम्हारा संदेश भेजा, परंतु उन्होंने यह कहा कि मैं उस ब्राह्मणको नहीं जानती। यहाँ तो इसीका नाम कहते हैं जो निर्मल विद्या, वैराग्य, दान, तप, यज्ञ अथवा ब्रत [ ] मुक्त होना है। इसका नाम [ ] विरचयलोक भिन्न रहता है।' स्वर्गका सिद्धके मुखसे यह वचन सुनकर ब्राह्मणने [ ] हय [ ] निश्चयसे कहते हैं, [ ] स्वर्गसे [ ] टीकिये। वह सुनते ही [ ] फिर अन्तर्धान हो गया [ ] स्वर्गमें जाकर उसने स्वर्गसे ब्राह्मणका संदेश कहा [ ] जब उसने उसके गुण वर्णन किये तब स्वर्ग प्रसन्न होकर [ ] लगी—'सिद्ध महात्मन ! मैं आपके निवासी इस स्वर्ग ब्राह्मणकी अनुरक्ति हूँ। दर्शनसे, सम्भाषणसे, एकत्र निवाससे और उपकार करनेसे मनुष्योक्त परस्पर ओं होता है, परंतु मुझे उस ब्राह्मणका दर्शन-सम्भाषण आदि कुछ भी नहीं हुआ। केवल नाम-श्रवणसे इतना [ ] हो गया है।' सिद्धसे इतना कहकर स्वर्ग इन्द्रके समीप गयी और ब्राह्मणके ब्रत आदि करने तथा अपने ऊपर अनुकूल होनेका वर्णन किया। इन्द्रने भी प्रसन्न हो स्वर्गसे पूछकर उस उत्तम ब्राह्मणको वस्त्राभूषण आदिसे अलंकृत कर [ ] विमानसे बैठाकर स्वर्गमें बुलवाया और [ ] परस्परपूर्वक स्वर्गिक [ ] उसे प्रधान विधि। ब्राह्मण विरचयलोक यहाँ दिव्य भोग भोगता रहा। [ ] स्वर्ग-वस्तु ब्राह्मण अपने संश्लेषमें वर्णन किया है। दुर्लभता पुण्यके लिये राजलक्ष्मी, वैकुण्ठलोक, मनोवाञ्छित [ ] आदि दुर्लभ पदार्थ [ ] आपत्तिमें सुलभ हैं। इसलिये [ ] सर्ववश पुण्यके ब्रतमें संलग्न रहना चाहिये। (अध्याय ७)





जाती है। चतुर्दशदिने के समय सीताने भी शरीरमें अनेक प्रकार के भक्षणपूर्वक गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, तिल, आदिसे पूजन किया और प्रदक्षिणा कर बनवाये गयीं। यह तिल, अक्षत, गेहूँ, सर्प आदिसे अनेकप्रकार पूजन कर मन्त्रों का प्रयोग और प्रदक्षिणा कर ब्राह्मणोंसे दक्षिणा देती है, वह शोकमूलक होकर अपने अपने सुखोक्त उपयोगपर अन्तमें गौरी-लोकमें प्रवेश करता है। यह अशोकवृक्ष सब प्रकारके शोक और रोषको हरनेवाला है।

महारण। इसी प्रकार ज्येष्ठ मासमें सुप्त अतिथिसे पूर्व सूर्योदयके समय अथवा मनोहर करवीर-पुष्पका पूजन करे। सुप्तसे वृक्षको कर गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, सप्तपत्रम्, अक्षत, चन्दन और धीति-धीतिले फलोसे पूजन इस प्रकारसे धारणा करे—

करवीर त्रिपत्रम् नमो धनुर्मासम् ।

### कोकिलसंग्रहण और महापूजा

राजा बुधशिरसे पूजा—मासम् । कोकिल कुलीन अपने पालके स्वयं परस्पर विस्तृत श्रेय है, उसे आप ब्राह्मणों से।

भगवान् श्रीकृष्ण कोले—महारण । यमुनाके तटपर मधुर नामक एक सुन्दर नगरी है। वहाँ श्रीकृष्णजीने अपने भाई शकुन्तलके पदपर प्रतिष्ठित किया था। शकुन्तल नाम श्रीमन्मन्त्र' था। यही कोकिल' था। दिन अपने कुलपुत्र, वसिष्ठजीसे प्रणामकर पूजा—'पुनिश्रेष्ठ । मुझे कोई देवता नहीं है, मेरी अक्षय्य खेतीयारी की है।

वसिष्ठजीने कहा—कोकिल! करकण-कलीनी अथवा मासकी पूर्णिमाके सायंकाल वह संकल्प करे 'आवण मासम् निध-कनन, रत्न-प्रेम और बुद्धि-अपन कलीनी तथा ब्रह्मचर्यसे रहूँगी और अग्निप्रेम दण्ड करूँगी।' प्रातः उठकर सब सामग्री लेकर नदी, तालाब आदिक जाय। वहाँ दण्डधवन सुगन्धित द्रव्य, तिल और अक्षतलेख उभटन लगाये और विधिसे स्नान करे। इस प्रकार

श्रीकृष्णजीसंग्रहण नमो कोकिलेश्वरः ॥

(अध्याय १०।४)

'भगवान् विष्णु और शंकरके प्रकृतपर उनके रूपमें सुशोभित, भगवान् सूर्यके अथवा विष तथा त्रिविके आवास करवीर (करवीर) ! आपको बार-बार नमस्कार है।'

इसी तरह बुद्धिसे स्वयं करनेवाले निवेदनपूर्वक '॥ श्रीकृष्णके शक्ति श्रेष्ठ है ॥ पुनर्जाति पञ्चम् ॥ (यजु- ३३।४३)' इस मन्त्रसे प्रार्थना कर ब्राह्मणोंसे दक्षिणा दे एवं वृक्षोंसे प्रदक्षिणा कर परस्पर सुखीयके प्रसन्नताके लिये इस वाक्यसे अरुन्धती, सावित्री, सरस्वती, गङ्गा, दामोदरी, अन्नमूला और सप्तधामा धीति-धीतिले तथा अन्य विधानों भी है। इस करवीरवृक्षको जो भक्षणपूर्वक है, वह अनेक प्रकारके सुख भोग कर अन्तमें सुखलोकमें जाता है।

(अध्याय १-१०)

कोकिल स्नान करे। अन्तर शरीरविषयोंका उभटन लगाकर स्नान दिनांक स्नान करे। जेब दिनेमें वृक्ष उभटन बलकर स्नान करे। उदयकर सूर्यभगवान्का ध्यान करे। इसके बाद तिल, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, तिल, चन्दन, दूर्वा, पूजनकर मन्त्रसे प्रार्थना करे—

श्रीकृष्णजीके शक्ति श्रेष्ठ है ॥

(अध्याय ११।१४)

शिरसाके कोकिल देखे। अन्त शिरसे बुद्धिपूर्वकली है। आपको शिरसे लाल आत होता तथा आपको तिल, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, तिल, चन्दन, दूर्वा, पूजनकर मन्त्रसे प्रार्थना करे।

—इस प्रकार पूजन कर शाममें अन्तर प्रवेश करे। इस मास वक्कर अन्तमें शिरसिपुष्पों कोकिल ब्रह्मकर उसमें उनके नेत्र और सुखके पंच लगाकर तापप्रदमें करे। दक्षिणसहित वक्कर, धन्य और गुह समुद्र,

દેવજ્ઞ, પુરોહિત અથવા કોઈપણ સ્થાનના હોય નહીં.

■ विधिसे जो नारी कोकिलप्रकार करती है, ■ राजा  
जन्मात्क सौभाग्यवती रहती ■ और अन्तमें लक्ष्मी ■  
सैतकर गौरीशेखरको ■ है : बसिष्ठजीने प्रत्येक ■  
सन्निध करीतिप्रदाने लंरी ■ कोकिलप्रकारका उल्लेखने

विषय । उससे उन्हें अजानत सौभाग्य, पुत्र, सुख-समृद्धि और समुदायिकी कृप एवं प्राप्त हुई । अन्य भी जो शिर्या इस यन्त्रो यन्त्रिपूर्वक करती हैं उन्हें सुख, सौभाग्य आदि की प्राप्त है ।

(अध्याय ११)

**प्रस्तावित विधान और फल**

मन्वान् श्रीकृष्ण बोले—महाशय ! तब मैं सभी  
 जापोका नाशक हूँ, असुर और मुनियोंके हूँ, मैं  
 दुर्लभ महासन्तोषदायक विष्णु बनकर हूँ, मैं  
 सुनें—अश्विन ऋतुमें पूर्णिमाके दिन अश्वत्थवृक्षके  
 तपसासकर रहते धूर्तमिश्रित पापसागर भोजन करना चाहिये।  
 दूसरे दिन प्रातः उठकर पवित्र हो अन्नमन्त्रक विष्णुके नामसे  
 दत्तायाचन करे। इस समयसे काली चाहिये—

अहं वैश्वनाभिरुद्रं ब्रह्मविद्यायां  
शिवं शक्त्यात्मकं नमस्कृत्य नमः ॥

| प्रमाणपत्र | प्रमाणित | प्रमाणित | प्रमाणित | प्रमाणित |
|------------|----------|----------|----------|----------|
|------------|----------|----------|----------|----------|

Figure 2.10

'अशावेळी । मी [ ] [ ] [ ] [ ] कुठल्यावेळेत जायना  
[ ] हूँ । तिसरा प्रकार येत राहू [ ] पूर्वी [ ]  
[ ] येथी कला करे ।'

नियमपूर्वक सोलह वर्षपर्यन्त प्रतिपत्त्य ऋतु करना चाहिये। फिर श्रावणपूर्व ऋतिपराग्वे उपवास करके गुरुजनोंसे आदेश प्राप्त करके महादेवका स्मरण भक्तिपूर्वक शिवका पूजन चाहिये और रात्रि टीका जलकर शिवको निवेदित करना चाहिये। रात्रि सप्तमीक सोलह ब्राह्मणोंको निमंत्रित कर बकर, अश्वपुष्प आदिले पूजन भोजन कराये या अष्ट दम्पतीको भोजन कराये। यदि शक्ति न हो तो एक दम्पतीका पूजन करे। करके रात्रि भूमिपर वाहन करना चाहिये। सुषोदय होनेपर करके सभी सामग्रियोंको लेकर शिवजीका दर्शन एवं पञ्चगव्यसे स्नान चाहिये। अनन्तर ब्रह्ममूक, तिलमिश्रित और गर्म जलसे स्नान चाहिये। स्नानके अनन्तर कर्पूर, चन्दन आदिका लेपकर उत्तम पुष्प चढ़ाने चाहिये। कक, फलकर, मिष्ठान, कूप, दीप, धवरा एवं भक्ति-भक्तिसे नैवेद्य महादेवजीको समर्पित कर

[illegible]

(अध्याय १२)

## अतिरिक्त-धर्मका फल और विधान तथा

### सर्पहीवीवी

महात्म्य सुविहितने पूजा—महान् ! अपने पूर्व-जन्मका इन लोग बहुत जानते हैं। तब वह कहने में प्रविष्टों का ध्यान, देवताओं की आराधना का तीर्थ, स्नान, होम, जप, तप, व्रत आदिके पूर्वजन्मका इन बात हो सके । गरी ? यदि ऐसा कोई बात हो, तब पूर्वजन्मका स्मरण हो सकता है तो आप उसका वर्णन करें।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—राम ! एक ही 'मार्गशीर्ष, पशुपुन, ज्येष्ठ एवं अश्वि' इनमें 'प्रकाशपूर्ण उत्पत्ति करनेसे अनुभवसे अपने पूर्वजन्मका स्मरण हो जाता है। इस विधानसे एक आत्मा है, उसे आप सुने—

मार्गीय कहते हैं अनुभव किन्हीं सुखेय नमक एक वृद्ध रहता था। वह इस वृद्धों का नाम कालकाशने कह सुनने का हुआ और वृद्धों के प्रभावसे वह दूसरे जन्ममें राम नामके पुत्र-रूपमें हुआ, उसका नाम था 'राम'। उसे पूर्वजन्मका स्मरण था। पुत्र होने का कारणों से वह राम और नरदजीके प्रभावसे वह जीवित हो गया। इस वृद्धों के प्रभावसे अपने इस वृद्धों के वह जन्म था।

राजाने पूछा—उसका सर्पहीवीवी का कैसे रूप ? और कोठे में उसे क्यों गरुड ? तथा जिस उपवास का हुआ, इसका विस्तारपूर्वक वर्णन करें ?

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महान् ! कुरुक्षेत्र नामकी नगरीमें राजा राम नामका था। एक दिन राम और पत्नी नामके दो भुवि उनके पास आये। वे दोनों उनके चित्र थे। राजाने अर्ध-पत्र, अश्विदि, उनका पूजन तथा सत्कार किया। उसी समय राजा की अस्वास्थ्य सुन्दरी शक्ति का वह आयी। पत्नीने उसे देखकर चिन्तित हो राजसे पूछा—'राम ! यह मुझी कौन है ?' राजने

कहा—'मुने ! यह मेरी कन्या है।' नरदजीने कहा—'राम ! अपनी इस कन्याको मुझे दे । और आप को दुर्लभ कर पाने का इच्छा हो, मुझे माँग लें।' राजने राजा कहा—'देव ! मुझे एक ऐसा दे जो जिस स्थानमें मृत-पुत्री (धृष्ट, काका) का करे, वह उसका सुवर्ण काय ।' बोले—'देव ! होय ।'

राम ने राजा कर अपनी कन्याको वर-अनुभवसे अर्धमात्र नरदजीसे उसका विवाह दिया। इस देवकर पर्वतमार्गके ओठ काटने लगे, अर्धों । नरदजीने बोले—'नरद ! तुमने इसके साथ लिया, अतः पुत्र मेरे लगे लोभों । राजने और जो तुमने इस पुत्र-प्रतिष्ठा दिया है, पुत्र को छोड़कर मत ।' नरदजीने कहा—'पत्नी ! तुम कार्यको जाने किन्तु मुझे राम दे हो ।' है, इसपर अर्धकर नहीं। वरपूर्वक बात-विता दे दे, स्वामी है। तुमने मृतपुत्री मुझे है, तुम या सलोने । राजने पुत्रको छोड़कर वह इच्छा जानेपर भी वपलोवारी से मर्त्य ।

इस प्रकार राम एक देव और राजा राजने हुए होकर दोनों भुवि अपने-अपने अभिमानों और चले गये। कदाचित् सत्ये पत्नीने राजको उपवास हुआ। राजदेवके समान अतिरिक्त रूपका और पूर्वजन्मका बात । नरदजीके वरदानसे जिस स्थानपर मृत-पुत्री अर्धकर चरित्राव कर, वह सुवर्ण हो जाता, इसलिये राजने उसका सर्पहीवीवी रक्ता। वह राजपुत्र सभी समझत था। राजने पुत्रके प्रभावसे

१-अतिरिक्त 'समस्त अर्थ है पूर्वजन्मके स्मरण करनेका शक्ति । कोठरीमें अनुभव लगे, मर्त्य और मन-मुट्ठा एवं प्रवृत्ति के अनुभूतिमें प्राप्त है—'संसारका स्वरूप' (१८) जिस में, करल आदिके अतिरिक्त (अर्धकरित, सुन्दरी-जगत्पति) ये राजा राजने, कोठरी-देव-प्रोक्षित अर्धकरितों काय भी और कालकाशनेको उदा राजने ।



राजकुल तत्र इन्दु—इन नामोंसे क्रमशः चन्दन, अमर, कर्पूर, दधि, दूर्वा, अक्षत तथा अनेक रत्नों, पुष्पों एवं फलों आदिसे सज्जमाके अर्घ्य है। प्रत्येक दिन जैसे-जैसे उन्नत्यवधि बृद्धि हो वैसे-वैसे अर्घ्यों में भी बृद्धि करनी चाहिये। अर्घ्य इस प्रकार देना चाहिये—

नमो नमोऽस्ति वास्तवे जायमानः पुनः पुनः ।  
विराजिसमयेनात् है देवतावापके इति ॥  
गगनकुलमसीध दुष्कलितकामदेवता ।  
आभासितविगाथेण रक्तपुत्र नमोऽस्तु ते ॥

(अमरक ११। ८४-८४)

‘हे समनुज ! अगर प्रत्येक वास्तव अपने-अपने स्वीकृत रूपमें अभिर्भूत रहते हैं। सम्पन्न देवताओंको अथवा ही इतिवृत्तके द्वारा उपस्थित करता है। आपकी उत्पत्ति वीरसागरके मन्थनसे हुई है। आपकी आकाशसे दिशा-विदिराई आभासित होती है। गगनकुली आप सत्यकपी देवीयामात्र दीपक हैं। अतः आपका स्तन है ।

चन्द्रमाको अर्घ्य निवेदित कर वह अर्घ्य ग्रहणको दे दे। अनन्तर घौन होकर भूमिपर पड़े। दान-दक्षिणा आदि देकर विदा करना चाहिये। पूज्य एवं बन्धुजनैक भी भोजन करे।

इस प्रकार तीन-तीन महीनेतक चार पात्र-कालीय जो सर्ववन्द्य भक्तिपूर्वक प्रसादित होकर अवधारण करता है, उसे चन्द्रदेव ज्ञान श्री, विजय आदि प्रदान करते हैं। जो कन्ध इस पात्रात्मक अनुष्ठान करती है, वह सुख धैर्यको प्राप्त करती है। दुर्गन्ध की सुगन्ध एवं स्वच्छ हो जाती है तथा निरपराध प्राप्त है। राजपार्श्व राज्य, धनधान्य वन और पुत्रकी पुत्र प्राप्त करता है। इस पात्रात्मक करनेसे स्त्रीका उत्तम कुलमें विवाह होता है तथा वह उत्तम प्रपत्नी, अम्भ, धान, अन्न आदि सुख पदार्थोंको प्राप्त करती है तथा पुत्र पुत्र, पुत्र, स्त्रीके स्वयं ही पूर्वजन्मके ज्ञानको भी प्राप्त कर लेता है।

(अध्याय १३)

‘सम्पूर्ण भोजन करनेवाली है पृथ्वी देवि ! आपके आश्रयमें मैं भोजन करना हूँ। मुझपर अनुकूल

### यमद्वितीया अपुनश्चर्चन-प्रत्यक्षी

‘भगवान्, श्रीकृष्ण बोले—समन् ! आपके पासके एक पक्षी द्वितीय तिथिको यमुनाने अपने घर अपने यमको भोजन कराया और यमलोकेमें बड़ा उत्सव हुआ, इसलिये इस तिथिकर नाम यमद्वितीया है। अतः इस दिन भाईको अपने घर भोजन न कर बहिनके घर जाकर प्रेमपूर्वक उसके हाथका बना हुआ भोजन करना चाहिये। उससे बल और पुष्टिकी वृद्धि होती है। इसके बदले बहिनको स्वर्णालंकार, वस्त्र तथा इन्द्र आदिसे संतुष्ट करना चाहिये।

लिये अगर आपके अमृतके समान उत्तम खादपुत्रक भोजन है।’

अनन्तर एक तथा पञ्चमस्त भोजन करे। भोजनके बाद आचमन करे और मङ्गलार्चन स्पर्श कर चन्द्रमाका करते हुए भूमिपर ही पालन करे। द्वितीयाके दिन पालन एवं सम्पन्नित इतिवृत्त भोजन करना चाहिये। तृतीयाको नीवार (सिन्धु) तथा चतुर्थीको दूधसे बने पदार्थोंको भक्षण करना चाहिये। पञ्चमीको पुष्पपुत्र वृक्षराज (सिन्धु) भक्षण करना चाहिये। इस महाव्रतमें भार्वा, चाबल, गाम्भन्य वृक्ष तथा अन्य गन्ध पदार्थ एवं अर्घ्यपत्र प्राप्त वन्य फल प्रशस्त करने योग्य हैं। अनन्तर प्रातःकाल ज्ञानकरे पितृदेव भोजन करे। दान-दक्षिणा आदि देकर विदा करना चाहिये। पूज्य एवं बन्धुजनैक भी भोजन करे।

इस प्रकार तीन-तीन महीनेतक चार पात्र-कालीय जो सर्ववन्द्य भक्तिपूर्वक प्रसादित होकर अवधारण करता है, उसे चन्द्रदेव ज्ञान श्री, विजय आदि प्रदान करते हैं। जो कन्ध इस पात्रात्मक अनुष्ठान करती है, वह सुख धैर्यको प्राप्त करती है। दुर्गन्ध की सुगन्ध एवं स्वच्छ हो जाती है तथा निरपराध प्राप्त है। राजपार्श्व राज्य, धनधान्य वन और पुत्रकी पुत्र प्राप्त करता है। इस पात्रात्मक करनेसे स्त्रीका उत्तम कुलमें विवाह होता है तथा वह उत्तम प्रपत्नी, अम्भ, धान, अन्न आदि सुख पदार्थोंको प्राप्त करती है तथा पुत्र पुत्र, पुत्र, स्त्रीके स्वयं ही पूर्वजन्मके ज्ञानको भी प्राप्त कर लेता है।

यदि अपनी सगी न हो तो भाईकी कन्या, माताकी पुत्री, बुआकी बेटी—ये भी बहिनके हैं, इनके हाथका बना भोजन करे। पुत्र अर्घ्यपत्रको बहिनके भोजन करे, उसे धन, वस्त्र, लक्ष्मण, धर्म, अर्थ अप्रीति सुखकी प्राप्ति होती है।

रामा बुधिरिने पूर—भगवान् ! आपने बताया कि भोजन साधन गृहस्थाश्रम है, वह गृहस्थाश्रम स्त्री और



पुरुषसे ही प्रतिष्ठित होता है। पञ्चोद्गीन पुरुष और पुरुषोद्गीन नारी धर्म आदि साधन सम्पन्न करनेमें समर्थ नहीं होते, इसीलिये आप कोई ऐसा ■ कर्तव्य जिसके अनुष्ठानसे उन्मत्तका विबोध न हो।

**भगवान् श्रीकृष्ण बोले—**महाराज ! तज्जन ■ कृष्ण पञ्चमी ■ अनुष्ठानम्बन नामक व्रत होता है। इसके करनेसे की विषय नहीं होती और पुण्य पत्नीसे हीन नहीं होता। इस तिथिके ■ भगवान् विष्णुका जप्यापर अनेक उपचारोद्घारा पूजन ■ करने चाहिये। इस दिन उपवास, नातव्रत अपना अमर्षित-व्रत करना चाहिये। प्रातः दिन दही, अमृत, कन्द-मूल, फल, पुष्प, जल आदि सुगन्धि पत्रमें रक्ताकर निम्नमन्त्रोंसे पढ़ते हुए चन्द्रमाको ■

### मधुकुन्तीया एवं ■ सुतीया-व्रत

**सुविष्टितने पूजा—**भगवान् ! मधुक-वृक्षका अन्तर्ग प्रकण करनेवाली भगवान् ■ पार्श्व ■ गौरीकी लक्ष्मी, सरस्वती आदि देवियोंमें किस कारणसे अर्चन की, इसे आप बतायें।

**भगवान् श्रीकृष्ण बोले—**प्रार्थन ■ सङ्ग-मन्त्रसे मधुक-वृक्ष ■ हुआ। ■ सौभाग्य प्राप्त ■ तथा सभी ■ दुः कर्मोंवाले उस वृक्षकी मूलोत्पत्तिस्थितिमें पृथिवीका स्थापित किया। ■ आदि मन्त्रोंसे स्तुति भगवती ■ प्रसुरितता सुन्दर वृक्षका आश्रय प्राप्त ■ देवता देवताओंने अपनी अनीह इच्छाओंकी पूर्ति ■ अनेक उपचारोंसे पूजा की। स्वयं लक्ष्मी, सरस्वती, मन्मथी, गङ्गा, रोहिणी, रम्भा तथा अरुन्धती आदिने भी मिनकपूर्वक पूजा की। भगवती गौरीने प्रसन्न होकर उन्हें अभिमत फल प्रदान कीं। फलपुन मासके शुक्ल पञ्चमी तृतीय तिथिको इनकी उन्नयन हुई थी। इसीलिये फलपुनके शुक्ल पञ्चमी तृतीया तिथिके ■ मधुवनमें जाकर मधुक वृक्षके नीचे बैठकर निश्चित, अष्टमुकुटसे सुवर्णित, तमस्कृत तथा गोधने ■ आकृष्ट, ■ भगवती पार्श्वकी प्रतिमाका ■ करते हुए गन्ध, पुष्प, दीप, लाल कन्दन, केशर, मधुर द्रव्य, स्वर्ण, मणिद्वय आदिसे पूजाकर देवीसे इस प्रकार अर्चना

देन चाहिये—

मधुकुन्तीयासङ्ग ■ पुष्पाभिरुपमनेऽम्ब ।

वन्दयिष्यमिहानेन स्थानुः नमोऽस्तु ते ॥

(उत्तरार्ध १५।१८)

इस विधानके साथ जो व्यक्ति चार मासक व्रत करता है, उसके कभी भी बी-विषय प्राप्त नहीं होता एवं उसे सभी ■ ऐश्वर्य प्राप्त होता है। जो ■ भक्तिपूर्वक इस व्रतको ■ है, वह तीन मन्त्रक विषय और दुर्भगा-नहीं होती। ■ अनुष्ठ-द्वितीयका ■ सभी कर्मनाश और उत्तम ■ देवकल्प है, ■ इसे ■ चाहिये।

(अध्याय १४-१५)

■ लिये आर्चना करे—

■ सुविष्टित देवपूज क भुविष्ठित ललिता ■

■ गौरी सौभाग्य मे प्रपन्न ॥

सौभाग्य मे प्रपन्न सुप्रसन्नयाः सदा ।

अनीकते कृते चाम कृतवर्जजन्मनि ॥

(उत्तरार्ध १५।१-४)

‘अनीकव्रत है ■ । अर्चना नाम ललिता तथा उक्त है। ■ देवताओंकी अनुष्ठानकया एवं सभीको अनुष्ठित कर्मका ■ और ■ आधुनिक है। आप मुझे सौभाग्य प्रदान करें। आप मेरे सौभाग्य प्राप्त करें। दूसरे जन्मों में वे मेरा सौभाग्य अनुष्ठित रहे। आप सर्वदा मुझपर प्रसन्न रहें।’

अन्तर कुल, औरक, लज्ज, गुह, धी, पुन्यमालाओं, कुकुम्भ, गन्ध, अमर, कन्दन एवं सिंदूर आदि तथा पार्श्वोंसे और अनेक देवोत्पन्न अंगोंसे, पुष्पा, तिल और ताम्बूल, फलपुन मोटाका ■ मधुक-वृक्षकी पूजा करे। उसकी प्रदक्षिणा कर लक्ष्मीको दक्षिणा दे। जो कथा इस उक्त तृतीयकाको करती है वह तीनों ■ दुष्पाप भगवान् विष्णुके समान पति प्राप्त करती है। राजन् ! मेरे द्वारा ■ यह व्रत चिरकालक प्रसिद्ध रहेगा। इस व्रतको अभिवादीके सम्पन्न प्रथम महर्षि कश्यपने कहा था। जो की

इस व्रतका आचरण करेगी, वह नीरोग, सुन्दर दृष्टिसम्पन्न तथा अङ्ग-प्रत्यङ्गसे शोभायुक्त होकर सब कर्त्तव्यकर्मों में भागी रहने लगेगी ।  
 [ १० ] विधिपूर्वक पूजा—इस व्रतसे इच्छित फल प्राप्त करने की वहाँ अनेक कर्त्तव्यकर्म अपने-पक्षिके समय दिव्य भोगोंको प्राप्त कर आठों सिद्धियोंसे सम्पन्न हो जायेंगे ।

**बुधिविहित पूजा—**भगवन् ! मेघपाल-व्रत काय और कैसे अनुष्ठित होता है, इसका क्या फल है तथा मेघपाली क्या वैसी होती है ? इसे बतलानेकी कृपा करे ।

**भगवान् श्रीकृष्ण बोले—**अस्मिन् [ ११ ] तृतीया तिथिके भक्तिपूर्वक विनये अथवा पुष्पकोषे सङ्कल्पिते प्रातःकाले विनये मेघपालीको [ १२ ] (चन्द्र, गोधूम, धान, तिल, कंगू, [ १३ ] (साली) तथा चक्र) और अङ्कुरित गोधूमके साथ [ १४ ] तिल-चक्रके विनये अर्घ्य प्रदान [ १५ ] चाहिये । मेघपाली तन्मूलके साधन पत्त-वाली, मङ्गरीयुक्त एक लाल लता है, यह पश्चिमदिशाओंमें, ताम्र-मार्गमें होती है तथा पर्वतोंपर प्राक होती है । व्यापारसे [ १६ ] विमानेवाले वैद्यप्राण धान्य, तेल, गूद, कुंकुम, स्वर्ण, तथा

पाद (चूरा, छत्र, कपड़ा, जैगूटी, कम्पल्लु, आसन, बर्तन और चोज्य कल) आदिसे इसकी पूजा करते हैं । मेघपालीके [ १७ ] जाने-अनजाने जो भी पाप होते हैं वे नष्ट हो जाते हैं । जो विनयेकी शुभ देश या स्थानमें उत्पन्न मेघपालीके फल, गन्ध, पुष्प, अक्षत, नरियेल, कजूर, अनार, कनेर, [ १८ ] दूध, दही और नये अङ्कुरवाले धान्य-समूहसे पूजा करनी [ १९ ] तथा लाल [ २० ] उसे आच्छादित कर और अभीरसे विष्कम्भित कर अर्घ्य देना चाहिये । [ २१ ] अर्घ्य विधान् बाह्यपक्षको स्मरण [ २२ ] देना चाहिये । इस प्रकार [ २३ ] पूजा [ २४ ] करो या पुष्प पाप ऐश्वर्यको प्राप्त करते [ २५ ] तथा सुख-सौभाग्यसे [ २६ ] [ २७ ] पार्यत्नेकमें अधिकृत रहते हैं । अन्तमें विधानपर अक्षर्य हो विष्णुलोकको प्राप्त करते हैं और अपने सात कुलमेंके निःसंदेह नरकसे [ २८ ] पहुँचते हैं । [ २९ ] भयसे फलविधिसे सम्पन्नित अर्घ्य मेघपालीको स्मरण करता है, [ ३० ] [ ३१ ] [ ३२ ] गह [ ३३ ] धारि है ।  
 जैसे सूक्ष्म छद्म अन्धकार नष्ट हो जाता है ।

(अध्याय १६-१७)

## पञ्चाग्निसायन नामक रत्न-तृतीया

### गोपद-तृतीयाव्रत

**बुधिविहित पूजा—**भगवन् ! इस तृतीयाव्रतसे [ १ ] प्रत्येक द्वारा विनयेका गृहसाधन सुख-लभसे बने और उन्हीं पत्तिकों भी प्रीति प्राप्त हो, उसे बताइये ।

**भगवान् श्रीकृष्णने कहा—**एक समय [ २ ] लम्बाओंसे आच्छन्न, विविध पुष्पोंसे सुशोभित, मुनि [ ३ ] किशोरोंसे सेवित तथा गान और नृत्यमें परिपूर्ण स्थानीय कैलस-शिखरपर मुनियों और देवताओंमें अङ्कुर य [ ४ ] और भगवान् शिव बैठे हुए थे । उस समय भगवान् [ ५ ] पार्वतीसे पूछा—'सुन्दरि ! तुमने कौन-सा ऐश्वर्य कर्म अत किया [ ६ ], जिससे आज तुम मेरी वामाङ्गीक कर्णसे अङ्गण प्रिय [ ७ ] गयी हो ?'

**पार्वतीजी बोलीं—**नाथ ! मैं बारम्बार-कर्मसे रत्नप्राप्त किया था, उसीके फलस्वरूप आप मुझे पत्तिकपमें प्राप्त हुए हैं

[ ८ ] मैं सबी विनयेकी [ ९ ] तथा [ १० ] अर्थाङ्गिनी भी [ ११ ] गयी हूँ ।

**भगवान् ईश्वरने पूछा—**भो ! मनीके सौख्य प्रदान करनेका यह रत्नप्राप्त कैसे किया जाता है ? पित्तके यहाँ इसे तुमने किस [ १२ ] अनुष्ठित किया था ? उसे बताओ ।

[ १३ ] बोलीं—देव ! एक [ १४ ] मैं बाल्यकालमें अपने पिताके घर [ १५ ] सप्त बीटी थी, उस समय मेरे पिता हिमवत् तथा माता घनाने मुझसे कहा—'पुत्रि ! तुम सुन्दर तथा सौभाग्यवर्धक [ १६ ] अनुष्ठान करो, उसके आरम्भ करने हो तुममें सौभाग्य, ऐश्वर्य [ १७ ] महारोगी-पदकी प्राप्ति हो जायगी । पुत्रि ! न्येष्ट [ १८ ] [ १९ ] तृतीयाव्रतसे ज्ञान कर इस व्रतपर नियम ग्रहण करो और अपने चारों ओर पञ्चाग्नि जन्मदित करो अर्थात् गृहपत्याग्नि, दक्षिणाग्नि, आहवनीय तथा

१-इसमें कल्याणकी देवता सबका इसकी पूजाको विशेष मान्य [ १ ] [ २ ] है । विशेषकर अम्बिका [ ३ ] उसके सुखमें ऐसे [ ४ ] प्रकरण आये हैं । ओषधीय देवता [ ५ ] जिससे योग, दुःख, पान-प्रदानका सब-सब कार्यकी विधि [ ६ ] होती है ।

सम्पत्ति और पाँचवें तेषःस्वरूप सूर्यप्रकाश सेवन करो । इसके बीचमें पूर्वकी दिशकी ओर मुकाम बैठ जाओ और मृगवी, जट, चत्कल आदि चरान कर यह पुष्पश्रेणी एवं सयौ अलङ्कारोंसे सुशोभित तथा चमत्के [REDACTED] मन्त्रसतीक ध्यान करो । पुत्रि ! मन्त्रालम्बी, मन्त्रालम्बी, मन्त्रालम्बी, महामति, मन्त्रा, यमुना, सिन्धु, जला, र्म्यन्, मन्त्र, सरस्वती तथा वैतरणीके रूपमें ये ही महामन्त्री सर्वत्र [REDACTED] हैं । अतः तुम उन्हींकी आराधना करो ।

अथो ! मैंने मन्त्राके द्वारा चत्कली गयी [REDACTED] प्रतिपूर्वक रम्भा-(गौरी) [REDACTED] अनुग्रह दिव्य [REDACTED] उसके प्रभावसे मैंने अपने [REDACTED] रिपु ।

भगवान् श्रीकृष्ण पुनः बोले—कौनोय ! लोकाजने भी इस रम्भाप्रकारके आचरणसे महामन्त्रि आगमनको प्राप्त [REDACTED] और ये संसारमें पूजित हुई । जो कोई स्त्री-पुरुष इस रम्भाप्रकारसे करेगा, उसके कुलकी वृद्धि होगी । उसे काम सखी तथा सम्पत्ति [REDACTED] होगी । शिवोंको अस्त्र सौभाग्यकी तथा सम्पूर्ण वरमन्त्राओंको सिद्ध करकेबले श्रेष्ठ गार्हपत्य-सुक्तकी प्रति [REDACTED] और [REDACTED] उन्हें [REDACTED] किन्तु [REDACTED] शिवलोककी [REDACTED] होगी ।

इस व्रतका संक्षिप्त विधान इस प्रकार है—प्रतीको एक सुन्दर चम्पक बनाकर [REDACTED] गन्ध-पुष्पादिसे सुशोभित तथा अलङ्कृत करना चाहिये । तदनन्तर मन्त्राप्रमे महदेवी लक्ष्मीकी पञ्चाशक्ति स्वरूपादिसे निर्मित प्रतिमा स्थापित करनी चाहिये और गन्ध, पुष्प, धूप, दीप तथा अनेक प्रकारके नैवेद्योंसे उनकी पूजा [REDACTED] चाहिये । [REDACTED] 'सम्पुक्त सौभाग्याहुक—और, कर्तुमुद्र, अपुष्प, फूल, पवित्र मिश्रण (सेम), अम्भ, [REDACTED] तथा [REDACTED] क्रियेदित करना चाहिये । चम्पकान्तरालमें सूर्यस्तक देखीके सम्पुक्त बैठा रहे । अनन्तर लक्ष्मीको प्रणम कर यह मन्त्र कहे—

वेदेतु सर्वासावेतु दिवि धूमै धरातले ।  
शुभः कृतक वस्तुसे [REDACTED] इन्द्रिया रक्षितः स्निग्धः ॥  
त्वे भक्तिरत्वं स्वया स्वहृत् त्वे सखिनी सरस्वती ।  
पति देहि गुहं देहि [REDACTED] देहि नमोऽस्तु ते ॥

(उत्तरपर्व १८।२३-२४)

'सम्पूर्ण वेदादि वास्तवोंमें, स्वर्गमें तथा पृथ्वी जलमें कहीं

भी वह कभी नहीं सुन गया है और न ऐसा देखा ही गया है कि स्निग्ध शक्तिसे रक्षित है । हे पार्वती ! आप ही शक्ति हैं, आप ही [REDACTED] सावित्री और सरस्वती हैं । आप मुझे पति, श्रेष्ठ गुरु तथा धन प्रदान करें, आपको नमस्कर है ।'

इस प्रकार पुनः-पुनः उन्हें प्रणाम करते देखीसे श्रमा- [REDACTED] करें । अन्तर सप्तमीक दशमी ब्राह्मणकी सभी [REDACTED] पूजा करके दान देना चाहिये । सुवामिनी शिवोंको नैवेद्य [REDACTED] प्रदान करना चाहिये । [REDACTED] सभी कार्य सम्पन्न कर पाप-दोषोंके लिये क्षमा-प्रार्थना करें । अगले दिन पतुर्गोत्रोंके ब्राह्मण-दम्पतीयोंको पक्षु रक्षोंसे समन्वित भोजन [REDACTED] पूर्ण करना चाहिये ।

पुनः । चादप्य मन्त्रके [REDACTED] पक्षकी सुश्रुति तथा वस्तुकी शिवोंको प्रतिष्ठा [REDACTED] सन्तक हट करना चाहिये । [REDACTED] अथवा पुनः प्रथम कालसे निवृत्त होकर अक्षत और पुष्पमाला, पुष्प, चन्दन, [REDACTED] (पीडी) [REDACTED] पूजा करें । उसके शृंग [REDACTED] शिवोंको अलङ्कृत करें । [REDACTED] भोजन कराकर तुम कर दें । स्वयं तेरा और लवण [REDACTED] क्षार वस्तुओंसे रक्षित जो अक्षीके द्वारा सिद्ध न किया गया हो उसका भोजन करें । वनकी [REDACTED] तथा [REDACTED] गोश्रेष्ठोंके उनकी तुष्टिके लिये घास दें और उन्हें निम्न मन्त्रसे अर्घ्य प्रदान करें—

यन्ता सख्या सुश्रिता [REDACTED] स्वसाधिव्यावायव्यतस्त नाधिः ।  
[REDACTED] शिविलुके कर्माय यः तामनागान्धिति बधिह ॥  
(अ० ८।१०९।१५)

[REDACTED] निम्न मन्त्रसे गौरी प्रार्थना करें—  
मन्त्रो मे अथाः सन्तु मन्त्रो [REDACTED] पूजतः ।  
मन्त्रो [REDACTED] इत्ये सन्तु गन्तु मन्त्रो [REDACTED] ॥  
(उत्तरपर्व १९।१४)

पक्ष्मीको श्रेष्ठरीहण होकर गायके दुध, दही, चामरल्लव पीत, फल तथा शक्करा भोजन करें । शशियें सेवत होकर शिखर करें । प्रतःकाल चम्पकशक्ति स्वरूपादिसे निर्मित गोव्यद (गव्यका सूर) [REDACTED] गुहसे निर्मित गोवर्धन पर्वतकी पूजा कर ब्राह्मणोंको 'वेदिन्तः प्रीयताम्' ऐसा कहकर दान करें । [REDACTED] अन्त्युक्तोंके प्रणम करें ।

इस व्रतका भक्तिपूर्वक करनेवाला अती सौभाग्य,

लक्षण, धन, धान्य, यश, उत्तम सेतान आदि सभी पदार्थोंको प्राप्त करता है। उसका घर, गौ और कहणोंसे परिपूर्ण रहता है। मृत्युके बाद वह दिव्य स्वर्ग्य धारणकर दिव्यलोकमेंसे विभूषित हो विमनमें बैठकर सर्वलोक जाता है एवं स्वर्गमें

दिव्य सब कर्त्तव्य निवासकर फिर विष्णुलोकमें जाता है। इस गोपद विराजितकर कर्ता गौ तथा गोविन्दकी पूजा करनेवाला और गोरस आदिकर भोजन करते हुए जीवनयापन करनेवाला उत्तम भोक्तृकर्मसे प्राप्त करता है। (अध्याय १८-१९)

### हरकालीप्रति-पञ्चा

**राजा युधिष्ठिरने पूजा—** भगवान् ! भगवती हरकाली-देवी कौन है ? पूजन करनेसे दिव्योक्तें क्या प्राप्त होती हैं ? इसका आप वर्णन करें ?

**भगवान् श्रीकृष्ण बोले—** महाराज ! देव एक कल्पमें धरती पर पतली। उनका कार्य यह जलकल्पनके समान करता था। उनका विवाह भगवान् शंकरके साथ हुआ। विवाहके बाद भगवान् शंकर भगवती के साथ उत्तम भूयः रहने लगे। एक समय भगवान् शंकर भगवान् विष्णुके साथ अनेक समय मध्यमसे विराजमान थे। उस समय ईश्वर शिवजीने भगवती कालीको बुलाया और कहा—‘देवि ! गौरी ! यहाँ आओ।’ शिवजीका यह आग्रह सुनकर भगवतीको बहुत क्रोध आया और वे यह कहकर रुदन करने लगी कि ‘शिवजीने मेरा कृष्णवर्ण देखकर पहिनासा किया है और मुझे गौरी कहा है, जल ! अथ मैं अपनी इस देहको अग्निमें प्रज्वालित कर दूँगी।’ भगवान् शंकरने उन्हें जलमें डालकर रोकनेका प्रयत्न किया, परन्तु देवीने अपनी देहकी हरितवर्णप्रति कल्पि करी दूर्वा आदि घासमें स्थापकर देहको अग्निमें हवन कर दिया और उन्होंने पुनः शिवलोककी पुत्री-रूपमें गौरी नामसे प्रदुर्भूत शिवजीके कण्ठमें निवास किया। इसी दिनसे जगत्पुत्र श्रीभगवतीका नाम ‘हरकाली’ हुआ।

महाराज ! पश्चात्तः भगवती दत्त पक्षकी मूर्तिका निधिसे एक प्रकारके नये धान्य एकत्रकर उनपर अंकुरित हो घासमें निर्मित भगवती हरकालीकी मूर्ति स्थापित करे और गन्ध, धूप, दीप, मोदक आदि नैवेद्य भक्ति-भक्तिके उपकरणोंसे देवीका पूजन करे। रात्रिमें गीत-नृत्य आदि उत्सवकर जगत्पुत्र करे और देवी हरकालीको इस मन्त्रसे प्रणम करे—

हरकालीसुखो  
ये लक्ष्मीसक दुर्विकले प्रपन्नोऽस्मि नमो नमः ॥

(अनूप २०।२०)

‘भगवान् शंकरके पुत्रने उत्पन्न शंकरप्रिये ! आप भगवान् शंकरके शरीरमें निवास करनेवाली हैं, भगवान् शंकरकी मूर्तिमें स्थित रहनेवाली हैं, मैं आपकी शरण हूँ, आप मेरी रक्षा करें। आपके बार-बार प्रणाम है।’

इस प्रकार देवीका पूजनका बातःकरत सुनसिनी किर्पा यह उत्सवमें गीत-नृत्य करते हुए, प्रतिमाके पवित्र जलप्राप्तके समीप ले जाये और इस मन्त्रको पढ़ते प्रियकरे—

अर्चनीयसि यथा यन्त्रा गच्छ देवि धृतालयम् ।  
इत्यन्ते त्रिवे गौरी पुनरागमनाय न ॥

(अनूप २०।२२)

‘हे हरकाली देवि ! मैं धार्तिकपूर्वक आपकी पूजा की है, हे गौरी ! आप पुनः आगमनके लिये इस समय देवलोककी प्रस्थान करें।’

इस विधिसे प्रतिवर्ष, जो श्री अक्षय्य पुरुष व्रत करता है, वह अक्षय्य, दीर्घायु, सौभाग्य, पुत्र, पौत्र, धन, भक्त, ऐश्वर्य आदि प्राप्त करता है और सौ वर्षतक संसारका सुख भोगकर दिव्यलोक प्राप्त करता है। महादेवके अनुग्रहसे वहाँ वीरभद्र, महाकाल, विनायक आदि शिवजीके गण आश्रय रहते हैं। श्री श्री श्री धार्तिकपूर्वक यह हरकाली-व्रत करने है और रात्रिके समय गीत-वाद्य-नृत्यसे जगत्पुत्र पर उत्सव पढ़ाते हैं, वह अपने पतिव्रती अति प्रिय होती है।

(अध्याय २०)





## अविष्कृतकृत्य-प्रश्न

राजा युधिष्ठिरने कहा—भगवन् ! जिस व्रतके करनेसे पत्नी पतिसे विद्युत् न हो और अन्त्ये शिवलोकमें निवास करे तथा जन्मान्तरमें भी विधवा न हो ऐसे व्रतका आप वर्णन करें।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज ! इसी विधवाके भगवती पार्वतीजीने भगवन् शिवसे और अन्नवर्षीने मर्त्य पतिव्रतीसे । या । उन स्त्रियों को कहा, लड़ी व्रतको सुनाता हूँ।

मार्गशीर्ष मासके शुक्ल पक्षकी द्वितीयाको । चरित्रवाली ली शरीरमें पामस भक्षण कर शिव और पार्वतीको दण्डवत् प्रणाम करे। तुलसी शिकिमें प्रतः मूत्ररखी दाखीमें दण्डाधान । करे। एकलाल । पार्वतीकी प्रतिमा बनाये। उन्हें एक ठाक पाखी । कर धिधिपूर्वक उलख पूजन करे। । कर शिव- । कीर्तन करती हुई भूमिपर शयन करे। पशुकीसे प्रतः ठठकर दक्षिणके साथ उस । करकर संकुल करे। ब्राह्मण दम्पतीकी भी व्रतकाता पूज करे।

इस प्रकार प्रतिमास व्रत एवं पूजन करना चाहिये। वरुण षष्ठीनेमें श्रमशः शिव-पार्वतीकी इन व्रतको पूज । चाहिये—मार्गशीर्षमें शिव-पार्वतीके नामसे, पार्वती । और पार्वती नामसे, माघमें पद्म और भवानी नामसे, पञ्चमामे महादेव और उमा नामसे, वैशाखमें शंकर और ललिता नामसे, वैशाखमें स्वर्ण और लोलेन्द्र नामसे, ज्येष्ठमें भीमर और एकादशी नामसे, आश्विनमें शिवलोक पशुपति और ।

## उत्कर्षोत्कर्ष-व्रतकी विधि

महाराज युधिष्ठिरने कहा—भगवन् ! जिस व्रतके करनेसे किशोको अनेक गुणवन् पुत्र-पौत्र, सुवर्ण, धन और सौभाग्यकी प्राप्ति होती । पति-पत्नीका परस्पर । होत, उस । वर्णन करें।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज ! सभी व्रतोंमें एक । है, जो उत्कर्षोत्कर्ष-व्रत । है, इस व्रतको । शिवकी अनेक संतान, दास, दासी, आभूषण, और सौभाग्यकी प्राप्ति होती है। इस व्रतको अक्षर, ।

नामसे, कावर्षी और सुता नामसे, भाद्रपदमें भीम और । नामसे, अक्षिमें शिव और दुर्गा नामसे तथा । ईश्वर । शिव नामसे पूज । चाहिये।

षष्ठीनेमें भगवान् शिव एवं पार्वतीकी प्रसन्नलोक शिवे श्रमशः—शैल कमल, कनेर, विस्वपत्त, पल्लव, कुम्भ, मल्लिकार्जुन, शैल कमल, तगर, द्रोग । पार्वती—इन पुष्पोंसे पूज करनी चाहिये। इस प्रकार मार्गशीर्षी व्रत उत्कर्षोत्कर्ष व्रतका उद्घाटन करना चाहिये। । सुवर्ण, कमल, दो वक्क, ध्वजा, दास । वैशाख शिवकी । भारती करनी चाहिये और । पुजनपुष्पका । पुजनकर सुवर्णमय शिव-पार्वतीकी मूर्ति बनवाकर उन्हें त्र्यम्बकमें स्थापित कर उसी पक्षमें चौसठ मोती, चौसठ मूंग, चौसठ पुष्पपत्र रखकर उस पक्षमें बहारे डककर आचार्यको समर्पित करना चाहिये। आचार्यका जलपूर्ण कलश, फाता, झूता और सुवर्ण । दासों देव । दीप, अम्ब और कृपणको भक्त । उस दिन निपना नहीं जाने देव । । उक्त न हो तो । कम करे, किन्तु शिवलोक न करे। इस व्रतके करनेसे धन, भीमाय, धन, आयु, पुत्र और शिवलोककी प्राप्ति होती है तथा हाथकीसे कभी विच्छेद नहीं होता। इस व्रतके करनेका प्रतिज्ञा ली कभी । पति-पुत्र, सौभाग्य और धनसे विमुक्त नहीं होती और शिवलोकमें निवास करती है।

(अध्याय २२)



मैत्री, अक्षि, शैल, ।, ऐतिमी, दामपती, । तथा अन्तुष अति सखीने किन्ध व और अन्य । उक्त पित्र भी इस व्रतको करती है। भगवती पार्वतीने सौभाग्य । करोष्य व्रतन करनेवाले और दक्षिण । व्याधिका व्रत करनेवाले इस । दुर्गम और कुरूप तथा निर्धन शिवकी शिवकी दृष्टिसे मनुष्यलोकमें प्रथम किन्ध ।

। इस व्रतमें मार्गशीर्ष । पक्षकी तुलसी शिकिमें निम्नपूर्वक उपास करे। प्रतः ठठकर ।

गङ्गा आदि नदियोंमें स्नान कर शिव-पार्वतीका ध्यान करने लगे।  
यह मन्त्र पढ़े और भगवान् शंकरकी आर्चना की—  
श्रीललिताकी पूजा करे—

मयो मयतो देवेभ्यः त्रयोदशैर्देवैः ।

महादेवि नमस्तेऽस्तु इत्येकैकैर्वादिभिः ॥

(उत्तरार्ध २३।१२)

‘भगवती उमाको अपने आधे भागमें धारण करनेवाले हे  
देवदेवेश्वर भगवान् शंकर ! आपके कारन्धार नयनका है।  
महादेवि ! भगवती पार्वती। आप भगवान् शंकरके आधे  
शरीरमें निवास करनेवाली हैं, आपकी नमस्कार है।’

पुनः धर आकर शरीरकी रुद्धिके लिये पद्मगण-पद्म करे  
और प्रतिष्ठाके दक्षिण भागमें भगवान् शंकर और बायें भागमें  
भगवती पार्वतीकी भावना कर मन्त्र, पुष्प, गुग्गुलु, धूप, दीप  
और घीमें पकाये गये अन्नको प्रतिष्ठापूर्वक पूजा करे।  
इसी प्रकार करके महीनेतक पूजनकर प्रसादात्मा हो आकाश  
होवाचन करे। भगवान् शंकरकी चाँटीकी लक भगवती  
पार्वतीकी सुवर्णकी मूर्ति बनवाकर दोनोंको चाँटीके कुम्भपर  
स्थापित कर वक्ताभूषणोंसे अलंकृत करे। अन्तर चन्दन, लाल

पुष्प, छेत लक आदिमें भगवान् शंकरकी और कुंकुम, रक्त  
लक आदिमें भगवती पार्वतीकी पूजा करनी  
चाहिये। फिर शिवभक्त वेदकवी, शास्त्रविद ब्राह्मणोंको भोजन  
करना चाहिये। सभीको दक्षिण देकर उनकी प्रशिक्षणा करके  
‘वत् सन्ध पठन्तु चाहिये—

उमादेव्यै सौम्यैः शिवैः शिवैः शिवैः ।

शिवैः शिवैः शिवैः शिवैः शिवैः ॥

(उत्तरार्ध २३।१३)

‘सभी लोकोंके शिवपूजक भगवान् शिव एवं पार्वती की  
इस प्रकार अनुष्ठानसे मुक्ति प्राप्त होगी।’

इस प्रकार धर्मना शिवधर्मज्ञ ब्राह्मणको सभी  
देकर बतकों समझ करे। इस बतको जो भी  
धीनपूर्वक करता है, वह सभी एक कल्पतक  
निवृत्त करता है। तदनन्तर मनुज-लोकमें उत्तम कुलमें जन्म  
प्राप्तकर कर्म, ध्यान, पुत्र आदि सभी पदार्थोंको प्राप्त कर  
बहुत दिनेतक अपने पतिसे साथ सांसारिक सुखोंको भोगता  
है, उनका अपने पतिसे कभी वियोग नहीं होता और अन्तमें  
वह शिव-संपुष्प प्राप्त करता है। (अध्याय २३)

### रामानुजीय-अष्टमः पादः

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—उम्ह ! अब मैं नयी  
धातुके गणक, पुत्र एवं भीष्माग्र्यद सभी  
उपनामक, पुष्प तथा सौक्य करनेवाले रामानुजीय-  
व्रतका वर्णन करता हूँ। जो व्रत कर्मियोंमें उपनाम  
तथा ऐश्वर्यको प्रदान करनेवाला है। भगवान् शंकरने  
देवी पार्वतीकी प्रसन्नताके लिये इस व्रतकी जो विधि बतलायी  
थी, उसे ही मैं कहता हूँ।

अष्टोत्तु श्री मार्गशीर्ष मसके पक्षकी सुदीप्त  
त्रिंशत्तमे प्रातः उठकर दत्तवाचन आदिसे निवृत्त हो प्रतिष्ठापूर्वक  
उपवासका ग्रहण करे। वह सर्वप्रथम अन्न-पान  
करनेके लिये देवीसे प्रणाम करे—

सर्वस्वम् नमस्कृत्य नमोऽर्पयामि ।

कृतिभ्यामिदं यत्नं यत्नैः ।

तद्विष्णवे नमः यत्नं यत्नैः ।

(उत्तरार्ध २४।१)

‘देवि ! मैं पूरे एक वर्षतक इस तृतीया-व्रतका आचरण  
और दूसरे दिन पारण करूँगी। अब देवी कृपा करे, जिससे  
इन्हीं पदों द्वारा व्रत हो।’

इस प्रकार श्री पुनः व्रतको संकल्प करे और मनमें  
शिव का व्रत करे। देवी पार्वतीका पूजन करने  
करे। देवी पार्वतीका पूजन करने  
करे। दूसरे दिन प्रातःकाल शिवान्  
शिवभक्त भोजन कराये और दक्षिणोंके रूपमें  
सुवर्ण एवं लाल चन्दन करे। यथाशक्ति गौरीश्वर भगवान्  
प्रसादपूर्वक भोग नियोजित करे।

उम्ह ! व्रत करनेवाले सुधीयों इसी विधिसे उपवास एवं  
पूजनकर रश्मि गेमुलका प्रदान कर प्रभातकालमें ब्राह्मणोंको  
भोजन कराये और दक्षिणोंके रूपमें उन्हें अपनी शक्तिके  
अनुसार सोन तथा औरक दे। इससे धन्यत्व तथा  
सर्वोत्तम फल प्राप्त होता है और वह कल्पपर्यन्त इन्द्रलोकमें

निष्कासक ४१८२२ दिव्यस्त्रोकव्ये प्राप्त करता है।

■ मासकी नाल तृतीयकको 'सुटेनी' नामको पगवाडी पार्यतीका पूतन कर राखिने गोपपद्धत प्रदान कर अर्कोले हो खोये । प्रातः बरपनी ~~काल~~ अनुसहर केसर तथा खोन नालको दानमें दे । इसरो बालको फिरकास्तक निम्नस्तेकमें निवास करनेको पक्षार्थ पगवाङ्ग संकाको सम्मुख (मोका) ■ प्राति होली है ।

फरलतुन नासके मुळ पकळी तुलीकळे 'गैरी' नामने  
 देशी फर्लीकळ फुजन कर रल्ले [ ] दुध पीले। घराः  
 विद्यान् शिबभक्तो मया सुखसिन्धो [ ] येवन बदावन  
 [ ] मय कजुमुंड देकर विद्या करे। इसरो [ ] तथा  
 अलिप्त यशोव्य फल मात होत है।

[illegible]

सैशाक भस्मके शुद्ध पत्थरी कुतियाकरे कागसी चर्चलेका 'श्रीमुखी' नामसे पुजन करे । राखिये मुक्कल धारण करे और एकवली श्री राखन करे । ॥॥ दिवाभक्त लडाबोको मकानधि भोजन काकर लम्बुल तथा लम्बन प्रदान कर प्रयागपूर्वक किला करे । इस विधिसे पुजन करेकर सुन्दर पुगेकी भक्ति होती है ।

आपका नामके शुभ पक्षकी तुल्यकाली गौरी-कालीकी 'माधवी' नामसे पूजा करे। तिलैककलर ॥॥ करे। शतःकाल विप्रोक्ते मोक्षन करये और दक्षिणको मुख ॥॥ खेन। दे। इससे उसे शुभ लोककी प्राप्ति होती है।

■ ■ ■ ■ ■ इससे ■ ■ ■ ■ ■ तुलिकासे देखी चर्चनीय श्रीदेवी नामसे पूजितकर जायेके सङ्ग्रह स्वर्ण ज्ञान कर पीये । दित्तपत्तनेको पोषन करकर सोम और फल दक्षिणके कर्मों दे । इससे ब्रती सर्वलोभेकर होकर सभी कामकाजोरो प्राप्त करता है ।

महामद भासके पक्षकी सुजीपायो  
 'हरात्म' नामसे पूजन । मधिराका दूध पीये ।  
 इससे अमृतल रीमन्व प्राप्त होता है और इस लोकेमें वह सुख  
 योग्यकर अन्तये त्रिकालेकालसे प्राप्त करता है ।

‘गिरिपुत्री’ काफ़ी पूजनकर लखनऊ-मिडिल अलकन प्रार्शन करे और दूसरे दिन बाल पूजन । चन्दनमुक्त सुवर्ण दाँतकामे दे । इससे लक्ष्मी यशोवर्धन फल प्राप्त होता है और यह नैऋत्येकामे प्रार्थित होता है ।

[illegible]

इस प्रकार वर्षा ऋतु करनेके पश्चात् उद्योग करने  
 चाहिये । वर्षाश्रीत स्वर्ण उन्न-मोक्षार्थी श्रितिक धनकार  
 उन्हें एक सुन्दर, अत्यन्त शिष्टमनुक्त मन्त्रपत्रे स्थापित कर  
 मुद्रित इत्येव, पत्र, पुष्प, फल, दूत-पत्र-वैद्य, दीपमाला,  
 शर्करा, गन्धपत्र, दण्डिम, जीवातक, जीरक, लवण, कुम्भ,  
 कुम्भ उक्त मन्त्रकमुक्त तात्पर्यावसे देवदेवेन्द्रकी शिष्टिक  
 अर्पण कर्या-कार्य । पत्र, पुष्प, फल, दूत-पत्र-वैद्य, दीपमाला,  
 शर्करा, गन्धपत्र, दण्डिम, जीवातक, जीरक, लवण, कुम्भ, कुम्भ

**राज्यसमन्वय नीतिगत नीतियों—**राज्य। इस [ ] [ ]  
[ ] पुनर्गठन करने पर [ ] फल प्राप्त होता है, उसका फल  
पूर्ण करने में ये भी समर्थ नहीं हैं। यह पूर्वोक्त सभी फलोंके  
प्राप्त करता है, सभी देशवासिकों द्वारा प्रेषित होता है तथा सौ  
करोड़ करोड़ों तक सभी व्ययनाओंके उपयोग करता हुआ  
अन्त्ये शिव-साधुत्व प्राप्त करता है, इसमें [ ] संदेह नहीं।  
यह सब पहले समयके द्वारा किया गया था, इसलिए यह  
राज्यसमन्वय नीतिगत है।

(अध्याय २४)





विहारराज गोशरीर कानपुर जिला नया नगरपालिका सौभाग्यशाली ॥ (कारण २५/९)

पूजक नमस्कार दे।

इस [ ] करनेसे सभी कामगार [ ] और निष्कामभावसे करनेपर निष्कण प्राप्त होता है। [ ] अथवा कुमारी जो कोई भी इस सौभाग्यप्राप्त [ ] भक्तिपूर्वक करते [ ] वे [ ] अनुग्रहसे अपने कामगारोंको

प्राप्त कर लेते हैं। जो इस प्रकार माहात्म्य श्रवण करते हैं, वे दिव्य छतर प्राप्त कर स्वर्गमें जाते हैं। इस व्रतको वामदेव, चन्द्रमा, बुधवार [ ] और [ ] देवताओंमें किया है। [ ] सबको यह ज्ञात करना चाहिये।

(अध्याय २५)

### अनन्ता-तृतीय तथा रत्नकल्पवृक्षिणी तृतीया-पत्र

राजा कुम्भधरने कहा—पद्म ! [ ] आप सौभाग्य एवं आरोग्य-प्रदायक, शत्रुविनाशक तथा भूति-भूति-प्रदायक कोश कल कहलायेंगे।

पद्मान् श्रीकृष्ण कहते—महाराज ! [ ] परमेश्वर कांत है, असू-संसारक पद्मान् ईश्वरने अनेक [ ] प्रसंगमें [ ] भगवती ललिताजी उग्ररक्तवर्णी [ ] बतलायी थी, इसी बातक मैं वर्णन कर रहा हूँ, यह ज्ञान सम्पूर्ण पापोंका [ ] करनेवाला तथा सर्वत्राणोंके लिये [ ] लाभ है, इसे आप ध्यावधान होकर सुनें—

वैराग्य, यज्ञपद अथवा मार्गदर्शक मानके गुण पक्षमें तृतीयको श्रेष्ठ सरसोत्तर उत्कृष्टतम समझ कर ले। गोरोक्ष, मोक्ष, गोमूत्र, दही, गोमय और चन्दन—इन [ ] पक्षमें शिल्पक करे, क्योंकि यह शिल्पक सौभाग्य तथा आरोग्यके देनेवाला है तथा [ ] ललितकाले [ ] है। प्रत्येक मासके गुण पक्षमें तृतीयको सौभाग्यवती [ ] विधवा गेल आदिसे रीण बल और कुमारी गुण पक्ष [ ] पूजा करे। भगवती [ ] पञ्चगव्य अथवा केवल दुग्धसे स्नान करकर मधु और चन्दन-पुष्पीयुक्त जलसे स्नान करना चाहिये। स्नानके अनन्तर कोश पुष्प, अनेक प्रकारके फल, धनिया, श्वेत जीरा, नमक, गुड़, [ ] तथा चौकल नैवेद्य अर्पणकर श्वेत अक्षत तथा शिल्पसे ललितकालेकी अर्चना करे। प्रत्येक [ ] पक्षमें तृतीय [ ] अर्चना करे।

प्रत्येक गुण पक्षमें तृतीय [ ] देवीकी भूमिके कारणसे लेकर महात्म्यवर्धक पुष्प [ ] विधान इस प्रकार है—'वत्सल्यै नमः' कहकर लेनीं चरणोंकी, [ ] नमः' कहकर दोनों टखनोंकी, 'अश्लोक्यै नमः' कहकर [ ] पिछरिणोंकी, 'पद्मल्यै नमः' कहकर घुटनोंकी, 'भङ्गलक्ष्मिण्यै नमः' कहकर [ ], 'कामल्यै नमः'

[ ], 'पद्मलक्ष्म्यै नमः' कहकर पैरोंकी, 'कामल्यै नमः' कहकर वक्षःस्थलकी, 'सौभाग्यलक्ष्म्यै नमः' कहकर हाथोंकी, 'प्रतिमुख्यै नमः' कहकर कानोंकी, 'कामल्यै नमः' कहकर मुखाकी, 'पद्मल्यै नमः' कहकर मुखधरणीकी, 'शैव्यै नमः' कहकर नाभिलक्ष्मीकी, 'सुन्दर्यै नमः' कहकर नेत्रोंकी, 'सुन्दर्यै नमः' कहकर ललाटकी, 'कामल्यै नमः' कहकर उनके मस्तककी पूजा करे। तदनन्तर 'शैव्यै नमः', 'सुन्दर्यै नमः', 'कामल्यै नमः', 'शैव्यै नमः', 'रत्नल्यै नमः', 'ललितायै नमः' तथा 'वाङ्मय्यै नमः' कहकर [ ] चरणोंमें [ ] नमस्कार करे। इसी [ ] विधिपूर्वक पूजाकर पूर्णिके भागे कुङ्कुमसे सर्वत्राणसहित छन्दस-दालमुक्त कमल बनाये। उसके पूर्वभागमें गौरी, अधिचरणमें अरुण, दक्षिणमें धवली, नैऋत्यमें शङ्ख, पश्चिममें सौम्य, जगन्नाथमें मदनवर्णिनी, उत्तरमें पाटल तथा ईशानकोणमें उग्रवती स्थापन करे। मध्यमें लक्ष्मी, स्वर्ण, [ ] तुष्टि, मङ्गल, [ ] सती तथा [ ] स्थापन कर कनकके ऊपर भगवती ललिताजी स्थापन करे। तत्पश्चात् गौत और मातृलिक बाद्योक्त आयोजन कर श्वेत पुष्प एवं आक्षतसे अर्चना कर उन्हें नमस्कार करे। फिर लाल बल, [ ] पुष्पोंकी मातृ और लाल अक्षुणासे सुवर्णकी शिखोक्त पूजन [ ] उनके लाल (मार्ग) में सिंदूर और केसर लगाये, [ ] सिंदूर और केसर सर्तदेवीको सदा अर्पित है।

यज्ञपद पक्षमें उत्तर (नीलकण्ठ) से, आग्निमें वन्दुकीय (गुरुदुपहरिया) से, [ ] कमलसे, मार्गशीर्षमें बुध-पुष्यसे, पौष्णमें कुङ्कुमसे, माघमें सिंदूर (निर्गुही) से, फाल्गुनमें मालतीसे, वैश्वे [ ] तथा अश्विनीमें, वैशाखमें नन्दकल (गुलब) से, ज्येष्ठमें कमल और चन्द्रसे, आश्विमें चम्पक और कमलसे तथा श्रावणमें कदम्ब

और महर्षिके पुत्रसे उम्हरेकी पूजा करने लगे।  
मासपदसे लेकर भादि करत महीनेमें क्रमशः गोमूत्र,  
गोमय, दूध, दही, घी, कुङ्कुम, चित्तपत्र, मन्त्र-पुष्प,  
गोमूत्रोदक, पाङ्गला और बेलका मिला अर्पण करे।

प्रत्येक पक्षकी तृतीयमें ब्राह्मण-दम्पतीको प्रणाम कर  
उनमें दाल-पार्श्वीकी प्रणत कर भोजन कराये तथा मकर,  
माला, कन्दन आदिसे उनकी पूजा करे। पुष्पको दो चौरकर  
तथा खीको पीली सड़ियाँ प्रदान करे। फिर ब्राह्मणी को  
सौभाग्याष्टक-पदार्थ तथा ब्राह्मणको फल और सुवर्णनिर्मित  
कमल देकर इस प्रकार प्रार्थन करे—

यथा न देवेराज्यो परित्यक्त पश्यात् ।

तथा मां सत्परात्मन्य वीर्यात्मन्य पश्यात् ॥

(उत्तरार्ध २५।३०)

‘देवि । जिस प्रकार देवविदेव भगवान् महर्षिसे भगवते  
छोड़कर अन्यत्र नहीं जाते, इसी प्रकार धी धी छोड़कर  
तुझे छोड़कर नहीं ग जायें ।’

पुनः कुम्भ, चिमल, अन्न, पक्षी, सुन्ध, दाल,  
लसिमा, कमला, गीरी, अग्नि, रत्न और फर्शी—इन नवोक्त  
उपकरण करके प्रार्थना करे कि अन्न प्रत्यक्ष आदि  
मांसमें प्रसक्त हो।

व्रतकी समाप्तिमें सुवर्णनिर्मित ब्राह्मण-दम्पतीको  
करे और चौबीस अथवा बारह दिन-दम्पतीको पूजा करे।  
प्रत्येक मासमें ब्राह्मण-दम्पतीको विधिपूर्वक करे।  
अपने पूजा गुह्यकी पूजा करे।

जो इस अन्न तृतीया-मास विधिपूर्वक चलन करता  
है, वह सौ कल्पोंसे भी अधिक समस्तान्न निरुत्पत्तये  
प्रतिष्ठित होता है। निर्वन पुत्र्य भी यदि तीन व्रतोंक उपवास  
कर पुण्य और मन आदिके द्वारा इस व्रतक अनुष्ठान करता  
है तो उसे भी यही फल प्राप्त होता है। सक्थ खी, विषय  
अथवा कुम्भी जो कोई भी इस व्रतक चलन करता है, वह  
भी गीरीकी कुम्भसे उस फलको प्राप्त लेती है। जो इस  
व्रतके महत्त्वको पढ़ता सुनता है, उसका उन्नत  
लोकोको प्राप्त करता है।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज ! एक व्रत  
और है, उसका नाम है—सप्तम्यधिकारी वृत्ति ।

यह पक्षक करनेका है। यह व्रत मास मासके शुद्ध  
पक्षकी तृतीयको चित्रा जल है। उस दिन प्रातःकाल गो-दुग्ध  
और दाल-मिश्रित जलसे स्नान करे। फिर देखीकी मूर्तिके मधु  
और चनेके रससे स्नान कराये तथा जल-पुष्पों एवं कुम्भसे  
करे। पहले दक्षिणाङ्गकी पूजा करे।  
कामाङ्गी । अन्न-पुष्प इस प्रकार करे—‘लसिमाय नमः’  
कहकर दोनों पक्षों तथा दोनों टकनोंकी, ‘सखी नमः’ कहकर  
और कुटुम्बी, ‘मिमी नमः’ कहकर उन्मोली,  
‘महाराज्यी नमः’ कहकर कटि-प्रदेशकी, ‘मन्त्राय नमः’  
कहकर ‘मन्त्रात्मिनीय नमः’ कहकर दोनों सखीकी,  
‘कुम्भाय नमः’ कहकर गौडकी, ‘मायय नमः’  
पुष्पको तथा पुष्पके अथवागरी, ‘कमलाय नमः’  
कहकर उपरकी, ‘सखी नमः’ कहकर पू और लसिमाकी,  
‘महाराज्यीय नमः’ कहकर पालकी, ‘दक्षिणात्मिनीय नमः’  
कुम्भकी, ‘मन्त्राय नमः’ कहकर केसपादकी,  
‘महाराज्यीय नमः’ कहकर नेत्रीकी, ‘कुम्भाय नमः’ कहकर  
मुन्नी, ‘मन्त्रात्मिनीय नमः’ कहकर कण्ठीकी ‘अन्नमाय नमः’  
कहकर दोनों पक्षों ‘सखी नमः’ कामाङ्गीकी,  
‘दक्षिणाय नमः’ कहकर दक्षिण बाहुकी, ‘मन्त्रात्मिनीय  
नमः’ कहकर करे, ‘मन्त्राय नमः’  
उन्नी कर-कर नमस्कार करे।

इस व्रतमें प्रार्थन कर ब्राह्मण-दम्पतीको  
महर्षिसे पूजा कर सर्वकामलसहित जलपूर्ण घट प्रदान  
करे। इस विधिसे प्रत्येक मासमें पूजन करे और पाप आदि  
निर्मित क्रमशः लवण, गुड़, तेल, चाँद, मधु, चक्र (एक  
प्रकारका चक्र पदार्थ या चक्र), नीच, दूध, दही, घी, शाक,  
अन्न और सर्वकाम स्वर्ग करे। पूर्वकथित पदार्थोंसे  
उन-उन पक्षमें नहीं जाना चाहिये। प्रत्येक मासमें व्रतकी  
समाप्तिपर करकेके ऊपर सफेद चावल, गोक्षिमा, मधु, घी,  
केर (केई), मन्त्र (मिष्टक), दूध, शाक, दही, छः  
प्रकारका अन्न, मिष्टी तथा व्रतवर्तिक रक्तरा ब्राह्मणको दान  
करना चाहिये। पक्ष मासमें पूजाके अन्तमें ‘कुम्भ जीवताम्’  
का चित्रा चाहिये। पक्ष मास आदि महीनेमें  
‘मन्त्राय, नीरी, रत्न, भद्र, जय, शिवा, उमा, इन्दी, सती,  
मन्त्र तथा दक्षिणात्मिनीय’ का नाम लेकर ‘जीवताम्’ ऐसा

करे। सभी मासोंके व्रतमें पञ्चाङ्गव्यास प्रदान को और उल्लङ्घन करे। तदनन्तर मास मास जानेपर करकालके ऊपर पञ्चाङ्गसे युक्त अनुष्ठानप्रणाली पार्वतीकी सर्वोन्मेषित पूर्वाङ्गी स्थापन करे। वरुण, आभूषण और अर्चनकरसे सुशोभित एक बैल और 'सप्तमी श्रीकालम्' वह अर्चन प्रदान करे। इस विधिके अनुसार व्रत करनेवाला सन्पूर्ण पापोंसे उसी मुक्त हो है और इन्कार दुःखी

होता। व्रतके करनेमें हजारों अभिष्टोम-यज्ञका प्रारम्भ है। कुम्हरी, विष्णु या दुर्गाजी को भी हो, उसके करनेपर गौरीलेखने पुरिका होती है। इस विष्णुको सुनने का इस लिये औरोंको उपदेश देनेसे भी सुखकर पितृता है और पार्वतीके है।

(अध्याय २६)

### आर्जनन्दकरी तृतीयावतार

पञ्चमत्तु तृतीयावतार बोले—महात्मन् ! अब मैं लोकोमें प्रसिद्ध, आनन्द प्रदान करनेवाले, करनेवाले आर्जनन्दकरी तृतीयावतार वर्णन है। यह किसी भी महीनेमें शुक्ल तृतीयाको पूर्वार्ण, ठण्डाक अथवा पूर्णमासी नक्षत्र तो इस वह व्रत करना चाहिये। उस और गणेशदेवको चन्दन सेत माला और सेत धारणकर शिव-पार्वतीकी मूर्तिवा स्थापित करे। सुशोभित पुष्प, चन्दन आदिसे उनकी करे। 'बालदेवी नमः-श्रीकालाय नमः' से गौरी-शंकरके दोनों पार्वती, 'लोकाभिषेकदेवी नमः-आनन्दाय नमः' से 'राजेश्वरी नमः-शिवाय नमः' से ऊपरकी, 'आदिदेवी नमः-सुखसागराय नमः' से शक्तिकी, 'वाञ्छादेवी नमः-वसन्त नमः' से शक्तिकी, 'आनन्दकारिणी नमः-इन्द्राश्विनी नमः' से दोनों शंभेदी, 'इन्द्राश्विनी नमः-नीलकण्ठाय नमः' से कण्ठकी, 'उत्पलधारिणी नमः-सङ्घ नमः' से 'पारिभित्तय नमः-नृपश्रीनय नमः' से दोनों पुष्पशेखरी, 'सिलासिन्धु नमः-वृषेष्टाय नमः' से मुक्तकी, 'सत्वरदीप्तय नमः-सिद्धवन्धाय नमः' से मुक्तकनकी, 'मङ्गलशक्ति नमः-सिद्धवासे नमः' से नेत्रकी, 'सिद्धिदात्री नमः-सङ्घवेष्टाय नमः' से कुलीकी, 'इन्द्राश्वी नमः-इन्द्राश्वी नमः' से लल्लकी तथा 'सङ्घाश्वी नमः-सङ्घाश्वी नमः' कहकर मुकुटकी पूजा करे। तदनन्तर लिये पार्वती-परमेश्वरी प्रार्थन करे—

विष्णुकाये विद्यमुक्ते विष्णुकायै विष्णु ।  
प्रसादप्रदं च दे पार्वतीपरमेश्वरी ॥

(अध्याय २७।१३)

विष्णु विष्णु शरीर है, मुक्त मुक्त और इन्द्राश्वी तथा है, मुक्त मुक्त है, इन पार्वती और परमेश्वरी में चन्दन करता है।

इस व्रतके पूजनकर मूर्तिवर्षिक अनेक अनेक प्रकारके कलश, तिल, चक्र, माला, विष्णु, गेमुन, मोक्ष, दुध, दूध, धी, कुम्हरेक, गेमुनोदक, सिलकपत्र, पक्षेक बल, कसक बल, वनपूर्ण बल तथा सिलकपत्रका इन्द्राश्वी मार्गदर्शक मूर्तिवर्षिक प्रदान करे, अनन्तर शयन करे। वह प्रदान पञ्चाङ्ग करना चाहिये। पञ्चाङ्ग अथवा-शंभुकी पूजाके सेत पुष्पकी श्रेष्ठ रूप है। उनके लिये व्रत करना चाहिये—

श्रीदेवी । विष्णुकायप्रदं भद्रम् ।

श्रीकालाय नमः शक्तिाय भवानी सर्वसिद्धये ॥

(अध्याय २८।१९)

'गौरी निल मुक्त प्रसाद रहे, भद्रप्रद मेरे पापोंका विनाश करे। शक्तिप्रद मुझे श्रीकाल प्रदान करे और भवानी मुझे सब सिद्धिदा प्रदान करे।'

इसके अन्तमें लल्ल तथा गुड़से परिपूर्ण घट, नेत्रपट्ट, चन्दन दो श्रेष्ठ कप, ईस और विभिन्न फलोंके साथ सुशोभकी शिव-पार्वतीका चित्रणको दे और 'गौरी ये श्रीकालम्' ऐसा खड़े। संघाटन भी करे।

इस आर्जनन्दकरी तृतीयावतार व्रत करनेसे पुण्य दिवसलेखने विष्णु करता है और इस लेखने भी वन, आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य और सुखसे प्राप्त है। इस करनेवालेको कभी शोक नहीं होता। दोनों पक्षोंमें विधिकर पूजनसहित इस व्रतको करना चाहिये। करनेसे राजाकी

लोकेकी प्रति है। इस सुख और सुनाता है, गन्धर्वोंसे पूजित होता हुआ इन्द्रलोकेमें भरता है। जो कोई भी इस व्रतको करती है, वह

सभी सुखोंको भोगकर अन्तमें अपने पतिके साथ गौरिके लोकमें निवास करती है।

(अध्याय २७)

### पैर, भाद्रपद और माघ शुक्ल-तृतीया-व्रतका विधान और फल

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महात्म्य ! अब आप पैर, भाद्रपद तथा माघके शुक्ल तृतीया-व्रतोंके विषयमें सुनें। इन व्रतोंसे रूप, सौभाग्य तथा उत्तम पुत्रकी होती है। विषयमें जब एक वृत्तान्त सुनें—

भगवती पार्वतीकी जन्म और विष्णु नामकी दो सखियाँ थीं। किसी समय मुनि-कन्याओंमें उन दोनोंसे पूजा कि आप दोनों तो भगवती पार्वतीके सब सदा निवास करती हैं। जहाँ सब यह बतावे कि किस दिन, किस उपवास और मन्त्रोंसे पूजा करनेसे प्रसन्न होते हैं।

इसपर जवाब बोली—मैं सभी सम्प्रदायोंको करने-बर्नन करती हूँ। एक शुक्ल तृतीयाको व्रतकर एकवार भक्तिपूर्वक देवीकी पूजा करे। प्रथम वेदमन्त्र सुनकर एक मध्यम भगवाकर इसके मध्यमें एक भोजन भक्षित कर देवीको रचना करे। एक व्रत प्रमाणका कुछ बनने, उन्नत कर उत्तम ब्रह्म चरणकर देवताओं और देवीके मध्यममें जाव और पार्वती, लक्ष्मी, गौरी, नन्दकी, गङ्गा, सिन्धु, उन्नत और सती—इन आठ मन्त्रोंसे भगवतीकी पूजा करे। कुङ्कुम, कपूर, अमर, धन आदि सब लेवन करे। अनेक प्रकारके सुगन्धित पुष्प चढ़ाकर धूप, दीप आदि उपहार अर्पण करे। लड्डू, अनेक प्रकारके मधुर विभिन्न प्रकारके फलका नैवेद्य, औरक, कुङ्कुम, ईस और ईसका, हल्दी, नारिकेल, अमरलक, भुवण्ड, कर्कटी, चण्डी, कटहल, विजैय नींबू आदि भगवतीको निवेदित करे। गृहस्थोंके उपकरण—जेबानी, सिल, सुप, टोकरी आदि तथा शरीरको अलंकृत करनेकी साधनियाँ भी निवेदित करे। शङ्ख, तुर्र, मृदङ्ग आदिके रुम्ह और गीतोंके साथ मन्त्रोत्तर करे। प्रथम भक्तिपूर्वक

अपनी उरिका अनुसर पूजा करके कुमारी कन्या सौभाग्यकी अधिकतमसे व्रतोंके समय नये कलशोंमें लक्ष्मी उपासे उन्नत करे। पुनः पूर्वोक्त विधिसे भगवतीकी पूजा करे। प्रत्येक प्रकारसे पूजा और वृत्तसम्पन्नित शिखरोंसे उन्नत करे। भगवतीके सम्मुख पद्मसन लगाकर रात्रि-जागरण करे। तृप्तसे भगवन् संकर, गीतसे भगवती और मन्त्रोंसे सभी देवता प्रसन्न होते हैं। तन्मूल, कुङ्कुम और उत्तम-उत्तम पुष्प सुगन्धितों कीको अर्पित करे।

पार-व्रतके अन्तमें पूजाकर गुरु, लखन, कुङ्कुम, कपूर, अमर, धन आदि इन्हींसे पञ्चाङ्गिक करे और क्षमा-पार्वना करे। भाद्रपद तथा शुक्लतृतीयाके विधान चोखन बतावे। नैवेद्यका विधान करे। इससे उत्तम करने सफल हो जाता है।

भाद्रपद शुक्ल पक्षकी तृतीयाको भी पैर-तृतीयाकी व्रत एवं पूजन चाहिये। इसमें महाभक्तोंसे एक सुप्ते उपासी भूति बनकर पूजा करनी चाहिये तथा गौमुख-व्रतमें चाहिये। यह उत्तम सौन्दर्य-प्रदायक है।

माघ व्रतके शुक्ल पक्षकी तृतीयाको पैर-तृतीयाकी व्रति पूर्वोक्त विधानोंको पक्षान्त पुनः-पुनःसे तुल्यतम चतुर्थीको गणेशजीका भी पूजन करे।

इस विधिसे जो भी ब्रह्म और तुल्यतम करती है, वह अपने पतिके साथ इन्द्रलोकेमें निवास कर महालोकेमें और जगति स्थितलोकेमें जाती है। इस लोकेमें भी रूप, सौभाग्य, संतान, धन आदि प्राप्त करता है। उसके वंशमें दुर्गन्ध कन्या और दुर्विनीत पुत्र कभी भी उत्पन्न नहीं होते। घरमें दरिद्र, रोग, शोक आदि नहीं होते। जो कन्या इस व्रतको करती है तथा भाद्रपदकी पूजा करती है, वह अभीष्ट वर प्राप्त कर संसारका सुख भोगती है। (अध्याय २८)

आनन्दसर्व-सलीलाऽऽत्म

**महाराज युधिष्ठिरने कहा—**पापन् ! अपने इस पापके अनेक तृतीय-दशमेरे कारणों से मैं अनन्दपूर्ण स्वरूप बतलाने ।

[illegible]

मार्गशीर्ष मासके शुक्ल पक्षको तृतीयाको पञ्चमी  
 महालयात्रीके पूजनमें नारीकेरु सम्पादित । दुष्कृत शान्तन  
 भरे । काय-ज्योत्स्ना दृष्टानकर ॥१॥ शान्तन भरे ॥ ॥  
 ठठकर आह्वान-पद्मसिन्धु पूजन को । ऐसा ॥१॥ अनेक  
 यज्ञोक्त ॥१॥ प्राप्त होता है ।

पौष मासके शुक्ल पक्षकी तुलसीवाक्ये उपवासकर चौविना पूजन करे, लङ्केश्वर विनोदित करे और गुणेश आश्विनकर प्रणम करे। नाम: ठठंकर । इससे मङ्गल पङ्कज फल मिलता है। इसी प्रकार पौषकी कुम्भ-तुलसीवाक्ये भगवती पार्वतीकी पूजा करे और नैवेद्य अर्पण करे, यामे पूरी और गोमयकर प्रसन करने का विशेष । आश्विन-दशमीका पूजन करे। इससे अश्वमेध-पङ्कज फल प्राप्त होता है।

[illegible]

पूजन करें। इससे वायव्य-वर्षा फल मिलता है।

पाचलून घासले तुळू पसली तृतीयेश्वरी पवित्र होकर  
 करे और पार्वतीकर 'भद्र' नामसे पूजनकर  
 फलाल्प नैवेद्य निवेदित करे । सर्वत्रय्य प्रणम कर शक्तिसे  
 जपन करे । प्रातःकाल सपत्नीक ऋद्धामयसे भोजन करये ।  
 इससे शौचमणि-पात्रकर फल प्राप्त होता है । इसी प्रकार कृष्ण  
 पसली तृतीयेश्वरी 'विप्रात्मयश्री' नामसे भगवती पार्वतीकर पूजन  
 कर पूरक योग लगवये । जल तथा चावल निवेदित कर  
 भूतकर जपन करे । प्रातःकाल सपत्नीक ऋद्धामयसे भोजन  
 करये । इससे अतिहोम-पत्रकर फल प्राप्त होता है ।

कैव प्रामाण्ये राज्ञः पक्षमे तृतीयान्तो विरोधश्च और पवित्र  
 यमवासी चार्वकीय 'श्री' नगरसे पूजन करे। यष्टक  
 (राजीवदा) में लिखित किया जाता है, अज्ञान करने  
 एवं अज्ञान करता करता हुआ विज्ञापन करे। आतःकाल  
 अधिकपूर्वक ज्ञान-प्राप्तिवादी पूजा करे, इससे राजसूय-यज्ञको  
 प्राप्त प्राप्त है। इसी पूजा-तृतीयान्तो  
 'भक्त्या' पूजा करे। अपूर्वक निवेद्य निवेदित करे,  
 अर्चना करे और विज्ञापन करे। आतःकाल  
 ज्ञानवादी भोजन कराये। इससे अतिराज-यज्ञका  
 प्राप्त है।

वैदिक ऋषिके पुत्र [ ] तृतीयको जलान्न होकर  
उत्पन्न करे। पणवती [ ] 'चण्डिका' नामसे पूजा करे  
[ ] करे। श्रीकण्ठ-चन्दनसे लिप्त कर [ ]  
सम्पन्न विभक्त करे। [ ] सपत्नीक साधनाकी पूजा  
करे। इससे चन्द्रावर्णनकर फल [ ] है। ऐसे ही कृष्ण  
[ ] तृतीयको विष्णु होकर उत्पन्न करे। देवीकी  
'कालरात्रि' [ ] गन्ध, पुष्प, धूप, दीप आदिसे पूजा करे।  
श्री तत्व शैले अंग्रेसे ब्रह्म वैदिक नियोजित करे। तिलक प्राशन  
कर रक्षिते शम्भु करे। अंतःकाल सपत्नीक साधनको भोजन  
करवे। इससे अतिवृद्धावस्था फल प्राप्त होता है।

जेट्टा पारलेके तुळ पसवरी तुळीवाको उपवाधकत  
 मूळ 'दुध' नामसे वर तथा नैवेद्य  
 निर्दिष्ट करे एवं अर्चलेख प्राप्त गौरीध्यान  
 हए सप्तर्चक सोये । अतःकल उपवीक ब्रह्मणको धेवन

कतये । इससे तीर्थयात्राका प्रारंभ है । प्रथम  
ज्येष्ठ कृष्ण तृतीयाको सुनसिनी स्त्री उवाच करे ।  
'स्कन्दमाता' का पूजा का योग लगभग । .....  
देवीके सामने प्रार्थन करे । अतः काल काय-दम्पती  
हो । इससे कन्यावन्धन फल प्राप्त होता है ।

अम्बाई मासके शुद्ध पक्षकी दुतीकको सतीका पूजन कर दहीका नैवेद्य समर्पित करे। गोभूत-जलका घटन कर जपन करे। प्रातः ब्राह्मण-दम्पतीका पूजन करे, इससे ~~समस्त~~ फल प्राप्त होता है। पुनः अम्बाई मासके शुद्ध पक्षकी दुतीकको कुम्भपात्रीका पूजन कर ~~करे~~ और भूतके साथ समुद्रका नैवेद्य अर्पित करे। कुशोदककर घटन कर ~~करे~~ करे। प्रातः-वसतः ब्राह्मण-दम्पतीकी पूजा करे। इससे गोमहाका-दम्बा फल प्राप्त होता है।

श्रावण मासके शुक्ल पक्षकी तृतीयाश्वी अष्टमिपर्यन्त चतु-  
 षष्टिका पूजन करे। कुलपूजन (कुलपूषी) को नैवेद्य-कण्ठ  
 समर्पित कर पुण्योदकवत् अशन कर उत्पन्न करे, अतः अतः  
 आश्विन-दशमिका पूजन करे। ऐसा करनेसे अष्टमिपूजनका फल  
 होता है। इसी प्रकार आश्विनकी कृष्ण-तृतीयाश्वी 'उत्तमी'  
 नामसे पार्वतीका पूजन कर ॥ ॥ आदि नैवेद्यके कण्ठमें  
 समर्पित करे। शिवकुटुम्ब भक्षण करे। ॥ यमजीव  
 आश्विनका पूजन करे, इससे इक्ष्वाकु-पुत्रका फल  
 होता है।

भाद्रपद मासमें शुद्ध पक्षकी दुर्गपूजा 'दिगातीज' नामसे पार्वतीका पूजन कर गोधूमजल नैवेद्य अर्पित करें। श्वेत वस्त्र तथा गन्धोदकका प्राशन कर शायन करें। प्रातः कालका महापूजा पूजन करें, इससे सैकड़ों उद्यान लगानेका फल प्राप्त होता है। भाद्रपद कृष्ण-दुर्गवाक्ये दुर्गकी पूजा करें। गुग्गुलु पिष्ट और कलशका नैवेद्य अर्पित करें, गोधूमजल प्राशन कर शायन करें। प्रातः कालका महापूजा पूजा करें। इससे महापूजाका फल प्राप्त होता है।

उपवासकर 'नरपञ्जी' नामसे पूजा करता है। पूजनकर पञ्चांगकर 'नर' समर्पित करे। रात: कन्दनकर प्रभु कर रामिमें स्नान करे। प्रातः काङ्कन-दन्तवस्त्र पूजन करे। इससे अग्निहोत्र-यज्ञकर प्राप्त होता है। कल्याण-सतीयाकर 'रसित' नामसे धर्मसिद्धि पूजा करे। सुखसे

सब स्वास्थ्योपेक्षा करता है। पुस्तकें जो जो भी प्रदान  
करते हैं। प्रत्येक सप्ताह सप्ताह के अनुसार भोजन  
करते हैं। इससे गन्धर्व (अथ, अदिसे दिनपर गो-सेवा  
करते हैं। यह प्रत्येक है।

■ इससे ■ पक्षी तुलीपाखे 'सख' नामसे  
■ पूजनकर भूत, खड और जीतव नैवेद्य समर्पित  
करे। कुमुद, केसरव्य इससे कर शयन करे और अतः  
ब्रह्म-सम्पत्ति पूजा करे। इससे एकपुत्र-संतान फल प्राप्त  
होता है। कार्तिकमासी कुम्भ-तुलीपाखे 'सख' नामसे पार्वतीका  
पूजनकर वैष्णवी शिष्याका नैवेद्य समर्पित करे और शीत  
आसनकर रातमें शयन करे। अतः संपादिक ब्राह्मण पूज  
करे। इससे नानाशत फल होता है।

इस प्रकार वर्ष भर प्रत्येक मास एक पक्षी दुर्तीयाके  
 कन्येसे त्रिती सम्पूर्ण पक्षीसे शुक्र और पवित्र हो पाता  
 है। इस पूर्व में उल्लेख इस प्रकार करता चाहिये—

मार्गदर्शक पत्रके [ ] पक्षकी सुनीपाकी उपवासकर  
 शिव-पर्वतीसे एक चन्दन चण्डन सुवर्णकी शिव-पर्वतीकी  
 प्रतिमा बनवाये। उन प्रतिमाओंके नेत्रोंमें मोती और नीलम  
 लगाये। [ ] मृग और बघनेमें रातकुण्डल पहनवाये  
 चण्डन रंगकरी [ ] [ ] इससे अलंकृत  
 कर [ ] और रक्त [ ] पहनाये। चतुःस्र (एक  
 गन्ध-द्रव्य को चन्दन, कुसुम [ ] चमूले  
 सङ्ग-चण्डके चोगसे बन्ता [ ] से सुशोभित करे। तदनन्तर  
 गन्ध, पुष्प, [ ] आदि उपचारोंमें मण्डलमें पूजनकर [ ]  
 डबन करे। इसमें उपरजित भगवतीकी अर्चना को  
 प्रीतिवन्धन वासन [ ] [ ] करे। गीत, नृत्य आदि  
 उत्सव करे। सुबोधवर्षण जप करे। प्रातः उत्तम मण्डल  
 बनकर मण्डलमें जप्यपर शिव-पर्वतीकी प्रतिमा स्थापि  
 करे। विद्या, [ ] माला, सिंकिनी, दर्पण आदिसे मण्डलमें  
 सुशोभित करे। अनन्तर शिव-पर्वतीकी पूजा करे। सप्तमी  
 चण्डनको भोजनदिसे संसृष्ट करे। जल निवेदित कर प्रार्थन  
 करे [ ] 'हे भगवन् शिव-पर्वती ! आप दोनों सुहृद प्रसन्न  
 होये।' इसके बाद उचित स्नानको पवित्र कर दें। तत्पश्चात्  
 सुवर्णसे मण्डित [ ] तथा चाँदीसे मण्डित सुवर्ण, कांस्य  
 दोहनकरसे कृत, एतल वस्त्रसे व्याख्यादित, ध्वजा आदि

अधरजोसे युक्त पर्वसिन्धी लगल रंगमयी गैरकी प्रदक्षिण कर दक्षिणाके साथ जाता, सड़ाऊँ, एलं अनेक प्रसन्नके पक्ष पदार्थ गुरुको समर्पित करे। पुनः दिग्ग-पर्वसिन्धी प्रक्षय कर गुरुके चरणोंमें भी प्रणाम कर सुख पाति। इस प्रकार इस आनन्द-प्रसन्नके समर्पित करे। जो सब यह पुरुष इस लक्ष्य करत है, वह दिग्ग विमानमें बैठकर गन्धर्वलोक, वरुणलोक, देवलोक तथा विष्णुलोकमें है। यह बहुत सम्पन्नक उत्तम योगियों योगकर विष्णुलोकको प्राप्त और

पूर्वपर जन्म वरुणलोक होता है। इस करनेवाले उरुमयी सब पटरनी होती है। जिस प्रकार दिग्गकोके साथ पर्वजो, इनके साथ शशी, वसिष्ठके साथ अरुन्धती, विष्णुके साथ लक्ष्मी, ब्रह्माके साथ विराजमान रहती है, प्रकर जरी भी जन्म-जन्ममें अपने पतिके साथ युक्त है। इस बातको करनेवाली जरी विमुक्त नहीं होती तथा पुन, पौत्र आदि सभी वस्तुओंको करती है। (अध्याय २९)

### अक्षय-तृतीयाक्षयके प्रसंगमें धर्म धर्मिकीका चरित्र

जगन्नाथ श्रीकृष्ण बोले—महाराज। अब अक्षय वैशाख भाद्रके शुक्ल पक्षकी अक्षय-तृतीयाकी कथा सुनि लाल दिन जान, दान, जप, होम, स्वाध्याय, तर्पण आदि जो भी कर्म करने जाते हैं, वे सब अक्षय हो जाते हैं। सत्ययुगमें अक्षय भी इसी सिद्धिको हुआ था, इसीलिये इसे कृतपुण्यदि तृतीया भी कहते हैं। यह सम्पूर्ण बात अक्षय-तृतीयाके प्रदान करनेवाली है। इस सम्बन्धमें एक अध्याय है, उसे सुने—

एककाल नगरमें धिय और सत्त्वकाटी, एक और ब्राह्मणोंके पूजक धर्म नामक एक धर्मिकी अक्षय रहत था। उसने दिन कर्मप्रसंगमें सुन वैशाख शुक्लकी तृतीया के दिन एतं भुज्जकरसे युक्त हो तो उस दिनका दिया हुआ दान अक्षय हो जाता है। यह सुनकर उसने तृतीयाके दिन गङ्गामें अपने पितरोंके तर्पण किया और वह आकर जल और अन्नसे पूर्ण पट, सत्तू, दही, घन, गेहूँ, गुड़, ईस, खीर और सुवर्ण ब्रह्मपूजक ब्राह्मणोंको दान दिया। कुटुम्बमें अबसत रहनेवाली उसकी स्त्री उसे बार-बार

भी, किन्तु वह अक्षय तृतीयाको लक्ष्य ही दान करता था। समयके बाद उसका देहाल हो गया। अगले जन्ममें उसका कुलपत्नी (दारका) अक्षय हुआ और वह ब्रह्मण राजा बना। इनके प्रयासोंसे उसके ऐश्वर्य और धनकी कोई रोक न थी। उसने पुनः बड़ी-बड़ी दक्षिणवाले यज्ञ किये। वह ब्राह्मणोंको गौ, भूमि, सुवर्ण आदि देत रहत और दान-दुर्गियोंको भी संतुष्ट करता, किन्तु उसके धनका कभी ह्रास नहीं होता। वह उसके पूर्वजन्ममें अक्षय तृतीयाके दिन दान देनेका फल था। महाराज। इस तृतीयाका फल अक्षय है। अब इस बातका विधान सुने—सभी रस, अन्न, सहद, जलसे भरे बाड़े, लड्ड-लड्डके फल, जूता आदि तथा ग्रीष्म ऋतुमें उपभुक्त समस्त, अन्न, गौ, भूमि, सुवर्ण, तथा जो पदार्थ अपनेको धिय और उत्तम लगे, उन्हें ब्राह्मणोंको देत चाहिये। अतिजप रहस्यकी बात मैंने आपको बतलायी। इस सिद्धिमें गणों का कर्म अक्षय नहीं होता, इसीलिये पुनियोंमें इसका नाम अक्षय-तृतीया रखा है।

(अध्याय ३०—३३)



१-मत्स्यपुराणके अध्याय ५५ में इसके सिद्धिमें एक दुसरी कथा है, क्या पक्ष है कि 'इस दिन अक्षयों पात्रान् विष्णुकी पूजा करनेसे वे विरोध होते हैं और उसकी संज्ञा भी अक्षय की रहती है—

अक्षय सौमित्रितय तस्य सुकृत्यक्षयम्। अक्षयः पुनस्तु विष्णुलेन तस्यैव सत्यम् ॥

अक्षयैतु विष्णुलेन तस्यैव सत्यम् ॥

(मत्स्यपुराण ५५/१४)

अक्षयके विष्णुपूजन है, केवल इस अक्षयमें उसकी भी जाती है। अन्यथा अक्षयके स्थानपर सत्य सिद्धि विधान है।)



### श्रवणस्तोत्र

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—श्रवण ! अब मैं **पञ्चम** कल्पमें हस्तिनाप्रताप वर्णन करता हूँ। इसके करनेसे गृहस्थोंको इस प्रकारकी शक्ति प्राप्त होती है। कार्तिक मासके शुक्ल पक्षकी पञ्चमीसे लेकर **॥ ॥ ॥** सष्टे पञ्चमीका भोजन न करे। नवग्रह **॥** रोचनागके ऊपर **॥** भगवान् विष्णुका पूजन **॥** और निम्नलिखित मन्त्रोंसे उनके अङ्गोंकी पूजा करे—

'ॐ अन्वताय नमः पादौ पूजयामि'से भगवान् विष्णुके दोनों पैरोंकी, 'ॐ **॥** नमः **॥** पूजयामि'से कटि-प्रदेशकी, 'ॐ सङ्घाताय नमः **॥** पूजयामि'से उदरदेशकी, 'ॐ कर्णोत्थाय नमः ॐ पूजयामि'से हृदयकी, 'ॐ पद्माय नमः कर्णौ पूजयामि'से दोनों कानोंकी,

'ॐ सङ्घाताय नमः होर्तुं पूजयामि'से दोनों भुजाओंकी, 'ॐ सङ्घाताय नमः वक्षः पूजयामि'से वक्षःस्थलकी तथा 'ॐ कुलिङ्गाय नमः द्वाभ्यः पूजयामि' से उनके मस्तककी पूजा करे। तदनन्तर मीन **॥** भगवान् विष्णुको दूधसे **॥** कलसे, फिर दुग्ध और तिलाले हुवन करे। वर्ष पूरा होनेपर **॥** तथा सङ्घातकी सुवर्णप्रतिमा बनवाकर उनका पूजन कर **॥** सङ्घातको दान दे, साथ ही उसे सवस्ता गौ, पाचधसे पूर्ण कंसकाष्ठ, दो बक और पञ्चाशतिक सुवर्ण भी प्रदान करे। तत्पश्चात् **॥** सङ्घात-भोजन करकर व्रत समाप्त करे। जो व्यक्ति इस व्रतको भक्तिपूर्वक करता है, वह निश्चय शक्ति प्राप्त करता है और उसे चाहेना कभी भी कोई पाप नहीं रहता।

(अध्याय ३४)

### सरस्वतीस्तोत्रात् विज्ञान और कला

श्रवण श्रीगङ्गादेवी पूजा—भगवान् ! फिर उसके करनेसे कौनो मयूर होती है ? **॥ ॥** सौभाग्य क्या **॥ ॥** है ? विज्ञाने अतिवैराग्य क्या होता है ?, धर्म-पत्नीका और बन्धुजनोका कौनो विभोग नहीं होता तथा **॥ ॥** होता **॥** ? उसे अन्य बातसाथें।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—यह ! अपने बहुत उद्यम क्या पूर्ण है। इन फलोंको देनेवाले सरस्वतीस्तोत्रात् विज्ञान आप सुनें। इस व्रतके कीर्तनमात्रसे भी भगवती सरस्वती प्रकट हो जाती है। इस व्रतको वत्सरात्रयमें केवल मासके शुक्ल पक्षकी पञ्चमीको आदित्यप्रातः प्रारम्भ करना चाहिये। इस दिन भक्तिपूर्वक ब्राह्मणको दण्ड स्वीकारकर करणकर गन्ध, केत माता, शुक्ल अन्नत और केत **॥** उपचारोंमें, **॥**, अक्षमाला, कमण्डलु तथा पुस्तक धारण की **॥ ॥** सभी अवसरोंसे अलङ्कृत भगवती गायत्रीका पूजन करे। **॥** **॥** जोड़कर इन मन्त्रोंसे प्रार्थन करे—

यथा नु देवि भगवान् ब्रह्मा स्वेकचित्तमाहः ।

**॥** परित्यज्य मे त्रिहोत्र **॥** **॥** वराहस्य न

केवलास्वादि सखीनि नृत्तगीतादिकं **॥** कम् ।

वाहितं यत् स्वया देवि तथा मे सन्नु सिद्धयः ॥

सखीमेवा वरा रिद्धिर्वीरे **॥** प्रथमः कविः ।

स्वर्गपिः कविः तदुत्तराध्यायिनां वराहस्य ॥

(उत्तरार्ध ३५।७—९)

देवि ! **॥** प्रकर स्वेकचित्तमाह ब्रह्मा भगवन् **॥** अलग नहीं रहते, इसी प्रकार आप हमें भी **॥** **॥** **॥** **॥** अपने परिवारके लोगोंसे विभोग न हो। हे देवि ! वेददि सम्पूर्ण **॥** तथा कृत-गीतदि जो भी विचार है, वे सभी आपके अधिष्ठानमें ही रहनी हैं, **॥** कभी भुले प्राप्त हो। हे भगवती सरस्वती देवि ! आप अपनी—सखी, मेवा, वर, रिद्धि, गौरी, **॥**, प्रथा तथा कवि—इन आठ मूर्तियोंके **॥** मेरी रक्त करे।

इस विधिसे प्रार्थनकर मीन होकर भोजन करे। प्रत्येक मासके शुक्ल पक्षकी पञ्चमीको सुवर्णप्रतिमा स्वीकार भी पूजन करे और उन्हीं दिन तथा चावल, मूतपात्र, दुग्ध तथा सुवर्ण **॥** करे और देते समय 'वन्द्यी श्रीस्ताम्' ऐसा **॥** करे। सर्वकाल मीन रहे : इस तरह वर्षभर व्रत करे। व्रतकी समाप्तर **॥** सङ्घातको भोजनके लिये पूर्णमात्रमें खरस भरकर प्रदान करे। साथ ही दो केत वक्क, सफरस गौ, चन्दन आदि **॥** दे। देवीको निवेदित किये गये विज्ञान, श्रष्टा, जन्म अर्द्धि पदार्थ भी ब्राह्मणको दान कर दे। पूज्य गुरुका भी वक्क, घाल्य तथा घन-धान्यसे पूजन करे। इस विधिसे जो पुरुष सारस्वत

प्रति ॥ है, यह विद्वान्, धनवान् और मधुर कण्ठधर होना है । भगवती सरस्वतीजी कृपासे यह वेदव्यक्तके समान बनि

ले जात है । जहाँ भी ॥ इस ॥ फलन करे तो उसे भी पूर्वोक्त फल प्राप्त होता है । (अध्याय ३५-३६)

### श्रीपद्मवीरता-कथा

राजा पुमिष्ठिरने पूछा—भगवन् ! मैंने तोपेमें लक्ष्मी दुर्लभ है, पर ज्ञात, होम, तप, जप, नमस्कार ॥ किस कर्मके करनेसे स्मिर लक्ष्मी प्राप्त होती है ? अथ ॥ कुछ जाननेवाले हैं, कृपाकर उसका वर्णन करें ।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज ! सुन जात है कि प्राचीन कालमें भृगुमुनिकी ॥ लक्ष्मी सन्धीय आधिपत्य हुआ । भृगुने विष्णुकन्याके साथ लक्ष्मीका विवाह कर दिया । लक्ष्मी भी संसारके प्रति भगवान् विष्णुको चारों रूपों प्राणकर अपनेको कृतार्थ मानकर अपने कुम्भकटाक्षसे सम्पूर्ण जगत्को अभिहित करने लगी । उन्होंने प्रजाओंमें होम और सुमित्र होने लागा । सभी उत्पन्न रहना हो गये । जाड़ाण हवन करने लगे, देवराज इन्द्रिय-प्रेमन करने लगे और राजा वसन्तमानुषिक ॥ रक्षा करने लगे । इस प्रकार देवराजोंमें अस्ति अन्तरमें विमल देवराज विदेवन आदि दैत्यराज लक्ष्मीके ॥ तपस्य हो यज्ञ-यागदि करने लगे । ये सब भीमिके ॥ और ॥ हो गये । फिर दैत्योंके पञ्चान्तरसे सात संसार उत्पन्न हो गये ।

कुछ समय बाद देवराजोंको लक्ष्मीका मर हो गया, उन लोगोंने शोक, श्वेतता, भस्मता और सभी तपन अधिकार नष्ट होने लगे । देवराजोंको सत्य अर्द्ध शक्ति तथा श्वेतशक्त होत देवराज लक्ष्मी दैत्योंके पास चली गयी और देवराज श्रीविहीन हो गये । दैत्योंको भी लक्ष्मीकी प्राप्ति होती ही बहुत गर्व हो गया और दैत्यराज परस्पर कहने लगे कि 'मैं ही देवराज हूँ, मैं ही यज्ञ हूँ, मैं ही ब्राह्मण हूँ, सम्पूर्ण जगत् मेरा ही स्वयं है, ॥ विष्णु, इन्द्र, चन्द्र आदि सब मैं ही हूँ ।' इस प्रकार अतिराग अहंकारपुक्त हो वे अनेक कष्टकर अनर्थ करने लगे । अहंकारमूर्ति दैत्योंकी भी यह दृष्ट देवराज व्यक्त हो ॥ भृगुमुन्य भगवती लक्ष्मी श्रीसागरमें प्रविष्ट हो गयी । श्रीसागरमें लक्ष्मीके प्रवेश करनेसे ॥ लोक ॥ होकर उत्पन्न निरुद्ध-से हो गये ।

देवराज इन्द्रने अपने गुरु बृहस्पतिसे पूछा—

प्राप्त ! कोई ऐसा मत बताये, ॥ अनुष्ठान करनेसे पुनः ॥ लक्ष्मीकी प्राप्ति ॥ अथ ।

बृहस्पति बृहस्पति बोले—देवेन्द्र ! मैं इस सम्बन्धमें आपको ॥ ॥ विधान बताता हूँ । इसके करनेसे आपकी ॥ सिद्ध होगा । ऐसा कहकर देवराज बृहस्पतिने देवराज इन्द्रको श्रीपद्मवीरता-कथाके सङ्क्षेपज्ञ विधि बतलायी । तदनुसार इन्द्रने उत्तम विधिपूर्व आचरण किया । इन्द्रको भी ॥ देवराज विष्णु आदि सभी देवता, दैत्य, इन्द्रिय, गन्धर्व, वन्य, राक्षस, पित्र, विद्यधर, नाग, ॥ श्वेतगन्ध तथा श्वेतगन्ध भी यह मत करने लगे । कुछ ॥ अन्तर में भगवन् की मयापत्ति उत्तम कला और तेज पाकर सबने विचार किया कि समुद्रको भगवन् लक्ष्मी और भृगुमुनिके प्रह्वन करना चाहिये । ॥ विचारकर देवराज और ॥ मन्दरपर्वतको ॥ वासुकिनागाको रस्सी बनाकर समुद्र-मन्थन करने लगे । परमेश्वर सर्वप्रथम शीतल ॥ अर्द्ध ॥ ब्रह्मा प्रकट हुए, फिर देवी लक्ष्मी ॥ भृगुर्ध्व कुम्भ । लक्ष्मीके कुम्भकटाक्षसे फकर सभी देवराज और दैत्य परम आनन्दित हो गये । भगवती लक्ष्मीने भगवान् विष्णुके वक्षःस्पर्शका ॥ प्रह्वन किया, भगवान् विष्णुने इस अर्द्धको किया था, फलस्वरूप लक्ष्मीने इनका वरण किया । इन्द्रने राजस-प्राप्त होत किया था, इसलिये उन्होंने विष्णुका वरण राजा प्राप्त किया । दैत्योंने तपस-प्राप्त होत किया था, इसलिये ऐश्वर्य प्राप्त भी वे ऐश्वर्यहीन हो गये । परमेश्वर । इस प्रकार इस कथाके प्रभावसे श्रीविहीन सम्पूर्ण जगत् फिरसे श्रीपुक्त हो गया ।

प्राप्त पुमिष्ठिरने पूछा—यदुत्तम ! यह श्रीपद्मवीरता- ॥ विधि विधिसे ॥ जाता है, कबसे ॥ प्रारम्भ होता ॥ और इसके फल ॥ होती है ? ॥ इसे बतानेकी कृपा करें ।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज ! यह मत मार्ग- ॥ सर्व मयसे शुक्ल पक्षकी पक्षमीको ॥ चाहिये । प्रातः



विशेषक ध्वनि लक्षणादित्य सर्वज्ञः ।

तथा ॥ ये स्यात् स्याद्विनिर्वाचकध्वनिः ॥

(उत्तरार्ध ३८ (१०))

‘हे आदित्यदेव ! जैसे आपने अपना स्वर स्नेहसे रचित बनाया है, वैसे ही मेरा भी भजन सदा स्नेहकक्षित हो गया जन्म-जन्ममें मेरी आपमें चर्चित करी रहे ।’

इस विषय पुरुषवर पक्षीको ब्राह्मण-भोजन कराये । गोमूत्रका प्रशसन करे । फिर गुड़, अन्न, दूध से बना सुवर्ण ब्राह्मणको प्रदान करे । सफाईको सैन होकर लेस और सफाईका भोजन करे और भुक्षण भी भक्षण करे । इस प्रकार एक वर्षपर्यन्त दोनों पक्षीको पक्षीका भक्षण करने से सुख

सदाकेको सुवर्ण-कमलपुत्र कलरा, जेह सामर्थ्यसे पुरा उत्तम सत्य और पक्षिनी ॥ ब्राह्मणको दान करे । इस विधिसे कृष्णपक्ष छोड़कर जो इस करता है, करोड़ों वर्षों ॥ शोक, रोग, दुर्गति रहता है । यदि ब्रह्मणसे विनय करे ॥ अवश्य पूर्ण होती और विष्णु ब्रह्म से उसे मोक्षसे होती है । जो इस स्नेह-विनयिनी विशेष-कक्षिक एक बार भी करता है, वह कभी दुःखी नहीं होता और इन्द्रलोकमें निवास करता है ।

(अध्याय ३८)

### कमलपक्षी- ( पल्लवपक्षी- ) ज्ञत

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—राजन् ! अब मैं कमल-पक्षी नामक ॥ कलपला ॥ विषय उपवास ॥ पापमुक्त होकर ॥ ज्ञान ॥ है । पक्षीरूप ॥ पक्षी पक्षीको ॥ होकर ॥ करे । कृष्ण सदाभीको सुवर्णकमल, सुवर्णकल तथा ॥ ब्राह्मणको प्रदान करे । इसी ॥ वर्षपर्यन्त ॥ प्रत्येक पक्षीको उपवास करे । पन्ध्र, षट्, दश, अष्ट, सूर्य, शुक्र, शिव, श्रीधन, विष्णु, तथा ॥ वरुण—इन बारह नामोंसे ॥ पक्षीरूप पूजन करे । ‘पक्षुर्ग्रीष्मपक्ष’, ‘अर्धे ये ग्रीष्मात्’ इस ॥ प्रविष्टि सदाभीको ॥ और पक्षी-पूजन आदिके समय ॥ करे । उसके अपने ब्राह्मण-दम्पतीकी पुत्रकर वरुण-अभूषण, सर्वज्ञपूर्ण कलरा और सुवर्ण-कमल तथा सर्वज्ञता ब्राह्मणको देकर

निर्वाचित पक्ष पक्षक ज्ञत पूर्ण करे—

॥ पल्लवपक्षी कमलपक्षकान् सदा रहे ।

सदापक्षकान् पक्षिणं जन्मनि ॥

(उत्तरार्ध ३९ (११))

‘हे सुदृढ ! जिस पक्षी अपने लिये यह भक्ष-ज्ञत पल्लवपक्षी होता है, ॥ प्रत्येक पक्षी भी जन्म-जन्ममें ॥ ज्ञित होती रहे ।’

इस पक्ष देनेवाली पक्ष-पक्षी-ज्ञतको जो करता है, वह भुक्षणदि सभी पक्षोंसे मुक्त हो सर्वलोकमें सम्पन्नित होता है और अपने आगे-पीछेकी इच्छास पीछेपीछा ठहरा ॥ है । ॥ हकल पक्षलक्ष्य भक्षण ॥ है, ॥ भी कलपलक्ष्य भक्षी ॥ है ।

(अध्याय ३९)

### मन्दारपक्षी-ज्ञत

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—राजन् ! अब मैं ॥ पक्षोंको दूर करनेवाले ज्ञान स्वसत ब्रह्मणको पूर्ण करनेवाले मन्दारपक्षी नामक पक्षी विष्णु कलपला ॥ । उन्नी मास मासके सुवर्ण पक्षी पक्षी विधिसे स्वरूप भोजन कर निष्कर्मपूर्ण रहे और पक्षीको उपवास करे । ब्राह्मणको

करे तथा मन्दारपक्ष पुष्प पक्षक कर उन्नीयें भक्षण करे । पक्षीको ज्ञतः ठहरा स्वसति करे तथा ज्ञतपक्षमें बहने सिलोंसे एक अहदल कमल बनये । उसपर हृदयमें कमल लिये भगवान् सुवर्ण सुवर्णकी प्रविष्टि स्थापित करे । ॥ स्नेहके अर्कपुष्पसे तथा पक्षदि उपवाससे अहदल-कमलके दलोंमें

पूर्वादि क्रमसे भगवान् सूर्यके नाम-मन्त्रोद्धार इस प्रकार पूजा करे—‘ॐ वास्तवाय नमः’ से पूर्व दिशामें, ‘ॐ सूर्याय नमः’ से अश्विनोदयमें, ‘ॐ अर्धरात्रे नमः’ से दक्षिणमें, ‘ॐ अर्धरात्रे नमः’ से नैर्ऋत्यमें, ‘ॐ वासुदेवाय नमः’ से [ ] में, ‘ॐ सप्तर्ष्याय नमः’ से वायव्यमें, [ ] पूजने कहे। से उत्तरमें, ‘ॐ आनन्दाय नमः’ [ ] ईशान्योदयमें [ ] उस कल्पवृक्षे मध्यरात्री अर्धरात्रिमें ‘ॐ सप्तर्ष्याय नमः’ यह [ ] शुक्ला पक्ष, नैवेद्य तथा पात्य एवं [ ] सभी उपचारोंसे भगवान् सूर्यका पूजन करे। सप्तर्षीको पूर्वाभिमुख बौन होकर तेल तथा लवण मंजण करे। इस प्रकार प्रत्येक पक्षकी शुक्ल-वाहीमें बालन सप्तर्षीको पूजन करे। क्योंकि अन्तमें वही मूर्ति कलाशके ऊपर स्थापित कर कथारहित मधु, गौ,

॥१०॥१॥

### ललितापट्टी-अवली

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—राजन् ! भद्रक, [ ] शुक्ल पक्षकी वाहीमें यह व्रत होता है। उस दिन उत्तम कप, सौभाग्य और सत्तन्त्रसे इच्छावाली स्त्रीको चाहिए कि वह नदीमें स्नान करे और एक लव सांझके अन्तिम कालु लेकर कर आवे। फिर गङ्गाको मण्डप बनाकर उसमें दीप प्रज्ज्वलीत करे। [ ] यह [ ] वासुदेवाय नमः पात्र [ ] कर [ ] वासुदेवकी, सप्तर्ष्य-निवासिनी [ ] ललितापट्टीके पत्रानकर पूजन करे और उस दिन उज्ज्वल छे, छट्पत्तार चम्पक, करवीर, अशोक, मातसी, नीलेन्दुल, केतकी तथा तम-पुष्प—इनमेंसे प्रत्येककी १०८ या २८ पुष्पझुलिका बनालोकि [ ] मिश्रितश्चित्त मनसे दे—

लक्ष्मि लक्ष्मि [ ] सौभाग्यसौभाग्यलक्ष्मि ।

[ ] सौभाग्यसुखदाता तन्वी देवी कहे नमः ॥

(उत्तरार्ध ४१।८)

इस प्रकारसे पूजन करनेके पञ्चत्तरह-तरहके सोझन,

### कुमारवल्ली-अवली

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—मत्तसत्तम मङ्गलन युधिष्ठिर ! मार्गशीर्ष मासके शुक्ल पक्षकी वही तिथि सप्तसप्त पापनाशिनी, धन-धान्य तथा राक्षसि-प्रेतादिनी एवं अति-

शुभर्ष अर्द्ध अङ्गणको प्रदान करे और दान करते समय वह मन पड़े—

ज्यो मन्दारपत्राय मन्दारपत्राय नमः ।

तं नमो नमो वास्तवायनन्दन्याय संस्कारकर्दमम् ॥

(उत्तरार्ध ४०-११)

‘हे मन्दारपत्र, मन्दारनाथ भगवान् सूर्य ! आप हमारेकेल इस संस्कारकी पक्षसे उद्धार कर दें, आपकी भक्तिक है।’

इस विधिसे जो मन्दार-वाहीका व्रत करता है, वह सभी पक्षोंसे मुक्त होकर एक कल्पवृक्ष मुक्तपूर्वक स्वर्गमें निवास करता है और जो इस विधानको पढ़ता है अथवा सुनता है, वह भी सभी पक्षोंसे मुक्त हो जाता है। (अध्याय ॥०)

केरक [ ] पञ्चांग, कृष्णपक्ष, कवची, चित्त, कोला, कैम, [ ] फल [ ] और मूत्र, दीप, [ ] आदि [ ] सम्पत्तिक करे। इस विधिमें पुष्पञ्जर [ ] तथा गीत-नृत्यादि [ ] करे। दूसरे [ ] आतः गीत-वाद्य-सहित मूर्तिको नदीके [ ] ले [ ] पूजनकर पूजन-समाप्ती आङ्गणको निवेदित कर [ ] भगवती ललितापट्टी वासुदेवकी मूर्तिको नदीमें विसर्जित कर दे। घर आकर [ ] करे और देवता, पितर, मनुष्य [ ] सुपत्तिको [ ] पूजन करे। यहहु कुमारी कन्याओंकी और [ ] आङ्गणोंको अनेक प्रकारके स्वादिष्ट भोजनोंसे संतुष्ट [ ] दक्षिण [ ] और ‘लक्ष्मिनाम प्रीतिवृत्ता असु’ या [ ] पिट्ट करे। जो पुत्र [ ] की इस ललितापट्टी-व्रतको करते हैं, उनके संसारमें कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं रहता। व्रत करनेवाली स्त्री [ ] कल्पवर्षका सुख-सौभाग्यसे सम्पन्न रहकर अन्तमें गौरीलोकमें निवास करती है। (अध्याय ४१)

१-मत्तसत्तमके अध्याय ७९ में मन्दारपत्रकी जगहें इसी जगह [ ] हुआ है:

सं० म० पु० अ० ११—

होता है। दक्षिण देशमें बहुत कर्मविशेष हैं। इस विधिमें दर्शन करता है, वह निःसंदेह ब्रह्महत्यादि पापोंसे मुक्त हो जाता है, इसलिये इस विधिमें कुमारसङ्कीर्ण करने, जड़ों, अधक मिट्टीकी मूर्तियों का पूजा करना चाहिये। अग्राहमें खान तथा आचमनकर, पचासन लगाकर बैठ जाय और स्वामी कुमारका एकराशिकासे स्नान करे। इस दिन उपवासपूर्वक निर्विनिहित मन रहते हुए इनके महात्म्य का लक्ष्यसे अभिषेक करे—

मन्मथबलपुत्रायां भगवतीर्वासीति॥

कारणं कीर्तनं सत्कृत्यं

(अष्टावली ४२।०)

इस प्रकार अभिषेक कर मन्मथान् सूर्यका पूजन करे, गन्ध, पुष्प, धूप, उपचरोंद्वारा कृतिव्यापुषि निरा मन्मथसे पूजा करे—

सौम्यलो लज्जत लक्ष्मीर्वासीति॥

कुमार गुण लक्ष्मीं सत्कृत्यं लक्ष्मीं वा

(अष्टावली ४२।१)

दक्षिण-देशोत्पन्न अन्न, और मत्स्य भक्षण चाहिये। इसके बाद साधिकाभित्तिके पराधीन भोग, कुकुर, कलत्रपुष्प मकूर तथा उनकी यन्त्रा भाग्यकी चर्चते— इनका प्रत्यक्ष पूजन इनकी सुवर्णकी शीतल कनकर करे। पूजनके पूर्वोक्त देवसेनानाथ तथा सन्द नाम-मन्त्रोंमें आत्मपुष्प तिलोंसे स्नान करे, कनकर का भक्षण कर भूमिका कुलवती राधिकापर स्नान करे। त्रयसः कारण महीनोपे नारियल, महुलुंग (विजय नींबू), नरगि, कसस (कटहल), जम्बीर (एक भक्ष्यका नींबू), दक्षिण, अन्न, विष्णु, आमलक, कम्पकी तथा केर—इन

पदार्थ करे। वे फल उपलब्ध न हों तो उस कलमें उपलब्ध सेवन करे। अन्न-कल लक्ष्मी बने भोग अधवा कुकुरको 'सेनानी श्रीकांत' ऐसा कहकर लक्ष्मणको दे। नरगि कम्पसे सेनानी, सम्भूत, त्रैविदि, चम्पुख, गुह, महुलुंग, कर्मिक, लक्ष्मी, कलत्राहाप्रणी, जगन्निधि, शक्तिधर तथा इतर—इन अन्नसे कर्मिकिन्धन पूजन और नामोंके अन्तमें 'श्रीकांत' यह पद संज्ञित करे। यथा—'सेनानी श्रीकांत' इत्यदि। इसके पश्चात् ब्राह्मणोंको भोजन काज्जल भी यौन लेकर भोजन करे। समाप्त होनेपर कर्मिक मन्त्रोंके द्वारा विष्णु की मूर्तियों का, आभूषण आदिकों कर्मिकिन्धन पूजन एवं स्नान करे और सब सामग्री ब्राह्मणकी अर्पण दे।

इस विधिमें ही पुनर्वसु की इस प्रणाली करते हैं, वे उक्त पद्योंको प्राप्त इन्द्रलोकमें विद्यमान करते हैं, अतः ! अतः सदा प्रत्यक्षपूर्वक पूजन करना उपायार्थक तो पूजाका विशेष फल है। जो उपाय कुमारलक्ष्मी इस प्रकार पूजनकर बुझके रित्ये जाता है, वह अवश्य ही विजय प्राप्त करता है। विष्णुपूर्वक पूजा करनेपर मन्मथान् कर्मिकिन्धन पूर्ण प्रसन्न हो जाती है। जो नहींको नाराजत है, वह सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर लोकमें जाता है। दक्षिण दिशामें जाकर जो पत्नीपूर्वक कर्मिकिन्धन और पूजन करता है, जो सदा सत्कृत्योदय है, वह बहुत कलत्रात्मक सुख भोगकर पुनर्वसु जन्म प्राप्ति करता है, वह सब उपाय सेनापति होता है।

(अष्टावली ४२)

### विजयसप्तमी-व्रत

पुत्रिहारे पुनर्वसु—देव ! विजय-सप्तमी-व्रतमें विजयकी पूजा की जाती है, उसका क्या विधान है और यह फल है ? इसे आज कलालोंकी कृपा करे।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—उन् ! तुमल कलाली सप्तमी विधिमें यदि आदित्यकर हो तो उसे विजय सप्तमी कहते हैं। यह सभी पातकोंका विनाश करनेवाली है। उस दिन

विजय हुआ सन, दान, जप, होम तथा उपवास आदि कार्य अवश्य फलदायक होता है। जो उस दिन फल, पुष्प आदि लेकर मन्मथान् सूर्यकी प्रदक्षिण है, वह सर्वगुणसम्पन्न उक्त पुनर्वसु प्राप्त है। पहली प्रदक्षिणा नरियल-फलसे, दूसरी सत्तनगरसे, तृतीया विजय नींबूसे, चौथी कटलीफलसे, पाँचवीं जेठ कुम्भकसे, छठी पके हुए

तैदूके फलोंसे और ताज्ज्व कृताक-फलसे का जलवा  
 अष्टोत्तरशतं प्रदक्षिणा करे। मोरी, नीरम्, पत्र,  
 गोमेद, हीरा और वैदूर्व आदिसे भी प्रदक्षिणा करे तथा  
 अखरोट, केर, कटौदा, (अण्डा),  
 जामुन आदि जो भी उस फल-पुल मिले  
 प्रदक्षिणा करे। प्रदक्षिणा करते समय बीचमें बैठे खड़े, न  
 किसीको स्पर्श करे और न किसीसे बात करे। एकाग्रचित्तसे  
 सूर्यमण्डल प्रसाद है। कुछसे  
 कर्मोर्ध्व भी दे। किङ्किनीयुक्त ध्वज तथा डेरा एक चक्रसे  
 और फिर कुकुम्भ, गन्ध, पुष्प, धूप तथा नैवेद्य अदि उपचारोंसे  
 पूजन करनेसे भगवान् सूर्यसे सन्त-प्रार्थन करे—  
 धाम्ने मार्तण्ड चक्रवर्त्तने दिव्यधनः ।  
 आरोग्यमाधुर्विजयं पुनं देहि मन्त्रेण्यु देव ।  
 (उत्तरपर्व ४३। १४)

इस व्रतमें उपवास, नानात अभ्यास अभ्यसित-रत करे।  
 इस विजय-सप्तमीका नियमपूर्वक रत करनेसे ऐश्वर्य ऐश्वर्य  
 मुक्त जाता है, एतद् लक्ष्मी प्राप्त करता है, पुत्रपौत्र पुत्र  
 प्राप्त करता तथा विद्याभी प्राप्त प्राप्त करता है। सुवर्त  
 पक्षमें आदित्यमण्डलगत सप्त सप्तमीमें नानात कर पूजन

### आदित्य-मण्डलान्न-विधि

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज ! अब मैं समस्त  
 अनुष्ठान निवारण करनेवाले श्रेष्ठतम आदित्य-मण्डलान्न  
 दानका वर्णन करता हूँ। जो मण्डल गोधूमके धूमि मुद्र  
 गीके धृतमें मण्डलान्न पक्कन सूर्यमण्डलके  
 समान एक अति सुन्दर अक्षुप्त बनये और फिर सूर्यमण्डलान्न  
 पूजनकर उनके आगे सप्तमण्डलका मण्डल अक्षिपत्कर उसके  
 ऊपर वह सूर्यमण्डलान्नका मण्डल (एक प्रसरकर निकल)  
 रहे। आहुणको सप्तर आमन्त्रित कर सप्त वक्त्र तथा  
 दक्षिणसहित वह मन्त्रोंसे पढ़ते आहुणको  
 करे—

अदित्योऽस्तोमस्यै तवै विधिविधिम् ।

पूजन करके आहुण पश्चात् पत्तोंपर राखन करना  
 चाहिये। इस प्रकार अतर्ही सप्तमिपर सूर्यमण्डलान्न पूजनकर  
 (अष्टोत्तरशतं नमः) से अष्टोत्तरशतं हवन करे।  
 सूर्यमण्डलान्न सूर्यमण्डलान्न स्थित कर रक्तवस्त्र, गौ और दक्षिण  
 इस मण्डल करते आहुणको प्रदान करे—

अहो मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं

मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं

(उत्तरपर्व ४३। १३-१४)

मण्डल-दान, आहु, पितृार्पण आदि कर्म करे।  
 इस व्रतमें करनेसे मण्डलान्न दान जन्म हो जाती है,  
 विजयकी इच्छाकरते एकाको मुद्रमें विजय अवश्य प्राप्त  
 है। एकाको वह विजयपराधीन कर्मसे विमुक्त है। इस  
 व्रतमें विजयपराधीन पुत्र विजयपराधीन पत्नी सुखोंको भोगकर  
 सूर्यमण्डलान्न निकल करता है और फिर पृथ्वीपर जन्म ग्रहणकर  
 राजा, कोणी, विद्वान्, दीर्घायु, योगी, सुखी और द्रव्य, धौड़े  
 तथा सम्पन्न वक्त्र राजा है। यदि जो इस  
 व्रतमें तो वह पुण्यभोगीने ऊपर उक्त मण्डलान्न प्राप्त  
 है। एका ! इसमें आपकी विधि भी संदेह नहीं करना  
 चाहिये। (उत्तरपर्व ४३)

मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं

(उत्तरपर्व ४३। १५)

मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं

मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं

मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं मण्डलान्नं

(उत्तरपर्व ४३। १६)

इस विजय-सप्तमीको मण्डलान्न दान करने और  
 सप्तमि को सूर्यमण्डलान्न लिखे मुद्राभावसे नियम  
 ही मण्डल प्रदान करे। इस विधिसे जो मण्डलान्न दान करता  
 है, वह भगवान् सुखी अनुग्रहसे होता और  
 सूर्यमण्डलान्न भगवान् सूर्यसे उक्त सुरोपित होता है।  
 (अध्याय ४४)









'सवित्रे नमः' इस नाम-मन्त्रसे गन्ध-पुष्प आदिसे सूर्यकी पूजा करे। जलपूर्ण कलशके ऊपर शम्बरसे षट् पूर्यपत्र स्थपित करे। उस कलशको रक्त बक, श्वेत मारुत आदिसे अलंकृत करे, साथ ही वहाँ एक सुवर्ण-चिह्नित जल भी स्थपित करे। तत्पश्चात् भगवान् सूर्यका मन्त्रावाचन इस मन्त्रसे करे—

विन्दोदेवमको वरुण्य वेदवादीनि यजमाने ॥  
तन्वेकामृतसर्वकामाः ॥ सविः सन्नाम ।  
(आरपर्व ५९ : ५-६)

॥ भगवान् सूर्यदेव । यह सदा विजय एवं सन्धि देकर आपके ही स्वल्प हैं, इस कारण आपको ही वेदोंका रक्षण एवं अमृतसर्वत्र बका गया है। हे सन्नामदेव । मैं भी ऐसा करे।'

चदनपत्र सौरपुष्पका<sup>१</sup> यप ॥ अथवा सौरपुष्पका<sup>२</sup> लक्षण करे। माहुरीको प्रसक्त ठठकर जल आदि-पुष्पका<sup>३</sup> भगवान् सूर्यका पूजन करे। जलपान् सही लक्ष्मी

### कामरसपानी-अष्ट<sup>४</sup>

भगवान् श्रीसूर्यज कोले—सकारण । अथ ही कमलप्रपादनी-व्रतका वर्णन ॥ है, जिसके नाम ॥ है। भगवान् सूर्य प्रसन्न हो ॥ है। प्रप्तुमें सुखस पक्षकी सपत्नीको प्रसन्नकरा करके सरतोवृक्ष बका जल करे। एक पात्रमें तिल रखकर उसमें सुवर्णज कमल भजकर स्थापित करे और उसमें भगवान् सूर्यकी पूजा कर दो कालोंसे आधृत करे तथा गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे ॥ निमित्तित्त तत्त्वोंको प्रार्थना करे—

नमस्तो ॥ नमस्तो विष्णुपतिने ॥  
विष्णुकर नमस्तुभ्यं प्रणम्य नमोऽस्तु ते ।  
(सकल ५० : ३-४)

तदनन्तर बक, मारुत तथा अलंकारोंसे सुसज्जित उस

॥ गङ्गाजले देकर शर्करा, घृत और चापससे यथाशक्ति गङ्गाज-प्रेषण करावे। साथ ॥ घृत होकर तेल और सव्यजलित प्रेषण करे। इस विधिसे प्रतिष्ठापित पत्र करके वर्ष घृत होनेपर यथाशक्ति ठठकर शष्पा, दूध देनेवाली गन्ध शर्करापूर्ण पत्र, गृहस्थके उपकरणोंसे युक्त मन्त्रान तथा अपनी सव्यजलित ॥ ॥ इन्कर ॥ एक सौ ॥ निक ॥ बक हुआ एक ॥ गङ्गाजले टुन करे। भगवान् सूर्यके मुखसे अमृतजन करते समय जो अमृत-विन्दु गिरे, उनसे शक्ति (आहारी जल), मृग और इष्ट उपज हुए, लक्ष्मी ॥ कर है, इसीसे इत्य-काम्यमें ॥ शर्कराकर ॥ करण भगवान् सूर्यको अति प्रिय ॥ ॥ यह शर्करा अमृतजन है। यह शर्करासपत्नी-व्रत अक्षय्य बका ॥ देवेकाल है। इस व्रतके करनेसे संताननी वृद्धि होती है तथा समस्त उन्नय प्राप्त हो आते हैं। इस व्रतका करनेवाला स्वर्ग एक ॥ जगति निवसकर अन्तमें मोक्ष प्राप्त करता है<sup>५</sup> ।  
(अध्याय ४९)

उदकपुष्पको ॥ ॥ पूजाकर प्रदान कर दे। दूसरे दिन आहुरीको यथाशक्ति ॥ ॥ प्रेषण करावे और साथ ॥ ॥ विरुद्ध प्रेषण करे। इसी प्रकार कईकाल प्रत्येक ॥ ॥ दूध ॥ प्रतिपूर्वक व्रत करे। प्रसक्त सम्पत्ति ॥ प्रतिपूर्वक सुवर्ण-कमल, सुवर्णकी पक्षीकी भी, अनेक पात्र, जालन, दीप तथा अन्य ॥ ॥ गङ्गाजले टुनमे दे। इस ॥ ॥ जो कमल-सपत्नीका व्रत करता है, वह अनन्त लक्ष्मीको प्राप्त करता है और सूर्यदेवको व्रत होकर निवास करता है। ॥ ॥ कर सदा लक्ष्मीमें निवास करत हुआ अन्तमें परमाश्रितों प्राप्त है ।

(अध्याय ५०)

१-अथोक्ते ॥ अध्याय ५०-वर्ष ॥ सूर्यपुष्प या सौरपुष्प ॥ ॥ है।

२-सौरपुष्पको ॥ आरपर्व ॥ पक्षिपुष्प और जलपुष्प । अथवा सौरपुष्पके नामसे ॥ ॥ जो सूर्यपुष्प है, पक्षिकों के सौरपुष्प है और नहीं ।

३-पक्षिपुष्प ॥ अध्याय भी जलपुष्पको ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ है ।

४-वर्ष व्रत-निमित्त एवं पुण्यमें इसे ही ॥ ॥ ॥ ॥ है ।

### शुभसप्तमी-उत्सव विधि

भागवान् श्रीकृष्ण बोले—एक! उस में एक दूसरी  
 वर्णन है। यह शुभसप्तमी है।  
 इसमें उपवासकर अति रोग, शोक तथा दुःखोंसे मुक्त हो  
 जाता है। इस पुण्यप्रद व्रतमें अश्विन मासमें (शुक्ल पक्षकी  
 सप्तमी तिथिमें) स्नान करके भस्म [ ]  
 स्नानाधिकार कराये। वन्दनस्तोत्र मन्त्र, मन्त्र तथा अमुनेपद्धतिसे  
 प्रतिपूर्वक करिता गौत्र निम्नलिखित मन्त्रसे पूजन करे—

मयाधि सूर्यस्तोत्राच्छोभन्मुखात्तन्मया ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ शुभसप्तमीसप्तमी ॥

(अथर्व ५१ (१-४))

‘देवि । भव सूर्यसे उत्पन्न हुई है और सम्पूर्ण लोकोंकी  
 अन्नपदात्री । [ ] सुरोभन भक्तियोंसे युक्त है,  
 अम्बसे मैं समस्त सिद्धियोंकी [ ]  
 करता हूँ।’

तत्पश्चात् तावत्पश्चमे [ ] [ ] रखकर उत्पन्न  
 पुष्यपक्षी तर्पण-प्रतिभा अर्पित करे और उसकी घण्टा, माला,  
 गुड़ आदिसे पूजा करे। सायंकालमें ‘अर्चन ओषधम्’ [ ]

(अथर्व ५१)

### सप्तमी-स्नानागत और [ ]

महाराज सुविद्विने पूजा—मन्त्रे ! मनुष्यके अपने  
 मनमें उत्पन्न होकर [ ] होकर-विशेष और [ ]  
 निवृत्तिके लिये अद्भुत-रात्रिके विहित और-ता पर्य-कृत्य  
 करना चाहिये ? मृतकत्वा वहीमे (विशेषके लिये पैदा होकर मर  
 जाते हैं) अपनी संज्ञिकी रक्षा और दुःखपरिहारी [ ]  
 लिये [ ] करना चाहिये ?

भागवान् श्रीकृष्ण बोले—एक! पूर्वकालके पर  
 इस जन्ममें रोग, दुर्गति तथा इष्टजन्मकी मृत्युके कारणसे परित  
 [ ] है। उनके किम्वदन्तके लिये मैं कल्याणकारी सप्तमी-स्नान  
 नामक व्रतका वर्णन कर रहा हूँ, यह लोककी पीड़का मित्रता  
 करनेवाला है। यहाँ दुग्धमुक्त शिशुओं, कुटो, अद्भुत और  
 नवयुक्तोंकी आश्चर्यमय मृत्यु होती देखी जाती है, यहाँ उसकी  
 स्तुतिके लिये इस ‘मृतकसाधनिक’ को [ ] [ ] है।

[ ] तब सप्तमी प्रतिपूर्वक आहुतियोंसे निवेदित करे।  
 [ ] पञ्चगव्य प्रारम्भ करे तथा भूमिपर ही मत्स्यर्पण  
 लेकर स्नान करे। [ ] प्रतिपूर्वक आहुतियोंसे पूजा आदिसे  
 संतुष्ट करे। [ ] अस्मिन् [ ] ब्रह्म, [ ] ब्रह्म और गौ  
 [ ] पूजनपूर्वक स्नान करे। संवत्सरके अन्तमें ईश, गुरु,  
 ब्रह्म, [ ] अस्मिन्, गुरु, तत्किम् आदिसे सम्पत्ति स्थापना,  
 [ ] सेर सितसे पूर्व जन्म-जन्म, सौम्य पुष्य ‘विद्याया  
 श्रीकृष्ण’ काकर सेर सप्तमीको [ ] करे। इस विधिसे  
 शुभसप्तमी-उत्सव [ ] [ ] जन्म-जन्मसे [ ]  
 एवं [ ] [ ] है और दैत्यलोकमें युद्धित तथा प्रलयपर्यन्त  
 मुक्तिपर [ ] है। [ ] कल्पके [ ] यह पुष्यपर [ ]  
 [ ] [ ] सप्तमी होता है। [ ] पुण्यपक्षिणी  
 शुभ-सप्तमी [ ] काव्य [ ] सैकड़ों भूतलगा आदि  
 [ ] ब्रह्म [ ] है। [ ] शुभ-सप्तमीके आहुतियोंसे जो  
 [ ] अथवा [ ] भी सुनता है, वह [ ] सुननेपर  
 [ ] होता है।

(अथर्व ५१)

[ ] सप्तमी अद्भुत उत्पत्ति, [ ] और चित्त-प्रतीति [ ]  
 [ ] है।

गुरु-कल्पके वैश्वत मन्त्रान्तर्गते सप्तपुत्रमें हैहयर्षरश्मि  
 [ ] कुलकी प्रोभा मन्त्रान्तर्गत कुलकीर्ष नामक एक [ ]  
 [ ] [ ] [ ] उत्पन्न होकर वर्षातक धर्म और नीतिपूर्वक  
 सम्पत्ति प्राप्तकर पालन किया। उसके सौ पुत्र थे, जो  
 मन्त्रान्तर्गते अस्मिन् दत्त हो गये [ ] राजाने भगवान् सूर्यकी  
 विधिपूर्वक उपासना प्रारम्भ [ ] कुलकीर्षके उपवास-व्रत,  
 [ ] और लोकसे संतुष्ट होकर भगवान् सूर्यने उसे अपना  
 दर्शन किया और कहा—‘कुलकीर्ष ! तुमने (कार्तवीर्य नामक)  
 एक सुतरा एवं विद्वत् पुत्र उत्पन्न होगा, किन्तु तुमने अपने पूर्वकृत  
 पापोंसे विनाश करनेके लिये स्नान-सप्तमी नामक व्रत कल्या  
 पड़ेगा। तुम्हारी मृतकत्वा परीक्षा के पुत्र उत्पन्न हो जाय तो

१-पवित्रपुत्रकाम [ ] अथर्व मन्त्रान्तर्गत (अथर्व ८०) में इसी मन्त्र का उल्लेख है।

२-सायंकालीय ‘अद्भुतपुत्रकाम’ [ ] २६) तथा [ ] (०२) में अद्भुत-रात्रिके [ ] उल्लेख है।

साल महीनेपर बालकको जन्म-नक्षत्रकी [ ] छोड़कर [ ] दिनमें मूढ एवं ताण्डलको देवकर ब्राह्मणोंद्वारा स्नान-कर्म [ ] चाहिये। इसी प्रकार पुत्र, रोषी [ ] अन्य लोगोंके लिये किये जानेवाले इस कर्ममें जन्म-नक्षत्रको परित्याग कर देना चाहिये। गेहदुग्धके साथ लाल अगड़नीके जवाबरोसे हज्जाम पत्राकर मातृकज्यो, भस्मन् सूर्य [ ] तुष्टिके [ ] अर्पण करना चाहिये और [ ] भस्मन् सूर्यके नामसे आश्रमे [ ] अक्षुतिर्व प्रदान [ ] चाहिये। फिर कर्ममें उदरसूत्रमें भी अक्षुतिर्व देनी चाहिये। [ ] आशुतिमें [ ] एवं पत्न्याकी समिप्य प्रसूत [ ] चाहिये तथा हवन-कर्ममें [ ] सिल, [ ] एवं पीपई एक सौ अठ्ठ अक्षुतिर्व प्रदान करनी चाहिये। हवनके बाद रौतला गङ्गाजलसे कान धुकर चाहिये। उदन्तर कर्ममें कुल [ ] हुए वेद ब्राह्मणद्वारा चारों ओरोंमें बार सुन्दर कसरत [ ] कराये; पुनः उसके [ ] रौतर्व करारा [ ] करे। उसे दही-मखराले विभूषित करके सूर्यस्तम्यकी उक्त प्रथाओंसे अभिषिक्त कर दे। फिर उसे तीर्थ-जलमें धरकर उसमें लव या सुवर्ण डाल दे। इस प्रकार लव विलसत सर्वाभिधि, पञ्चगव्य, पञ्चाम, फल और पुष्प डालकर उसे बड़ोंसे परिभक्षित [ ] दे। छात्रोत्तर, पुत्रराज, विभीट, नदीके संगम, तालाव, गौरवला [ ] एवम्—इन [ ] धात्योंसे शुद्ध मृत्तिका स्तम्भ बन गयी करारोंमें डाल दे।

उदन्तर ब्राह्मण राजर्षित चारों कलाओंके धर्ममें विद्वान् पण्डित कलाको ज्ञधमें लेकर सूर्य-मन्त्रोक्त पाठ [ ] तथा सारा सुलक्षण विधोद्वारा जो पुष्प-माला और वस्त्रभूषणोद्योग पूजित हो, ब्राह्मणके [ ] पक्षके उत्तरे मृत्पत्रका बीज [ ] करायें। (अभिषेकके समय [ ] प्रकर कहे—) 'यह कालक दीर्घानु और यह सौ दीर्घपुत्र [ ] पुत्रवाली) [ ]। सूर्य, ग्रहों और नक्षत्र-सम्बन्धोद्घीत चन्द्रमा, इन्द्रसहित लोकपालागण, ब्रह्म, विष्णु, मोक्ष इनके अतिरिक्त

अन्य देव-समूह इस कुम्भकी सदा रक्षण करें। सूर्य, शनि, अग्नि अथवा अन्य जो कोई बालक हो, वे सभी इस कलाको [ ] इसके मन्त्र-पित्रको कहीं भी कल [ ] 'पुत्रोत्तर'।' अभिषेकके पश्चात् वह स्त्री [ ] धारण करे [ ] और पतिके साथ उन सारों विधियोंकी भक्तिपूर्वक पूजा करे। पुनः पुत्रकी पूजा करके धर्मराजकी सर्गमयी प्रतिमा तालकके ऊपर स्थापित करके गुल्मसे निवेदित कर दे। उसी [ ] कुम्भका छोड़कर अन्य ब्राह्मणोंका भी वस्त्र, सुवर्ण, रत्नमण्ड अदिसे पूजन [ ] ठहरे [ ] और खीरसहित धन्य पदार्थोंका भोजन कछये। भोजनोपरान्त गुहदेवको बालककी रक्षाके [ ] इन मनोवश उपकरण करार चाहिये—'यह [ ] [ ] से वर्षोंतक सुखका उपभोग करे। इसका [ ] कुछ पाप था, [ ] डाल दिया गया। [ ] कमलग, कन्द, विष्णु, इन्द्र और अग्नि—ये सभी पुत्र [ ] रक्षा [ ] और सदा इसके लिये बरदायक हों।' इस प्रकारके कर्मका उपचार करनेवाले गुहदेवको कलक पूजन करे। अपनी शक्तिके अनुसार उन्हें एक कपिरा [ ] प्रदान [ ] प्रभाव करके [ ] करे। तत्पश्चात् मृत्पत्र [ ] पुत्रको गेहमें [ ] सुपदिव और धातुका [ ] करे और हवनसे कहे [ ] हज्जामको 'सूर्यको कलकर है'—यह कहकर खा जाय। यह कल [ ] और दुःखादिमें भी प्रसन्न माना गया है।

इस प्रकार कलिके जन्मदिनके नक्षत्रको छोड़कर शनि-ग्रहोंके हेतु मुक्त [ ] सत्यकी [ ] सदा (सूर्य और संकरत्व) पूजन करना चाहिये, [ ] इस कलाका अनुष्ठान करनेवाला कभी कहमें नहीं पड़ता। जो मनुष्य इस विधानके अनुसार इस कलाका लव अनुष्ठान करता है, वह दीर्घानु होता है। (इसी कलके प्रकथने) चार्त्तकीयोंने इस हजार वर्षोंतक इस पृथ्वीपर शासन किया था। राजन्! इस [ ] सुपदिव इस पुत्रराज, परम पवन और आधुवर्षक संपत्तीजनन-व्रतका

१-दीर्घपुत्रा कलेश्वरी दीर्घपुत्र [ ] शनिः। अतिरिक्तप्रकरण [ ] कलशमन्त्रम् ॥  
शक्रः [ ] देवः सदा यन्तु पुत्रकम् ॥  
यः शनिम् स ह्यपुत्रः यः च ब्रह्माक्षः कथितः। पीठं पुत्रं कलसः च कलशमन्त्रम् ॥ (ज्वलन्वर्ष ५२। २६—२८)

२-दीर्घपुत्रा कलेश्वरी पञ्चगव्यं सौख्यं। अतिरिक्त [ ] अतिरिक्त कलशमन्त्रम् ॥  
[ ] यो विष्णुः कण्ठे यन्तु [ ] पुत्रोत्तरः [ ] पुत्रोत्तरः कलसः यन्तु कथितः ॥ (ज्वलन्वर्ष ५२। ३२-३३)

विधान करताकर यही अर्थात् है । मनुष्यको सुखसे नीचेगता, अग्निसे बन, ईश (शिवजी) और यमजन्मनाईनसे मोक्षकी अभिलक्षा चाहिये । इस

बड़े-बड़े विचारक, बाल-वृद्धिभारक तथा जो मनुष्य होकर इस-विधानको सुनता है, उसे इस छोटी है । (अध्याय ५२)

### अवकाशसप्तमी-ज्ञात-काल तथा ज्ञात-विधि

राजा सुधिहिरने पूछा—भगवन् ! आपने सभे ज्ञान परलोकसे देनेवाले भावकानन्द विधान बताया था, परंतु जो ज्ञात-काल ज्ञान करनेमें समर्थ न हो तो वह क्या करे ? किसे अग्नि सुकुमारो है, वे किस प्रकार भावकानन्द कह जान कर सकती हैं ? इसलिये आप कहें ऐसा उपाय बतावे कि धीरे-धीरे परिक्रमसे भी नरिकोको ज्ञान, सौभाग्य, संतान और अनन्त पुण्य प्राप्त हो सके ।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—भगवन् ! अवकाशसप्तमीके अवकाश गोपनीय है । इस उपाय करने वाला है । इस कालमें आप सुने—

प्राग्वह देशमें ज्ञात कालके अनुसार एक वर्ष रहती थी । एक दिन वह देश ज्ञात-काल की-सी संसारी अनवस्थिति (नकारता) का इस प्रकार किता लगी—देखो । यह विषयकी संसार-समस्त है, जिसमें सूतो हुए जोध जन्म-मृत्यु-जन्म जन्म जन्म-जन्मोंमें पीड़ित होते हुए भी किसी प्रकार पर उतर नहीं पाते । ज्ञातकीके द्वारा यह प्राणिसमुदाय अपने गंध कर्मकी ईशानसे एवं कालकाय अग्निसे दग्ध कर जाता है । प्राणिमोक्ष जो बर्ष, वर्ष, कालमें रहित दिन व्यतीत होते हैं, वे कहां जायस जाते हैं ? किस दिन ज्ञान, दान, तप, होम, स्वाध्याय, विवर्तन, सत्य नहीं किया जाता, वह दिन वर्ष है । पुन, खी, पर, होम तथा धन आदिकी है । मनु है ।

दशोपती है ।

जकार निर्दिष्ट—अग्नि सोचती—इन्द्रजी केवल महर्षि वसिष्ठके आश्रममें गयी । जोड़कर कहने लगी— ! मैं । कभी कोई दिव्य, न जप, तप, उपवास किया और न शिव, विष्णु आदि आराधना की, अब कर्मकर संसारसे बंधीत होकर हरण हैं, मुझे कोई ऐसा ज्ञात बतावने, जिससे मेरा उद्धार जाय ।

बोले—‘वाचने । सुभ आश्रमके ज्ञान करो, सौभाग्य और सति का प्राप्त हो । दिन एक ऐसे नदीत अथवा जकार रोपण और ज्ञान करो, जिसके जलको न हो, नालके प्रक्षालित कर है । यथाशक्ति दान भी करो । इससे तुम्हारा होगा । ऐसा सुनकर इन्द्रजी कर्मक लौट आयी द्वारा बतायी गयी । यदि कर्मोंको समस्त किया । सप्तमीके ज्ञानके प्रभावसे बहुत दिनोंतक संसारिक सुखोंका उपभोग करती हुई वह देह-रुग्णके पक्ष में देवराज इन्द्रजी अपराधोंमें ब्रह्म नरिभक्तके पद पर अधिष्ठित हुई । यह अवकाशसप्तमी सम्पूर्ण फलोंका प्रशस्ति करनेवाली तथा सुख-सौभाग्यकी वृद्धि करनेवाली है ।

सुधिहिरने पूछा—भगवन् ! अवकाशसप्तमीका माहात्म्य आपने कृपकर ज्ञानकर

१-अग्नि परलोकसे देनेवाले भावकानन्द विधानकर्ता । श्रीकृष्णजीको सुकुमारो नाम । (उपनिषद् ५२।३९)

२-भविष्यपुराणम् । अध्याय भावकानन्द (अ-६८) ।

३-यह सप्तमी पुराणोंमें राध, सूर्य, अर्क, ज्ञानी, पुनर्जन्म आदि जन्म और अनेक पुराणोंमें उन-उन नामोंसे विविधों निर्दिष्ट । जिसमें सप्तमी पूर्ण है ।

४-पुराणोंका परलोक सत्य है । भावकानन्द विवृत कालको एवं कालको ज्ञान है । इनमें कभी सुखा एवं कभी है ।

भी बतलावे।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—यह ठीक ! वहींके दिन एकमुक्त होकर सूर्यास्तवकाल पूजन करे। प्रातःकाल ही उठकर नमस्कार करे। अठ्ठोदय आदि घेलने बहुत सखी की स्नान करनेकी चेष्टा करे। सुपर्ण, चँदी अथवा ताम्रके पात्रमें कुसुमपत्री रोषे हुई जली और तिलका तैल अथवा टीका प्रक्षालित करे। उस दीपकमें तिरफ रखकर इन्द्रमें भगवान् सूर्यका इस प्रकार ध्यान करे—

सूर्योदयः सूर्योदयः ।  
सूर्योदयः सूर्योदयः ।  
सूर्योदयः सूर्योदयः ।  
सूर्योदयः सूर्योदयः ।  
सूर्योदयः सूर्योदयः ।  
सूर्योदयः सूर्योदयः ।  
सूर्योदयः सूर्योदयः ।  
सूर्योदयः सूर्योदयः ।

(सूर्योदयः ५।१०-१५)

तदनंतर दीपकमें जलके ऊपर तैल दे फिर स्नानकर देवात और चित्तोंका तर्पण करे और कन्दनसे चर्मिकासहित अहवाल-कमल बनावे। उस कन्दन में चर्मिकासहित स्नानकर प्रणव-मन्त्रसे पूजा करे और पूजाके अठ्ठ शब्दों

### बुधाष्टमी-कथा तथा यज्ञसंध्य

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—यह ठीक ! अब मैं बुधाष्टमीकथा विधान बतलाता हूँ, जिसे करनेतक कभी नरकवास मुख नहीं देखता। इस विषयमें अब एक उल्लासन सुने। सत्ययुगके प्रारम्भमें मनुके पुत्र राजा इल<sup>१</sup> हुए। वे अनेक मित्रों तथा भृत्योंसे रहते थे। एक दिन वे भृगुके प्रसेवसे एक पीला करते हुए शिवलोक गये। वहाँ शिवजी और माता पार्वतीजीका पिछर-शेख था। वहाँ शिवजीकी यह भी कि 'जो पुरुष इस वनमें प्रवेश करेगा, वह तत्क्षण ही जी हो जायगा।' इस राजा भी जी हो गये। अब वे

पुत्र, रवि, विष्णु, ब्रह्मा, सविता, अर्क, तथा सर्वात्मका पूजन करे। नामोंके आदिमें 'अर्क' तथा अन्तमें 'मः' पद लगाने। यथा—'अर्कः सूर्योदयः', 'अर्कः सूर्योदयः' इत्यादि।

इस प्रकार पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य तथा वस्त्र आदि विधिपूर्वक भगवान् सूर्यकी पूजाकर 'सूर्योदयः' यह कहकर विनम्रित कर दे। बादमें ताम्र अथवा सिंदूरके चर्ममें पुष्प कृतसहित तिलपुर्ण सुवर्णका ताल-पत्राकर एक मन्त्रकर अभूषण बनाकर पात्रमें रख दे। अनंतर तालकासे उसे डीकर पुष्प-धूपद्विसे पूजन करे और वह पत्र दीर्घाय तथा दुःखोंके विनाशकी मन्त्रासे जलानकी दे दे। मन्त्र—'सत्ययुगसुभगाय वैजयंतीं प्रीत्याम्' पुत्र, पत्नी, पुत्र-सम्पत्ति ऊपर भगवान् सूर्य प्रसन्न करें—ऐसी प्रार्थना करे। फिर गुल्फे घास, तिल, गी और दहीका देकर तथा यथावहित अन्य जलानकी भोजन करकर सूर्य पूजा करे।

पुष्प इस विधिसे अचलासखीकी स्नान करता है। सूर्य पूजा प्राप्ता होता है। जो इस विधिसे सूर्य या सूर्योदय लीलाकी इसका जलदा करेगा, वह उत्तम अक्षय प्राप्त करेगा।

(अध्याय ५३)

इससे वनमें विचारण करने लगे। वे यह नहीं समझ सके कि मैं कहाँ जा गया हूँ। उसी समय ब्रह्मका पुत्र कुमार बुधकी दृष्टि ऊपर पड़ी। उसके उत्तम रूप आकृष्ट हो बुधने उसे अपनी स्त्री बना लिया। इससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम पुत्रका नाम पुत्रका नाम ब्रह्मदेवका प्रारम्भ हुआ। जिस दिन बुधने इससे विवाह किया, उस दिन जहनी विधि थी, इसलिये बुधाष्टमी जगत्में धूम्य हुई। यह बुधाष्टमी सम्पूर्ण धर्मका प्रारम्भ तथा धर्मकी नारा करनेवाली है।

राजन् ! अब तक दूसरी कथा सुना रहा हूँ—विदेह राजाके नगरी मिथिलामें निधि नामके एक राजा थे।

१-इसका नाम सुतगुप्त था, किन्तु पुत्रीके उल्लास में 'इल' और बादमें पुत्र-उल्लास में 'इल' नाम पड़ा। कथा यह सभी पुराणों में मिलती है।

■ शत्रुओढ़ारा लड़ाईके मैदानमें मर गये । ■ खोज नाम था उर्मिलता । उर्मिलता जब राज्य-च्युत एवं ■ हो इधर-उधर घूमने लगी, ■ अपने जालक और कनकको लेकर ■ अवधि देहा ■ और वहाँ एक लड़ाईके ■ पर्यन्त ■ निवास करने लगी । ■ ■ थी, गेहूँ पीसते समय वह बोझसे गेहूँ कुत्तर रत ■ उसीसे कुत्तसे पीड़ित अपने ■ चलन करते । कुछ समय बाद उर्मिलामन देहात छोड़ा । ■ पुत्र गया, वह अवधिले निधिरा ■ और मिलके ■ पुनः प्राप्ताकर शासन करने ■ कहन ■ विप्लव-योग्य ■ गयी थी । वह अवधत ■ थी । अन्तिमदेसके राजा ■ उसके उत्तम कनकी ■ उसे ■ लगी बना लिया ।

एक दिन चर्मराजने अपनी प्रिया स्वामलसे कहा— 'सौदेहिनियि ! तुम और सभी ■ तो करत, परंतु वे सात स्थान बिनमें ■ इनके ■ कभी ■ जना ।' स्वामलाने 'बहुत अच्छा' ■ बात ■ परंतु ■ कुतुहल ■ रहा ।

एक ■ चर्मराज अपने ■ कनकसे, ■ स्वाभलने एक मन्त्रजन्त ताला खोलकर वहाँ देखा ■ उसकी मरता उर्मिलालके अति चरकन समझत ■ तथा ■ कड़ाहमें ■ रहे हैं । ■ होकर स्वाभलने वह कमरा बंद कर दिया, फिर दूसरा मास ■ तो देखा ■ वहाँ भी उसकी मासको समझत लिलके ऊपर रखकर ■ रहे ■ और भात चिल्ला रही ■ । इसी ■ उसने तीसरे कमरेको खोलकर देखा ■ समझत उसकी ■ मरतको लोहेकी खिल ठोक रहे हैं, इसी तरह चौथेमें अति ■ कन उसका भक्षण ■ रहे हैं, पाँचवेंमें लोहेके छंदसे उसे ■ कर रहे हैं । छठेमें कोल्हूके ■ समझत पेरी ■ रही है और सातवें स्थानपर ताला ■ ■ उसकी मरतको इज्जतें कृषि ■ रहे हैं और वह ■ अर्द्धसे लक्षपथ हो रही है ।

यह देखकर स्वाभलने विचार किया कि मेरी मरतने ऐसा कौन-सा पाप किया, जिससे वह इस दुर्दिवसे ■ हुई । वह

खोजकर उसने सारा वृत्तान्त अपने पति चर्मराजको बतलाया ।

चर्मराज बोले—'प्रिये ! मैं इसीविषये कहा था कि वे सत तसे कभी न खोलना, नहीं तो तुम्हें यहाँ पक्षाघात होगा । तुम्हारी मरतने सतनके ■ ब्राह्मणके गेहूँ चुराये थे, क्या तुम इस कतको नहीं जानती हो जो तुम मुझसे पूछ रही हो । यह सब उसी कार्यका फल है । ब्राह्मणका धन लोहसे भी ■ को ले ■ सत कुल ■ प्राप्त होते हैं और कुत्तर खाते तो कतक चन्ना और लोहे हैं, तबतक नरकसे उबार नहीं होता । ■ गेहूँ इसने चुराये थे, वे ही भूमि बनकर ■ पक्षन कर रही हैं ।'

स्वामलने कहा—'महाराज । ■ मताने जो कुछ मैं पहले किया, वह सब मैं जानती ही हूँ, फिर ■ अब आप कोई ■ कथन बतलाये, जिससे मेरी मरतका मरकसे उबार हो जाय । ■ चर्मराजने कुछ समय विचार किया और कहने लगे—'प्रिये ! अबसे सत अन्न पूर्व तुम लड़ाणी थी । उस समय तुम्हने अपनी सखियाँके साथ जो बुधाष्टमीका व्रत किया था, ■ उसका फल तुम संकल्पपूर्वक अपनी मासको दे दो तो इस संकल्पसे उसकी मुक्ति हो जायगी ।' यह सुनते ही ■ बनकर ■ कतका पुण्यफल संकल्पपूर्वक मरतको अपने दान कर दिया । ■ मरतके प्रभावसे उसकी मरत भी उसी क्षण दिव्य देह धारणकर विमानमें बैठकर अपने ■ लक्ष्मिकेवन्दने करती गयी और कुछ ग्रहके समीप स्थित हो गयी ।

एक ! ■ इस मरतके विमानको भी आप सावधान होकर सुनें—जब-जब शुक्ल पक्षकी आष्टमीको शुभवार पड़े तो उस दिन एकमुक्त-व्रत करना चाहिये । पूर्वार्द्धमें नदी आदिमें स्नान करे और जहाँसे जलसे घरा तबिन कलश लाने घरमें स्थापित कर दे, उससे सेना छोड़ दे और बाँसके पात्रमें पक्वान्न भी रखे । अब बुधाष्टमिकेका व्रत करे और आठमिं क्रमसे ये अन्न पक्वान्न—मोदक, केरी, पीक अणूप, कटक, शेत चन्नासे ■ पदार्थ, लोहस्तक (खाँड़युक्त मशीकवर्तिका) और फल, पुष्प तथा पैनी ■ अनेक पदार्थ बुधको निवेदित कर कट्यमें ■ भी ■ इष्ट-विधिके साथ भोजन करे । खान हो बुधाष्टमीकी ■ मो सुने । बिना कथा सुने भोजन न करे । बुधकी एक मास (८ रात्री-एक मास) या





रोहिणी नक्षत्रमें मेरा जन्म हुआ<sup>१</sup>। वसुदेवजीके प्रातः काल देवकीके गर्भसे मैं जन्म लिया। वह दिन संस्कारमें सम्मिलित होने नामसे विख्यात होगा। प्रथम वह रात यमुनामें प्रविष्ट हुआ और बादमें सभी लोकमें इसकी प्रसिद्धि हो गयी। इस लोकमें करनेसे संस्कारमें शान्ति होगी, सुख प्राप्त होगा और अभिषेक गौरवहित होगा।'

महाराज सुविह्वलते कहा—वसन्त! अब आप इस वक्तव्य विधान कहलिये, [ ] आप प्रसन्न [ ]।

वसन्तान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज! इस एक ही वक्तव्य पर [ ] सत् जन्मके [ ] [ ] जाते हैं। [ ] पहले दिन दत्तात्रेय [ ] करके [ ] विष्णु प्रणम करे।

[ ] दिन यथाकामे आनन्द करता भगवन् श्री [ ] सृष्टिकार-गृह बनाये। उसे पदरागवर्णि और वस्त्रावली<sup>२</sup> आदिसे सुशोभित करे। गोकुलवासी शशि गोप, गोपी, पण्डित, ब्रह्म, शङ्ख और वाज्ररूप-कलाह आदिसे समन्वित तथा अस्त्रयुक्त सृष्टिकार-गृहके द्वारपर रक्षाके लिये खड़ा, कुल्ल काय, मुकुट आदि रखे। दीवालौपर स्वस्तिक आदि चित्ररूपक चिह्न बना दे। बाहीदेवीकी भी नैवेद्य [ ] साथ स्थापन करे। इस प्रकार यथाशक्ति उस सृष्टिकारगृहको विभूषितकर [ ] पर्वतके ऊपर मुकुटसहित अर्धसुनकरवालाकी, लक्ष्मीकी मूर्ति देवकीकी प्रतिमा स्थापित करे। प्रतिमापर माला प्रक्षालनी होती है—स्वर्ण, चाँदी, ताम्र, पीतल, मृत्तिका, कण्टकी, [ ] तथा चित्रमयी। इनमेंसे किसी भी धातुकी सर्वलक्षणसम्पन्न प्रतिमा बनकर स्थापित करे। माला देवकीकी लक्षण [ ] हुई [ ] प्रतिमा उनके [ ] परीणके [ ] स्थापन करे। एक कल्पके समय महा पशुदेवकी प्रतिमा [ ] वर्ण स्थापित [ ] जाय। सृष्टिकार-पण्डितके ऊपरकी पिरिधेमें देवका, ब्रह्म, नाग तथा विष्णुधर [ ] मूर्तिवाँ कपड़ोंसे पुष्प-वर्ण करते हुए बनाये। वसुदेवजीको [ ] सृष्टिकारगृहके बाहर खड़ा और दाल चारण किये चित्रित कानन चढ़िये। वसुदेवजी महर्षि करणके [ ] हैं और देवकी महा

अतिशक्ति। वसुदेवकी शेषनामके [ ] हैं, [ ] दक्षप्रणालिके, पशुदेव विदित्वी और गर्गमुनि ब्रह्मजीके अन्तर्गत हैं। वंश चलनेसिद्ध अन्तर्गत है। वंशके पशुदेवोंको सृष्टिकारगृहके आस-पास निद्रावस्थामें चित्रित करना चाहिये। श्री, [ ] अदि तथा नक्षत्री-गती हुई अप्सराओं और [ ] श्री बनाये। एक ओर कश्चित् नागको वसुदेवके [ ] करे।

[ ] प्रकार अत्यन्त समीप नवसृष्टिकार-गृहमें ऐसी [ ] [ ] पक्षिमें गन्ध, पुष्प, अमृत, धूप, लक्ष्मण, दक्षिण, कण्ठी, कौशूर, सुखी, [ ] [ ] फल उस देशमें [ ] सम्यक् प्राप्त हो, उन सबसे [ ] [ ] [ ] प्रार्थना करे—

कवचैः चित्राङ्गीः सत्तत्त्विकता मेधुवीर्याभिधायी-  
सुहृत्प्राप्त्यङ्गुल्यधराकृतकरीः सेवामात्र मुनीनैः।  
पश्येत्तत्काले वा मुक्तितरयन्तः पुत्रिणी कल्पगाले  
स [ ] देवकात्त जगति सुखदा देवकी [ ] ॥

(उत्तरार्ध ५५।४२)

[ ] चरों और फिर [ ] अपने हाथोंमें वेणु तथा [ ] [ ] [ ] [ ] [ ] और जो अधिक-आत, अदर, मङ्गलमय बलान तथा शीघ्र हाथोंमें लिये वेणु मुनिगणोत्तरा [ ] हैं [ ] जो कृष्ण-जननी [ ] [ ] हुए परीण [ ] हैं, उन कल्पनीय [ ] [ ] देवकात्त अदिनि-वसुदेव ऐसी देवकीकी [ ] हो।'

उत्तरार्धक यह ध्यान करे कि कल्पसमय लक्ष्मी देवकीके चरण दल रही हो। उन [ ] लक्ष्मीकी—'उसे ऐसी चक्रदेवी प्रियकी सत्ता नमः।' इस मन्त्रसे पूजा करे। इसके बाद 'ओ देवकी नमः, ओ वसुदेवका नमः, ओ कल्पमहाय नमः, ओ श्रीकृष्णाय नमः, ओ सुखदाय नमः, ओ नन्दाय नमः, ओ पशुदेवकी नमः'—इन नाम-मन्त्रोंसे सम्यक् अक्षरा-अक्षरा पूजन करे।

१-विष्णुप्रतिमाले सुवर्ण गन्धे कल्पयुते। शक्ति चरनेदेवकी कुलपदेवकीके।

कृष्णविष्णुके चरने नक्षत्री [ ]

(उत्तरार्ध ५५।४४)

२-अक्षयुतिये प्रभु-पुष्पोंकी माला और चरण, [ ] अदि [ ] [ ] [ ] पुनर्जन्मसिद्धि [ ] पुनर्जन्म चरने की धनमाला, [ ] और वैष्णवी माला महा मन्त्र है।

पुत्र ॥ चन्द्रमणे ॥ जनेर चन्द्रमणे अर्घ्य  
प्रदान कर हरिश्च भवन ॥ ई. उन्हें निरतिशय मन्त्रोंसे  
हरिश्च भवन करना चाहिये—

अनर्घं वाग्नें स्त्रीं वैकुण्ठं पुत्रोत्तमम् ।  
जाम्बवेदं हवीर्मेघं यजमानं मनुजसूतम् ॥  
पारुषं पुण्डरीकमर्घं मुनिं ब्रह्मचरिणम् ।  
शाम्भवेरं पञ्चजनं केदारं पञ्चजम्भम् ॥  
शेखिन्दुमण्डुं कृष्णकनकमण्डपमिदम् ।  
अश्वेक्षं जगद्गुरुं सर्वविद्यामन्त्रप्रदायम् ॥  
अनादिनिधनं विष्णुं कैलेयेश्वरं विजितम् ।  
नारायणं चतुर्भुजं हस्तुपञ्चमहाभारम् ॥  
वीरान्वारधं विष्णुं कनकमण्डपमिदम् ।  
जीवन्मृतं जगत्पते, शीघ्रं लीलां हरिम् ॥

(अवतार ५५ : ४९—५०)

—इन मन्त्रोंसे भगवान् श्रीहरिश्च भवन करते  
'योगेश्वराय योगसम्पन्नाय योगमयसे शेखिन्दुय नमो नमः'—  
इस मन्त्रसे प्रतिमाको स्तव करता चाहिये। अन्तर  
'योगेश्वराय योगसम्पन्नाय योगमयसे शेखिन्दुय नमो नमः'—  
इस मन्त्रसे अनुलेपन, अर्घ्य, धूप, दीप ॥ करे।  
तदनन्तर 'विद्याय विष्णवे च विजयानन्दाय ब्रह्मचरिणे  
शेखिन्दुय नमो नमः।' इस मन्त्रसे कैलेय निवेदित करे।  
॥ अर्घ्य करनेका मन्त्र इस प्रकार है—'अश्वेक्षाय  
अनादिनाय धर्मसम्पन्नाय शेखिन्दुय नमो नमः।'।

इस प्रकार केटीके ऊपर रोहिणी-सहित पञ्चजन, जाम्बवेद,  
देवकी, नन्द, बरहेटा और बलदेवजीका पूजन करे, इससे  
सभी पापोंसे मुक्ति हो जाती है। चन्द्रोदयके समय इस मन्त्रसे  
चन्द्रमणको अर्घ्य प्रदान करे—

श्रीदेवार्घ्यसम्पन्नं लज्जितेन्द्रसमुत्तमम् ।

पुण्डरीकं जाम्बवेदं शेखिन्दुम् मय ॥

(अवतार ५५ : ५४)

अर्घ्य रखने पुत्र और वीरों बरोर्धराजी आहुति देकर  
कालिदेवीकी पूजा करे। उसी दिन नमस्कार आदि संस्कार भी  
करने चाहिये। नवमीके दिन ब्रह्मचरिण ॥ ही भगवान्  
भगवतीजी भी उत्सव करने चाहिये। इसके अनन्तर ब्राह्मणोंको  
॥ 'कृष्णं मे प्रीत्याय' कहकर यथाशक्ति ॥  
देवी काहिये और यह मन्त्र भी पढ़ना चाहिये—

॥ ॥ ॥ देवी चतुर्भुजात्मिकाय ॥

श्रीमते ॥ पुत्री ॥ ब्रह्मचरिणे नमः ॥

(अवतार ५५ : ५०)

इसके ॥ ॥ और कहा  
करे—'शक्तिराय विष्णुं वासु।'।

अर्घ्यदान । इस प्रकार ॥ ॥ पुत्र अथवा वीर

॥ ॥ इस योगेश्वरको प्रार्थना ॥ है, ॥ पुत्र,  
॥, शरोण, वन-धाम्य, सद्गुरु, दीर्घ आयुष्य और ॥  
॥ मन्त्रोंकोसे प्राप्त करता है। जिस देवतामें यह उत्सव  
दिनांक ॥, वहीं जन्म-मरण, आकाशमन्त्री ब्रह्मि, अमृति  
तथा इति-वैति स्मरित करी यह नहीं रहता। येन समयपर  
कर्म प्राप्त है। जाम्बुपुत्र । ॥ करने करने देवकी-मत किया  
जाता है, यदि अमृतमृत्यु नहीं होती और न गर्भपात होता है  
तथा वैद्यक्य, दीर्घाय एवं करता नहीं होता। जो एक बार भी  
इस मन्त्रको करता है, वह विष्णुलोकको ॥ होता है। इस  
॥ करनेवाले संस्कारके सभी सुखोंको भोगकर अमर्त्य  
विष्णुलोकमें निवास करते हैं।

(अध्याय ५५)

## दुर्वाकी एवं दुर्वाहमीसायक

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—यहसय ! पादपद उसके  
सुख पक्षकी अष्टमी तिथिमें जन्म पाया दुर्वाहमीका  
होता है। जो पुरुष इस पुण्य दुर्वाहमीका श्रद्धार्थक त्रु करता  
है, उसके वंशवृक्ष सय नहीं होता। दुर्वाके मनुष्योंकी तरह  
उसके कुलकी वृद्धि होती रहती है।

॥ पुषिहितने पुत्र—लोकनाथ ! यह दुर्वा

क्यासे उत्पन्न हुई ? कैसे विष्णु हुई तथा यह क्यों पवित्र मानी  
गयी और लोकमें वन्द्य तथा पूज्य कैसे हुई ? इसे भी बतानेकी  
॥ करे।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—देवताओंके ॥ अपुत्रकी  
॥ और-सागरके मये जनेर भगवान् विष्णुने  
॥ बंधक हाथसे पकड़कर मन्दरावलीको ॥ किया

या । मन्दराचलके वेगसे [ ] [ ] करण राङ्गसे किन्तु  
भगवान्‌के जो रोम कज्जाकर समुद्रमें गिरे थे, पुनः समुद्रमें  
साहरोद्धार उठसके गये थे ही रोम हरित वर्णके सुन्दर एवं शुभ  
दूर्बक रूपमें उत्पन्न हुए । उन्हें दूर्बापर देवताओंनि मनमाने  
उत्पन्न अमृतका कुम्भ रखा, उससे जो अमृतके बिन्दु गिरे,  
उनके स्पर्शसे वह दुर्वा अजर-अमर हो गयी । यह देवताओंके  
लिए पवित्र [ ] बना हुई । देवताओंनि [ ] रुक्म  
अष्टमीको गन्ध, पुष्प, चूप, दीप, मैला, चाफूर, नारिकेल,  
दाआ, कपिल्ल, नासंग, आलू, बीजपुर, टाँपिस आदि फलों  
तथा दाही, अक्षत, [ ] आदिसे [ ] मन्वेद्धार उठाकर  
पूजन किया—

■ इलेक्ट्रॉनिकीयासि ■ कनिष्ठ ■ सप्तमः ।

सर्वोपाध्यक्ष: [ ] कुलपति: [ ] पृष्ठ 31

पञ्चा रासुख्यसुखमिच्छित्तानि चतुर्वर्णे ।

■ यथापि हंतानं देहि त्वयश्चरापरे ॥

(आत्मार्थ ५६ । १२-१३)

देवताओंके साथ ही उनकी पत्नियाँ तथा अप्सराओंने भी उत्तम पुत्र पुत्रियाँ । फर्पलोकमें वेदवती, सीता, दमयन्ती आदि ~~अनेक~~ हुए श्री स्वभावदामिनी यह दुर्लभ पुत्रित (वन्दित) हुई और सभीने अपना-अपना अभीष्ट प्राप्त किया । जो श्री श्री महाश्वर हनुमन्त वर धरण्वर दुर्लभ पुत्र पुत्रियाँ मिलिष्ट, गोपूत ~~सप्त~~ दाम्बर ब्राह्मणको ~~कहा~~ करती है और ब्रह्मने इस पुत्र तथा संतानकरक दुर्लभ-कालको करती है वह पुत्र, सौभाग्य—घन अर्द्ध सभी पदार्थोंको प्राप्तकर बहुत बलवत्क संसारमें सुख भोगकर अपने अपने धर्मवर्धित कार्यमें जाती है और प्रत्येकवर्षका यहाँ निवास करती है तथा देवताओंके हुए आनन्दित होती है ।

(अध्याय ५६)

**मासिक कुम्भाद्वयी-अलोपी विधि**

भगवान् श्रीकृष्णजी को—पार्थ ! अब अब समस्त धर्मों का चरकोष्ठ प्राप्त, सर्वप्रद और भगवान् लोकलोक प्रीतिप्रदक कृष्णहृषीकेश-वत्सेको धर्म करने पार्थशरीर मासकी कृष्णाहृषीकेश उपलब्धके निमित्त प्रकृतकर जितेनिग्रह और ज्ञेयपरित हो गुल्फी अज्ञानुसार उपवास करे । मध्याह्नके अन्तर नदी भस्मिये खानकर गन्ध, उत्तम कुम्भ, गुग्गुल धूप, अनेक प्रकारके नैवेद्य तथा तन्मूलर अर्घ्य उपचारोंसे शिवलिङ्गका पूजनकर करते शिरसेसे कर्ण करे । इस मासमें शंकरजीका पूजन और गोमूत्र-पानकर रतिसे भूमिपर शयन करे, इससे अस्तिवृद्ध-यज्ञका फल प्राप्त होता है । पौष मासकी कृष्णाहृषीकेश रात्रि नामसे महेश्वरका पूजनकर मृत प्रवेशन करनेसे वायुपेय यज्ञका फल प्राप्त होता है । मघा मासकी कृष्णाहृषीकेश महेश्वर नामसे भगवान् शंकरका पूजनकर गोदुग्ध प्राशन करनेसे अनेक यज्ञोप कल प्राप्त होता है । फल्गुन मासकी कृष्णाहृषीकेश महादेव नामसे उनका पूजनकर तिल भक्षण करनेसे आठ राजसूय यज्ञोप कल प्राप्त

॥ १ ॥ ॐ नमः शिवाय ॥ कृष्णाहमीमें स्नानात् नामसे शिवका  
 पूजनकर कथका ॥ २ ॥ अथनेत्र पञ्चक फल मिलता  
 ॥ ३ ॥ शिवका मस्तकी कृष्णाहमीमें शिव नामसे इन्द्रात् पूजनकर  
 ॥ ४ ॥ कुत्सेदक-पान करनेसे दस पुत्रवधेय प्राप्तोक्त फल  
 ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ अथ मस्तकी कृष्णाहमीमें पशुपति ॥ भगवान्  
 शंकरका पूजनकर गौतमजलका पान करनेसे लाख गौदानका  
 फल मिलता है ॥ अथकृष्णाहमीमें ॥ नामसे  
 ॥ ७ ॥ पूजनकर ॥ प्राशन करनेकरला दस लाख वर्षसे  
 ॥ ८ ॥ समस्तक रहस्तेकमें निवास ॥ है ॥ श्रवण  
 मस्तकी कृष्णाहमीमें शर्व नामसे भगवान् शंकरकी पूजाकर  
 ॥ ९ ॥ प्राशन करनेका बहुत-सा सुवर्ण-दान प्राप्त  
 करनेकरले बड़ा फल मिलता है ॥ यादक मस्तके कृष्णाहमीमें  
 ॥ १० ॥ नामसे इन्द्रकी पूजाकर एवं ॥ भक्षण करनेसे  
 ॥ ११ ॥ फल ॥ है ॥ अथिन्द्र मस्तकी कृष्णाहमीमें  
 ॥ १२ ॥ नामसे भगवान् शंकरका वजनकर तापुलोदकका पान  
 करनेसे सौ पुत्रीक यज्ञोक्त फल प्राप्त होता है ॥ इसी प्रकार

६-५४७ श्रीकृष्णजगन्नाथमूर्तये नमः । विष्णोर्विष्णुसंज्ञकः । इत्यर्थः । अनाद्यनन्तः । अनाद्यनन्तः । अनाद्यनन्तः ।

५६. नारायणपुराण, सौतपुराण १४। १-३६, ब्रह्म-सम्पत्तयुग [ ] [ ] [ ] है। [ ] [ ] [ ] सिन्धु उदये की देवता का हिस्से। जगत्सिद्धिप्रपञ्चो  
और धराणिकः अनुसर अर्थात् [ ] स्वामी सिद्ध [ ] है। अतः सत्त्वो राक्षस यदर्थस्यो दनस्य [ ] [ ] [ ] है।

कार्तिक मसकी कुम्भाष्टमीमें कर सप्सो भागवन् संकसकी भक्तिले पूजाकर रात्रिमें दहीमस करनेसे अश्लेष मकर प्रातः होत है।

इस प्रकार महीने पूजन अन्तर्गत शिवभक्त जाहाणोंको धृत, सर्वप्रथम चप्पस चोउन करीये तथा मण्डशक्ति सुवर्ण, आदि ठमसो देकर करे। अन्तर्गत भिलसे पूर्ण करत कलश, सत्ता, चूत तथा चप्पस जाहाणोंको देकर दूध देनेवाली सक्ता एक कृष्ण भी महादेवजीको करे। कुम्भाष्टमी-प्रणाली एक वर्षातक निरन्तर है, वह सभी मुक्त है।

(अध्याय ५७)

### अनघाहमी-प्रणाली एवं

भाषान् श्रीकृष्णने कहा—माहात्म्य ! कर्मात् कलसे महाज्जके महादेवकी अत्रि पुत्रकल्पने उत्पन्न हुए। अत्रिजी भार्याका नाम था अनसूया, यह मलान् कायरात्रीकी एवं प्रतिपत्ता थी। कुछ कालके बाद उनके महादेवकी पुत्र दत्त हुए। दत्त माहान् योगी थे। विष्णुके उत्पन्न हुए थे। दूसरा नाम अन्वय। इनकी भार्याका नाम नदी। गुप्तोंसे इनके अठ पुत्र थे : 'दत्त' विष्णु-रूपमें तथा 'नदी' अश्वत्थाम रूप थी। दत्त अन्वय भार्या मदीके साथ योगाभ्यासमें लीन थे, उसी समय उर्ध्व नामक दैत्यसे कात्त तथा पराजित विष्णु विष्णुगिरिमें निज। इनके आश्रयमें जाने और उन्होंने इनकी शरण ग्रहण की। दत्तात्रेयजीने इनके साथ उन सभी दैत्यजनोंको अपने योगबलसे अपने आश्रममें रख लिया और कहा—'आपलोग निर्धन तथा विविधता होकर यहाँ रहें।' दैत्यज अत्यन्त प्रसन्न और यहाँ रहने लगे।

दैत्य-समुदाय भी दैत्यजोंको खोके-खोके इसी आश्रमपर आ पहुँचा। वे क्रोधपूर्ण लालचकर करने लगे—'इस मुनिकी पत्नीको पकड़ लो और यह सब आश्रम उखाड़ डालो।' कहते हुए दैत्यज अश्रममें घुस गये और उनकी पत्नीको उठाकर अपने लगे लगे। लक्ष्मीको सिरपर उठाते ही सभी दैत्य त्रीहीन और

उत्तरा ईश्वर प्राप्त करता है और सौ वर्षपर्यन्त संसारके जन्म-मरण उपभोग करता है। इसी व्रतका अनुष्ठान कर इन्द्र, यम, ब्रह्मा तथा विष्णु आदि दैत्यजोंने उत्तम-उत्तम पदोंको प्राप्त किया है। श्री-पुरुष इस व्रतको प्रतिपूर्वक करते हैं वे उत्तम किङ्कनी बैठकर दैत्यजोंको होते हुए उठाकर उठे हैं और भागवन् संकसके ऐक्यसे सम्पन्न हो हैं। यहाँ अठ कल्पपर्यन्त निवास और जो इस व्रतके महात्म्यको सुनता है, सभी पापोंसे मुक्त है।

पढ़नेसे वे सभी दैत्य भागने और नष्ट होने लगे। श्री दैत्य भी उन्हें मारना चाह्य कर दिया। निश्चेष्ट होकर दैत्यज बड़ाकर करने लगे। दत्तजीके प्रभावसे यहाँ प्रलय मच गया। दैत्यजोंमें सभी अशुओंको और फिर वे अपने-अपने लोक चले गये तथा पूर्णतः अन्तर्दले रहने लगे। दैत्यजोंने उन भाषाम् और प्रभावको इसमें कारण माना।

श्री संसारके कल्याणके लिये कर्षाबहु होकर दैत्यज लालच करने लगे। योगाभ्यास अत्रय लेकर ध्यान-समाधिमें स्थित हो गये। इसी प्रकार लक्ष्मीमें उन्हें तीन हजार गये। एक दिन माहिषासीके राजा ईक्ष्वाकुकी कर्तवीर्षार्जुन उनके पास आया और रात-दिन उनकी सेवा करने लगा। दत्त उनकी सेवासे अत्यन्त प्रसन्न हो गये और लक्ष्मीका वर प्रदान किये—पहले वर हजार हाथ हो जाय, दूसरे वरसे सारी पुण्यको अर्कसे बचने हुए धर्मपूर्ण पृथ्वीका लक्षण करत। तीसरे वरसे लक्ष्मीके मैदानमें किसीसे पराजित न होना तथा चौथे वरसे भाषान् विष्णुके हाथों मृत्यु होना।

कौन्तेय ! योगाभ्यासमें लीन उन दत्तजीने कर्तवीर्षार्जुनको अहोरात्रियोंसे सम्पन्न करत-पदवाले राजको प्रदान किया। कर्तवीर्षार्जुनने भी सपत्नीपा

वसुधैव कुटुम्बकम् धर्मपूर्वक अपने अपनी कर शिव। यह सब उसके बाहुओंपर प्रभाव था। माधवसे प्रभावसे प्रभावस्वरूप रथ उत्पन्न कर लेता था। उसके प्रभावसे सभी दस हजार निरस्त्र रहते थे। यज्ञोक्ती वेदियाँ, यूप सन्धी थे। प्रचुर दक्षिणार्ध रथ थीं। विमानों में बैठकर सभी देवता, भगवत् तथा अस्त्रधारी पृथ्वीपर यज्ञसे लेता ब्रह्मो रहते थे। नारद भगवत् उसके प्रकार करता था—'कर्त्तव्यार्थ' सुननेसे चलता कि संस्कारों को भी उसके वह, दान नहीं कर सकता। चाल, अनुप-बागवत् है। अन्ध पक्षी इससे अपने समीप समझते हैं, अन्य लोग दूरसे ही इससे पथ है। कभी वह नहीं होती, इसके रूपमें न शोक पड़ता न कोई क्लेश ही। यह अपने प्रभावसे पृथ्वीपर सर्वपूर्वक प्रभावोंपर चलन करता है।

भगवान् श्रीकृष्ण पुनः बोले—नारद। इस पृथ्वीपर पक्षी हजार वर्षक रूपमें रहता है। वह अपने योगबलसे परशुओंपर चलता तथा भी। समस्तसुख मेघ बनकर बूट भी करता था। धनुषकी प्रत्यङ्गाके आध्वनसे कठोर लक्ष्यपुक्त अपनी सङ्को भुज्जोत्थरा यह शक्ति सभ्य उत्पन्न होता उसने अपनी पुत्रार्थक बलसे समुद्रको नागलोचने कलोटक अर्द्ध नागको जीतकर नहीं अपनी मेरवी ली। उसकी भुज्जोत्थरा समुद्रके उदेलित पातालवती महान् असुर निवेष्ट करते थे। बड़े-बड़े नाग उसके पराक्रमसे देखकर सिर नीचा कर लेते थे। सभी धनुषीको उसने जीत लिया। अपने पराक्रमसे

उसने अपनी महिमाती नगरीमें लक्ष्मण बंदी बना रखा था, जिसे पुनस्तव अधिने बुद्धिवाक्य। एक बार भूसे-प्यासे विभ्रान्त (अविद्येय) को ज्ञान कर्त्तव्यार्थकने लक्ष्मण सप्तदीप वसुधैवको टुकड़े दे दिया। इस प्रकार वह कर्त्तव्यार्थक वसुधैव एवं गुणवत् रूप हुआ था।

भगवत् भगवान् अन्ध (दक्षिण) वर प्राप्तकर कर्त्तव्यार्थकने पृथ्वीलोचने इस अनवाहनी-मत्तको प्रवर्धित करने पर पक्ष जता है। यह है—धार्मिक, लौकिक और मानसिक। यह अनवाहनी विविध पक्षोंको वह करनेवाली है, इसलिये इसे अन्ध कहते हैं। इस ऐश्वर्य (अभिमान, महीमा, पाति, स्वयम्, ईशान्य, तथा सर्वज्ञाभावसहित) ज्ञान लेता करने विवेक है।

पञ्चरात्र धर्मिष्ठोंने पूजा—पुण्यदीपक। कर्त्तव्यार्थकने इस विवेकता यह अनवाहनी-मत्त किन पक्षोंके द्वारा, कब और कैसे किया जाता है? इसे आप बता करे।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—रामन्। इस विधि इस प्रकार है—प्राचीन भक्तों कृष्ण पक्षकी अष्टमीको कुम्भसे जी-पुष्पकी धूमिपर स्थापित करनी एकमें लीप्य एवं इतिहासकथयुक्त अन्ध (दक्षिण) की दूरसेमें अनवा (लक्ष्मी) चहिये और ज्ञानदेवके विष्णुसूक्तसे पूजा करनी पञ्चमय पूजासे फल, कर्त्तव्य, नृगतकी सामग्री, घेर, विविध चाम्य, विविध पुष्पक उपयोग चाहिये। दीपक अलान तथा एवं चाम्य-बाधको भोजन इस प्रकार पूजा करनेवाला सम्पूर्ण पक्षोंसे मुक्त हो जाता है, लक्ष्मी है तथा भगवान् विष्णु उसपर प्रभाव हो जाते हैं। (अध्याय ५८)

१-अने देव अन्ध ने जो विष्णुसूक्तमें। धूमिः इत् विष्णुसूक्तं पक्षमे त्रेधा मे दधे कर्म। कर्त्तव्यार्थक जीवि पक्ष वि पक्षमे विष्णुसूक्तं सप्तमः। जतो विष्णोः कर्त्तव्य पक्षमे पक्षे सप्तमः पक्षमे। कर्त्तव्य इत् विष्णोः पक्षमे पक्षे सप्त पक्षमे सुप्तः। विष्णो इत् विष्णो विष्णोः कर्त्तव्यः कर्त्तव्यः। विष्णोः

|           |                               |
|-----------|-------------------------------|
| सप्त      | धूमिः ॥                       |
|           | पक्षमे ॥                      |
| कर्त्तव्य | कर्त्तव्य ॥                   |
| कर्म      |                               |
|           | कर्त्तव्य ॥                   |
| पक्ष      | पक्ष ॥ (अध्याय ५८। २१। २५—२६) |

## सोमहृषी-व्रत-विधान

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज ! मैं एक दूसरी व्रत [ ] हूँ, जो सर्वसम्पत्, कल्याणप्रद [ ] विश्वलोक-आपक है। [ ] एकवर्षी [ ] दिन का सोमवार हो तो उस दिन उपास्यव्रत भगवान् चन्द्रचूडका पूजन करे। इसके लिये एक ऐसी प्रतिमाकी स्थापना करनी चाहिये, जिसका दक्षिण भाग शिवलोक और कामभाग उमा-स्वरूप हो। अनन्तर विधिपूर्वक उसे पञ्चमुद्रसे स्नान करकर इसके दक्षिणभागमें कर्तुमुक्त [ ] उपलेखन करे। व्रत तथा रक्त पुष्प चढ़ाये [ ] फलमें पञ्चम फल नैवेद्यका भोग लए। पत्नीस श्रवणसे टीकणसे उपास्यव्रत भगवान् चन्द्रचूडकी आरती करे। उस दिन मित्रद्वारा एक दूसरे दिन प्रातः इसी प्रकार पूजन सम्पन्न कर रित्त तथा चौसे हवन कर ब्राह्मणोंको भोजन करये। [ ] ब्राह्मणकी पूजा करे और [ ] अर्घ्य करे। [ ] धर्मक इस प्रकार व्रत [ ] एक त्रिकोण तथा दृश्य चतुर्लोक (चौकोर) मण्डल बनये। [ ] पञ्चम फल [ ] तथा चौकोर मण्डलमें भगवान् शंकरको स्थापित करे। तदनन्तर पञ्चोक्त [ ] अनुसार पार्वती एवं शंकरकी पूजा करके व्रत एवं व्रत नक्षत्रके दो चित्र, फल, घण्टा, चूपदामी, दीपमाला आदि पूजनके उपकरण ब्राह्मणोंको समर्पित

करे [ ] एकवर्षीक ब्राह्मण-भोजन भी करये। ब्राह्मण-दण्डित्स वस्त्र, आभूषण, भोजन आदिके पूजनकर पत्नीस प्रशस्तित टीकणसे धीरे-धीरे नीटजन करे। इस प्रकार चर्कपूर्वक [ ] या एक [ ] ही व्रत करनेसे वती [ ] शिवलोकमें निवास कर ब्रह्मन्म पद प्राप्त करता है। जो पुरुष आजीवन इस व्रतको करता है, वह तो शाश्वत विष्णुस्वरूप ही हो जाता है। उसके समीप अर्पति, शोक, [ ] नहीं आते। इतना [ ] कहकर भगवान् श्रीकृष्ण पुनः बोले—महाराज ! इसी प्रकार रविवार-युक्त अष्टमीका भी व्रत [ ] है। उस दिन एक प्रतिमाके दक्षिण भागमें शिव और काम चरणों पार्वतीकी पूजा करे। दिव्य पद्मरगसे भगवान् शंकरको और सुवर्णसे पार्वतीको अलंकृत करे। यदि रजोकी मृत्तिका न हो [ ] तो सुवर्ण ही चढ़ाये। चन्दनसे भगवान् शिवको और कुमुदसे देवी पार्वतीको अनुलिप्त करे। भगवती पञ्चोक्त [ ] लाल वस्त्र और लाल भाला तथा भगवान् शंकरको कृष्ण मिश्रित कर नैवेद्यमें घृणपक्व पदार्थ मिलित करे। शेष चतु विधान पूर्ववत् कर पञ्चम गन्ध-पदार्थोंसे करे। उपासन पूर्वदेव्य करना चाहिये। इस व्रतको एक वर्ष अथवा लगातार चौब वर्ष करनेवाला सूर्य आदि लोकोंमें उत्तम भोगको प्राप्तकर [ ] परमपदको प्राप्त करता है। (अध्याय ५९)



## श्रीकृष्णनवमी-व्रत-कथा

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महाराज ! देवता और दैवीयें जन्म समुद्र-मन्थन [ ] था, [ ] समय समुद्रमें निकरनी हुई लक्ष्मीको देखकर सभीकी यह [ ] हुई कि [ ] ही लक्ष्मीको प्राप्त कर लें। लक्ष्मीकी चतितको [ ] और दैत्योंमें फैलार बुद्ध होने लगा। उस समय लक्ष्मीने कुछ देवोंके लिये विरक्तवृक्षका आश्रय [ ] कर लिया। भगवान् विष्णुने सभीको जीतकर लक्ष्मीका करण [ ] लक्ष्मीने विरक्तवृक्षका आश्रय ग्रहण किया था, इसलिये उसे श्रीवृक्ष भी कहते हैं। अतः भद्रपद मासके शुक्ल पक्षकी नवमी तिथिको श्रीवृक्ष-नवमीव्रत करना चाहिये। सूर्योदयके समय चर्कपूर्वक अनेक पुष्पों, गन्ध, कण, फल, तिलचिट्ठा, अन्न, मोक्षप,

पुष्प [ ] धातु [ ] मन्थनी विरक्तवृक्षकी [ ] करे—

श्रीविष्णवा नवतोऽग्नौ श्रीवृक्षं त्रिकलस्तथा ।

कलत्रिभिरर्चितं फलैश्च सर्वविभद्रहो मया ॥

इस विधिके पूजा कर श्रीवृक्षकी सात प्रदक्षिणा कर उसे प्रणम करे। अनन्तर ब्राह्मणभोजन करकर 'जीदेवी प्रीधताम्' ऐसा कहकर अर्घ्यन करे। तदनन्तर सबेरे भी तेल और गन्धको [ ] आदिके संयोगसे तैयार किया गया भोजन, दही, पुष्प, फल आदिके मिश्रिके फलमें रखकर तीन हो ग्रहण करे। इस प्रकार चर्कपूर्वक जो पुष्प या की श्रीवृक्षका पूजन करते हैं, वे अवश्य ही सभी [ ] प्राप्त करते हैं।

(अध्याय ६०)











गया । अन्त्येष्टे पुनः ॥ विदर्भ देशका कर्मविवेक ॥ दुःख । वह भक्तिपूर्वक सारकण्डरीका ॥ किया करता था । ॥ प्रभावसे बहुत सम्पत्तिक ॥ ॥ राजका, मन्त्रेण उसने विष्णुलोकको प्राप्त किया ।

॥ सुविष्टिरने कृत—कृष्णचन्द्र । इस बातको किस ॥ ॥ चाहिये ?

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—एक । ॥ ॥ सुकृत पक्षमें द्वन्द्वश्रीको तारकण्डरी-या करता चाहिये । प्रातःकाल नदी आदिमें स्नानकर तर्पण, पूजन आदि करना कर सूर्योदयतक ॥ ॥ रहे । सूर्यास्त होनेके पश्चात् ब्रह्मके ऊपर गोमयसे ताराओंसहित एक सूर्य-मण्डलका ॥ ॥ करे । आकाशमें बादलसे झुलके भी अङ्कित करे । अन्तर ताराके अर्धपात्रमें पुष्प, फल, अक्षत, गन्ध, सुगन्ध तथा जल ॥ ॥ उस अर्धपात्रमें ॥ ॥ दोनों कपड़ोंको धूमिर टेककर पूर्वाभिमुख ॥ ॥ 'सुखसौख्य' इस मन्त्रसे

### अरण्यद्वन्द्वी-व्रतका विधान और फल

॥ सुविष्टिरने कहा—कृष्णचन्द्र । ॥ ॥ अरण्यद्वन्द्वी-व्रतका ॥ ॥ कालप्रत्ये ।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—वैशम्पैय । ॥ ॥ कालमें जिस व्रतको अरण्यद्वन्द्वीकी आशसे कर्मों रक्षितकी किया था और अनेक प्रकारके भक्ष्य-भोज्य ॥ ॥ मुनिजीयोंको संतुष्ट किया था, उस अरण्यद्वन्द्वी-व्रतका विधान मैं बतलाऊँ । ॥ ॥ श्रुतिपूर्वक सुने । इस व्रतमें मार्गशीर्ष मासकी शुक्ल एकदशीको प्रातः स्नानकर भगवान् कर्णदन्दी भक्तिपूर्वक गन्ध, पुष्पादि उपचारोंसे पूजा करनी चाहिये और उपवास रखना चाहिये । रात्रिमें जागरण करना चाहिये । दूसरे दिन स्नान आदि करके वेदत्रा ब्राह्मणोंको उपवनमें ले करके श्रवः ॥ ॥ आदि भोजन करना चाहिये । अन्तर पञ्चगव्यका प्रयोजन ॥ ॥ सभी भी भोजन ॥ ॥ चाहिये ।

इस ॥ ॥ एक वर्षतक व्रत करे । ब्रह्मण, कर्मिक, माघ तथा वैश्र मासमें वृक्षादिसे सुरक्षित किसी सुन्दर कर्म अरण्यवासियों, मुनियों तथा ब्राह्मणोंको पूर्ण खं उत्तमपुत्र ॥ ॥ बैठकर मण्डक, घृतपूर, लम्बोदक, रजक,

उस मण्डलको अर्घ्य प्रदान करे । अन्तर ब्राह्मण-भोजन करना चाहिये । मार्गशीर्ष आदि ॥ ॥ महीनोंमें ॥ ॥ लम्ब-लम्ब, सोलहलक, तिल-तण्डुल, गुडके अपूप, मोदक, लम्बोदक, लघु, गुडनुत पूरी, मधुराई, पावस, घृतपण (कर्तव्य) और कस्तूरका भोजन ब्राह्मणको करावे । तदनन्तर श्रवण-वर्षण ॥ ॥ मौन-प्रारम्भपूर्वक ॥ ॥ भोजन करे । ॥ ॥ ताराकण्डरीका ॥ ॥ पूज करे । भोजनके समय बाद बड़े लम्ब दक्षिणको ॥ ॥ का मण्डल ब्राह्मणको निवेदित कर दे । इस विधिसे जो पुत्र्य और स्त्री इस लम्बोदक-व्रतको करते हैं, ॥ ॥ सूर्यके समान देदीप्यमान ॥ ॥ बैठकर नक्षत्र-लोकको जाते हैं । वहाँ अमृत पर्वतोंक लज्जित का विष्णुलोकको प्राप्त करते हैं । इस व्रतको स्त्री, कर्माई, शीत, रात्री, दवायकी, लक्ष्मणी, सत्यधर्मा आदि श्रेष्ठ स्त्रियोंमें किया जा । इस व्रतको करनेसे अनेक कर्मोंमें किया ॥ ॥ नष्ट ॥ ॥ है । (अध्याय ६५)

॥ ॥ मोदक तथा सोलहलक आदि अनेक प्रकारके एकका, फल ॥ ॥ भोज्य पदार्थोंसे संतुष्ट करे और दक्षिण प्रदान करे । कर्तू, हस्तपदी, कस्तूरी आदिसे सुगन्धित ॥ ॥ चाहिये । कर्मों रहनेवाले मुनिगण एवं उनकी पत्नियों, एक ॥ ॥ अथवा ॥ ॥ गुहस्थ आदि ॥ ॥ ब्राह्मणोंको ॥ ॥ भोजन प्रदान चाहिये । वासुदेव, जर्जरदन, टानीर, मधुसूदन, पञ्चमय, विष्णु, गोवर्धन, त्रिविक्रम, श्रीधर, इवीकेन, पुष्परीकेश तथा वराह—इन वराह ॥ ॥ कस्तूरपूर्वक एक-एक ब्राह्मणको भोजन मन्त्रान्न वज्र और दक्षिण देकर 'विष्णुर्मे श्रीकृष्ण' यह वाक्य कहकर अपने मित्र, सम्बन्धी और वाक्यार्थके स्वध स्वयं भी भोजन करे । इस ॥ ॥ अरण्यद्वन्द्वी-व्रत करता है, वह अपने परिवारके साथ दिव्य विष्णुमें बैठकर भगवान्को चाम्य सेतादीपमें निवास करता है । वह वहाँ प्रत्यक्षदर्शन निवासकर मुक्ति प्राप्त करता ॥ ॥ यदि कोई स्त्री भी इस व्रतका आचरण करती है तो वह भी संसारके सभी सुखोंका उपभोग कर भगवान्की कृपासे ॥ ॥ प्राप्त ॥ ॥ है । (अध्याय ६६)

## रोहिणीचन्द्र-प्राप्त तथा अधिवोग-प्राप्तका विधान

महाराज मुनिहितने पूछा—मगवन् ! [ ] नीले मेघसे जलकातरा [ ] जाता है। मेघ चरते [ ] भीठी-भीठी बोली बोलने लगते हैं। मेघकोही ध्वनि भी नहीं सुनावनी लगती है, इस समय कुलीन किर्वाँ किसको [ ] दे तथा कौन-सा सत्कर्मा करे और वे किस विधिसे कौन-सा मत करें ? आग इसका वर्णन करे।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महाराज ! वेद विद्योक्तों इस समय रोहिणीचन्द्र-प्राप्तका प्रारम्भ करना चाहिये। [ ] मास्के कृष्ण पक्षकी एकदशीको पवित्र होकर सर्वोपकीर्णित जलसे स्नान करे, अनन्तर ठण्डके आटेकी एक [ ] इन्दुरिया और पीप पुत-मोदक बनावे। सभी [ ] ब्रह्म जलाराधन जाय और उसके उपर [ ] रचन करे, [ ] रोहिणीके साथ चन्द्रमासे अर्पित कर गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, अक्षत, नैवेद्य आदिले उनकी अर्चना करे [ ] उनकी आर्चना करे—

सौम्यतम नमस्तुभ्यं रोहिणी नमः ।

महाप्रति मन्त्रेणैः कृष्णाय नमोऽस्तु ॥

(सतारण ६०।८)

अन्तर 'सोचो मे श्रीकृष्ण' तथा [ ] रोहिणी [ ] प्रीयताम्' ऐसा कहते हुए पूजन-अथ [ ] दे। अनन्तर कर्मरत्नक अलग अलग करने [ ] चन्द्रमाका ध्यान करते हुए उन इन्दुरियाओंका भक्षण कर ले। अनन्तर जलसे स्नान [ ] करके यथाशक्ति दक्षिणा दे। [ ] पूजन पूर्णक [ ] है, वह धन-धान्य, पुन-पौष्टिलिसे

परिपूर्ण होकर बहुत [ ] योगकर तीर्थ-स्थानमें मृत्युको [ ] करता है और महालोकको [ ] है, अनन्तर विष्णुसेक, उदनपर शिवसेकमें जाता है।

महाराज मुनिहितने पूछा—मगवन् ! आग यह बतायें कि अधिवोगप्राप्त किस विधिसे किया जाता है ?

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज ! अधिवोगप्राप्त सभी [ ] है, मैं उसका विधान [ ] हूँ, आप ध्यानपूर्वक सुनें।

पक्षपद मास्के शुक्ल पक्षकी द्वादशीको प्रातः उठकर महाप्रणम्य जाकर स्नान करे, शुद्ध शुक्ल वस्त्र धारणकर सुन्दर शिरो-धृत तन्मय होकरसे एक मण्डलका निर्माण कर, [ ] विष्णु, गौरीसहित शिव, [ ] ब्रह्म, [ ] सूर्यसरण्यकी प्रतिमा [ ] गन्ध, पुष्प, कूप, दीप आदि [ ] इन चारों देवदम्पतीके [ ] नमः-मन्त्रोंसे [ ] 'अ'कार तथा अगले 'क'कार [ ] विष्णुका पूजा एवं प्रार्थना करे। अनन्तर ब्रह्म-कोष्ठन करना चाहिये। फिर विविध दान देकर सभी धी धेयन करना चाहिये। इस अधिवोगप्राप्तको जो करता है, उसका कभी भी इष्टको (विश्व, पुन, पत्नी आदि)से विशेष [ ] बहुत समयतक [ ] सुखोक्त होकर प्रमत्तः विष्णु, शिव, ब्रह्म और सूर्यसेकमें निवास [ ] अगले सोच प्राप्त करता है। जो जो इस बातको करती [ ] भी [ ] सभी अभीष्ट फलोंको [ ] विष्णुसेकमें प्राप्त करती है।

(अध्याय ६३—६८)

## गोवत्सहृदयीका विधान, नौओका सुनिचो और राजा उत्तनपादकी कथा

महाराज मुनिहितने कहा—मगवन् ! [ ] रत्नको धारितके सिन्धे अहमदा अर्धशेणी सेकरी वह हुई है, इस पक्षसे मेरे [ ] बहुत कृपा उत्पन्न हो गयी है। [ ] धर्मिय, वैश्य तथा शूद्र आदि सभी धरे गये हैं। नीचा, डोम, कलिंगराज, कर्मा, शल्य, दुर्वेषन आदिके मनसे मेरे इष्टको महान् क्रोध है। हे मगवन् ! इन पक्षोंसे कुछकर करके सिन्धे किसी कर्मका अग्र वर्णन करे।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—हे [ ] गोवत्सहृदयी नमस्तुभ्यं अर्ध पुन्य प्रदान करनेकला है।

मुनिहितने पूछा—मगवन् ! क्या गोवत्सहृदयी कौन-सा मत है ? इसके करनेका क्या विधान है ? इसकी क्या और कैसे उरक्ति हुई है ? मैं नवतर्गवमें शूच रहा हूँ, [ ] मेरी राख कीजिये।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—पार्थ ! सत्ययुगमें

पुण्यशाली जम्बूधर्मा (महोदध) में जम्बूधरका जम्बूधर  
 टंडवि रमणीय भाग्यन् संकलने दर्शन  
 करनेकी इच्छासे कटेहो मुनिगण तपसा से थे।  
 तपोवन अतुलनीय दिव्य कमलसे यह यह  
 भृगुका आश्रममहर्षि था। विविध भूतल और कटेहो  
 संपन्न था। सभी पंगली पशु, जम्बूधरपूर्वक  
 निर्णय होकर यहाँ साध-साध जम्बूधर करते थे। उन  
 मुनियोंको दर्शन देनेके लक्ष्यसे भगवन् संकलने एक  
 मृदु आकाशका बेरा लिया। सर्व-देवतासे ये मृदु  
 ज्ञानसे लिये कहेहो हूँ उस स्थान पर आने।  
 जगन्नाथ पार्श्वी सुखर समस्त गौत्र हय चारणकर  
 धर्मिण्य हूँ।

पार्श्व। गौत्र जो है, सुने—प्रकीर्ण  
 औरसाराके मन्त्रके समय अमृतके  
 उपाय हूँ—नन्द, सुपन्न, सुधि, सुरीत  
 लोचनमात्र गण है। देवताओंकी पुनिके लिये हुआ है। देवताओंकी मन्त्र  
 कर्मणाओंकी पुनिके करनेवाली इन पार्श्व कीओरसे कहे  
 चपटि, चपट, चपट, अमिता तथा गौत्रमन्त्रोंके अन्त  
 किन्ना और इन मन्त्राणांकी इन्ने प्रान किन्ना। गौत्रोंके क-  
 अन्त—गोमय, रोचना, मूत्र, दुग्ध, दधि और घृत—ये  
 अत्यन्त पवित्र और संतुष्टिके साधन भी हैं। गोमयसे  
 विषयिय श्रीमन् विष्णुवृक्ष उत्पन्न हुआ, उसमें पञ्चदेव  
 श्रीलक्ष्मी हैं, इन्हींमें हरे श्रीवृक्ष बड़ा बड़ा है।

गोमयसे कमलसे हूँ है। गोमय अतिरस्य  
 है, वह पवित्र और सर्वार्थसाधक है। गोमयसे  
 गुप्ताली है, जो देखनेमें मित्र और सुगन्धिवृक्ष।  
 गुप्ताली आहार है। विषेयरूपसे  
 है। संसारमें जो कुछ भी चीज है, वे सभी  
 गोमयसे हैं। प्रयोगमें सभी चीजें पार्श्वलिक  
 दधिसे उत्पन्न हैं। घृतसे अमृत उत्पन्न है, जो  
 तृप्तिके साधन है। आकाश और गौ एक ही कुलके दो  
 हैं। आकाशके हृदयमें से वेदमन्त्र कहे और  
 हृदयमें पानी है। पानीसे ही वह प्रकृत होता है  
 और सेवक प्रतिष्ठित है। पानी में  
 जम्बूधरका जम्बूधर केर है।

जम्बूधर जम्बूधर सदा और विष्णु प्रतिष्ठित  
 है। मन्त्रके अन्तर्गतमें चपट एक समस्त तीर्थ  
 है। सभी मन्त्रोंमें मन्त्रोंके मन्त्रोंमें  
 है। गौरी, पवित्रमें पवित्र पवित्रोंके  
 दोनों पुरोंमें से दो भाग प्रतिष्ठित। दोनों  
 अतिरस्य, मेरुमें सूर्य, इन्हींमें आठों  
 चतुर्ण, चित्तों सुखमें लक्ष्मी, पार्श्व  
 वरु, अन्तर्गत दोनों संसार, रोचना हय, चतुर् (नौर)  
 में उत्पन्न, पवित्र-पार्श्व और चपटोंसे  
 सदा सूर्यके मन्त्रोंमें गन्धर्व, अन्तर्गतमें  
 सर्व पवित्र-भागमें उत्पन्न प्रतिष्ठित है। पृथ्वीमें  
 एकरा पवित्रोंमें वरुण, शोणित (कम्पर) में

१-श्रीदेवतामन्त्रः यः सुगन्धमन्त्रः यः पञ्चदेवतामन्त्रः

नन्द सुपन्न सुधिः सुरीत श्रीः यः लोचनमात्रः सर्वगण यः

जम्बूधरका जम्बूधरका जम्बूधरका जम्बूधरका जम्बूधरका

गोमय रोचना मूत्र दुग्ध दधि और घृत यः चतुर्देवतामन्त्रः यः

गोमयमन्त्रः श्रीमन् विष्णुवृक्ष विष्णुवृक्ष यः पञ्चदेवतामन्त्रः श्री

श्रीमन्विष्णुवृक्ष पञ्चदेवतामन्त्रः गोमयः

गोमय यः चतुर्देवतामन्त्रः श्रीमन्विष्णुवृक्ष

गोमय गुप्ताली सुधिः विष्णुवृक्ष यः जम्बूधरका जम्बूधरका जम्बूधरका

पार्श्व यः विष्णुवृक्ष पञ्चदेवतामन्त्रः

दधिमात्र लक्ष्मी चतुर्देवतामन्त्रः पञ्चदेवतामन्त्रः देवता पवित्रमात्रः

जम्बूधरका जम्बूधरका जम्बूधरका जम्बूधरका जम्बूधरका जम्बूधरका

येन यः जम्बूधर येन देव प्रतिष्ठितः येन येन चतुर्देवतामन्त्रः यः (सप्तमः ११।११-२४)

पितृ, कथेलोमें मानव तथा अन्नकाने स्वच्छ-रूप [भाग] आश्रित कर [भाग] अवस्थित हैं। अदित्यरश्मिमें केतु-समूहमें पिच्छीभूत हो अवस्थित हैं। गोमूत्रमें [भाग] गङ्गा [भाग] गोमयमें यमुना विरता हैं। रोमसमूहमें त्रिषस फलेद्र देवकय प्रतिष्ठित है। उदरमें पर्वत और जंगलके अन्न दृष्टी [भाग] है। चारों पयोधरोंमें चारों महासमुद्र स्थित हैं। [भाग] मेघ, वृष्टि एवं अस्त्रिन्दु हैं, [भाग] गर्हस्पति, इन्द्रकी वक्षिणाग्नि, वायुमें आहवनीयधि और तक्षुमें सम्पत्ति स्थित है। गौत्रकेकी अस्थियोंमें पर्वत और मन्त्रकेकी यज्ञ स्थित हैं। सभी वेद भी गौत्रोंमें [भाग] हैं।

हे सुविधिर ! भगवती [भाग] सुविधियोंके [भाग] अपना भी [भाग] वैराग्य [भाग] विषय। [भाग] उक्त, पर्वत [भाग] मित्र, यक्षकालेन्द्र, सुन्दर पूज्यकाली, सायके सम्पन्न रक्त कलकाली, [भाग] सम्पन्न उष्णकाल कटि-भागकाली, सुन्दर कुर [भाग] सुन्दर मुक्तकाली, [भाग] सुशीला, धृष्टकेतुवती, यमुना दूषकाली, शोभन पयोधरकाली— इस प्रकार सभी शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न सम्पन्न [भाग] इस [भाग] कृद्विचक्षणकाली भगवन् शंकर प्रसादित होकर बत रहे थे। मैं पार्थ ! [भाग] मैं भी उस अवस्थामें [भाग] सुलभाति धृष्टके पाव जकार उन्होंने उस गणको न्यासस्थायी ठो दिवसाक उसकी सुखा करनेके शिष्ये [भाग] दे [भाग] और कक्ष—‘मुने ! मैं यहाँ अन्नकर जम्बूद्वीपमें लौटूँगा [भाग] दिन बाद लौटूँगा, तबतक आप इस [भाग] रक्त करें।’ मुनिमें भी उस गौत्री सभी अवसरसे रक्त करनेकी प्रतिज्ञा

की। भगवन् शिव यहाँ अन्तर्हित हो गये और फिर थोड़ी देर [भाग] वे एक व्याघ्र-रूपमें प्रकट हो गये और लक्ष्मेश्वरहित गौत्रों इन्हें लगे। श्रुतिगण भी व्याघ्रके भयसे आश्चर्य हो आर्तनाद करने लगे और [भाग] व्याघ्रके इष्टकेके उपाय करने लगे। व्याघ्रके पक्षसे सबसब वह गौ भी कूट-कूटकर भागे लगे। सुविधिर ! व्याघ्रके पक्षसे इरी हुई गौके पागनेर चारों सुरोध [भाग] शिव-सम्पत्ते पद गय। अन्नकालमें देवताओं एवं भिन्नमें [भाग] (भगवन् शंकर) [भाग] सकल गौ (माता पार्थिव) की मन्दन की। शिलाका वह विश्व आश भी सुस्पष्ट टीका है। वह जम्बूद्वीपका जन्म तीर्थ है। यहाँ शम्भुतीर्थके शिवलीलका जो स्पर्श करता है, वह गौहत्यासे मुक्त हो जाता है। उक्त ! जम्बूद्वीपमें [भाग] उस महातीर्थमें जान कर प्रकटका [भाग] मुक्ति प्राप्त होती है।

एक महासे सम्पन्न गौ भयभीत हो रही थी तब मुनिमें [भाग] [भाग] व्याघ्रमें ज्ञात [भाग] करनेवाले [भाग] सम्पन्न [भाग] विद्या। उस भयसे व्याघ्र भी सकल गौको छोड़कर भाग गया। व्याघ्रमें उन्नत गान रक्त पुष्पागिरी है पार्थ ! जो धन्य उसका दर्शन करता है, वे उद्वेगकण ही हो जाते हैं, इसमें संदेह नहीं है। कुछ ही समयमें भगवान् शंकर [भाग] छोड़कर यहाँ साक्षात् प्रकट हो गये। वे वृषपत्तन उन्नत थे, [भाग] उनके पक्ष भागमें [भाग] तथा विश्ववध पक्षितियोंके [भाग] गन्दी, यक्षकाल, सुज्ञी, [भाग] चामुण्डा, चण्डिकाई आदिके पवित्र और पार्वती, भूतमातृ, यक्ष, राजस, गुह्यक, देव,

- १-यक्षकाले गत्तं तिलं श्रद्धा विष्णुः शशिनीः। काले गर्हस्पतिः उष्णकाले कटिः च। शिष्ये यथेन्द्रः सर्वप्रपञ्चकम्। तस्मै [भाग] [भाग] कालके [भाग] यमुनाः। यक्षकाली कर्तुं यक्षकालीनीः। गर्हस्पतिः [भाग] काली प्रतिपत्तयती। एतेषु भजः सर्वे विष्णुं यक्षः शिवः। तस्मै च कुरे [भाग] च गङ्गायैः। रोमसु तथेन्द्राणां शिष्यां च पूज्यः। शशिः काले [भाग] शशिनीये कालिभक्तः। चामुण्डाकाले यक्षे शिवः। यक्षः शिष्टिः। यक्षकाले भजः [भाग] च यक्षः। सुज्ञी पक्षिने यने उक्तः सम्पत्तिः। उक्त एवमस्त [भाग] जन्म, गर्हस्पतिः। शिष्टकालः शिवः। कालेने च यक्षः। शिष्टके यक्षे तिले यक्षकालेयक्षिणः। अदित्या यक्षके [भाग] पिच्छीकृत सम्पत्तिः। उष्णकाले च कुरे [भाग] यमुना शिवः। यक्षकाले देवकाले देवकाले सम्पत्तिः। उक्त पुष्पके यक्षे शशिपञ्चकालः। यक्षः सायः शिष्टे गर्ह ने तु पयोधः। यक्षः शिष्टकाले [भाग] शिष्टकालिकः। उक्त गर्हकाले शशिपञ्चकाले शिवः। यक्षे यक्षकाले शिवः। अदित्यायक्षकालः शिवः। यक्षकाले यक्षः। यक्षकाले यक्षकालः।











### धीमन्तपञ्चक-व्रतम् ॥ एवं यद्विष्णुः

**धूमिधिरने कदा—**हे यदुक्ते कृष्ण । ॥ ॥ ॥  
 श्रीधीमन्तपञ्चक नामक जो श्रेष्ठ व्रत होता है, अब इसके  
 उत्सव का विधान बताइये ।

**भगवान् श्रीकृष्ण बोले—**गङ्गाधर ! ॥ ॥ ॥  
 सर्वोत्तम धीमन्तपञ्चक-व्रत का वर्णन कर रहा हूँ । मैं पहले इस  
 व्रत का उपदेश श्रीकृष्णसे ॥ ॥ था, फिर भूगर्भे शुक्राचार्यसे  
 और शुक्राचार्यसे ॥ ॥ आदि ॥ ॥ अपने भक्त  
 आश्रमोंको बताया । जैसे तेजोविक्रमसे अग्नि, श्रीभगवद्गीतासे  
 पवन, पूरणीयसे ज्ञान एवं इनमें सुलभ-दान होता है, ॥  
 श्री व्रतमें धीमन्तपञ्चक-व्रत श्रेष्ठ है । ॥ ॥ पूर्वोक्त, ॥  
 ॥ ॥ अश्वमेध, शक्रमेध ॥ तथा ॥ ॥  
 अभ्युत्थान जैसा ध्वज है, ठीक उसी प्रकारसे ॥ ॥  
 धीमन्तपञ्चक सर्वोत्तम है । ॥ इस दुष्कर धीमन्तपञ्चक-व्रत का  
 अनुष्ठान कर लेता है, उसके द्वारा सभी धर्म सम्पन्न हो सके  
 हैं । पहले सत्ययुगमें अग्नि, भूगर्भ, गर्ग आदि मुनिकोंने, फिर  
 ॥ ॥ तथा ॥ ॥ आदि राजर्षि और इनमें से श्रेष्ठ  
 ॥ ॥ तथा कलिपुराणमें उक्त ॥ ॥ ॥  
 इस व्रत का अनुष्ठान किया । आश्रमोंमें आचार्य-परम, जो  
 तथा ध्वज-वर्णके द्वारा और अग्निके एवं वैश्वदेव सत्य-सौम्य  
 आदिके परमपूर्वक इस व्रत का अनुष्ठान किया है ।  
 भूत भन्तुर्धर्मके लिये इस ॥ ॥ अनुष्ठान असंभव है । ॥  
 धीमन्तपञ्चक-व्रत ॥ ॥ दिव्य होता है । ॥ धीमन्तपञ्चक-व्रतमें  
 असत्यपाषाण, ॥ ॥ खोलने आदि अनुष्ठित ॥ ॥ तथा  
 करना चाहिये । पाँच दिन विष्णु धर्मका पूजन करते ॥  
 शाक्यभोजन ही आहार करना चाहिये । पत्थरी आड़ों को भी  
 सुख-आतिथेय इस ॥ ॥ आचरण ॥ ॥ है । ॥  
 नारी भी पुनः-पुनः सद्बुद्धि अथवा योग्य भोजन इस व्रतको कर  
 सकती है । इसमें कर्तिक मासपूर्वक मित व्रत-स्नान, दान,  
 गन्ध-स्नान और भगवान् विष्णुके पूजन का विधान है । नदी,  
 झरना, देवस्तान या किसी पवित्र जलशय्यमें शरीरमें गोमय  
 लगाकर ॥ ॥ जो, काल तथा विशेषसे देख, अग्नि  
 और पितृभोजन चर्पण ॥ ॥ चाहिये । भगवान् विष्णुके ॥  
 मधु, दुग्ध, घी तथा चन्दनमिश्रित जलसे प्रतिपूर्वक स्नान  
 करना चाहिये । कर्पूर, पद्मजल, कुंकुम (केसर), चन्दन तथा

सुगन्धित पदार्थके ॥ ॥ भगवान् गङ्गाधर विष्णुका उपसेवन  
 करना चाहिये । उनके सामने एक टीपक ॥ ॥ दिनोत्तक  
 अनन्तर दिन-रात ॥ ॥ चाहिये । भगवान्को नैवेद्य  
 निवेदित ॥ ॥ 'ॐ नमो ब्रह्मदेवाय' ॥ अष्टोत्तरशत-जप,  
 तदनन्तर गङ्गाधर-स्मरण ॥ ॥ करना चाहिये तथा विधिपूर्वक  
 शक्यतासेन संध्या करने चाहिये । जमीनपर सोना चाहिये । ये  
 सभी कार्य पाँच दिनोत्तक किये जाने चाहिये । इस व्रतमें पहले  
 ॥ ॥ भगवान् विष्णुके चरणोंकी कम्पन-पुष्पके द्वारा पूजा करनी  
 चाहिये । दूसरे दिन विष्णुचरणके द्वारा उनके भूतनीधि, तीसरे  
 दिन अधि-स्नान कर केवलके पुष्पद्वारा पूजा करनी चाहिये ।  
 ॥ ॥ दिन ॥ ॥ एवं जप-पुष्पोंसे भगवान्के लब्ध-भद्रेश्वरी  
 पूजा ॥ ॥ और पाँचवें दिन मालती-पुष्पोंसे भगवान्के  
 शिरोधार्य पूजा करनी ॥ ॥

इस ॥ ॥ इतिहास पूजन करते ॥ ॥  
 एकदशके ॥ ॥ ॥ अधिष्ठाता गोमय ॥ ॥ इन्द्राक्षी  
 गोमय प्रारण करना चाहिये । ॥ ॥ दूध तथा  
 चतुर्दशीके दक्षिण प्रारण ॥ ॥ चाहिये । कायस्थोंके लिये  
 पाते ॥ ॥ इनका व्रत ॥ ॥ चाहिये । पाँचवें दिन मानकर  
 ॥ ॥ विधिवत् पूजा ॥ ॥ चाहिये । तत्पश्चात् आश्रमोंको  
 प्रतिपूर्वक भोजन ॥ ॥ दक्षिण देनी चाहिये । ॥ प्रकार  
 भुज-कायस्थोंको भी ब्रह्मभूषण प्रदान करना चाहिये । अग्निमें  
 पहले पादगन्ध-दान करके पीछे भोजन करने । इस प्रकारसे  
 धीमन्तपञ्चक-व्रत का सम्पन्न करना चाहिये । यह धीमन्तपञ्चक-  
 व्रत परम पवित्र और सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाला है ।  
 रामन् ! इसी धीमन्तपञ्चक-व्रत का वर्णन शरणागता पर पड़े हुए  
 महात्म्य भोजने ॥ ॥ किया था । इसे मैं आपको बता दिया ।  
 ॥ ॥ प्रतिपूर्वक ॥ ॥ ॥ करता है, उसे  
 भगवान् अत्युत्तम भक्ति प्रदान करते हैं । गङ्गाधरी, गृहस्थ,  
 ॥ ॥ अथवा संन्यासी जो कोई भी इस व्रतको करते हैं,  
 ॥ ॥ वैष्णव-स्नान प्राप्त होता है । ॥ शुद्ध एकदशीसे  
 उक्त व्रत करके चौदहवारीको ॥ ॥ पूर्ण करना चाहिये । जो  
 इस व्रतको सम्पन्न करता है, ॥ ॥ महात्म्य, मोक्षदा आदि  
 बड़े-बड़े पापोंसे भी मुक्त हो ॥ ॥ और शुद्ध सद्भक्तिके प्राप्त  
 ॥ ॥ है । ऐसे ॥ ॥ ध्वज है । (अध्याय ७२)







और मुझे परमार्थ प्राप्त हुई।' इस वे सभी प्रेता मुक्त । राजन् ! नरक पुनः भर लौट आया । मरनेके श्रवण सुननेके योगसे भगवान् सर्वदुःखी

कर, गो-दान किया । जितेन्द्रिय होकर प्रसिद्ध नदीके संगमोपर वह सब कर्म करवा और अन्तमें उसने मरनेके लिये दुर्लभ स्थानको प्राप्त किया । (अष्टाध्याय ७५)

### विजय-श्रवण-सुदृष्टिमानने भगवानावतारकी कथा

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—सुधीर ! एकदशी तिथि यदि नक्षत्रसे युक्त हो तो उसे विजया तिथि कहते हैं, वह पालोको विजय प्रदान करनेवाली है। एक बार दैत्यराज पशुपति होकर सभी भगवान् विष्णुकी शरणमें पहुँचे और कहने लगे—‘बन्धे । सभी देवताओंके एकाग्र आग्रह है। अब मरान् कहते हमारा उद्धार कीजिये। इस दैत्य कीत्य सब विध्वंस ।’ भगवान्ने कहा—‘देवगण ! मैं यह जानता हूँ कि विषेक-पुत्र बलि तब कटक कर हुआ है, पर उसने तपस्याकर अपनी कलत्रसे पवन कर रखी है, वह शक्त है, जितेन्द्रिय है और वेद पार है, सब मुझमें ही लगे है, वह सत्यधीन है। बहुत दिनोंके बाद उसकी तपस्याका समाप्त होगा। सब मैं इसे अभिन्नमन्यव समझूँगा, तब उसका अभीष्ट क्षण भर सूर्य और मरनेके दे दूँगा। पुनः ही इच्छासे देवताओं अतिथि मैं कर उठाने की। देवगण ! मैं उनका भी सम्मान करूँगा, अवसर लेकर देवताओंका संरक्षण और अनुष्ठान विचार करूँगा। आपसो निश्चित होकर और समझी प्रतीति करें। देवगण भगवान् विष्णुसे स्मरण करते हुए कपस आ गये। देवता की भगवान् विष्णुका थी। उसने गर्भमें भगवान्ने करण करने कर्मों का मन भगवान् अद्वैतिक गर्भसे प्रदुर्भूत हुए। उनके कर छोटे, शरीर छोटा, सिर बड़ा और छोटे बन्धेके समान हाथ-पैर, उदर आदि थे। कामनरूपमें अब अद्वैतिने पुनः देव और सब कह कुछ कहनेको उठा हुई तो देवगणको उनकी कभी अवकाश हो गयी।

नरोत्तम ! मरनेके श्रवण नक्षत्रसे युक्त एकदशी तिथिमें विष्णुका कामन भगवान् पृथ्वी अवतार हुआ तब पृथ्वी दृग्गमने लगी। दैत्योंने सब सब और देवगण प्रसन्न हो गये। महासुनि कर्मने विष्णुके

संस्कार सब ही लिये। भगवान् दण्ड, मेखल, यज्ञोपवीत, कमण्डलु तथा छत्र धारणकर राजा पञ्चपत्तने गये। बसिसे कहा—‘पञ्चपते । मुझे पग धूँई प्रदान करो।’ बसिने कहा—‘मैंने दे दिया।’ अभी तब भगवान् कामने अपना शरीर बहाना प्रारम्भ किया। भगवान्ने अपना शरीर इतना विरासत बना दिया कि एक पगसे धमकी पुनःलोकोमें पग लिया तथा द्वितीय पगसे तृतीय पग लिया। तीसरा पग रखनेके लिये पग की स्थान मिल गया। देवगण, ब्रह्मा, ऋषि-मुनि इस कृत्यको देखकर सन्तु-सन्तु कहने लगे और भगवान्की स्तुति करने लगे। सभी दैत्यगणोंको उन्होंने कहा—‘तुम परितोके साथ सुनारोकोमें बस जाओ। मैं इस सुरक्षित रहकर तुम वहाँ अभीष्टत चीजोंका उपभोग करोगे। कर्ममने जो हनु है, उनके तुम प्राप्त करोगे।’ बलि भगवान्को प्रणमकर हो धुलारोकोमें भगवान्ने देवगणोंके कहा—‘अपसो अपने-अपने स्थानपर निश्चित होकर रहें।’ भगवान् भी संसारका करके अन्तर्धान हो गये।

राजन् । वे सभी कर्म एकदशी तिथिको हुए थे। यह तिथि देवगणोंकी विजयतिथि मानी गयी है। यही एकदशी तिथि फलानु मरने पुन नक्षत्रसे युक्त होनेपर विजय तिथि कहा गया । एकदशीके दिन तपसासकर एभिने भगवान् कामकी प्रतिमा बनाकर पूजा करनी चाहिये। प्रतिमाके कर्ण ही कुम्भिक, हाथ, चरणफटुका, ग्रीव, यज्ञोपवीत, कमण्डलु तथा मृगधर्म आदि स्थापित करना चाहिये। अनन्तर विधिकर उसकी पूजा करनी चाहिये। निम्न मन्त्रोंसे उन्हें सम्स्तार करे और प्रार्थन करे—

अस्तसाधिनम् ।

नरोत्तम धनुषपातं कर्णं मधुसूदनम् ॥



नमो वाग्वन्ध्याय नमस्तस्मै ॥  
नमस्तो वसिष्ठाय नमस्तस्मै ॥  
नमो नमस्तो गोविन्दाय नमस्तस्मै ॥  
अभीषत्तमो कृष्ण सर्वकामप्रदो यय ॥

(अक्षय ७६। ४८—५१)

इसके भगवान्को जपन करते। तिल-छद्म,

### समर्पित-छद्मरी एवं गोविन्द-छद्मरीजल

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—पैर

छद्मरीसे ज्येष्ठ मासकी छद्मरीजल प्रत्येक मासकी कृष्ण  
छद्मरीको वाग्वन्ध्याय समर्पित-छद्मरीजल है।  
प्रत्येक मासमें क्रमशः पुष्करिणी, विश्वम्,  
पुष्करिणी, अष्टम तथा जय—इन छद्मरीजलपूर्वक  
भगवान्की पूजा करनी चाहिये। पुनः अक्षय कृष्ण छद्मरीसे  
पहणकर मार्गशीर्षमास निकल चाहिये।  
पूर्वाभिधानसे उपवासपूर्वक नमस्ते अक्षयः भगवान्को  
पूजन करना चाहिये। प्रतिष्ठा माहणको प्रतिष्ठा करके  
दक्षिण देनी चाहिये। तेल एवं क्षार पदार्थ नहीं प्रहण करने  
चाहिये। इस प्रकार इस इस  
वसन्तर्ष पूर्ण हो जाती है और अक्षय का भगवान्को  
अनुग्रहसे उनके लोकको प्राप्त कर लेता है।

भगवान् श्रीकृष्णने पुनः कहा—महाप्रज ! इसी  
प्रकार गोविन्द-छद्मरी नामक एक अक्षय मास है, जिसके  
करनेसे सभी अभीष्ट सिद्ध हो जाते हैं। पैर मासके शुक्ल  
पक्षकी छद्मरीको उपवास कर पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदिसे

### अक्षय-छद्मरी, मनोरथ-छद्मरी एवं तिल-छद्मरी-सतोष्ठा विधान

राजा बुधितिरने पूछा—श्रीकृष्ण ! अक्षयमास, दान,  
धर्म आदिसे जो कुछ वैश्वम् अर्थात् किसी कामकी श्रुति  
जाय तो क्या फल ? इसे आप बताइये।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाप्रज ! राज्य पक्ष  
जो निर्धन, अक्षय रूप पाकर भी जाने, अक्षय, लोभके हो जाते  
हैं, वे सब धर्म-वैश्वम्के प्रभावसे ही होते हैं। धर्म-वैश्वम्से  
ही-पुष्पोंमें वियोग एवं दुर्भाग्य होता है, उत्तम कुलमें  
जन्म पाकर भी लोग दुःखील हो जाते हैं, लोक भी  
घनका भोग दान नहीं कर सकते तथा एक-अक्षयकोसे

श्रुति छद्मरी करे। अक्षयकोसे दान  
पुष्पकर मन्त्रपूर्वक इसे अक्षयकोसे निवेदित कर दे। अक्षयकोको  
मौन होकर भोजन करे। इस प्रकार  
करनेसे बड़ीका एक मन्त्रपर्यन्त विष्णुलोकमें वास होता है।  
तदनन्तर यह इस लोकमें आकर चक्रवर्ती राजा होता है।  
यह नैवेद्य, दीप, धूप एवं पुष्पका होता है। (अक्षय ७६)

भगवान् गोविन्दका पूजनकर अक्षयमें इसी  
छद्मरी छद्मरी छद्मरी चाहिये। इस दिन  
का नहीं करनी। मक्षराल दक्षिण देनी  
चाहिये। गोमुख, गोमुख, गोमुख  
करके दूसरे दिन अक्षय करके गोविन्दका  
माहणको भोजन एवं भी भोजन करना  
चाहिये। इसके ही इस दिन शुक्तिपूर्वक भोजन  
करना चाहिये। इसी प्रकार प्रतिष्ठा  
साथ शुक्तिकी भगवान्  
प्रतिष्ठा पुष्प, धूप, दीप, माता, नैवेद्य  
तथा पूजन गोविन्द  
प्रतिष्ठा गोविन्द तथा उनके मासदिसे शुद्ध  
चाहिये। पक्षके दिन सेवा-पक्ष  
करनी चाहिये। इस करनेसे बड़ी फल प्राप्त होता है।  
शुक्तिपूर्वक गोविन्द उत्तम पुष्पका दान देनेसे होता  
है। इस समयसे गोविन्द भोजन  
गोविन्दको प्राप्त होता है। (अक्षय ७७-७८)

बुधितिरने पुनः कहा—महाप्रज ! यदि कदाचित्  
कोई दुष्ट हो ही तो उसके निवारणार्थ  
करना चाहिये ?

श्रीकृष्ण बोले—महाप्रज ! अक्षय छद्मरी-मास  
करनेसे सभी प्रकारकी धार्मिक बुद्धि दूर हो जाती है। अब  
अक्षय उसका भी विधान सुने। मार्गशीर्ष मासके शुक्ल पक्षकी

इन्द्रदेवको जानकर जनार्दन पागलान्ता परीक्षणक पूजन कर  
 रखन चाहिये और सारा सारा  
 चाहिये। शिवदेव पूजन करने  
 और गीर्षि (कन) से परा पात्र जलाने से दान करे  
 और फिर भगवान्से यह प्रार्थना करे—

सप्तमध्यानि पवित्रविष्णुः कृष्णः ।  
 भगवन् स्वस्त्यायेन तद्वन्द्यविष्णुः वे ॥  
 यथाज्ञाते जगत् सर्वं त्वत्तु पुनरोत्तमः ।  
 तत्प्रादिकलापयन्तस्मिन् जगति नमः सन्तु वे ॥

(अनन्त ५१। १४-१५)

'भगवन्! मुझसे सत्ता जगत्में जो भी बात करनेमें मूल्य  
 हुई हो, वह सब आपके अनुग्रहसे परीपूर्ण हो गया।  
 पुनरोत्तम। जिस प्रकार आपसे सारा जगत् परीपूर्ण  
 रही मैंने खासत तभी बात पूर्ण हो गई।'

इस अंतमें चार बातें हैं। पहली बातें हैं।  
 वैष्णवि चार मासके अन्तर दूसरी पारण्य सप्त-पत्र  
 जलाने के देनेका है। अथवा चार मास  
 तीसरा कर नारायणका पूजन करते हुए  
 अनुसार सुवर्ण, मृत्पत्र अथवा पत्थर-पत्रके पत्रों  
 धृत-दान करना चाहिये। अथवा पूर्ण होकर शिवदेव  
 ब्राह्मणोंको भोजन करवाकर ब्रह्मचर्य देकर बुद्धिमें  
 सिधे कर्म धारिणी चाहिये। इसमें अथवा चार पवित्रपूर्ण पूजन  
 करनेका भी विधान है। इस तरहसे जो बातें हैं, उन  
 करता है, सात वर्षतक किये हुए बात सम्पूर्ण  
 फलदायक हो जाते हैं। अतः जो-पुरुषोंको ज्ञानेश वैष्णव दूर  
 करनेके लिये अवश्य ही इस बातको सम्पादित करना चाहिये।

भगवान् श्रीकृष्णने पुनः कहा—महाराज! आपका पुरुष दोनोंको परलून मारनेके रूपसे पकड़ने  
 एकदशीको उपवास करके भगवान्का पूजन-पूजन  
 और उठने-बैठने हरिक समाज करते रहने चाहिये।  
 द्वादशीके प्रभातमें ही जल-पूजन तथा मृत्यु होनके बाद  
 ब्राह्मणको दक्षिणा देनेका है। भगवान्से  
 अपने अभीष्ट मनोरथोंकी संसिद्धिके लिये प्रार्थना करनी  
 चाहिये। तत्पश्चात् हविष्य-भोजन ग्रहण चाहिये।  
 अंतमें परलूनसे जेडलक चार पक्षोंमें दत्तपूज,

पुनः-धूप और इक्षिणा-नैवेद्यसे भगवान्की पूजा-अर्चनाके  
 गोमूत्रकलित जल तथा हविष्यग्र ग्रहण करनेका विधान  
 है। फिर अथवासे अथवाका चार महीनेमें चमेरकी पुष्प,  
 धूप और (सूटी चान) अथवाके नैवेद्योद्धार  
 पक्षककी पूजा-सुती करनेके बाद कुरेदककन प्राप्त तथा  
 निवेद्य नैवेद्य करना चाहिये। कर्त्तिकसे माघ मासतक  
 तीसरी पारण्ये जगन्पुत्र (अष्टमूल), उत्तम धूप और कसाराके  
 नैवेद्यसे कुरेदककन पूजनेपक्ष गोमूत्र-प्राशन तथा कलक  
 करनेका विधान है। ब्राह्मणोंको दक्षिणा देनी  
 चाहिये। अथवा चार वर्ष (मासा) सुवर्णकी भगवान्  
 पूजन कर, दो और दक्षिणसहित  
 करना चाहिये। इसीके साथ बारह  
 पक्षोंकी भी योजना करके जगन्पुत्र अथ, जगन्पत्र पट,  
 कुरी, सूत, चक और दक्षिण देनी चाहिये। इस द्वादशी-  
 मासके करनेसे सभी मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं। इसीसे इसका  
 नाम मनोरथ-द्वादशी है। इसको श्रीलोकका राज्य भी इसी  
 प्राप्त हुआ है। शुक्लपक्षमें तथा  
 पक्षों को अपने निर्विघ्न विद्या प्राप्त की है। अन्य वेद पुरुषों  
 तथा शिवोंकी भी इस बातके प्रत्यक्षसे अपने अभीष्ट मनोरथोंको  
 प्राप्त किया है। को भी जिस-विशी आभिलषासे इस  
 बातको करता है, उसे वह अवश्य प्राप्त होती है। पुनः  
 भगवान् पुनरोत्तमका पूजन नहीं करते, गी, कलक आदिकी  
 सेवा नहीं करते और मनोरथ-द्वादशीका मत नहीं रखते, वे  
 विजयी प्रकरसे अभीष्ट-फल प्राप्त नहीं कर सकते।

तब बुद्धिहिरने कहा—भगवन्! बोद्धेसे परिक्रमसे  
 अथवा सत्ययुगसे सभी पाप कट जायें ऐसा कोई तपास आप  
 बताइये।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज। शिव-द्वादशी  
 नभक एक बात है, जो परम पवित्र है और सभी पक्षोंका नाश  
 करनेका है। तब मासके कृष्ण पक्षकी द्वादशीको जब मूल  
 अथवा पूर्वाषाढ नक्षत्र प्राप्त हो, तब उसके एक दिन पूर्व  
 अर्थात् एकदशीको उपवास रखकर अंत ग्रहण करना चाहिये।  
 द्वादशीको भगवान् श्रीकृष्णका पूजन ब्राह्मणोंकी कृष्ण  
 दान करना चाहिये। शरीरोंकी भी जानकर काले  
 शिरस्य की योजना करना चाहिये। इस एक वर्षतक

प्रत्येक कृष्ण छादरीमें ब्रह्मचर्य अन्तर्गते निरालेसे पूर्ण कृष्णचरित्रिक  
कुम्भ, पक्वान्न, धान, जूत, कपड़ा और दक्षिण कर  
आह्वानोंको देना चाहिये। उन विद्वानोंको जोसे कितने कितने कष्ट  
होते हैं, उसने वर्षभरका इस कष्टको करनेकरके स्वर्गमें पहुँचा  
होता है और किसी जन्ममें अन्न, कपड़ा, कुड़ी आदि नहीं होता।

सदा नीचेगा [ ] है। [ ] कितना-कितने बड़े-बड़े पाप [ ] करते  
हैं। इस जन्ममें न बहुत परिश्रम [ ] और न [ ] बहुत अधिक  
[ ]। इसमें कितनेसे ही [ ] कितना-दान और कितना ही भोजन  
करनेका अवसर सदासे मिलता है।

(अध्याय ७९—८१)

### सुकुन-छादरीके असंगमों सीरपार वैश्वकी [ ]

तबका सुविधितरने पूछा— श्रीकृष्णचरित्र ! ऐसा कौन-  
सा कर्म है, जिसके करनेसे सभी कष्ट दूर हो जायें तथा कोई  
संशय भी न हो।

भगवान् श्रीकृष्णजीने कहा—महाराज ! अपने [ ]  
पूछा है, उस विषयमें एक [ ] [ ] है।  
पूर्वजन्ममें [ ] (मेलसा) गरीबोंमें सीरपार [ ]  
वैश्य रहता था। वह पुत्र-पौत्र, कन्या [ ]  
भरण-पोषणमें ही लग्न करता था, फलस्वरूप कष्टोंमें भी उसे  
फालोकाकी चिन्ता नहीं होती थी। वह [ ]  
[ ] ही उपार्जन करता, कभी दान, कन्या, देवपूजन [ ]  
नाम भी नहीं लेता था। निराल-निरालका कष्टोंका स्वेष्ट  
उत्तम [ ] कर [ ] था। [ ] फलमें अनन्तर [ ]  
मृत्युको [ ] हुआ और निष्कारणमें फलन-देहमें फलस्वरूप  
रहने लगता एक दिन बीच में अपने विपरीत नामके केतवेक  
ब्राह्मणने उस मेलको देकर कि वह पूर्व-विश्वकोसे संका नहीं  
कालमें लोट [ ] है, [ ] सब अज्ञान [ ] [ ]  
प्यारमें कष्ट [ ] [ ] है और विद्या लटक गयी है। वह  
लम्बी-लम्बी काल ले रहा है। उसकी वह दया देकर  
ब्राह्मणको बड़ी दया भवकी और उसने उसका पूज्यता पूछा।

जोत कहने लगा—ब्रह्मन् ! मैं पूर्व-जन्ममें फालोकाके  
रिषि किराई [ ] कर्म न करनेके कारण [ ] दण्ड [ ] रहा  
हूँ। मैं निरन्तर धन, घर, सोता, पुत्र, कन्या आदिकी चिन्तामें ही  
अवसक्त [ ] था और मैंने अपने वास्तविक [ ]  
कभी [ ] किया। इसीसे वह कष्ट भोग रहा हूँ। वह कन्या  
कर सिन्ध और [ ] काम करना है—इसी तथेकमुझे सम्पूर्ण  
जीवन व्यतीत करनेका ही वह फल है। स्वेष्टवश मैं नीति-  
उत्तम सभी प्रकारके कष्टोंको जेता रहा हूँ। मैंने [ ]

विपरीत भी कष्ट नहीं होता, उससे अब [ ] हूँ। देवता,  
नित्य, [ ] [ ] मैंने कभी पूजन [ ] और [ ]  
[ ] [ ] [ ] मुझे [ ] नहीं मिल रहा है।  
अपनेके द्वारा एकत्र किये गये वस्तुका उपयोग दूसरे [ ]  
[ ] [ ] सोच-सोचकर मुझे पैसा नहीं [ ]। मैंने कभी  
[ ] [ ] और [ ] ही कभी देवार्जन ही  
किया। [ ] [ ] दान [ ] है। बौद्ध मैं पापोंका  
ही [ ] किया, अतः मैं [ ] फलको [ ] भोग रहा  
[ ]। मैं अपने [ ] दुष्कर्मोंका [ ] भोग रहा हूँ। अतः [ ]  
मुझपर [ ] ऐसा [ ] हो [ ] [ ] [ ]  
[ ] इस दुष्टिसे [ ] बड़ा हो।

विपरीतमुनि बोले—सीरपार ! दस [ ] [ ] तुम्हें  
भगवान् भगवान् [ ] [ ] इन्हींसे सुकुन-छादरीका  
उपवास [ ] था, [ ] प्रत्यक्षसे इस [ ] बहुत बड़े  
कष्टका [ ] हो [ ] [ ] तुम्हें अल्पकालमें [ ] उत्तम गति  
प्राप्त [ ]। वह छादरी-सा पापोंका [ ] तथा पुण्यका [ ]  
[ ] है, इसी कारण इसका नाम सुकुन-छादरी है। इस  
छाद [ ] [ ] कर विपरीतमुनि अपने आश्रमको  
गये और सीरपार भी छादरीयलके [ ] [ ] फलको  
अनन्तर [ ] [ ] गया।

इसका कहकर श्रीकृष्ण भगवान् बोले—हे महाराज !  
वह [ ] प्रभाव [ ] इतना पाप जोड़े [ ] फलमें कष्ट  
हुआ, [ ] मृत्युको पुण्यके [ ] [ ] बच करना चाहिये  
और अपने कल्याणके सिन्धे उपवाससहित करो [ ] चाहिये।

तबका सुविधितरने पूछा— श्रीकृष्णचरित्र ! फलोंसे [ ]  
तबका सकल चिन्ता भोगनी पड़ती है। ऐसा कौन-सा [ ] है,  
[ ] सब [ ] नष्ट हो [ ] और मोक्ष [ ] हो।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—भक्त ! भक्त्युक्त भक्तों  
शुक्ल पक्षकी एकादशीको उपवास कर कर्म, ज्ञान, योग,  
मोक्ष, इत्यादि अनेक उपकार प्राप्त करेंगे । उपवास  
करता हुआ 'ओ नमो नारायणाय' इस अष्टाक्षर-मन्त्रका जप  
करना चाहिये । और इसी प्रति इन्द्रजीवों ने  
मधुसूदनकी पूजा आदि करनी चाहिये । प्रथम घर  
(भक्तगुरुसे प्रार्थना) करनी चाहिए, फिर  
भक्तियोंको । यथेष्ट भक्तोंको देना चाहिये ।  
आचार्यादि पारम्ये भूतपूजा देना और बर्हिषादि  
चार मासमें सितपत्र अर्पण करना चाहिये ।  
भगवान्की पूजाके अनन्तर उनके अनुयायी भक्तोंके शिष्य

प्रार्थन करनी चाहिये । तदनन्तर भोजन करना चाहिये । वर्ष  
पूरा होनेपर सुवर्णकी विष्णु-प्रतिमा बनाकर उसे पुजित कर  
कर, सुवर्ण, दक्षिणा-सहित सबसामानोंको दान  
करिये । इस विधिसे जो पुरुष अपना कर्म्म इस सुकृतद्वादशीका  
कृत करता है, वह कभी नरकाको नहीं प्राप्त होता । नारायणके  
चरणोंकी कभी नरकाकी प्राप्ति नहीं होती । विष्णुका नाम  
उच्चारण करते ही समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं, फिर नरकके  
भयका तो प्रश्न ही नहीं उठता । इसी प्रकार वासुदेव नारायणके  
चरणोंकी कभी भी भयका भय नहीं  
देता । अतः भगवान्को नमोकार करना  
चाहिये । (अध्याय ८२)

### —८३— धरणी-व्रत (अर्वाक्षार-व्रत)

राजा धुमिष्ठिमुख बोले—भक्त ! यह व्रत  
है कि विधिपूर्वक व्रत करने, कड़े-कड़े दिन  
कठिन परिश्रम करनेसे परमेस्वरकी कृपा है, जो  
सर्वभूतोंको प्राप्ति, न दान दे सकते न नष्ट  
समर्थ है, भक्ति विद्या को है, और उसे बताने ।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—भक्त ! मैं आपको एक  
व्रतपूर्ण व्रत बतलाता हूँ । व्रतको समय धरणी  
(पृथ्वी) जलमें होकर चली गयी, उस  
समय धरणीदेवीने अपने उदरके शिरो व्रत का । इसके  
प्रभावसे भगवान् नारायणने जलान्तर  
उसे पुनः अपने स्थानपर लाने का दिव्य । उस  
व्रतका विधान इस है—

व्रतको मासके कृष्ण चतुर्थी दशमीको प्रातः-  
काल निवृत्त-स्नानादि क्रियाओंको देवार्चन  
कर्म विधिपूर्वक करने चाहिये । उस दिन पवित्र,  
अश्वत्थ इविष्णु-भोजन करना चाहिये । अनन्तर पुनः पवित्र  
पत्र चलेकर हाथ-पैर धोकर पवित्र हो कर-भूतोंके  
अंगुलिके दातृको दत्तभवन कर आचमन  
अज्ञेय स्वर्गकर भगवान् कावर्तन कर  
यह दिन व्यतीत चाहिये । एकादशीको निवृत्त  
भगवान्को नमोकार जप चाहिये । इन्द्रजीवों ने नदी

पवित्र जलमें स्नान करना चाहिये । जलसे पूर्व नदी,  
जलान्तर भयान्तर एवं पवित्र स्थानकी भूतिका प्रार्थना करनी  
चाहिये, भूतिका प्रार्थना करते समय इस व्रतका उच्चारण  
करे—

कारण लोचने लगी भूतिका देवि सर्वज्ञ ।

देव नदी नदी नदी पापघोचय सुते ॥

(अध्याय ८३ । १४)

'देवि सुते !' इति के द्वारा अथ समस्त  
भगवान्की भक्तिपूर्वक धारण-प्रेक्षण करती है, उसी  
द्वारा भूतों चतुर्थीसे मुक्त करिये तथा धारण  
।

पुनः उस भूतिकाके पूर्वको दिक्काल क्षीरमें लगाने का  
करे । तदनन्तर भगवान्की देवभक्तिमें भक्त भगवान्  
भक्तोंकी पूजा करे । नारायणके आगे चार जलपूर्ण  
कटोमें चार समुद्रोंकी चरित्रभक्तकर स्थापना करे । उन चट्टीपर  
सिद्धपूर्ण पूर्वपत्र स्थापित करे । कटोके मध्य एक पीठके ऊपर  
जलजलमें सुवर्ण, चतुर्भुज भगवान्की मस्तकभगवान्की  
कृष्ण चतुर्भुज करे । यथाविधि उपचारोंसे उनका  
पूजनकर प्रार्थन करे । अन्तिममें वही उच्चारण करे । प्रार्थनामें चारों  
कटोको जलपेटी, चतुर्भुज, चतुर्भुज, अधर्षिकी चार  
भगवान्की पूजाकर उन्हें निवेदित करे । जलपानमें स्थापित  
अन्तिम जलपान-दम्भिकोंके प्रदान करे ।

आहुणियों का पायसाग्रेसे संतुष्ट कर पश्चात् स्वयं भी भोजन करे।  
उत्तम। इस विधिसे जो मार्गदर्शक पुस्तक उपलब्ध कर ली जा  
वे, उसे दीर्घ आयुको प्राप्त होती है। जन्मनरसे किने गये  
महाद्वारा आदि महाव्रतकोसे उसकी शक्ति से जाती है। यदि  
नियममार्गसे ज्ञान करता है। उसे महाव्रतकी शक्ति  
है, इसमें कोई संदेह नहीं।

इसी प्रकार अनादि कर तीन मासके पुत्र पञ्च  
उपवास कर भगवान् अर्द्धमास की कृपासे पुत्र  
करनी चाहिये। पाप मासके पुत्र पञ्चमी उपवास-  
पूर्वक भगवान् वराहकी प्रतिमाका पूजनकर  
चाहिये। इसी प्रकार पञ्चमून  
उपवासकी उपवासपूर्वक भगवान् अर्द्धमास की प्रतिमाका, तीन  
पापके पुत्र पञ्चमी उपवासकी भगवान् शम्भुकी प्रतिमाका,  
वैशाख मासके पञ्चमूनमासकी  
पुत्र उपवासकी भगवान् राम-लक्ष्मणकी प्रतिमाका,  
आषाढ मासके पुत्र उपवासकी भगवान् वासुदेव (कृष्ण) की  
प्रतिमाका, श्रावण मासकी पुत्र उपवासकी पुत्र भगवान्  
तथा माघमास मासके पुत्र पञ्चमी उपवासकी उपवासपूर्वक  
भगवान् कार्तिककी प्रतिमाका वक्रोक्ति अन्न-पूजन करने  
पटोरी स्थापना करके पुत्रित प्रियत्न आदि महाव्रतको निवेदित  
कर देनी चाहिये।

इस प्रकार दस मासके भगवान्के दशव्रतको पूजनकर  
पूर्व-विधानसे अर्द्धमास उपवास-पूर्वक भगवान्  
पञ्चमूनमास पाप कार्तिक उपवासकी वासुदेवकी पूजा करनी  
चाहिये। अन्त्ये प्रथम तथा अन्त्ये महाव्रतको निवेदित क  
दे। उन्हें भोजन कराना, दक्षिण प्रदान करे तथा टीनो, अनाथोंको  
भोजन-काम आदिसे संतुष्ट चाहिये और फिर स्वयं  
पञ्चमूनमास चाहिये।

उत्तम ! इस प्रकार उपवास मासोंमें जो इस व्रतको करता  
है वह सभी पापोंसे मुक्त होकर विष्णु-सम्पन्नको प्राप्त करता  
है। कार्तिकमासके इस व्रतको किन्ना था। इसीदिने यह शरीर-  
व्रतको करने प्रारम्भ हुआ। श्रावण मासके दशम्यापत्तिने इस  
व्रतको अनुष्ठानकर प्रथमश्रेणी अधिपतिता प्राप्त किया था।  
उक्त पुनरावृत्तिने इस व्रतको अनुष्ठानसे मासका नामक श्रेष्ठ  
पुत्रको प्राप्त करता प्रथम प्राप्त था।  
इष्टवर्षकी कृष्णतीर्थने इस व्रतको प्रथमसे महान्  
पुत्रको प्राप्त किया। उक्त महाव्रतकी पुत्रकर्ममें प्राप्त किया  
था। अनुष्ठानको भी इस व्रतको प्रभावसे राजर्षि दुष्कर्मको  
प्राप्त किया तथा श्रेष्ठ भगवान्के पुत्र-कर्ममें प्राप्त किया था। इसी  
व्रतको अथवा यदि श्रेष्ठ भगवान्के पुत्रको तथा श्रेष्ठ पुत्रको इस  
व्रतको प्रभावसे उत्तम फल प्राप्त किया था। जो इसे करता है,  
भगवान् वासुदेव उत्तम उत्तम कर देती है। (अध्याय ८३)



## विजोकादशी-व्रत और गुह्येनू<sup>२</sup> आदि इस

धुमिलिने पुत्रा—भगवान् ! इस व्रतको तीन दिन  
उपवास करने, जो पुत्रको अर्द्धमास वसुदेवकी  
उत्तम श्रेष्ठमाससे उत्तम करनेमें समर्थ, वृद्धि  
करनेवाला और संसार-पक्षका नाशक है।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महाराज ! करने  
व्रतके विषयमें है, वह समस्त व्रतोंमें तथा  
इतना महत्वशाली है कि देवताओंके लिये भी दुर्लभ है।  
वसुधि इन्द्र, असुर और भी उसे नहीं जानते क्योंकि  
अन्न-जैसे भगवान्के मैं इसका ज्ञान करता हूँ।

## वेनुओंके व्रतकी महिमा

पुनरावृत्ति नाम विजोकादशी-व्रत है। विज्ञान  
अल्प अज्ञान  
करके निष्कर्षपूर्वक इस व्रतको चाहिये। पुनः  
एकव्रतकी दिन उत्तराभिमुख अपना पूर्वाभिमुख बैठकर  
कतन करे, फिर (जान आदिसे निवृत्त होकर) निराहार रहकर  
भगवान् केवल और लक्ष्मीकी विधिपूर्वक भस्मीभाति पूजा करे  
'दुसरे दिन भोजन करीगा'—ऐसा लेकर रात्रिमें  
करे। प्रारम्भकर और पञ्चगव्यमिले  
करने करे तथा वक्र पुत्रोंकी माला धारण

१-कार्तिकपुण्यके ११वें, अश्विनके ५वें, तथा इन उपवास उपवासियों को स्वयं विचारते हुए है।

२-यह विषय महापुरुष ८२, पञ्चमून १।२३, पञ्चमून १+२, पुनरावृत्ति ५, १५१, पुनरावृत्ति, वसुदेवकी विधिसे  
पुनरावृत्तिसे उद्धृत है। उद्धृत इसे पुनः है।





न तो खेचनकर फलकर भारी होत पड़त है, न और  
खिन्न ही पेरती है तथा न कल्पने में पड़त है ।  
प्रत्येक जन्ममें विष्णु अपना भक्त होता है : ठग !  
एक अठ सहस्र युग नहीं बीत जाते, तबतक  
खर्गलेकमें निरुक्त और पुण्य-धीन होनेपर पुनः  
पुनर्नय • • • • • ।

भागवान् श्रीकृष्णने पुनः कहा—प्रकरण !  
पहले खेचनकरमें पुनर्नय • • • • • ठग हुआ था,  
सम्पूर्ण लोकमें • • • • • तथा सूर्यके लक्षण • • • • • । ठगकी  
संतुष्ट होकर कहने उसे एक खेचन • • • • • (उस  
विष्णु) प्रधान किया था, जिससे • • • • • इच्छानुसार  
भी • • • • • । फिर • • • • • पुनर्नय  
अपने नगर एवं जनपदवासियोंके साथ उसपर • • • • • होकर  
खेचननुसार देशलोकांमें • • • • • सत्तों • • • • •  
करते • • • • • अर्थात् पुनर्नयकी उस पुनर्नय  
सत्तों होनेपर अधिकार था, • • • • •  
धी और भागे • • • • • वह ही पुनर्नयकी नामसे • • • • •  
लगा । • • • • • देवोंका कहने इसे • • • • • प्रजन किया  
• • • • • इसलिये देवता एवं • • • • • करते थे ।  
तपस्वियोंके प्रभावसे खेचनकर प्रदत्त • • • • • विष्णुकर  
होनेपर उसके लिये • • • • • कोई भी • • • • • अगस्त न था ।  
मोक्ष ! उसकी • • • • • नाम लक्षणकी • • • • •  
सुन्दरी थी तथा हजारों नरिवोंका करोड़ों ओरसे सम्पन्न  
• • • • • थी । वह राजकीये उसी प्रकार अत्यन्त • • • • •  
इन्द्रकीये • • • • • परम • • • • • है । • • • • • दस हजार पुत्र थे,  
जो परम • • • • • और अनुशीलियों • • • • • थे । अपनी इन  
सारी विभूतियोंपर बरेबार विष्णुकर • • • • • पुनर्नय  
विमुक्त हो जाता था । • • • • • बार (प्रत्येकके पुत्र) सुख  
पालकी • • • • • यहाँ पधारें । उन्हें अगस्त देवता • • • • •  
उनसे इस प्रकार प्रश्न किया—

राजा पुनर्नयने पूछा—मुन्द ! • • • • • खरगसे मुझे

यह देखें तथा पुनर्नय पुनर्नय निर्मल विभूति • • • • • अपने  
खेचनसे सत्तों देवताओंको पराजित • • • • • देनेवाली सुन्दरी  
कर्म प्रद है ? • • • • • खेच-से तपसे • • • • • होकर कहने मुझे  
ऐसा कमल-गृह क्यों प्रजन किया, जिसमें अगस्त, हाथी,  
• • • • • और सन्तानवासियोंसहित यदि सौ करोड़ राजा बैठ  
जायें तो भी वे सब नहीं पड़ते कि कहाँ चले गये । वह विमान  
उपस्थित • • • • • तथा देवताओंके • • • • • अलक्षित-सा  
कहा है : • • • • • ! • • • • • पुनर्नय • • • • • पापोंकी भेरी धारमें  
पुनर्नयोंमें • • • • •-सा ऐसा कर्म किया है, जिसका प्रभाव आज  
दिवसकी पड़ • • • • • है, इसे आप बतलायें ।

तदनन्तर • • • • • खरगकी राजाके इस आश्चर्यके एवं  
अद्भुत प्रश्नपूर्वक पुनर्नयके जन्मपरसे सम्बन्धित जानकर • • • • •  
कहने लगे—'ठग ! तुम्हारा पूर्वजन्म अत्यन्त भीषण  
• • • • • कुलमें हुआ • • • • • एक तो तुम उस कुलमें पैदा हुए,  
• • • • • दिन-रात पापकर्मोंमें भी मिरा • • • • • थे । तुम्हारा • • • • • भी  
• • • • • संक्षिप्त तथा • • • • • था । तुम्हारी तथा  
दुर्गन्धपुत्र भी और नका बहुत बड़े हुए थे । उससे दुर्गन्ध  
• • • • • • • • • • • तुम बड़े कुलमें थे । उस जन्ममें न तो  
तुम्हारा कोई कैलीकी मित्र था, न पुत्र और न भाई-बन्धु ही थे,  
न मित्र-मित्र और बहिन ही थी । भूपाल । केवल तुम्हारी पह  
काम विचाराव वाली ही तुम्हारी जन्मिष्ट परमापुत्रल संगीनी थी ।  
एक बार कभी करीबन अवसृष्टि हुई, जिसके कारण अकाल  
पड़ गया । उस समय भूजसे पीड़ित होकर तुम अन्तर्गामी  
लोकोमें निकले, परंतु तुम्हें कुछ भी जंगली (कन्द-मूल) का  
अदि कोई खाद्य वस्तु प्राप्त न हुई । इतनेमें ही तुम्हारी दृष्टि एक  
खेचनकर पड़ी, जो कमलसमूहमें • • • • • था । उसमें बड़े-बड़े  
कमल खिले हुए थे । तब तुम उसमें प्रविष्ट होकर कर्तुस्सम्पन्न  
कमल-पुष्पोंके लेकर कैलीस' नामक नगर—(सिद्धिच नगरी-)  
• • • • • चले गये । यहाँ तुमने उन कमल-पुष्पोंकी बेधकर मूल्य-  
प्रतिके हेतु पूरे नगरमें • • • • • लगवाया । सारा दिन बीत गया,  
पर उन कमल-पुष्पोंका कोई खरीदार • • • • • मिला । उस

१-खरगकीय राजकीय, १३।१५, १६।१७, १११।११२ तथा अगस्तकाल ७।७।११, कल्पकाल, उत्तरकालवर्तित अर्थात्के  
अनुसार 'अगस्त' • • • • • पक्षी • • • • • ।

२-एक इन्द्रिय-पुनर्नयमें • • • • • कीट • • • • • कीटें उत्पन्न • • • • • पापकारक इन्द्रियोंके वेगपर, • • • • • वेगमा  
है । • • • • • 'टीप' सम्प्रदाय है ।





### मदनदादसी-प्रत्येक मनुष्यकोका आस्थापन

**मुनिविरने कहा—**भगवन् ! तिमि (देखोई कर्मी) ने जिस व्रतके करनेसे उनकास मनुष्यकोके पुन-रूपमें प्राप्त किया था, अथ वे आपसे उस मदनदादसी-प्रत्येक मनुना चाहता है।

**भगवान् क्षीकृपा बोले—**महात्म ! पूर्वजन्ममें काल्प आदि महर्षिजने तिमिसे जिस उतम मदनदादसी-प्रत्येक वर्णन किया था, उसीको आप मुझसे विस्तारपूर्वक सुनिये। व्रतधारीको चाहिये वह उन मन्त्रके सूत्र पक्षी इन्द्रजी तिमिसे श्रेष्ठ बाबलसे परिपूर्ण एवं एक भद्र स्थापित करे। श्रेष्ठ मदनकी अनुलेप हो तथा वह मन्त्रके दो टुकड़ोंसे आम्बलित हो। उसके प्रकारके ज्ञानपूर्वक और दुपक्षे रक्षे कार्य। प्रकारकी काय-सम्पत्तिसे युक्त हो तथा सुवर्ण-रत्न भी डाल जाय। तत्पश्चात् उसके ऊपर मुझसे भद्र हुआ शक्ति प्राप्त करे। उसके धाम-भागमें उसके गन्ध, घृण आदि उपचारोंसे पूजा करे और गीत, काव्य तथा भगवान् विष्णुकी कथापर आश्रयन करे। प्रातःकाल का भद्र ब्राह्मणको दान कर दे। पुनः कर्मपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन करणकर स्वयं नमस्कृतित भोजन और ब्राह्मणोंको दक्षिणा देकर इस प्रकार उद्धारन करे—'ये सम्पूर्ण प्राणिमण्डले इदमेव शक्ति अमन्द नमसे करो है, वे समस्तभी भगवान् जनार्दन की इस अनुज्ञासे प्रसन्न हो।'

इसी विधिसे प्रत्येक मासमें मदनदादसी-कर्मका अनुष्ठान चाहिये। व्रतोंको चाहिये वह इन्द्रजीके आमलक-फल काष्ठान् घृतालम्बर शम्भन करे और अश्वेदजीके दिन अविनाशी भगवान् विष्णुका करे। तेजस्वी महीन आनेपर घृतधेनु-सहित एवं समस्त सम्पत्तिसे समस्त प्रसन्न, काष्ठीयकी स्तम्भित प्रीति और श्रेष्ठ रंगकी दुष्कर गौ ब्राह्मणको समर्पित करे। उस समय शक्तिसे अनुसर तथा एवं आप्मयण आदिद्वारा समस्त ब्राह्मणकी पूजा करके उन्हें स्वयं और सुगन्ध दान प्रदान करते हुए ऐसा कहना चाहिये—'आप प्रसन्न हो। तत्पश्चात् उस धर्मज्ञ ब्राह्मणको समस्तके

कर्मका कीर्तन करते हुए गेदुमसे हुई इति और श्रेष्ठ इतन करना चाहिये। पुनः कृपणता छोड़कर भोजन करण चाहिये और उन्हें यथाशक्ति गन्ध और पुष्पमाला मदनकर संस्तुत करना। जो इस विधिके अनुसार इस मदनदादसी-कर्मका अनुष्ठान करता है, समस्त जगत्से मुक्त होकर भगवान् विष्णुकी सम्पत्ति प्राप्त हो जाता। तथा श्रेष्ठ पुत्रोंको प्राप्तकर सौभाग्य-कल्याण उपभोग करता है।

तिमिसे इस व्रतानुष्ठानके प्रभावसे होकर महर्षि कथन पचार और परम प्रसन्नतापूर्वक कहेंगे। उसे पुनः अथ-श्रीधनसे सम्पन्न करण कर्त दिया तथा कर महीनेके सिन्धे कहा। तिमिने कहा—'परितेव ! मैं आपसे एक ऐसे व्रत का दान चाहती हूँ, जो इतका वर करनेमें समर्थ, मदन आम्बलित सम्पन्न हो।' वह सुनकर कर्मधर्म उससे कहा 'देख ही होगा।'

**कहकाने पुनः उसने कहा—**'व्रतने ! एक सौ वर्षोंका तुम्हें इसी व्रतधर्ममें रहना है और अर्धे गर्वकी शक्ति सिन्धे करना है। व्रतधर्म ! गर्भिणी संघ-कालमें भोजन नहीं करना चाहिये। न तो कभी वृद्धके मूलपर न चाहिये, न उसके निकट ही जाना चाहिये। वह कभी स्वामी—मूसल, ओकली आदिपर न बैठे, जसमें सुमकर लान न करे, सुनसान घरमें न जाय, भोगोंके साथ कट-विहट न करे और जरीको मोड़े-मरोड़े नहीं। वह बाल खेलकर न बैठे, कभी अपवित्र न रहे, उतार दिनमें सिंहास्य करके एवं कहीं भी नीचे सिर करके न सोये, न होकर रहे। उद्भिन्नचित्त रहे, न कभी भोगे चरणोंसे प्रसन्न करे, अमङ्गलमूलक कार्य न सोले, अधिक जोरसे हँसे नहीं, मित्य पञ्चलिक कर्षीमें तत्पर गुरुजनोंकी सेवा करे। (अर्द्धेन्द्रद्वारा गर्भिणीके स्वास्थ्यके सिन्धे उपयुक्त कर्तव्यकी गयी) सम्पूर्ण ओपविषयोंसे मुक्त गुणगुने गरम जलमें स्नान करे। कुरी सिन्धेसे बातचीत न करे, कर्मसे हवा न ले। मूलकमल शोके साथ न बैठे, दूसरेके घरमें न जाय, जल-जस्त्ये न चले, महान्दिवोंको घर न। भयंकर और दुःख न देखे। अजीर्ण भोजन न करे। कठिन

स्वयम्भूति न करे। अनेधियोगेन गर्भनी रक्ष । ॥ ॥ ॥  
 हृदयमें मत्सर्य-भाव न रहे। जो गर्भनी की विशेषरूपसे इन  
 ॥ ॥ ॥ है, ॥ ॥ ॥ गर्भसे ॥ ॥ ॥  
 होता है, वह शीलवान् एवं दीर्घायु ॥ ॥ है। इन ॥ ॥  
 चलन न करनेपर निश्चिन्त गर्भप्रलयसे अप्रसन्न ॥ ॥ रहती है।  
 विषे। इसीलिये तुम इन नियमोंका पालन करके अपने गर्भनी  
 रक्षका प्रयत्न करो। तुम्हारा ॥ ॥ हो, अन्य ॥ ॥ रात है।

॥ ॥ ॥ पतिव्रती ठाढ़ स्त्रीका कर लेनेपर महर्षि ॥ ॥  
 यही अन्तर्धर्म हो गये। ॥ ॥ दिति नियमोंका पालन ॥ ॥  
 ॥ ॥ करके लगी। बदलावमें दितिको ॥ ॥ पुन  
 (अध्याय) प्राप्त हुए।

॥ ॥ ॥ प्रकाशसे जो भी करी इस मदनप्रदारी-  
 ॥ ॥ ॥ करेगी, वह पुन प्राप्त कर पतिके सुखमें ॥ ॥  
 करेगी। (अध्याय ८६)

### अध्याय-८७ श्रीमद्भगवद्गीताका अष्टमोऽध्यायः

राजा युधिष्ठिरने पूछा—भगवन्! ॥ ॥ ॥  
 करने, समुत्तरणमें, शोभामें, और आदिके करने का कुल  
 मनुष्य किस देवताका स्मरण करे, जिससे उस संवत्के लक्ष्य  
 उत्पत्ति रक्ष ॥ ॥ सके, ॥ ॥ कर्मात्मे।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महापुत्र! सर्वप्रथम  
 भगवती श्रीदुर्गादेवीका स्मरण करनेपर पुन ॥ ॥ ॥  
 और भयको प्राप्त नहीं होता। परत। ॥ ॥ और कर्मदेवकी  
 अपने गुरु शंकराने मुनिके यहाँ तक किता एक कुंठे ॥ ॥ उस  
 समय हमने गुरुदक्षिणाके लिये गुरुजीसे प्रार्थना की। तब  
 गुरुजीने हमारा दिव्य प्राण्य जानकर यही कहा—‘मने। ॥ ॥  
 पुन प्रभावशेषमें गंध बा, यहाँ हमें समुद्रमें किट्टी प्रकटने पर  
 दिवा, उसी पुनके गुरुदक्षिणाके रूपमें पूजे जात कट्टाये।’ ॥ ॥  
 इन विलक्षणोंमें गये और बहासि गुरुपुनके लेकर गुरुजीके  
 समीप आये और गुरुदक्षिणाके रूपमें उनका पूज उन्हें समर्पित  
 कर दिवा। तदनंतर गुरुने प्रणामकर जब हम चाले लगे,  
 तब गुरुजीने कहा—‘पुत्रे! इस स्थानमें तुम अपने चरन्धक  
 धिक् बना दो, हमने भी गुरुकी आज्ञाके अनुसार वैरा हो  
 किया, फिर हम आपस पर आ गये। उसी दिनसे कर्मदेवकी  
 दक्षिण पदका, पाधमें सर्वप्रथम और ॥ ॥ चरक-  
 ॥ ॥ पुन-प्राप्तिकी प्रथमसे अथवा अपने इच्छाओंकी

॥ ॥ ॥ लिये सभी यहाँ पुन ॥ ॥ हैं। प्रत्येक पादमें शुद्ध  
 ॥ ॥ ॥ एकमुल, नक्षत्र अथवा उपवास रहकर  
 प्रथम अथवा सुखकी इनकी प्रीति का करके गन्ध, पुष्प,  
 धूप, दीप, नैवेद्य, मद्य आदिसे जो भी अथवा पुन पूजन  
 करा है, वह सम्पूर्ण पादसे मुक्त हो स्वर्गमें निवास करता है।

॥ ॥ ॥ युधिष्ठिरने पुन पूछा—पुरुषार्थ! ऐसा कौन  
 ॥ ॥ ॥ है, ॥ ॥ ॥ अथवासे शरीरका दुर्गन्ध वह हो जाय और  
 दीर्घायु ॥ ॥ दूर ॥ जाय।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महापुत्र! इसी प्रथम  
 ॥ ॥ ॥ किन्तुपतिने जलान्तरमुनिके ॥ ॥ बा, ॥ ॥ उन्होंने उसी  
 कहा—‘देवि। जोह ॥ ॥ ॥ प्रप्रेतकीमें पवित्र  
 अन्तर्धर्ममें करने और शुद्ध स्वामी उत्पन्न होत अथक, रात  
 ॥ ॥ ॥ तथा ॥ ॥ वृक्षकी ॥ ॥ करे। ये तीनों वृक्ष भगवान्  
 सुनके अथवा विष हैं। प्रतःकरत सुखोदय हो जानेपर  
 भगवान् सुनके दर्शनकर उनका अपने हृदयमें ध्यान करे  
 अनन्तर पुष्प, नैवेद्य, धूप ॥ ॥ उपचाटेसे उन वृक्षोंकी पूजा  
 ॥ ॥ और पूजके अनन्तर उन्हें नमस्कार करे।

तबन्। इस विधिके जो श्री-पुन इस कथाके करते हैं,  
 ॥ ॥ ॥ दुर्गन्ध तथा उनका दीर्घायु दोनों ॥ ॥ हो जाते  
 हैं ॥ ॥ वे स्त्रीव्यासहारी ॥ ॥ हैं। (अध्याय ८७-८८)

### अध्याय-८८ श्रीमद्भगवद्गीताका अष्टमोऽध्यायः

॥ ॥ ॥ युधिष्ठिरने पूछा—भगवन्! ऐसा कौन-सा कर्त  
 ॥ ॥ ॥ करनेसे समस्त प्रसाद हो जाय और ॥ ॥ ॥ दर्शन  
 न हो।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महापुत्र। एक बार जब  
 ॥ ॥ ॥ स्वयं-निष्ठा समुद्रमें ॥ ॥ करके ॥ ॥ निवृत्त, तब देव  
 कि मुहुर्युनि चले आ रहे हैं। उनका ॥ ॥ सुनके समस्त क

और उनके मुक्तके तपस्सेजसे दिग्गर्भ उन्मथित हो रही थीं । तब मैंने उनका अर्घ्य, पाद आदिसे सम्भार कर अन्दरपूर्वक उनसे पूछा—‘महापति ! प्राणिकोंके लिये अत्यन्त समस्तकम नरक तथा यमदूतों आदिको जिससे दर्शन न हो सके कोई मत मुझसे बतलाये ।’ यह सुनकर मुदलमुनि बोले—  
‘अप्रे ! एक बार ऐसा हुआ कि मुझे अत्यन्त मूर्खता आ गयी और मैं पृथ्वीपर गिर पड़ा, उस स्थितिसे मैंने देखा कि इसको खड़ी लिये कुछ लोग आगते बसते हुए-से भी उतरते हैं । बाहर बाड़े हुए हैं और मैं इतमसे एक ईशुठेके अन्तर्गत बसपूर्वक खींचकर तथा रिसावसे खींचकर यमदूतोंके ओर ले जा रहे हैं । फिर मैं तत्काल क्या देखा हूँ कि यमराजकी सभा लगी है और लाल-पीले नेत्रोंवाले ककटय समामे विराजमान हैं तथा कप, बास, पित्त, प्लव, मंस, शोच, मोह, पुंसी, भगदर, अधिक्रोध, विषृम्भ, गलान्द्र अनेकों प्रकारके रोग और वस्तु उन्हें घेरि हुए हैं और वे काल मुर्तिमान् होकर यमदेवकी उपासना कर रहे हैं । यमदूत परेकर चाला किये हैं । कुछ राक्षस, दानव भी वहाँ बैठे हैं । सिंह, व्याघ्र, विष्णु, दंज, शिखर, सौर, उत्पु, मधे-मकधे आदि भयंकर पीत-वस्तु वहाँ उपविष्ट हैं । यमराजने अपने पूछा—‘दूत ! तुमजोगे वहाँ इन मुदलमुनिको आने ? मैंने तो मुदल खींचके लानेके लिये कहा था, वह कीटिन्यनगरका निवासी भीषणका पुत्र है, उसकी अमु समाप्त हुई । इन मुनिके उत्पन्न होइ दो और उनसे कहो ।’ यह सुनकर वे दूत कीटिन्यनगर गये, किन्तु वहाँ राजा मुदलमें मृत्युके कोई लक्षण न देखाकर वापस होकर पुनः यमराजके पास आये और उन्होंने सात कृत्या यमराजको बता दिये । इसपर यमराजने उनसे कहा—‘दूत ! त्वि पुरुषाने नरकर्त्ति-विनाशिनी त्रयोदशीका ज्ञा किया है, उन्हें यमधिकार नहीं देना पाते, इसीलिये तुमसेजोने एक मुदलको नहीं । पुनः यमदूतोंद्वारा उनके विषयको

पूछे जानेपर यमराजने उनसे कहा—‘मर्गविधि मास्के मुक्त पक्षी त्रयोदशीको जब रविवार एवं मंगलवार न हो तब उस दिन वेरा विद्यान् और पवित्र ब्राह्मणों तथा एक पुराणवाक्यजसे काल करके पूर्वार्द्धकालमें इन ब्राह्मणोंको उत्तराभिमुख पवित्र आसनपर बैठाये । शिल-शैलसे उनका अभ्यंग करके कण्ठकाशन तथा इत्येके गण्य बलसे उन्हें पुष्प-पुष्प ज्ञान कराये और उनकी सेवा-सुसूता करे । पूर्वाभिमुख ब्रह्मणों को उदरपात्र, मुद्रात्र, गुह्यके अरूप तथा सुनयन ब्रह्मण अन्दरपूर्वक बिलगाये ।

पुनः बत्ती पवित्र होकर आवायन करे और उन ब्राह्मणोंकी अर्पण करे । तत्कालमें प्रत्येकात्र (एक पसर या एक सेर) शिल-तन्तुल, दक्षिणा, कृत्त, जलपूर्ण कलश आदि उन्हें अलग-अलग उठान कर वितरित करे ।

इसी प्रकार कर्मपरतक करे । मानव यदि अन्दरपूर्वक एक बार भी इस विधि कर ले तो वह कर्मलोकमें दर्शन नहीं करता । वह मेरी मांसासे बहुत छटा है, कर्मसे विमलद्वारा अर्धमात्रालमें प्रवेश कर वह विष्णुपुर और शिवपुरको ज्ञा करता है । यमदूतों ! उस राजा मुदलने इस त्रयोदशी-व्रतको पहले किया था, इसीलिये तुम सब उस खींच-बेधका दर्शन नहीं कर पाये ।

श्रीकृष्ण । राजा मेरी मूर्खता दूर हो और मैं कल्प ले गया । भगवन् ! मैं आपके दर्शनकी इच्छासे वहाँ गया था, वीर कहते कृत्य पुत्रा, वह सब मैंने आपको बताया ।

भगवान् श्रीकृष्ण पुनः बोले—राजन् ! वे मुनि मुझसे ज्ञात किये अपने स्थानसे चले गये । ब्रह्मसेव । अब भी इस व्रतको करे । इससे आपके यमलोक नहीं जाना पड़ेगा । इसी प्रकार जो कोई भी-पुरुष इस त्रयोदशी-व्रतका अन्दरपूर्वक व्यवहार करेगा, वे सभी पापोंसे मुक्त होकर अपने पुण्य-कर्मिक प्रभुजसे स्वर्गमें पृथित होंगे और उन्हें भगवान् नहीं सहनी पड़ेगी । (अध्याय ८९)

**अनङ्ग-त्रयोदशी-व्रत**

पुथिहित्ते पूछा—संसारसे उद्धार करनेवाले स्वर्गम् ! रूप एवं सौभाग्य प्रदान करनेवाला कोई व्रत बताये ।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महापति ! त्रयीको केश देनेवाले बहुत-से योक्ता करनेसे व्रत ? अकेले

मनःकृपणोदशी ही सौ टोकेस्य समस्त मङ्गलकेषु वृद्धि करनेवाली है। आप इससे विधि सुने।

पहले भगवान् शंकरने कामदेवको दण्ड कर तब अङ्गके ही सबके शरीरमें निवास करने लग्य। कामदेवने इस व्रतको धा, इसीसे इसका अमङ्गल पड़ा। व्रतमें पारंगर्भि मन्त्रके मुख त्रयोदशीको नदी, आदिमें बान कर, विर्यैव हो, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य और बालेभूत फलसे भगवान् शंकरका 'शशितोषा' नामसे पूजन करे और मिस्रसहित अङ्गुलीसे कन्दे। शशिको मधु-प्राशन से। वरी कामदेवके सम्बन्ध ही सुन्दर हो जाता और दस अङ्गुलीय-पङ्कज फल प्राप्त करता है। इसी प्रकार मन्त्रके मुख त्रयोदशीमें भगवान् शंकरका 'मौगध' पूजन करदण्ड प्राप्त करे तो शरीरमें बन्दके गन्ध हो और राजभूम-वस्त्र फल प्राप्त करता है। पाप त्रयोदशीको भगवान् शंकरका 'मङ्गल' नामसे पूजन मैतीका घूर्ण भक्षण से उत्तम सौभाग्य प्राप्त है। फल्गुमासे 'हरेधर' नामसे पूजन कर व्रत करनेसे अतुल सौन्दर्य प्राप्त है। सैन्धवे 'सुभय' पूजन करने और कर्पूर-प्राशन करनेसे व्रती कङ्कले कुल मङ्गल हो है और महान् सौभाग्य प्राप्त करता है। वैराग्यमें 'महाकन' नामसे पूजन (काकफल) का प्राशन करे, इससे उत्तम कुलपत्नी होती और सब काम सफल हो पाते तथा महाक गोदानका फल प्राप्त कर ब्रह्मलोकमें निवास करता है। ज्येष्ठमें 'अदुष' नामसे और लक्ष्मणका प्राशन करे, इससे उत्तम स्वन, और

सभी सुख-सम्पत्तार् होती तथा एक सौ कामदेव-बालेका फल प्राप्त है। अश्विमासे 'उमापती' कर शिलेदकका करे। इससे उत्तम प्राप्त तथा सौ वर्षतक सुखी प्यतीत है। आश्विमासे नामसे पूजन कर शिलेयव प्राप्त करे, इससे सौन्दर्य-वस्त्र फल प्राप्त होता है। मासमें नामसे पूजन कर अङ्गुली करे, इससे यह कुलपत्नी सुख बनाता है और पुत्र-पौत्र, धन आदि कर बहुत दिवस योगकर अन्तमें विष्णुलोकमें है। अश्विन मासमें 'प्रियदायिनि' नामसे पूजन प्राशन करे तो व्रती उत्तम रूप, सौभाग्य, और निष्कटानक फल करता है। 'विदेक' नामसे पूजन दण्ड (टीका) प्राशन करे व्रती अपने मङ्गलसे समस्त संसारका भङ्गी है।

इस व्रतमें पालन कर करने चाहिये। फिर स्थापित कर उत्तम ताजपत्र उत्तम उत्तम स्थापित कर श्वेत उत्तम। गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदिसे व्रतका पूजन कर ब्राह्मणकी कर दे। स्वयं ही पश्चिमकी सवस्त गी, छात्र और भद्राशक्ति दक्षिणा चाहिये। इस जो इस अमङ्गलप्रेतकी-कताको करता और व्रत-कारणसे महान् उत्सव करता है। राज्य, स्वैराज्य प्राप्त करता अन्तमें निवासमें है।

(अध्याय ९०)

### पारसी-ग्रन्थ एवं रचना-(कश्मीरी)-

एक बुद्धिद्विने पूजा—भगवान्। ग्रेट किर्त जलपूर्ण और सरोवरोंमें किता अन्ति कर्म करती है? इसे आप बतायें।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाशय! महाशय मन्त्रके पक्षकी चतुर्दशीको कश्मीरी, कुर्, पुष्करिणी तथा

बड़े-बड़े जलधरमें आदिके कवि होकर भगवान् कामदेवको अर्थ प्रदान करना चाहिये। वरीको चाहिये तटानके तटपर जाकर फल, पुष्प, दीप, कन्दन, महाधर, महाधन्य, विद्या आदिके स्पर्शसे पक्ष हुआ अन्न, तिल, कद्दू, नसिबेन, विजौरा नीबू, नारंगी, अंगूर, दाहिम,

१-पारसी ग्रन्थ यहिल है, का कोसेमें बन्द नहीं मिलता। इसका अर्थ पुष्प, लक्षण अन्ति महाशयको रखने दिने को होती है। उत्तम वैराग्य किर्त व्रत करने सन्धि करती है। तब वैराग्य नहीं वैराग्य चाहिये।





अनन्तचतुर्दशी-व्रत-विधान

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—तवन् ! सम्पूर्ण [ ] पूर्ण करनेवाला अनन्तचतुर्दशी नामक एक व्रत है, जिसे पन्द्रह मासके शुद्ध पक्षकी चतुर्दशीमें सम्पन्न किया जाता है।

सुविष्टितने पूछा—पावन ! आपने [ ] अनन्त कहा लिया है, क्या ये अनन्त सेवकगण हैं या कोई अन्य नाम है या परमात्म [ ] या ब्रह्म है ? अनन्त सेना किसकी है ? इसे आप बताइये।

भगवान् श्रीकृष्णने बोले—तवन् ! [ ] ही नाम है। कल, काहा, मुहूर्त, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अमन, सेवकगण, युग तथा कल्प आदि काल-विभागोंके क्रमसे ये ही अवस्थित हैं। संसारका चार [ ] तथा दुःखोंका विनाश करनेके लिये चतुर्दशके कुलमें ये ही उत्पन्न हुआ हैं। पर्व ! आप मुझे ही विष्णु, शिव, हर, शिव, ब्रह्म, भस्कर, ईश, सर्वेश्वरी ईश्वर समझिये और अनन्त भी वे ही हैं। [ ] आपकी विधास उत्पन्न करनेके लिये देता कहा है।

सुविष्टितने पुनः पूछा—पावन ! मुझे अब अनन्त-व्रतके माहात्म्य और विधिको तथा इसे किसने कहा [ ] और इस व्रतका क्या पुण्य है, इसे बताइये।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—सुविष्टित ! इस सम्बन्धमें एक प्राचीन आख्यान है, उसे आप सुने। कृतयुगमें श्रीकृष्णकी सुभगु नामके एक ब्राह्मण थे। उनकी यक्षिणी चतुर्दशी नामक दीक्षासे वेद्योक्त-विधिसे विवर्ध हुआ था। [ ] तथा शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न एक कन्या उत्पन्न हुई, जिसका नाम शील [ ] गया। कुछ समय बाद उसकी मृत्यु दीक्षाका कारणसे देहात्त हो गया और उस पवित्रतन्त्रसे सर्वत्रोक्त प्राप्त हुआ। सुभसुने पुनः एक कर्कश नामकी कन्यासे विवाह कर लिया। वह अपने कर्कश नामके समान ही दुःशील, कर्कश तथा नित्य कलहकारीणी एवं कष्टीकपा थी। शील अपने पिताके घरमें रहती हुई दीवाल, देहली तथा साम्य आदिमें पञ्चरिक्त स्वस्थिक, पद्म, शङ्ख आदि विष्णुचिह्नोंमें अङ्कित कर उनकी अर्चना करती रहती। सुभसुको शीलके विवाहकी चिन्ता होने लगी। उन्होंने शीलका विवाह कर्कशनामकी स्त्रिया कर दिया। चिन्ताके अनन्तर सुभसुने अपनी पत्नीसे कहा— 'देवि !

उपश्रवके लिये [ ] कुछ देव्य द्रव्य देना चाहिये।' यह सुनकर कर्कश क्रुद्ध हो उठी और उसने घरमें [ ] मन्थपत्रों तथाकृत् उत्पन्न तथा भोजनसे बचे हुए कुछ पदार्थोंको पात्रोंके रूपमें प्रदान कर कहा—'चले जाओ, फिर [ ] कहत [ ] लिया।

कर्कश [ ] शीलको [ ] लेकर बेलगच्छीसे धीरे-धीरे [ ] चल पड़े। दोपहरका समय [ ] गया। वे एक नदीके किनारे पहुँचे। शीलने देखा कि शुभ पक्षोंको पाने हुए कुछ दिवस चतुर्दशीके दिन पवित्रपुण्यका अनर्दानकी [ ] पूजा कर रही है। शीलने उन [ ] बात जानकर पूछा— 'देवि ! आपलोग यहाँ किसकी पूजा [ ] कर रही हैं, इस व्रतका क्या नाम है।' इसपर वे शिवा बोलीं—'यह व्रत अनन्त-चतुर्दशी नामसे प्रसिद्ध है।' शील बोली—'मैं भी इस व्रतको करूँगी, इस व्रतका क्या विधान है, किस देवताकी इसमें पूजा की जाती है और दानमें क्या दिया जाता है, इसे आपलोग बताइये।' इसपर [ ] कहा—'शील ! शम्भुभक्त पञ्चमासका [ ] वर्ष, धार्मिक काम कर एक सम्पत्तमें [ ] भगवान् विष्णुकी गन्ध, पुष्प, धूप, दीप आदि उपश्रवसे [ ] करे [ ] कथा सुने। उन्हें नैवेद्य अर्पित करे। नैवेद्यका भाग भग [ ] निवेदित कर आधा भाग प्रसन्न-कामसे ग्रहण करनेके लिये रखे। भगवान् अनामके रूपमें चौरस [ ] एक दीपक (दीप) स्थापित कर उसे कुमुदजलसे चर्चित करे। भगवान्को वह दीपक निवेदित करने [ ] टाँहने चाहिये और जो चन्दे हाथमें बाँध ले। दीपक-कथनका पत्र इस प्रकार है—

अनन्तसेवात्मकसुभे भगवान् सम्पत्तुद्धर चतुर्दश । अनन्तको विधिकेवितान्त्राद् दान्तात्म्याय नमो नमस्तु ॥

(अन्तर्ज १४।३३)

'हे चतुर्दश ! अनन्त सेवात्मकी महासमुद्रमें मैं दूब रही हूँ, अब मेरा उद्धार करे, साथ ही अपने अनन्तस्वरूपमें मुझे भी आप चिन्तित कर लें। हे [ ] ! आपके मेरा कर-कर प्रणाम है।'

दीपक बंधनेके अनन्तर नैवेद्य ग्रहण करना चाहिये। अच्छे विवाहकी अनन्तदेव भगवान् नारायणका ध्यान कर





### अवधिकाशना-कथा एवं ज्ञात-विधि

राजा युधिष्ठिरने पूछा—भगवन्! संसारमें नमस्की जिन देवियोंका नाम सुना है, वे कौन हैं और उनका धर्म है तथा वे करते हैं? इसे बतला करे।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—प्रणम्यते ! कहने इन ज्ञातणी देवियोंकी रचना की है। संसारमें मन्त्र ओं पुत्र भी पुत्र अथवा अनुग्रह कर्म करता है, वे ज्ञातणी देवियाँ उस विधिवर्ये सुचना जैसा ही आशयसे ज्ञान करती हैं, इसीलिये वे ज्ञातणी कही गयी हैं। संसारके प्राणिमोक्ष नियमन करनेके कारण ये पूज्य हैं। ये दूरसे ही जान-सुन-देख लेती हैं। कोई भी ऐसा कर्म नहीं है जो इनसे अक्षुण्ण हो। इनमें ऐसी विरुद्धता नहीं है जो तर्क, हेतु आदिके आशय है। जिस प्रकार देवता, विद्याकर, सिद्ध, गन्धर्व, किम्बदन्त आदि पूज्य एवं पुण्यात्मा हैं, उसी प्रकार वे ज्ञातणी देवियाँ भी मन्त्रोक्त एवं पुण्यात्मी हैं। श्री-पुरुषोत्तम इनकी प्रकृतिको लिये काय करण चाहिये तथा बल, चन्दन, पुष्प, धूप, पद्मम् आदिके इनकी पूजा करने चाहिये और विषये तथा पुष्पको मोक्षन करण करनी करना करनी चाहिये।

इनका ज्ञात न करनेसे मृत्यु-बन्ध होता है और मन-काय सहन करनी पड़ती है। एवम्। इस विषयमें आपकी एक आज्ञा सुनता हूँ—

जानी करणमें मृत्यु नामके एक राज के। उनकी उकीर 'जगदी' था। अरुणा सुन्दर, शीलमयी एवं प्रियका थी। एक बार गङ्गामें डूबन करके वह जलमें वसितुके समीपवर्ती आश्रयमें गयी, वहाँ उसने देखा कि पात्र जगन्मयी मुनिमणियोंके विविध प्रकारका भोजन कर रही हैं। जगन्मयी उन्हें प्रणाम कर पूछा—'भगवति! आप यह कौन-सा ज्ञात कर रही हैं।' जगन्मयी जेरी—'देवि। मैं जगन्मयी कर रही हूँ। इस ज्ञातमें मुझे महर्षि वसिष्ठने है। गुप्त और जगन्मयीका सर्वस्य तथा जगन्मयी के श्रेष्ठ एवं उत्तम पति प्रदान करनेवाला है। तुम नहीं उठो, मैं जगन्मयी करूँगी।' और उन्होंने वैसा ही किया।

उदन्तर जगन्मयी अपने नगरमें बनी अवती। कुछ वह अरुन्धतीके भोजनमें मूल गयी। समय आनेपर जब वह महाशरी हुई तो उसके गलेमें वर्षाकर लगी, कष्ट अवकाश गया, मुखसे पैन एवं तार टपकने लगा। इस कारण वह भोगसे हुए उसे जल में डाला हो गये। उसका मुख देखनेसे मन लगता था। मोक्षमें दिन अरुन्धती जगन्मयीके घर आयी और उन्होंने वैसी कहकर विनियोग उसे देखा। तब जगन्मयीने राजा नकुपसे जगन्मयीके विषयमें बातलाया। राजा नकुपने भी अरुन्धतीके निर्देशानुसार जगन्मयीके निर्मित तत्कार जगन्मयी-ज्ञात आयेजान किया जल जलके प्रभावसे जगन्मयीने सुख-पूर्वक मृत्युका कारण किया और जगन्मयीका ज्ञात किया।

श्रीकृष्णने पुनः कहा—एवम्। मार्गदर्शिते जगन्मयीका ज्ञात करनेकी जरूरत अथवा अहमी विधियोंमें जगन्मयीका यह ज्ञात करना चाहिये। जगन्मयी नदी आदिमें जगन्मयी पवित्र हो, श्रेष्ठ जगन्मयी-जगन्मयी अथवा अपने मोक्षी जगन्मयी जगन्मयीके मुक्तकर गन्ध, पुष्प, ऐश्वर्य, कष्ट, अरुन्धती, सिद्ध आदिके उनका जगन्मयीका पूजन करे। सुन्दर, सुन्दर, अधिक, जगन्मयी के हुए, सुन्दर आयेजित तथा पुष्पका जगन्मयी विभूति सर्गवृत्त जगन्मयी जगन्मयी (जगन्मयी करण) को जगन्मयीके सम्माने पुष्प-पुष्प रखे। उनमेंसे जगन्मयी एक जगन्मयी उठकर अपने सिरपर रखे तथा उन जगन्मयीके जगन्मयीका, कुम्हारका तथा बृद्धका जगन्मयी गये जगन्मयीके जगन्मयी, सुखपूर्वक मृत्यु-प्राप्ति तथा संसार-संग्रहसे चार होने और जगन्मयीके परमपदको पानेके लिये प्रार्थना करे। वे जगन्मयी भी करें—'ऐसा ही हो।' जगन्मयीके जगन्मयीके लिये प्रार्थना करे। जगन्मयी उस जगन्मयी उनके जगन्मयी और उसे आशीर्वाद प्रदान करे। उन सभी जगन्मयी-जगन्मयी दे।

हे । इस प्रकार जगन्मयी जगन्मयी जगन्मयी करण जगन्मयी जगन्मयी जगन्मयी सुखपूर्वक मृत्युका करण जगन्मयी जगन्मयी करण है। (अध्याय ९५)



■ जाते ■ और ■ स्वयं हजार अभयों-सङ्घर्ष कर जाते ■ विष्णुलोकदिने विहार ■ हुआ अनन्त दिवसलोकको  
■ तब दीर्घायु, ऐश्वर्य, अमोघ, संतान एवं ■ प्राप्त करता है ।

आदि प्राप्त करता है। बहुत दिनोंतक [redacted] (अध्याय १६-१७)

**सर्वोपकरण-समूह**

[illegible]

**पौर्णमासी-व्रत-विधान एवं अभिषेकादि श्राद्ध-तर्पणकी प्रथिमा**

प्रमाणान् जीवन्मुक्ता कहते हैं—उत्तर । पूर्वजन्म-विधिके प्रतिपूर्वक विधिकत् मेरी पूजा करेगा, मैं प्रसन्न होकर उसकी [ ] कर्मकार्य पूर्ण कर दूंगा ।' तबिके बादिके कि पूर्वजन्मके दिन प्रातः नदी आदिके स्नान कर देवता और [ ] तर्पण [ ] । तदनन्तर घर [ ] [ ] पण्डित बनये और उसने नवरोहणित चन्द्रमन्त्रको [ ] कर [ ] रात्रि, [ ] सोत चण्ड, का, दीप, प्रसाधक जैष्ठ और [ ]

१-ये भस्मरूप धान्य—समुद्रतल-से १,२८८ की उचाई पर, समुद्रतल-से ५,२१४, १८,१२२, समुद्रतल-से २४,४४४ की उचाई पर—सर्वत्र, धान, जौ, गेहूँ, मूँग, चने, (फैन्सी), जौ, गेहूँ, कुलसी, मसूर (कोटी मटर), रोम, अजुकी (अजोरा) या (उमली मटर), ककूर, मटर, चिन्चु (सालो, रॉ या टीरुन) और मसूर। अन्य भस्मों में मक्काई, जौ, जल अमली और मोहन हैं।

२-यसमा उपस्थित ४२औं सदस्य ☐ श्री. विजयलोक शर्मा ☐ पूर्व ☐











जन्मन्तरमें बकरी बनी, परंतु व्रतके प्रथमसे उसे अपने पूर्वजन्मकी स्मृति नहीं हुई थी। उसने अपना कृत्स्न-व्रत फिर प्रवृत्त किया। यह अपने सूयसे अलग होकर उपवास करने लगी।

एक बार [महात्म्य] [महत्मा] किसी दूसरेके कोठमें सब बह कर रही थी, [ ] उस वेलकाल स्वामी उसे बध्नाकर अपने घर ले आया। जातिस्मर अत्रिब्रह्मिने उस बकरीको देखा और यह जान लिया कि यह उनी कर्त्तव्यमदा है। कृत्स्न ठहरे उसे बन्धनसे मुक्त करा दिया। यहाँसे छूटकर उसने केलेके पत्ते [ ] शीतल जल पिया और कृत्तिका-व्रतका पारण किया। ऋषि भवि [ ] योगज्ञानका उपदेश देकर अपने उग्रभक्तके चले गये और वह खेगेश्वरी अपने व्रतमें पुनः तत्पर हो [ ] तथा कुछ कालके अनंतर उसने योगव्रतसे अपने व्रत तर्पण दिये। [ ] गीतम् [ ] [ ] [ ] [ ] उपवास हुई। उस समय [ ] नाम मोचनकी हुआ। गीतमपुर्णिमे यहाँसे शब्दिलपुर्णिमे योगलक्ष्मीका [ ] दिया। [ ] श्री शब्दिलपुर्णिमे चारों [ ], स्वामी, श्रद्धा, अश्वमेध, गौरी, [ ] गायत्री, महात्मनी [ ] भाँति सुशोभित हुई। [ ] देवता, [ ] सत्कारमें नित्य लगी रहती। ब्राह्मणोंके विधान करता है।

एक दिन महर्षि यहाँ आये और उन्होंने योगव्रतसे सब व्रतान्त जान लिया और पूछा—'महात्म्यो योगलक्ष्मि। कृत्तिकावै कितनी है?' यह सुनकर महासती योगलक्ष्मीको श्री पूर्ववृत्त स्मरण हो पड़ा और उसने कहा—'महायोगिन्! कृत्तिकावै छः है।' यह सुनकर दण्डवत् अत्रिपुर्णिमे पुनः उसे मन्त्र और कृत्तिका-व्रतका उपदेश दिया, जिसके करनेसे उसने विरकालतक संसारका मुक्त योगव्रत मोक्ष प्राप्त कर लिया।

राधा दुधिष्ठिरने पूछा—भगवन्! कृत्तिका-व्रतकी क्या [ ] है? इसे श्राप बताइये।

भगवान् कहने लगे—भगवन्! [ ]

पुर्णिमाको कृत्तिका नक्षत्रमें वृद्धवति या सोमवार [ ]

महाकर्त्तिकाके योग होता है। महाकर्त्तिकाके तो बहुत [ ] और बड़े पुण्यसे [ ] होती है। इसलिये सम्भारण कर्त्तिकाके पुर्णिमाको [ ] उपवास करे। [ ] पुर्णिमाको [ ] ही दक्षयज्जन [ ] [ ] उपवासका [ ] करे। पुष्य, प्रयाग, कुलशेख, नैमिष, शबलमाम, कुशवर्ष, मूलमाम, जलकुल, गौकर्ण, अर्बुद, अमरकण्ठक आदि किसी [ ] तीर्थमें [ ] अपने घरमें ही स्नान करे। फिर देवता, ऋषि, पित्र और अतिथिका पूजन कर हवन करे। सवेकालके [ ] व्रत [ ] दुग्धसे पूर्व छः पात्रोंमें सुवर्ण, चाँदी, रत्न, मन्दीर, [ ] तथा विहसे छः कृत्तिकाओंको मूर्ति बनाकर [ ] [ ]। फिर उन्हें रत्नमुद्रासे आवेष्टित कर सिंदूर, कुंकुम, चन्दन, [ ] पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य [ ] [ ] कर कृत्तिकाओंकी मूर्तियोंको ब्राह्मणको दान कर दे। इन [ ] समय यह [ ] पड़े—

[ ] सङ्गीतम् [ ] [ ]

या ब्रह्मा रजिजयेति वृत्ताः।

पुनः कुम्भारक वकार्यजातयो

कक्षणि कुर्वीतता मन्त्रम् ॥

(उत्तरार्ध २०३।३७)

व्रतका श्री मूर्ति [ ] करती [ ] इस प्रकार कर्त्तिकाकरे—

कर्त्तिकाः वरमन्त्रः सन्तु इमा मन्त्रमातरः।

कृत्तिका कुर्वीतास्तु तत्पन्थावधोः कुलम् ॥

(उत्तरार्ध २०४।३९)

तदनंतर [ ] [ ] सामग्री लेकर घर आय और छः बरमन्त्रक कक्षमन उसके पीछे चले। इस [ ] पुष्प कृत्तिका-व्रत [ ] है, यह सूचक [ ] महाशामान विमानमें [ ] नक्षत्रकेको ज्ञात है। जो छः [ ] व्रतको करती है, वह श्री अपने परितोहित नक्षत्रकेको [ ] बहुत [ ] दिव्य योगोंका उपयोग करती है।

(अध्याय २०३)



### मनोरथपुर्णिमा अश्वमेधपुर्णिमाव्रत-विधि

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—एवम्! परन्तु श्री मनोरथपुर्णिमाके लक्ष्मसे विवक्षित है। इस व्रतके करनेसे पुर्णिमासे संवत्सरपर्यन्त शिवा जानेकाल एक [ ] है, [ ] सभी मनोरथ पूर्ण [ ] जाते [ ]। अतीको जाँहिये [ ] व

फलानुन मासकी पूर्णिमाको ज्ञान आदि । लक्ष्मणसेवित  
भगवान् अनर्दनका पूजन करे और चले-फिरो, ठठने-कैठने  
समय अनर्दनका स्मरण करता ।  
नास्तिक, आदिसे सम्बन्ध न करे, फिरोत्रिय रहे ।  
छात्रके चन्द्रमामें नारायण और लक्ष्मीको कर  
अर्घ्य प्रदान करे । मादमें तीर एवं स्मरणछेला भोजन करे ।  
इसी प्रकार वन, वैराग्य, ज्येष्ठ—इन तीन महीनमें भी पूजन  
एवं अर्घ्य प्रदान कर जाती प्रथम पारण करे ।  
कात्तक और आश्विन—इन बार महीनमें पूर्णिमाको श्रीपद्मा  
भगवान् श्रीधरका पूजन करणको अर्घ्य प्रदान करे ।  
पूर्वार्द्ध दूसरी पारण करे । कार्तिक, मार्गशीर्ष, चैत्र  
प्रथम—इन तीन महीनमें भूतिसहित भगवान् केसरिका पूजन  
करे । चन्द्रमाको अर्घ्य प्रदान करे और तीसरी पारण सम्पन्न  
करे । प्रत्येक धारणको अन्तमें ब्राह्मणको दे । प्रथम  
धारणाको बार महीनमें पञ्चगव्य, दूसरी धारणको बार महीनमें  
कुशेदक और तीसरी पारणमें मूर्ध्निपरणमें दस जलका प्रदान  
करे । रात्रिके समय तीर-बाघहाट भगवान्का कीर्तन करे ।  
अतिमास जलकुम्भ, जल, जल, सुवर्ण, वस्त्र, चन्दन और  
दक्षिणा ब्राह्मणको दान करे । देवताओंके स्वामी भगवान्की  
मार्गशीर्ष आदि काल महीनमें जलजल, केसर, कलकल,  
पाथक, गोविन्द, विष्णु, मधुसूदन, विष्णुका, धामन, श्रीधर तथा  
हरीकीर्तन, दान, जलजल और दामोदर—इन नवकेव कीर्तन  
करे । दुर्गासे ठडार पा काल है । यदि प्रीतिमास  
दान देनेमें समय न हो तो वरक अन्तमें यथाशक्ति सुवर्णका  
चन्द्रविष्णु बनाकर फाल, वस आदिसे दसका पूजन कर  
ब्राह्मणको निवेदित कर दे । इस प्रकार दत्त करनेवाले पुण्यको  
अनेक जन्मपर्यन्त इष्टका विमोह नहीं होत । उसके सभी

मन्त्राय पुण्य जते हैं और वह पुण्य नारायणका स्मरण करता  
हुआ दिव्यदेवक प्राप्त करता है ।

भगवान् श्रीकृष्णने पुनः कहा—महाराज ! मैं  
अनेकपूर्णिमा-व्रतका वर्णन करता हूँ । इस व्रतको करनेसे  
मनुष्यको कष्टों शोक नहीं होता । फलानुनकी पूर्णिमाको अर्द्धमें  
मूर्ध्निका तगकर नदी आदिमें ज्ञान करे । भूतिकाकी एक घेरी  
बनकर उत्तर भगवान्, पृथ्वी और अश्वेका नामसे  
भगवदेवीका पुण्य, नैवेद्य आदि उपकरणसे पूजन करे । पूजनके  
अनन्तर हाथ जोड़कर इस प्रकार प्रार्थना करे—‘धरणीदेवि ।  
सम्पूर्ण कलक जगत्को धारण करनेवाली है । आत्मको  
कलक भगवान् अनर्दनने रसातलसे लकर प्रसिद्धित  
करके संकरादि किया है, उसी प्रकार आत्मा मुझे भी सभी  
शोकसे मुक्त कर दे और मेरी समस्त कामनाओंको पूर्ण करे ।  
इस प्रकार प्रार्थना कर रात्रिके चन्द्रमाको अर्घ्य प्रदान करे । उस  
दिन उपवास रहे अथवा रात्रिके समय तीर-काण्डिका भोजन  
करे । फलानुन आदि फलानुन नामसे एक-एक धारणा करे  
और प्रत्येक धारणके अन्तमें विष्णु पूजा और जागरण करे ।  
प्रथम धारणमें पद्मी, द्वितीयमें मेदिनी और तृतीयमें चतुर्धरा  
कामसे पूजन करे । चतुर्थ अन्तमें सबसा गौ, धूमि, वस्त्र,  
अभूषण आदि ब्राह्मणोंको दान करे । यह दत्त पातालमें स्थित  
किया । भगवान्ने बाणरूप धारण कर  
कलक ठडार किया और प्रसन्न होकर कहा कि ‘धरणी-  
देवि ! तुम्हारे इस व्रतसे मैं परम संतुष्ट हूँ, जो कोई भी  
पुण्य-को भक्तिसे इस व्रतको करते हुए मेरा पूजन करेगा और  
यथाशक्ति पारण करेगा, वे जन्म-जन्मसे सब प्रकारके क्लेशोंसे  
मुक्त हो जायेंगे और तुम्हारे समान ही कल्याणके भाजन हो  
जायेंगे ।’ (अध्याय १०४-१०५)



अनन्ताश्रम-महाप्रलयमें कार्तवीर्यके आविर्भावका वृत्तान्त

राजा युधिष्ठिरने कहा—भगवान् ! भक्तिपूर्वक  
नारायणकी आराधना करनेसे सभी मनोज्ञमिष्ट फल प्राप्त हो  
जाते हैं, किन्तु स्त्री-पुरुषोंके लिये संतानहीन होनेसे अधिक कोई  
दुःख और शोक नहीं है, परन्तु कुटुम्बा तो और भी महान्  
दुःखका है । सोच्य संतान सब सुखोंका हेतु है । जगत्में  
धन्य है, जो सर्वगुणसम्पन्न, आरोग्य, कल्याण, धर्म

व्यवस्था, धर्म-अनार्यके अग्रगण्य, धर्मवान्, इत्येको  
अनन्त देनेवाले और दीर्घायु पुत्र करते हैं । प्रभो ! मैं  
ऐसा सुनना चाहता हूँ कि जिसके करनेसे ऐसे शुभ  
लक्षणोंसे युक्त पुत्र हो ।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाराज ! इस सम्बन्धमें  
असिद्ध है । हेतुवशसे भविष्यती





साय्यरायणी खोली—देवगुहे ! पुके  
है, वृत्तान्त में अच्छी तरह जानती है। मैं बहुत-से  
मनुओं, देवसृष्टियों और देव है। मनुष्योंको  
जानती है और परित है। अन्त  
पूजे, मैं यह वचन सुनकर  
देवराज इन्द्र और देवगुप्त महात्म्यसे सम्बन्धित, स्वर्गोपनि,  
उत्तम, तामस, वैश्व, वायुस मनुओं और  
इन्द्रोक्त वृत्तान्त उसके पूजा। अर्चन  
वृत्तान्तोक्त यथावत् वर्णन किया। राजन् ! उसमें एक अत्यन्त  
अज्ञानमयी बात पात बताएगी पूर्वजन्मों संकुचन जन्म  
महावी दैत्य हुआ। इन्द्रोक्त  
इन्द्रोक्त जीतने क्षम्य और निर्धन हो इन्द्रोक्त यन्त्रों कीदृष्ट हो  
गया। संकुचनमयी देवराज इन्द्र समधीन होकर गये और  
यह इन्द्रोक्त आसनपर गया। तत्पश्चात्  
विष्णु भी वहाँ आये। भगवान्को संकुचन अत्यन्त  
प्रसन्न हो गया और उसने कई जोड़ों भगवान्को अतिशय  
किया। भगवान् उसकी प्रसन्न थे, अतः  
भी उसका आतिथ्यन कर ऐसा विधीयमान किया कि उसके  
अतिथ्यपर चूर-चूर हो गये और वह चोर मनुष्यों  
मनुष्यों प्राप्त हो गया। दैत्यको जानकर इन्द्र उद्विग्न

गये और विष्णुभगवान्की स्तुति करने लगे।

साय्यरायणीने पुनः कहा—देवराज ! वह वृत्तान्त मैं  
जानने कोही देना ना।

इन्द्रने साय्यरायणीसे पूछा—देवि ! इतने प्राचीन  
वृत्तान्तको आप कैसे जानती हैं ?

साय्यरायणीने कहा—देवेन्द्र ! स्वर्गात् ऐसा  
बृहत् नहीं है, जो मैं न जानती होऊँ।

इन्द्रने पूछा—वर्मि ! आपने ऐसा बर्न-स सत्य  
किया है, जिसके प्रमाणों आपकी अक्षय स्वर्ग प्राप्त हुआ ?

खोली—मैंने प्रतिष्ठास मस-नक्षत्रोंमें  
प्रसन्न भगवान् अनुपुष्प विधिवात् पूजन और  
उपवास किया है। वह सब पुष्प-वर्णन फल है। जो  
पुष्प अक्षय स्वर्गवास, देवर्ष, संसृष्टि अतिथी इत्यादि  
करे, भगवान् विष्णुकी अराधना करने  
मार्गमें कई, अर्ध, काल और मोक्ष—ये चार चार्य  
भगवान् विष्णुकी अराधनासे प्राप्त होते हैं। इतने सुनकर  
देवगुप्त महात्म्य और देवराज इन्द्र साय्यरायणीपर बहुत प्रसन्न  
होकर अतिशय प्रसन्न होकर गये मस-नक्षत्र-  
करने लगे।

(अध्याय १०३)

### वैष्णव एवं शैव नक्षत्रपुस्तक-प्रतीका विधान

राजा सुधिक्षिप्ते पूछा—यदुत्तम ! पूजा  
विधियोंको उत्तम रूप किस क्रमसे करनेसे प्राप्त होता है ?  
सर्वज्ञसुन्दर त्रेह रूपकी प्रतिष्ठा करने।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महाराज ! यही बात  
अठ्ठशतीने वसिष्ठजीसे पूछी थी और वसिष्ठने उसी कहा  
था— 'विधे ! विष्णु भगवान्की विना अराधना और पूजन  
नहीं । उत्तम रूप, देवर्ष और संतानकी करने उसे  
नक्षत्रपुस्तकभय भगवान् विष्णुको पूजन करना । इसपर  
अठ्ठशतीने नक्षत्रपुस्तकभय विधान पूजा। वसिष्ठजीने  
कहा—विधे ! लेकर भगवान्को अर्चन  
अर्चोक्त उपवासपूर्वक पूजन करे। स्वर्गात्से लेकर  
नक्षत्रपुस्तकभय भगवान् विष्णुकी प्रतिष्ठा उनके करने  
से ५० पुं अं १३—

विराटको आज्ञोक्त इस विधिसे पूजन करे। मूल नक्षत्रमें दोने  
के, नक्षत्रने काल, दोने घटने  
अर्चनमें उदये, नक्षत्रपुस्तकमें वर्षा-वर्षा टकना, रेवतीमें  
पुष्य, अनुपुष्पमें वक्षःस्थल, धनिष्ठामें पीठ, विराट्कामे  
दोने बुधर्ष, फल्गुमें दोने द्रव्य, पुष्यसुते अंगुली, अश्लेषा  
मघ, ज्येष्ठामें शीघ्र, कृत्तिकामें कर्म, पुष्यमें मुख, स्वातिमें दाँत,  
मुख, वसिष्ठ, मृगशिरामे नेत्र, विष्णुमें  
ललाट, धनिष्ठामें सिर और अश्लेषा में केशोंका पूजन करे।  
उपवासके दिन वैष्णव न करे। नक्षत्रके देवताओं और  
नक्षत्रपुस्तकभय भगवान् विष्णुको पूजन और विधान  
शेकन करने। यदि तममें अश्लेषा अति हो जाय  
दूसरे नक्षत्रमें कर पूजन करे। इस माय













रजसहित सर्पमय कमलके साथ कलशोंको दान कर दे । इसी सेने, यही अथवा शैवनागसहित पुष्पीकी दानकरना चाहिये । जो करनेमें असमर्थ हो, वे अटेकी शैवसहित पुष्पीकी प्रतिमा बनकर सूर्यके साथ दान सकता है । इस पञ्चुलकेमें पहेन्द्र आदि देवगणों, विष्णुस्य समुद्रसे पुष्पीका अस्तित्व है, अक्षिर गन्धर्वसमूह परकीर्ति पुन करते हैं ।



### भक्तिकर्मा एवं उसके फलकी

राजा सुविहिरने पूछा—भगवन् ! क्या यह विधि न्यासे प्रसिद्ध है, यह कैसी है, क्यों है, यह किसकी पुष्टि है, उसका पूजन किस विधिसे किया जाता है ? भगवन् आप बातेंकर कह करे ।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—भद्रराज ! भद्र भगवन् सूर्यनारायणकी है । यह भगवान् सूर्यकी करण है और इन्द्रकी साथी कहिन है । यह करते वर्ण, लम्बे केरा, बड़े-बड़े दाँत और बहुत ही कर्णक है । जगत्में ही यह संसारका मस करनेके दिने टीढ़ी, बड़ो विद्व-बाध पहुँचाने तथा मङ्गल-का अदिमें उपग्रह करने लगी और पूरे कालके पहुँचने लगी । उसके स्वभावसे देवकर भगवन् सूर्य विधित हो उठे और उनके शीत उसका निष्कार किमा । जिस-जिस भी देवता, असुर, कितार आदिसे सूर्यनारायणने निष्कारका प्रसन्न रख, वह उस पर्यन्त कन्धसे कोई भी निष्कार करनेको तैयार । दुःखित हो सूर्यनारायणने अपनी कन्धके निष्कारके लिये बनवाया, पर उसने मन्थ-तोषण आदि सबको उलझकर फेक दिया और सभी लोगोको कह देने लगी । सूर्यनारायणने सोचा कि इस दुष्टा, कुम्पा, लेश्याचरिणी कन्धका निष्कार किसके साथ किया जाय । इसी समय प्रजाके दुःखको देखकर महाजीने भी सूर्यके पास आकर उनकी कन्धका निम्ने गये

पुन्य क्षीन होनेपर वह सूर्यके आदिमें उद्यम कुल और शीलसे सम्पन्न होकर भूतलपर हीनेका अधीन होता है । यह सुन्दर स्य और सुन्दर पत्नीसे युक्त होता है, बहुत-से पुत्र और कई-बन्धु उसके चरणोंकी चन्दन करते हैं । इस प्रकार सूर्य-संसारकी पुण्यपत्नी अक्षिर विधिके चरित्रपूर्ण पक्ष या ध्वन करता अथवा इसे करनेकी है, इन्द्रात्मके देवताओंका पुत्र होता है । (अध्याय २२५-२२६)

दुष्कर्मोंको नष्टकरना वह सुन्दर सूर्यनारायणने कहा—‘भद्र ! अथ ही तो इस संसारके कर्ता तथा भर्ता है, अथ पुनसे देस क्यों कह रहे हैं । जो भी आप उचित करने की करे ।’ सूर्यनारायणका ऐसा वचन सुनकर महाजीने विधिसे सुनकर कहा—‘भद्र ! वय, जलान, बहिरथ आदि करनेके समयमें तुम निवृत्त भरी और ही लक्षित पात्रा, प्रवेशन कर, उद्योग आदि कार्य तुम्हारे सम्पन्न करे, तुम ही करते । तीन दिनतक निवृत्त प्रसन्नकी जाय न करले । चौथे दिनके आधे भागमें देवता और तुम्हारे पूज करेगे । तुम्हारा न करे उनका वचन तुम स्वतः कर देव ।’ इस प्रकार विधिके उपदेश देकर अपने चले गये, इधर विधि भी देवता, देव, बन्धु स्य श्रमियोंको कह देती हुई दूधने लगी । भद्रराज ! इस लक्षसे पश्यकी उपधि हुई और वह अति दुष्ट प्रकृतिकी है, इसलिये पञ्चरिज कर्णों उसका अवश्य करे ।

यह पंथ पाँची मुसने, दो पाँची कन्धमें, म्कार पाँची हृदयमें, चार पाँची नाभिये, पाँच पाँची कटिमें और तीन पाँची पुच्छमें स्थित है । जब यहा मुसने रक्षी है तब कार्यका नञ होता है, कन्धमें नञ, हृदयमें प्राणका नाञ, नाभिये कन्ध, कटिमें अर्धपेश होता है पर पुच्छमें निहितकन्धसे निवृत्त एवं कर्ण-सिद्धि हो जाती है<sup>१</sup> ।

पञ्चके बारह नाम हैं—(१) धन्व, (२) दधिमुक्ती, (३) भद्रा, (४) महागौरी, (५) कपानक, (६) कस्तूरि, (७) महाकृष्ण, (८) विष्टि, (९) कुलपुङ्गव, (१०) मैत्री, (११) महाकाली तथा (१२) अमरकण्ठी;

इन बारह नामोंका अर्थःपाल उठकर जो स्नान कराव है, [ ] भी अधिक भव नहीं होता। ऐसी ऐंगसे मुक्त हो जाता है और सभी तरह अनुकूल हो जाते हैं। उसके कामोंमें कोई विघ्न नहीं होता। पुद्गलमें तथा एककुलमें यह विभव प्राप्त करता है जो विश्वपूर्वक त्रिपु विष्टिपु पुद्गल पञ्च है, निःसंदेह उसके सभी कार्य सिद्ध हो जाते हैं। अब मैं पञ्चके बातचीत बता रहा हूँ—

रजम् । जिस दिन भद्रा हो उस दिन उपवास करना चाहिये। यदि [ ] समय भद्रा हो तो दो दिनतक एकपुत्र प्राप्त करना चाहिये। एक प्रहरके बाद भद्रा हो तो तीन प्रहरतक उपवास करना चाहिये अथवा एकपुत्र रहने [ ] अथवा पुत्र प्राप्तके दिन सुगन्ध [ ] लगाने समीचीन-युक्त [ ] खान करे अथवा [ ] आदर्य करके विश्वपूर्वक स्नान करे। देवता एवं पितामह वर्ण तथा पूजन कर कुंडली पञ्चमी मूर्ति बनाये और गन्ध, पुष्प, धूप, टीप, मैत्रा आदिसे

पञ्चके [ ] कथा और उसके अर्थ-दानकी विधि

राजा पुष्पिष्ठाने पूजा—राजम् ! [ ] अब सभी [ ] दूर करनेवाले अगस्त्यमुनिके प्रति, अर्घ्यदानकी [ ] और अगस्त्यदेव-कलकर्म करने [ ]

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महाराज ! एक बार देवग्रेह विघ्न और कर्म दोनों पदपञ्चालस्य पठित तपस्य कर रहे थे। उनकी तपस्यामें बाधा छालनेके लिये इन्द्रने उर्वरी अप्सरको भेजा। उसे देखकर दोनों दुःख हो गये। अपने

ऊपरके पूज करे। पञ्चके बारह नामोंसे एक [ ] आठ बार स्नान करनेके बाद तिल और घबस ब्रह्मणको भोजन कराकर [ ] भी मीन होकर तिलविष्टित कृष्णभक्ता भोजन करना चाहिये। फिर पूजनके अन्तमें इस [ ] प्रार्थना करना चाहिये—

अमरकण्ठी देवि विष्टिरिहावर्धयिनि ।  
पुष्टिकारि [ ] पञ्चक भव ॥  
(अतर्क ११७।३९)

इस [ ] सत्र भद्राव्रत कर अन्तमें उद्यापन करे। [ ] चौदह पञ्चमी मूर्तिके स्थापित [ ] वस्त्र पहनकर गन्ध, पुष्प आदिसे पूजन कर प्रार्थना करे। लोहा, तैल, तिल, कण्डूसहित बाण्डे गन्ध, काल्य कम्बल और पञ्चदश दधिकर्क साथ वह मूर्ति ब्रह्मणको दान कर देना [ ] और विमर्जन करना चाहिये। इस विधिसे जो भी ज्वरित भद्राव्रत और व्रतकर उद्यापन करता [ ] उसके किसी भी कार्यमें विघ्न नहीं पड़ता। भद्राव्रत करनेवाले [ ] घेत, मित्राच, [ ] जलनी तथा [ ] आदि कह नहीं देते। उसका इष्टसे विरोग नहीं होता और अन्तमें उसे सुखलेखनी मिली होती है। (अध्याय ११७)

पञ्चके विषय [ ] अगस्त्य उन्हीं अपना तेज एक कुम्भमें स्थापित कर दिया। उसा निम्नके पत्रसे उसी कुम्भमें प्रथम पञ्चके खिन्नाध [ ] दिव्य तपोधन महाराज अगस्त्यका अनुपम्य हुआ।

अगस्त्यमुनि [ ] लोचामुखासे हुआ। [ ] विष्टिसे [ ] दूर अगस्त्यमुनि अपनी पत्नीके साथ रहकर मरुत्पर्वतके एक प्रदेशमें वैष्णव-विधिके अनुसार अस्या

|                                                                                                                                                                                                                                                                                                               |                   |
|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|-------------------|
| हरी पञ्चक केच कर्मा ॥ अमरकण्ठीः कण्डूकर्मकीर्तये                                                                                                                                                                                                                                                              | हरे ॥             |
|                                                                                                                                                                                                                                                                                                               | (अतर्क ११७।२१—२५) |
| दधिमुक्ती [ ] पञ्चमी कण्डूकर्मः कण्डूकर्मः                                                                                                                                                                                                                                                                    | कुम्भमुनिः ॥      |
| [ ] [ ] कर्मकीः अर्चये ॥ कर्मा ॥ कर्मा [ ] पञ्च                                                                                                                                                                                                                                                               |                   |
| न [ ] कर्माणि ॥ [ ] कण्डूकर्मः [ ] कर्मः कर्मः कर्मः                                                                                                                                                                                                                                                          |                   |
| ले कर्मको [ ] कर्मः ॥                                                                                                                                                                                                                                                                                         | (अतर्क ११७।२७—३०) |
| २-पञ्चके [ ] ज्वरित-ज्वरों विष्टारसे कर्म मित्रा है, मैत्रेयकर मुर्त-वि-ज्वरोंकी वीरुधरा कलकर्म। पञ्चकी [ ] कलकर्म है। [ ] अब प्रत्येक [ ] सुख, [ ] [ ] कर्मा-ज्वरोंकी कर्म [ ] [ ] पूज समय प्रायः २४ मील होत है। [ ] अन्तमें उसके कलकर्म तीव्रसे कण्डूकर्म कल [ ] २७ है और अन्तमें ज्वरकर्म भी उद्यम [ ] है। |                   |







अवधीर्न इतः<sup>१</sup>

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाशय ! जब मैं अपना

गुण विविध प्रवीण अलोक वर्णन कर रहा हूँ। वो बहुत-  
 पुस्तक पूजनकर ब्राह्मणोंको [ ] मेरे हुए  
 पात्रका दान [ ] है, उसे कुछ-अनुज्ञा किसी कर्मके [ ]  
 शोक नहीं करना पड़ता। यह पात्रका दान [ ] दूर  
 करनेवाला है। सुवर्णकी कुदरतीकी अतिशय मनकर उसे पौत  
 [ ] अर्द्धशतकर पुष्प दिनें ब्राह्मणको [ ] करके  
 चाहिये। [ ] पात्रकादीन [ ] बुद्धिमानक है।  
 एकपुत्र रहकर लयण, बटु, विष्णु, औरक, मरिच, हीन और  
 सौदसे बुद्ध पदार्थ तथा शिल्पको—ये सब पदार्थ सब  
 बुद्धकी ब्राह्मणोंको दान [ ] इस विनयात्मको  
 [ ] राक्षसीलोककी [ ] पात्रका [ ] है।  
 भक्तताकर गाय, बक और सुवर्णका सुदर्शनका तथा विष्णु  
 गृहस्थ ब्राह्मणको दानमें दे और उनके प्रणम कर 'विनयात्मकी  
 श्रीवेताम्' कहता [ ] बने। [ ] विनयात्मका [ ]  
 भी नह [ ] देता है। एक वर्तक एकपुत्र [ ] सुवर्णका  
 बना हुआ बिल और अपरलोत्पन्न शिल्पके ब्राह्मणको दान  
 [ ] इस व्रतको ब्रह्म कहते हैं। यह व्रत सभी व्रतों के पाप  
 एवं दोषको दूर [ ] है और कर्मको [ ]  
 करता है।

पानी विधिके दिन सर्वविधिके [ ] पात्रका  
 गृहस्थभक्तके सब उपकरणों—पर, ऊपर, दूर, मिला,  
 चाली, भद्र [ ] भूलाका [ ] गृहस्थ ब्राह्मणको देना  
 चाहिये। इसे गृहस्थ कहते हैं। इस व्रतको करनेसे लय  
 पुत्र प्राप्त होते हैं। इस व्रतका उपदेश श्रीकृष्णने भगवत्पुत्रको  
 किया था।

सुवर्णका कमल तथा [ ]  
 ब्रह्मसे गृहस्थ ब्राह्मणको दान देना चाहिये। यह नीरसा है।  
 इस व्रतको जो कोई भी व्यक्ति [ ] है, उसे विष्णुलोककी  
 प्राप्ति होती है। उपाय आदि पात्र [ ] तैलपत्र नहीं  
 करना चाहिये। अन्तमें पात्रको दिलके तैलसे भरा हुआ नह  
 पड़ा ब्राह्मणको दे और भी तथा फलपुत्र भोजन काये, [ ]  
 व्रतको [ ] कहते हैं। इसे प्रतिपूर्वक [ ]

विष्णुलोककी प्राप्ति होती है।

वैत नामसे दाही, दूध, घी और गुड़, बट्ट, इसके दान  
 को बट्टाकर त्याग करके चाहिये और बादमें दो ब्राह्मणोंकी  
 पूजनकर दाही, दूध तथा दो बक, रससे भरे पात्र आदि पदा  
 'वैत' में श्रीकृष्ण कहकर ब्राह्मणको देना चाहिये। [ ]  
 वैतिका है। इस व्रतको जो करता है, [ ] वैतिलोककी प्राप्ति  
 होती है।

ज्योदशीसे एक वर्षतक नवव्रत करनेके बाद पात्रको दो  
 बल्लोदशित सुवर्णका अलोक [ ] तथा ब्राह्मणको दक्षिण  
 [ ] 'ज्योदशी' का दान [ ] चाहिये। यह  
 काव्यका है। इस व्रतको करनेसे सभी प्रकारके शोक दूर  
 होते हैं तथा विष्णुलोककी प्राप्ति होती है। उपाय आदि पात्र  
 [ ] अपने नह नहीं करने चाहिये और वैतका भोजन भी  
 नहीं करना चाहिये। अन्तमें वैतका पूर्णिमाके दिन [ ] और  
 रात्रसे भरे हुए पत्रके साथ सुवर्णका वैत ब्राह्मणको दान दे।  
 इसे विनयात्मक कहते हैं। विनयात् करनेवाला व्यक्ति उल्लोकको  
 प्राप्त करता है। इसी प्रकार पूर्णिमाको एकपुत्रप्राप्त करनेके बाद  
 पात्रको पूर्णिमाकी धूर्ति करकर [ ] दान करे। अनन्तर  
 दूध, दाही, घी, ऊपर और केत जल—इन पाँच सामग्रियोंमें  
 भरे हुए पाँच बड़े पाँच ब्राह्मणोंको दानमें दे। इस व्रतको  
 ब्रह्म कहते हैं। इस व्रतको करनेसे समस्त मनोरथ पूर्ण हो  
 [ ] है। [ ] विविध वस्तुमें उन्नत पुत्रोंका त्यागकर  
 परलगुनकी पूर्णिमाको बघावर्तित सुवर्णके बने हुए तीन पुष्प  
 ब्राह्मणको दान [ ] 'विनयात्मकी श्रीवेताम्' इस  
 उपाय करना [ ] इसे सौगन्धका कहते हैं। इस व्रतके  
 करनेसे शिल्पदेवसे सुगन्धि उत्पन्न होती रहती है और ब्रह्मको  
 [ ] लोककी प्राप्ति होती है।

परलगुन व्रतके कुछ पक्षकी तुलीकाको नमक नहीं खान  
 चाहिये। [ ] एक वर्षतक नियमपूर्वक इस  
 सौगन्धकाको करने अन्तमें समस्त ब्राह्मणकी पूजा कर  
 गृहके साथ गृहस्थके उपलब्धी सामग्रियों तथा उत्तम श्रव्याक  
 दान देकर 'भक्तानी श्रीवेताम्' इस पात्रको कहता है, उसे  
 [ ] है। यह उत्तम सौगन्धको [ ]



करनेवाला है।

संध्या-समय एक वर्षाकाल में-जब रातभर धूपधर  
तथा पूतलुम्ब, दो वक्क और पच्छा ब्रह्मणको दान करना  
चाहिये। इसे सातवत्सला कहते हैं। यह ऋतु दिवा और  
रातको देनेवाला है। [ ] करनेसे सरलतासेकभी प्रति  
होती है।

[ ] पक्षी [ ] यह  
सुवर्णकमल और ग्रेह गौ ब्रह्मणको दान [ ] इसे  
लक्ष्मीकाल कहते हैं। यह ऋतु कर्माणि एवं सौभाग्यको  
करता है। अतीको मन्त्र-अन्त्रों [ ]  
विष्णुलोककी प्रति होती है।

जो [ ] मससे अन्नको कर [ ] (सात-वत्सल)  
एक वर्षाकाल जलको धन करे और (मगधन् सुर्विक निर्विक)  
जलधारा प्रदान [ ] अन्त्रों पुनर्पुनर् कभी  
कालदाता दान करे [ ] उसे सौभाग्य प्राप्त [ ] इसे  
काराजाल कहा गया है। यह सभी ऐतरेय मन्त्रक, [ ]  
सौभाग्य-प्रदायक तथा [ ] दर्शनको नष्ट करनेवाला है।

गौरीसहित राह, विष्णुसहित विष्णु और ब्रह्मसहित  
भगवान् सुर्विकी मूर्तियों विभिन्नपूर्वक स्थापित कर अन्नक पूजन  
करे, पच्छाबुल गौ, [ ] और दक्षिणको साथ उस भुक्तको  
ब्रह्मणको दान दे। [ ] करनेसे देवता कहते हैं। इस ऋतुको  
[ ] हो [ ] है।

केत कन्दन, केत [ ] अदिसे विष्णुल [ ] और विष्णुकी  
मूर्तियों प्रतिदिन एक वर्षाकाल उपलेपन करनेको [ ] करनेसे करे  
हुए पच्छे [ ] सुन्दर गन्ध ब्रह्मणको [ ] दे। [ ] पुनर्पुनर्  
है। यह ऋतु बहुत [ ] है। [ ] करनेकाल  
विष्णुलोकको प्राप्त करता है।

अधस्थ, सुर्विकराजन और गङ्गाधीन [ ] मन्त्र-  
पूर्वक पूजनकर नौ वर्षाकाल एकपुत्रकाल करे, अन्त्रों सम्पन्निक  
ब्रह्मणकी पूजाकर [ ] गन्ध और सुवर्णक कुछ ब्रह्मणको  
दान दे। इस ऋतुको वीरिनिर्वाह कहते हैं। यह ऋतु [ ] और  
[ ] देनेवाला है। प्रतिदिन गोबरक मन्दल बनाकर उसमें  
अक्षतोंद्वारा कमल बनाये, उसके ऊपर दिवा, विष्णु, ब्रह्म,  
सूर्य, गौरी तथा गणपतिको [ ] दान करके एक वर्षाकाल  
प्रतिदिन पूजन [ ] यह सम्पन्निक गन्ध करके अन्त्रों

[ ] अंगुलको सुवर्ण-कमलसहित उत्तम गन्ध ब्रह्मणको दान  
दे। [ ] कहते हैं। [ ] करनेकाल  
[ ] विष्णुलोकको [ ] करता है।

[ ] एकपुत्रकाल [ ] अन्त्रों कन्याओंको भोजन  
[ ] तथा [ ] कंकुमी, दो वक्क प्रदान कर एवं सुवर्णक  
[ ] वी ब्रह्मणको दे। इस ऋतुको वीरकाल कहते हैं। [ ]  
[ ] इस ऋतुको करती है, [ ] सुन्दर कप,  
[ ] सौभाग्य और सुखको प्रति [ ] रहती है। अन्त्रोंको  
विष्णुलोककी प्रति [ ] है। सम्पन्निकालको जो एक वर्षापूर्वक  
कद कर [ ] और ब्रह्मपूर्वक पाँच [ ] सवाला गौ,  
[ ] तथा बलपूर्ण कलरा [ ] करता है, [ ] व्यक्ति  
अपने पूर्वजोंक उत्तरकर विष्णुलोकको प्राप्त [ ] है। यह  
विष्णुलोक कहलता है।

[ ] जो एक वर्षाकाल कम्पुलक स्थापकर अन्त्रों सुवर्णक  
[ ] कम्पुल [ ] अन्त्रों बुनेकी जगाह होती [ ] तथा  
[ ] बुनेकी साथ गलेसको निवेदित कर [ ] दान  
[ ] है, [ ] दुर्धनकी प्रति नहीं होती, सब ही  
पुनर्पुनर् [ ] सौभाग्यकी [ ] होती है। यह  
काल है। पैत, पैतक, जेष्ठ तथा अनाङ्ग—इन चार  
कालों अन्त्रों एक साथ अन्त्रों एक पक्षपूर्वक [ ]  
अन्त्रोंकाल कर [ ] अन्त्रों बलपूर्ण कलरा, अन्न,  
[ ] वी, [ ] सिरमज्ज और सुवर्ण ब्रह्मणको दे। इस  
ऋतुको [ ] कहते हैं। वीरकालको करनेकाल प्रति एक  
कल्पपूर्वक ब्रह्मलोककी निवास करनेके बाद पुनर्पुनर् [ ]  
[ ] होता है।

[ ] एक वर्षाकाल पञ्चमससे पञ्चमन् दिवा और पञ्चमन्  
विष्णुको दान [ ] अन्त्रों [ ] और सुवर्ण  
ब्रह्मणको दान करता है। यह बहुत भारजाल विष्णुलोकमें  
निवास करता है और सम्पन्न पद प्राप्त करता है। यह वीरकाल  
कहलता है। जो व्यक्ति सर्वथा मन्दसहस्रक परित्याग कर  
अन्त्रों सुवर्णक स्निग्ध और सम्पन्न गौ ब्रह्मणको दान करता  
है, उसे अन्त्रोंकालकाल काल प्राप्त होता है। इसे कालदाता  
कहते हैं। यह सम्पूर्ण शक्तिओंको देनेकाल है। जो मन्त्र मसमें  
[ ] अन्त्रों अन्त्रों ब्रह्मण-दक्षिणकी वक्क, आम्पुण,  
पुष्पमस अदिसे पूजाकर उसको [ ] भोजन करता है,

वह आरोग्य और सौभाग्यको प्राप्त करता है और कल्पपर्यन्त सुखलोकमें निवास करता है। इस बातको सुनिश्चित कहते हैं।

जो आषाढ़ मास में रहनेवाले भक्तिकर कार्तिक पूर्णिमाके दिन ब्रतकुम्भ और गौ गृहस्थ ब्रत रखकर अपनी रसिके अनुसार ब्राह्मण-पूजन कराए है, सभी मनःकामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं और सभी मनको विष्णुलोकमें भाँति होती है। यह वैष्णवका ब्रतकथित है। जो एक अधनसे दूसरे अधन तक गन्धु और चौक लवा करके अन्धे और गौ ब्राह्मणको दानकर चौ और पक्षी ब्राह्मणको भोजन करता है, उसे गौल और ब्रत है। इस ब्रतको ब्रत कहते हैं। (विषयव्यवहारक) प्रतिदिन समय ब्रत तथा अधश्च व्रतार्थ हेतुकर सेवन ब्रत ब्रत फिर ब्रत समाप्त होनेपर ब्राह्मणको दीपक, सुगन्धि चने चक्र, विष्णु और दो बक दान करता है, यह ब्रत लेखनी है। यह ब्रत प्रतिदिन करनेवाला ब्रत दीपक ब्रतकथित है।

जो एकचक्र रखकर एक सातह तक गन्ध, पुष्प, रत्न चन्दन आदि भगवती गौरीकी पूजा करता है, साथ ही प्रत्येक दिन ब्रत-ब्रतमें कुम्भ, मायकी, गौरी, चक्र, ब्रत तथा ब्रतकी—इस बात नामसे एक-एक सुगन्धि की चौक पुष्प, चन्दन, कुम्भ, ताम्रपत्र तथा चक्रित एवं अन्धकारमें पुष्पकर 'प्रीतिदाह' ब्रतमें ब्रतकर विस्मयन करती है तथा आठवें दिन अर्ध वृत्त सुगन्धि की चक्रोंके निर्माणित कर चक्र ब्रत भोजन आदिसे ब्रतकर ब्रत ब्रत तथा आभूषण एवं दर्पण आदि ब्रतन करती है, साथ ही एक ब्राह्मणकी भी पूजा करती है, उसे सुन्दर देह और सौभाग्य प्राप्त होता है, इसे सप्तसुहृदब्रत कहा जाता है। ब्रत सभी ब्रतके सुगन्धित पदार्थोंका स्वाद करन चाहिये और अन्तमें सुगन्धकसे पूर्ण एक सौरी, दो सप्तेक ब्रत अपनी इच्छाके अनुसार दक्षिणाके साथ ब्राह्मणको दान देन चाहिये। इस ब्रत कहते हैं। इसको करनेसे सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं और परमलोकमें प्रति होती हैं।

वैष्णव ब्रतमें नमस्कृत स्वामिन् अन्तमें सप्तह गौ ब्राह्मणको दे। यह ब्रतकथित है। इस ब्रतको करनेसे ब्रत और ब्रतकी वृद्ध होती है तथा अन्तमें विष्णुलोकमें प्रति

होती है। जो तीन पक्षसे अधिक सोनेका ब्राह्मण ब्रतकर उसे तिलकर चैतमें रके तथा 'मै आहंकररूपी दान करनेवाला है' ऐसी प्रार्थना करके बीसे अधिकसे अधिकसे ब्राह्मणको दान करे एवं तीन दिनतक तिलकरी रहे फिर पक्ष, ब्रत तथा ब्रतकोद्वारा ब्राह्मण-दम्पतिका पूजन विष्णुलोकमें दक्षिणे उदयसे किसी शुभ दिनमें विष्णुलोक ब्राह्मण ब्राह्मणको दान करे तो ऐसा करनेवाला पुनर्जन्मसे ब्रत ब्राह्मणको प्राप्त होता है। इसका नाम ब्रत है। यह ब्रतको ब्रत देनेवाला है।

जो तीन दिनतक दुग्धका आहारकर सुगन्धित सप्तह गौ तथा एक पक्षसे अधिक सुगन्धित कल्पवृक्ष चक्रालोक हेतु स्थापित कर उत्तम चक्र और पुष्पमालाओंसे ब्रतकर दान करता है, कल्पपर ब्रतमें निवास-स्नान है, इसे ब्रत कहते हैं। ब्रत अष्टकृत एक ब्रत ब्रत तथा ब्रत, अधन-सप्तहमें ब्राह्मणको दान इसे परलोकामनमें ब्रत कह नहीं होता तथा उत्तम चक्र सुगन्धित होता है। इसे ब्रत कहते हैं।

जो एक वर्षतक भट्टीकी रेशीमें एक बार भोजन करता है तथा अन्तमें ब्राह्मणको पक्षीकी गौका दान करता है, यह ब्रतलोकमें ब्रत है। इसे सुगन्धित कहते हैं। जो हेमन्त और शिशिर ऋतुमें ईश्वरका दान करता और अन्तमें दो तथा गन्ध ब्राह्मणको दान करता है, यह आरोग्य, दुर्ग, ब्रत ब्राह्मणको ब्रत करता है। यह वैष्णवका सभी पक्षीका ब्रत है। जो धनदक्षिणे नतवातकर चैत्र मासके विजय नक्षत्रमें सुगन्धित जल और चक्र ब्राह्मणको दान करता है, यह कल्पपर्यन्त विष्णुलोकमें निवास कर पृथ्वीपर राजाका पद प्राप्त करता है। यह विष्णुका ब्रत है। जो एक वर्षतक पक्षीको दुग्धकर कर अन्तमें दो ब्राह्मणको दान करता है, यह एक कल्पतक स्वर्गलोकमें निवास करता है। यह वैष्णव कहलता है। जो एक वर्षतक सप्तहमें दिन नतवात कर अन्तमें पक्षीकी गन्ध ब्राह्मणको दान करता है, सुखलोकमें होती है। इसे चातुर्गता कहते हैं। चतुर्थीको वर्षतक भोजन है और अन्तमें अठ गौ अधिकसे ब्राह्मणको दान करता है, उसके सभी

सत्राके विना दूर हो जाते हैं। इसे विनियमन करते हैं।  
 कस्तुरीस्रोत फलस्रोत तथा वन कर्तारोंमें सुगन्धक फल, दो  
 गौ, दो ब्रेत कक और बीसे पूर्व फल दक्षिणवर्तिता सत्राकको  
 दान करता है, उसके साथी यन्त्रेण पूर्व होते हैं। इसे यन्त्राक  
 करते हैं।

एक वर्षाक साप्ताहिको उपवास कर अगले सुबर्गको  
कमल बन्नकर और कंसली टोलीसहित सन्तान  
पौराणिक ब्राह्मणको दान करनेसे सुर्गलोकको प्रति होठो है ।  
यह सौजन्य है । जो बाह्य दुष्टलोकको उपवास करके अन्तर्  
बन्धनसिक्त बन्धनसिक्त अलपूर्ण बाह्य पट्ट सन्तानको दान  
है, उसके साथी कार्य सिद्ध हो जालो है । यह गोविन्दसन्तान  
धातुन गोविन्दको पढाओ ज्ञान [ ] है ।

[illegible]

वर्षाईक धानके कुछ कच्ची खुदईको अन्धकार कर  
 उधिके कानन पहाडन-पान कर अर्कत खचित निम्न मूर,  
 भुजा गीका गोबर, क्षेत्र गीका दूध, लाल गीका दही तथा  
 कच्ची गीका भी रोजर मनोसे कुण्डक मितकर नसन  
 करे। दूसरे दिन घातः सनकर देवता और विधोका ठेका  
 करद ब्राह्मणको भोजन करावन सवे मौन  
 होकर भोजन करे। इसे ब्राह्मणकील कहते है। इस  
 करनेसे वात्य, मौन और कुण्डमें बिसे गये सभी  
 कच्चा नारा हो जाता है। भी एक गर्मक हठीकसे निम  
 पनाये जात, फल इत्यादिकर भोजन करात है और अनाये  
 सुन्दर गी ब्राह्मणको दानमे देत है, यह  
 करात है। इसे अविज्ञान कहते है।

अन्तर्में आक्रमणको गन्धक दान करे। यह अनुसन्धान है।

इससे कुम्हलोककी प्रति होती है। छविपर जलमें निवास कर प्रकृतिपर जो मोहन करता है, उसे कलकलोककी प्रति होती है। **॥ कलकलोक कहलिया ॥** जो चन्द्रप्रकाश करनेके बाद सुन्दरता **॥ कलक ॥** बसकर कलकलोकमें मन करता है, **॥ कुम्हलोककी प्रति होती है। यह कलकलोक है।**

जेल घरवादी आवाज और कानूनीको पकड़ि-सेधन  
सुनारसहित गैरकानूनीको टन करे, यह सचता है।  
होती है। जो एक वर्षक सुनारको  
दिवालीको कानूनी कोटन करे। यह सचता है यह  
वर्षकोटन करे। यह सचता है।

■ मध्य पञ्चमी रातनी तिथिसे ■ आई ■ और ■  
 चारथ तिथि भरत है। और उपवास कर साङ्गणकी गौस दान  
 करता है, यह कल्पचरतक आदि निवास करता है। यह  
 साङ्गणका पहरपरा है। जो तीन राति उपवास कर चरतगुनकी  
 पुर्णिमाको ■ करता ■ करता है, ■ पूर्वरातकी राति ■ है।  
 यह ■ है। पूर्वरातकी उपवासकर तीनों संध्याओंमें  
 वन, श्वानुवन, पोषण आदि देकर सक्ती साङ्गणकी पूजा  
 करे। ■ ■ हुनुका करो है। इस अतरे  
 पञ्चमी उने पञ्चमी राति होता है। जो रात पञ्चमी  
 तिथिसे नमस्को करे हुए बरिसे पञ्चमी रात वन और  
 उदित एक ■ ■ देत ■ और अन्तमें  
 तिथिपदमें रोदन करता है। यह कल्पचरतक शिवरातकी  
 ■ ■ करत कर एककोष उत होता है। इसे सोमाका  
 कहते हैं। एक वर्षतक प्रत्येक प्रतिपदाकी एक समय भोजन  
 करनेमें कर बरित गै साङ्गणकी दान करे। यह अतरेका  
 है। इसके करनेसे अतिशेकाही राति ■ है।

■ मध्य प्रदेश एकदशवीं, बसुन्दीसी और आहलीको एकभुक्त रहता है तथा मध्य, कूसा, केवल, चर्म आदि प्रिती  
 ■ यमुना यमुना है तथा चैनमें इन्दी  
 ■ चर्म आदि प्रिती यमुना  
 ■ है, उसे अकमेय यह करनेका फल प्राप्त होता है। यह  
 ■ है। एक वर्षतक दशमी एकभुक्त रहने  
 ■ इन्द्रायोकी पूर्ति  
 ■ गायत्रीका दान करनेसे  
 ■ हो है। ■ विष्णु है। इसे



**मध्य-राज्य-विधि**

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महत्तम ! कस्मिन्पुत्रे मनुष्योऽपि ज्ञान-कर्मणि शिष्यत्वं कर्तुं न शक्यते । पितृ-पुत्र-मातृ-ज्ञानस्य विरोध कदा हेतुसेतु इत्यस्य विधिश्च वर्णनं न कृतम् । जिसके लक्ष्य, पवित्र, पापी, मन अन्धली तरह संकट में और जो विद्या, तप तथा धर्मिणी सम्पन्न है, उन्हें ही सर्व, ज्ञान-दान आदि पुण्य कर्मों पर शस्त्रोंसे निर्दिष्ट कृत प्राद होता है । परंतु श्रद्धालु, पापी, नास्तिक, संसकार, हेतुकाटि (कुलार्थिक) इन सबको शस्त्रोंसे शीर्ष-ज्ञान आदि का कृत नहीं मिलता ।

प्रयाग, पुष्कर तथा कुम्भमेख आदि तीर्थोंमें अन्तर्गत करते हैं। स्थानपर माघ-स्नान करनेवाला हो तो प्रतः-कर्म ही करने करना चाहिये। माघ मासमें प्रतः स्नानेवाले पूर्ण स्नान करनेसे सभी महान्नतक दूर हो जाते हैं और प्रजापत्य-यज्ञका फल प्राप्त होता है। जो ब्राह्मण सदा प्रतः-कर्म स्नान करता है, वह सभी पापोंसे मुक्त होकर परब्रह्ममें प्राप्त कर लेता है। जल जलसे स्नान, ज्ञानसे ज्ञानके अर्थ, मोक्षिप मोक्षके बिना ब्रह्म और सर्वकर्मके समान फलदान कर्तव्य है। चापत्य, करत, ब्राह्म और दिव्य—ये चार प्रकारके स्नान होते हैं। प्रायोक्त राजसे चापत्य, मन्त्रोंसे ब्राह्म, समुद्र, नदी, तालाब, इत्यादिके जलसे वासना तथा कर्मके जलसे स्नान करना दिव्य स्नान कहलाता है। इनमें ज्ञान विशिष्ट स्नान है। ब्राह्मचारी, गृहस्थ, वनप्रस्थ, संन्यासी और ब्रह्मचर तपस्वी, धृष्ट, ब्रह्म तथा नपुंसक आदि सभी माघ मासमें तीर्थोंमें स्नान करनेसे उत्तम फल प्राप्त करते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य मन्त्रपूर्वक स्नान करें और बौद्ध तथा शूद्रोंको मन्त्रहीन स्नान करना चाहिये। माघ मासमें जलस्थ वह स्नान है कि जो सुयोग्य होते ही मुक्तोंसे करता है उसके सुगुण आदि बड़े-से-बड़े पाप भी क्षण तत्काल छोड़ कर उसे सर्वथा डाढ़ एवं पवित्र कर चलते हैं।

बचन-बचने का करनेवाले नहीं होते चाहिये ।  
 संकल्प-नियमसे रहे, दुष्टोंका साथ नहीं करे ।  
 प्रयत्नके निरन्तर दृढ़तासे पालन । सूर्य-चन्द्रके  
 समान उत्पन्न ऐश्वर्यकी होती है ।

[illegible]

२-बस हसी व फरी व ..... पूरे-अन्तः विना ..... स .....

संस्कृत-संज्ञा-सूची ॥ (प्रकरण १२२ (५-४))

२-माघमासे ॥ विविध-विशेष ॥ । अष्टमे वा नवमे वा दशमे वा एकादशे ॥ (अमरपर्व १२२।१५)

१- विद्यार्थी: विद्यार्थी, विद्यार्थी व कक्षा व परीक्षा: (१३३/२०)

हो जाते हैं। माघ-जाय्री पित्त, विसम्पत्, प्रसिम्पत् तथा माघ, मातृमाह, वृद्धमासमाह आदि इष्यते कुटोरेखित समस्त

अष्टिका कर और सभी अन्नान्दोषो अस्मिन् विष्णुलेखने प्रातः ॥ १२२ ॥ (अध्याय १२२)

### और

भगवान् श्रीविष्णुने कहा—एक? सन्तके भिन्न न हो शरीर ही निर्मल होता है और न चक्षुषी ही शुद्ध होती है,

शरीरकी शुद्धिके लिये सबसे पहले सन

विष्णु है। धर्म रको हुए अथवा सुतके भिन्नको हुए अथवा

अन चरन बाधिये। (किन्ती जलवाय ना नदीका सन सुतका हो तो और उताप है।) मन्त्रोक्त विष्णु पुरुषको मूल मन्त्रो

द्वारा कर लेनी बाधिये। 'ॐ नमो नारायणाय'—यह मूल मन्त्र है। हाथमें पुस्त लेकर

विधिपूर्वक नमस्कार कर तथा मन और इन्द्रियाणि संयोज्य

रहाते हुए बाहर-भीतरसे ध्यान रहे। फिर बार बारका चौकोर

इसमें निश्चिन्ता मनोहरा गङ्गाका करे—'गङ्गा। तुम भगवान् श्रीविष्णुके

प्रकट हुई हो, श्रीविष्णु ही तुम्हारे देवता है, इसीलिये तुम्हें

सैन्धवी कहते हैं। ऐषि। तुम जन्मसे लेकर पुरुषोत्तम में हो

लिये गये समस्त पापोंसे करो। जन्म, पृथ्वी अनादिक्षमे

साथे करो। तीर्थ हैं, इसे चतुर्वेदाते (विनमर) कहा है। माता नमोऽभि। सप्त-वे-सप्त तुम्हारे उत्तम स्थित हैं। देवलोकाते तुम्हारा नाम अष्टादश और

है। इनके सम, पृथ्वी, विश्वकर्मा, शिवा, अमृत, विद्याधरा, सुमन्ता, प्रसादिनी, शेषा, अङ्गुली, सन्त और आदि तुम्हारे नाम हैं। जहाँ जन्मके समय इन पवित्र मन्त्रोंका स्मरण होता है, वहाँ विषयार्थहीन भगवती गङ्गा तत्स्थित हो जाता है।

सब बार उपर्युक्त मन्त्रोंका जप करके समुद्रके अन्तर्गत

लेने जलको खोदकर उत्तम बल ले। दिन, रात, पाँच य

बार उसे अपने हाथे, फिर विधिपूर्वक पूजितकरे अपने अङ्गोंमें लगाये।

मन्त्र इस है—

नमोऽस्तु ते नारायणाय विष्णुनामो नमोऽस्तु ते।  
पूजिते इह नमोऽस्तु ते कृष्णाय॥  
अङ्गुलिं वरुणं कुम्भं कलशान्।  
नमोऽस्तु ते सर्वलोकात्मकपुनरिति सुते॥

(अतर्क १२३।१२-१३)

'चतुर्को। तुम्हारे अन्न तथा और सब चला करते हैं। भगवान् श्रीविष्णुने भी चक्षुष्यको तुम्हें एक पैरसे बाधा

पूजिते। ऐषि जो तुम जन्म लिये हो, उन सबको दूर कर दो। ऐषि! भगवान् श्रीविष्णुने तुम्हें मुखाभ्यन्तरे पराक्रम तथा

कारण करके तुम्हें जन्मसे बाहर निकाला था। तुम सम्पूर्ण लोकोंके समस्त धर्मियोंमें प्रातः स्तुति करनेवाली हो। सुते।

येत नमस्तुते।'

इस प्रकार पूजित लगाकर पुनः सन करे। फिर विधिपूर्वक नमस्कार करके उठे और सुद्ध सफेद धोती एवं चदर धारण कर तिलवस्त्रों का सैन्धवी लिये तर्पण करे। सबसे

पहले नमः, विष्णु, कर और अङ्गुलीका तर्पण करे। तत्पश्चात् 'देवता, ब्रह्मा, वाग, गन्धर्व, श्रेष्ठ अम्बरान्धो, कूर सूर्य, गरुड

पक्षी, वृक्ष, जन्मक आदि असुर, विद्याधर, मेघ, आकाशवाणी जीव, निराकार जीव, पक्षी जीव तथा धर्मपरायण जीवोंको तुम

लिये मैं देता हूँ—यह लक्षण सत्त्वको अन्नान्दिते दे'। देवताओंका तर्पण करते समय यशोवतीका

१-माघ-जान-मासकाको कहते पुनर्लोक कई लक्षण प्रत्य है। अतः इस मन्त्रको अङ्गु है।

२-विष्णुकादङ्गुलि। विष्णुलेख। यही नमोऽस्तु ते नारायणाय नमोऽस्तु ते कृष्णाय॥

शिवः चतुर्वेदात्मकोऽस्ति चतुर्वेदात्। ऐषि पुरुषादिते य ते नमोऽस्तु ते॥

ते ते देवे देवेन नमस्कृत्य वा वाग य व नमोऽस्तु ते नमोऽस्तु ते॥

देव लोकवासिनी। देव नमोऽस्तु ते नमोऽस्तु ते॥ (अतर्क १२३।५-८)

१-देव नमोऽस्तु ते गन्धर्वपराय नमः। वृक्षः वृक्षः वृक्षः वृक्षः







चन्द्रग्रहणसे उत्पन्न हुई पीडाका निवृत्ता करे ।

‘जो (नव) विधियोजि’ [१] तथा बह्वन्, विस्तृत और गदा धारण करनेवाले हैं, वे कुम्भेदेव चन्द्र-ग्रहणसे उत्पन्न होनेवाले भेरे फलको नष्ट करें । जिसका तत्कट चन्द्रकासे सुनोभिषत है, कृष्ण जिसका चाहन है, जो विनाश कामक कुम्भ (या विगुलको) धारण करनेवाले हैं, वे दैत्यविदेव उम्बर में ही चन्द्र-ग्रहणजन्य पीडाका निवृत्ता करें । [२] अन्तः विष्णु और सूर्यसहित त्रिलोकियोमें जिसने स्थावर-जङ्गम प्राणी हैं, वे सभी भेरे (चन्द्रजन्य) फलको फल कर दें ।’ इस प्रकार देवराजकोये अग्रमन्त्रित [३] कृती ब्रह्मेद, यजुर्गेद और सामवेदके [४] धार्मिके साध-साध उन उपनयनयुक्त कलशको [५] [६] करें । फिर क्षेत्र पुष्पको माला, कन्दन, बज्र और गोदानश्चाण उन ब्राह्मणोंकी तथा [७] पूजा करें । तत्पश्चात् [८] द्विपक्ष [९] पक्ष-पट्ट [१०] कामलदलप्रार अङ्कित करें फिर इक्ष्वयुक्त उन कलशकोये यजमानके सिरपर रक्ता दें । उस समय यजमान पूर्वाभिमुख हो

अपने इष्टदेवकी पूजा कर उन्हें [११] करते हुए ब्रह्म-कासकी वेसको व्यतीत करे । चन्द्र-ग्रहणके निवृत्त हो जानेपर मातृसिक बर्ष कर गेटन करे और उस (मन्त्रद्वारा अङ्कित) पट्टको ज्ञानादिसे सुन्दर हुए ब्राह्मणको दान कर दे ।

जो ब्रह्म इस उपर्युक्त विधिके अनुसार ब्राह्मणका स्नान करता है, उसे न तो ब्राह्मणजन्य पीडा होती है और न उसके कम्पुक्केशत निवृत्ता [१२] होता है, अधिकु उसे पुनरागमनरहित फल सिद्ध भ्रष्ट हो जाती है । सूर्य-ग्रहणमें मन्त्रीमें सदा सूर्यका [१३] उच्चारण करना चाहिये । इसके अतिरिक्त चन्द्र-ग्रहण [१४] सूर्य-ग्रहण—दोनों अवसरोंपर सूर्यके [१५] पञ्चम [१६] निश्वसति चन्द्रमाके विधित एक सुन्दर [१७] गीतका दान करनेका [१८] है । [१९] मनुष्य [२०] (ग्रहण-कालकी विधि) को [२१] सुनत अथवा दूसरेको ज्ञान कराता है, [२२] सम्पूर्ण पादोंसे मुक्त [२३] इन्द्रलोकेमें प्रीतिहित होता है ।

(अध्याय १२५)

### मरणासत्र (कुत्तुके पूर्व) प्रणीते कर्तव्य तथा ध्यानके कर्तुर्विध भेद

एवमा पुत्रिद्वारेन पूज्य—भगवन् । त्वत्पत्न्य त्वत्पुत्रो अपने अन्त समयमें क्या करना चाहिये’ । कृष्णकर इस विधिके आरंभ बतलवें । मुझे यह सुननेकी बहुत ही अभिलाषा है ।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—भगवन् ! उस मनुष्यको यह ज्ञात हो जाय कि उसका अन्त समीप आ गया है तो उसे गच्छध्वज भगवन् विष्णुका स्मरण करना चाहिये । स्नान करके पवित्र हो रुद्र क्षेत्र पक्ष चारण कर जनेक प्रसरके पुष्पदि उपचारोंमें नारायणकी पूजा एवं लोकोद्धार उनकी सुनि करें । अपनी पत्नीके अनुसर गण्य, भूमि, सुवर्ण, बज्र अदिक दान करे और बन्धु, पुत्र, मित्र, स्त्री, शत्रु, धन, पत्न्य तथा वस्तु आदिसे वित्तको हटाकर समस्तकष परित्याग [१] दे । मित्र, शत्रु, उदासीन अपने और [२] उपकार और

अन्यकारके विचार न करे अर्थात् ज्ञात हो जाय । उपनयनपूर्वक सभी शुभ एवं अशुभ कर्मोंका परित्याग कर इन कृतकर्मों त्याग करे—‘मैं समस्त भोगों एवं मित्रोंका परित्याग कर दिव्य, भोजन भी छोड़ दिया तथा अनुलेपन, माला, आभूषण, गीत, दान, अग्रसन, कृष्ण ज्वरि क्षिपारी, पटवर्ष, मित्र-वैयक्तिक और साम्य सभी क्रियश्रोत्र उत्सर्जन कर दिव्य है । गच्छध्वजोंका भी मैं परित्याग कर दिया है, अग्रप्रकर्ष और वर्णकर्म भी मैं छोड़ दिये हैं । जबतक मैं हाथ-पैर चल रहे हैं, तबतक मैं स्वयं अपना स्वर्ग बन लूँगा, मुझसे सभी निर्मय रहे, कोई भी पाप कर्म न करे । अकवश, कल, भूमी, दिव्य, त्रिल, पर्यात, [३] मध्य, धान्यादि पत्तलों [४] [५] [६] [७] [८] [९] [१०] [११] [१२] [१३] [१४] [१५] [१६] [१७] [१८] [१९] [२०] [२१] [२२] [२३] [२४] [२५] [२६] [२७] [२८] [२९] [३०] [३१] [३२] [३३] [३४] [३५] [३६] [३७] [३८] [३९] [४०] [४१] [४२] [४३] [४४] [४५] [४६] [४७] [४८] [४९] [५०] [५१] [५२] [५३] [५४] [५५] [५६] [५७] [५८] [५९] [६०] [६१] [६२] [६३] [६४] [६५] [६६] [६७] [६८] [६९] [७०] [७१] [७२] [७३] [७४] [७५] [७६] [७७] [७८] [७९] [८०] [८१] [८२] [८३] [८४] [८५] [८६] [८७] [८८] [८९] [९०] [९१] [९२] [९३] [९४] [९५] [९६] [९७] [९८] [९९] [१००]

१-पुण्यमें तक महाकलत्रादिने विधिकी कलशम कुम्भको लक्ष्य करे विधिकी स्नान ही अन्त होनेकी बात मिलती है । वर, गङ्गापत्र, तैल, मकर, कच्छप, मुमुन्द, कुन्द, नील और कर्ष—ये हैं [१]

२-इसी तरहकी कार्य गच्छपुण्य, [२] [३] [४] [५] [६] [७] [८] [९] [१०] [११] [१२] [१३] [१४] [१५] [१६] [१७] [१८] [१९] [२०] [२१] [२२] [२३] [२४] [२५] [२६] [२७] [२८] [२९] [३०] [३१] [३२] [३३] [३४] [३५] [३६] [३७] [३८] [३९] [४०] [४१] [४२] [४३] [४४] [४५] [४६] [४७] [४८] [४९] [५०] [५१] [५२] [५३] [५४] [५५] [५६] [५७] [५८] [५९] [६०] [६१] [६२] [६३] [६४] [६५] [६६] [६७] [६८] [६९] [७०] [७१] [७२] [७३] [७४] [७५] [७६] [७७] [७८] [७९] [८०] [८१] [८२] [८३] [८४] [८५] [८६] [८७] [८८] [८९] [९०] [९१] [९२] [९३] [९४] [९५] [९६] [९७] [९८] [९९] [१००] [१०१] [१०२] [१०३] [१०४] [१०५] [१०६] [१०७] [१०८] [१०९] [११०] [१११] [११२] [११३] [११४] [११५] [११६] [११७] [११८] [११९] [१२०] [१२१] [१२२] [१२३] [१२४] [१२५] [१२६] [१२७] [१२८] [१२९] [१३०] [१३१] [१३२] [१३३] [१३४] [१३५] [१३६] [१३७] [१३८] [१३९] [१४०] [१४१] [१४२] [१४३] [१४४] [१४५] [१४६] [१४७] [१४८] [१४९] [१५०] [१५१] [१५२] [१५३] [१५४] [१५५] [१५६] [१५७] [१५८] [१५९] [१६०] [१६१] [१६२] [१६३] [१६४] [१६५] [१६६] [१६७] [१६८] [१६९] [१७०] [१७१] [१७२] [१७३] [१७४] [१७५] [१७६] [१७७] [१७८] [१७९] [१८०] [१८१] [१८२] [१८३] [१८४] [१८५] [१८६] [१८७] [१८८] [१८९] [१९०] [१९१] [१९२] [१९३] [१९४] [१९५] [१९६] [१९७] [१९८] [१९९] [२००]







विगत नामके एक तपस्वी मधुरामे अक्षर प्रवास कर रहे थे । उन [ ] देवी कामवतीने भी यही प्रश्न [ ] [ ] विषयको [ ] सुनें—विगतमुनिने कहा था—‘देवि ! संतान्ति, सूर्यप्रभा, चन्द्रावहण, वैष्ण्वि, व्यतिपातके, उत्तरायण, दक्षिणायन, विष्णु, एध्वदत्त, सुत [ ] नतुर्दक्षि, तिथिधन, [ ] तथा मधुरामे—इन पुण्य दिनोंमें जान कर, कृतपरमार्थ की अध्यात्म मुक्तिके अपने जीवनमें मध्य पून-पुन्य और जलता हुआ दीपक भूमिदेवको दान देना चाहिये । इससे [ ] एवं ओजसवी प्रसन्नता [ ] है ।

राजा सुप्रहिरने पूछा—मधुसूदन ! भूमिदेव देवता कौन है ? मेरे इस संतानको दूर करो ।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—मधुराम ! पूर्वकालमें सत्ययुगमें आदिमें विशङ्कु नामका एक (सूर्यवंशी) राजा था, [ ] सत्तारी स्वर्गको मत्ता चाहता था । पर महर्षि ब्रह्मदेवने उसे बाण्डाल बना दिया, इससे विशङ्कु बहुत दुःखी हुआ और उसने विधामित्रजीसे समस्त वृत्तान्त [ ] इससे कुछ [ ] विधामित्रने दूसरी सृष्टिकी [ ] [ ] दी । उस सृष्टिमें सभी देवताओंके प्रायः-संघ विशङ्कुके लिये दूसरा स्वर्ग बनाकर प्रारम्भ कर दिया और [ ] (विश्वामित्र), नरिवाल, [ ] स्वयम्भू, ऊँट, भेड़ आदि [ ] [ ] नये स्वर्ग तथा देवताओंकी प्रतिमाका भी निर्माण कर दिया । उस समय इनने अक्षर इनकी प्रार्थना की और विधामित्रजीसे सृष्टि देवकोका अनुरोध किया तथा दीपदान करनेकी सम्मति दी । जो प्रतिमाएँ इनोंने बनायी थीं, इनमें ब्रह्म, विष्णु, [ ] सभी देवताओंका प्राप्त हुआ और वे [ ] इस [ ] प्राणिबोध करपाया [ ] लिये [ ] प्रतिमाओंके मूर्तिमान् रूपमें स्थित हुए और वैष्णविकीये प्रणम करते हैं तथा अपने भक्तोंपर [ ] होकर प्रदत्त देते हैं, वे [ ] भूमिदेव कहलाते हैं । राजन् ! इसीलिये उनके सम्पुक्त दीपदान करना चाहिये । भगवान् सूर्यके लिये प्रदत्त दीपकी रक्तवर्णसे निर्मित [ ] ‘पूर्ववर्ति’ कहलाती है । इसे प्रथम दिवाके [ ] निर्मित क्षेत्र [ ] ‘इन्द्रवर्ति’, विष्णुके लिये निर्मित पीत वर्णकी वर्तिका ‘भोगवर्ति’, गौरीके लिये निर्मित कुसुम रंगके चक्रसे निर्मित वर्तिका ‘सौभाग्यवर्ति’, दुर्गाके लिये लालके रंगके समान रंगवाले चक्रसे निर्मित [ ]

‘पूर्ववर्ति’ कहलाती है । ऐसे ही ब्रह्माके लिये प्रदत्त वर्तिका ‘पञ्चवर्ति’, नागोंके लिये प्रदत्त वर्तिका ‘नागवर्ति’ तथा ग्रहोंके लिये प्रदत्त वर्तिका ‘ग्रहवर्ति’ कहलाती है । इन देवताओंके लिये ऐसे ही वर्तिकावस्तुतः दीपदान दान करना चाहिये । पहले देवताका पूजन करके [ ] कर के चक्रों की भरकर दीपदान करना चाहिये । इस विधिसे जो दीपदान करता है, [ ] सुन्दर तेजस्वी विष्णुको वैद्यकर स्वर्गमें जाता है और वर्षा प्रलयपर्यन्त मज्जित करता है । जिस प्रकार दीप प्रकाशित होता है, उसी प्रकार दीपदान करनेवाला व्यक्ति भी प्रकाशित होता है । दीपके लक्षण [ ] [ ] भी उल्लेखित होती है । दीपक पूत या तेजस्वी करने चाहिये, बल, बल्य आदि तरलद्रव्य-भुक्तिके नहीं । अतःसे हुए दीपको कुत्तना नहीं चाहिये, न ही उस स्थानसे हटाना चाहिये । दीप वृक्ष देवताका स्तम्भ होता है और [ ] पुण्यकारक [ ] होता है । [ ] कुत्ताना निन्दनीय कार्य है ।

अब । अब दीपदानके महत्त्वमें एक आख्यान सुनें—विदग्ध देशमें विदग्ध नामका एक राजा रहता था । उस [ ] [ ] पुत्र [ ] [ ] एक कल्प थी, [ ] [ ] या ललित । [ ] सम्पूर्ण युव स्त्रियोंसे सम्पन्न अत्यन्त सुन्दर थी । राजा [ ] वर्णका अनुसरण करनेवाले महाराज [ ] [ ] ललितकाम विवाह किया । पञ्चवर्षकी यह प्रथम पुत्री हुई । वह विष्णु-मन्दिरमें सहस्रों प्रज्ज्वलित दीपक प्रतिदिन स्तवना करती थी । विशेषरूपसे अग्नि-वर्तिकाके बड़े समारोहपूर्वक दीपदान करती थी । वह चौखोरे, गरिबी, मन्दिर, दीपलके चुक्के पास, गोशाला, पर्वतप्रान्त, नदीतटों तक कुम्भोंपर प्रतिदिन दीप-दान करती थी । एक बार उसकी सर्वस्वोंने उससे पूछा—‘ललिते ! तुम दीपदानका फल इसे भी बताओ । तुम्हारी पति देवताओंके पूजन आदिमें [ ] होकर दीपदानमें इतनी अधिक क्यों है ?’ [ ] सुन्दर ललितने कहा—‘ललिते ! तुमलोगोंने मुझे [ ] निन्दित नहीं है, न [ ] ईर्ष्य, इसलिये मैं तुमलोगोंने [ ] [ ] चला कर रही हूँ । ब्रह्मजीने मनुष्योंके उद्धारके लिये सबान् पर्वतोंकीको मरुदेशमें श्रेष्ठ देवता नदीके रूपमें पृथ्वीपर अवतरा किया, वह पापोंका नाश करनेवाला है, उसमें एक बार भी स्नान करनेसे मनुष्य शिवकीप्राप्त गण हो जाता

है। नदीमें जहाँ मगवान् विष्णुने नृसिंहकल्पसे स्नान किया था, उस स्थानको नृसिंहतीर्थ कहते हैं। नृसिंहतीर्थमें सभी फल जाते हैं।

सौवीर नामके एक वे, जिसके पुत्रेन्द्रित थे शिव। उसने देविकके एक विष्णुमन्दिर मन्दिरमें पुण्य, धूप, दीप, नैवेद्य आदितो पूजन और दीपदान किया करते थे। वे एक दिन पूर्णिमाको वहाँ दीपदानका बहुत बड़ा धर्मकाण्ड था। रात्रिके समय सभी लोगोंने नींद आ गये। उस मन्दिरमें पूर्वजन्ममें भक्तिभावसे भक्तियों भक्तियों सुनायी दी। भवभीत होकर आते दी और शिव गयी, दीपक बुझने दीपक प्रज्वला काट कर केटी धुलु हो गयी, पुनः विदग्धचित्तसे विचरथ उठायी

कर्त्तव्य यह कार्यवाही मैं करता हूँ। सकलिये ! कर्त्तव्य यहने विष्णुमन्दिरमें दीपदानका ऐसा सुन्दर फल होता है। ईश्वर मैं भक्तिवादी, ये दीपदानका कोई नहीं शिर भी मुझसे मन्दिरमें भवभरा दीप प्रज्वलित हुआ मैं न कर सकी, उस समय किन मुझसे जो दीपदानका पुण्यकर्म हुआ था, पुण्य-कर्मिक फलसम्पन्न भक्त में महाराजके पदपर स्थित हूँ अपने पूर्वजन्मका है। इसी मैं आज करती रहती हूँ। दीपदानके फलको जानती हूँ, इसलिये देवालयमें दीप जलाती हूँ। लक्ष्मणनर सुन्दर सभी लक्ष्मणों की दीपदान रही संपत्तिक राज्य-सुख योग्यता सभी सब विष्णुसेवकों वाली नहीं। इस प्रकार दीप-दान करते हैं, वे तेज विष्णुसेवकों प्राप्त करते हैं। (अध्याय १३०)

### कृचोत्सर्गकी महिमा

मगवान् श्रीकृष्णने कहा—भारत ! माघकी पूर्णिमा, पूर्णिमा तथा श्रावण और पूर्णिमा शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न पुण्यको गौत्रिके साथ छोड़नेसे पुण्य होता है। कृचोत्सर्गकी गर्गावासी मुझसे इस प्रकार कहलाता है—सबसे पहले बौद्धसम्प्रदायका भूजगत्तक मङ्गलार्चन फिर आध्यात्मिक आदर करना चाहिये। फिर एक स्थापित कर उद्वार पूजन पुस्तके हवन चाहिये। उस सर्वाङ्गसुन्दर तत्त्व कहनेके भागमें विदुल और दक्षिण भागमें जानुल आदितो अनुलिख कर, गलेमें पुष्पकी माला पहन दे। अन्तर तत्त्व भक्तिभावोंकी भी भूषित कर उनके को कि 'अपने एक सुन्दर कृचो मे हूँ, इसके सब सम्बन्धपूर्ण प्रसन्न होकर विचार करें।' पुनः उनके कक्षसे आम्बरद्वारा एवं स्थापित भोजनसे संतुष्ट देवालय, गेह नदी-संघ

तन्त्रोंके छोड़कर चाहिये। पुण्य है, अन्तरगत, गर्जते हुए, कर्तव्य तथा भावधारसे पूर्ण कृच छोड़ने है। इस विधिसे जो कृचोत्सर्ग करता है, उसके दस पुला पड़नेके और दस पुस्त अनेके की पुण्य सहाय्यसे प्राप्त करते हैं। यदि कृच नदीके जलमें प्रवेश करता है और उसके सींगसे या बूझसे जो बल लहरता है, उस तर्जकाल जलसे कृचोत्सर्ग करनेके व्यक्तिने पितरोंको अक्षयपुत्रि प्राप्त होती है। अपने सींगसे या कुरोंमें यदि वह मिट्टी छोड़ता है तो कृचोत्सर्ग पितरोंके लिये यह मिट्टी भूमि पर जानेपर मङ्गलका बन है। कर इमार हाथ लम्बे-चौड़े लक्षण करनेसे पितरोंको अपनी पुत्री नहीं होती, विजानी पुत्री एक कृच छोड़नेसे है। मनु और एक लम्ब मित्राकर मित्रदान करनेसे पितरोंको जो पुत्री नहीं होती, वह पुत्री एक कृचोत्सर्ग करनेसे होती है। जो अपने पितरोंका उद्वारके लिये कृच छोड़ता है, वह सब भी सर्गलोकाको प्राप्त करता है। (अध्याय १३१)



## पञ्चगुण-पुर्णिमेत्सव

**महाराज बुधिरहिते पूजा—पञ्चगु ! पञ्चगुनकी**  
पुर्णिमाको मध्य-मध्य तथा मध्य-मध्यमें उत्सव कहे जा-  
जाता है और गाँवों एवं नगरोंमें छोटी बड़ी उत्सवों जाती है ?  
क्या कारण है कि बालक उस दिन घर-घर अन्ध-अन्ध होकर  
पचते हैं ? अष्टाष्ट किसे कहते हैं, उसे जोतनेवा कहे कहा  
जाता है तथा किम देवताका पूजन किया जाता है । अन्य  
कृष्णकर बातनेका करे ।

**भगवान् श्रीकृष्णने कहा—पार्थ ! सत्ययुगमें** रघु  
नामके एक शूरवीर जिसका सर्वांगसम्पन्न थे ।  
समस्त पृथ्वीको जीतकर सभी राजाओंको  
करके पुत्रों भीति प्रजाका लालन-पालन किया । उनके  
राज्यमें कभी दुर्मिष नहीं हुआ और न किसीकी अशक्त कृत्य  
हुँ । अधर्ममें किसीकी रुचि नहीं थी । एक नगरके  
लोग राजाद्वारा सहस्र एकत्र होकर 'प्रति', पुकारने  
लगे । राजा ने इस भयभीत निमित्त कारण पूछा । उन  
लोगोंने कहा कि महाराज । बौद्ध नामकी एक राक्षसी प्रतिदिन  
हमारे बालकोंको बह देती है और उसका किसी बन्ध-बन्ध,  
ओषधि आदिक प्रभाव भी नहीं पड़ता, उसका किसी भी  
निवारण नहीं हो पा रहा है । नगरवासीको यह कष्ट  
सुनकर विस्मित राजा ने राज्यपुरोहित महर्षि समित्त भुविसे उस  
राक्षसीके विषयमें पूछा । तब उन्होंने राजासे कहा—'राजन् ।  
नामक एक दैत्य है, उसीकी एक पुत्री है, जिसका नाम  
है बौद्ध । उसने बहुत समयतक उग्र तपस्व करके त्रिशूलको  
प्राप्त किया । उन्होंने उससे कहा 'तुम्हारे' इसपर  
होड़ाने यह वरदान माँगा कि 'प्रको ! देवता, दैत्य, मनुष्य  
आदि मुझे न मार सके तथा लालन-पालन आदिसे भी मेरा क्या  
न हो, साथ ही दिनमें, रात्रिमें, शीतकाल, उष्णकाल तथा  
वर्षाकालमें, भीतर बाहर काहर कहीं भी मुझे किसीसे भय न  
हो ।' इसपर भगवान् श्रीकृष्णने 'राजन्' को कहा  
कि 'तुम्हें उन्मत्त होगा ।' इस प्रकार कर देकर  
भगवान् शिव अपने चामरों चले गये । यही नामकी  
वामरुचिणी राक्षसी नित्य बालकोंको और प्रजाको पीड़ा देती  
है । 'अष्टाष्ट' मन्त्रक करनेपर वह बौद्ध प्रजा हो  
जाती है । इसलिए उसको कहते हैं । यद्ये

रात्रि है । अब मैं उससे पीछा छुड़ानेका उपाय  
का है ।

उत्तर ! अब पञ्चगुण मन्त्रके सुक्त पक्षकी पूर्णिमा  
विधिकों सभी लोकोंको निहार होकर ब्रह्मा करनी चाहिये और  
गाना ईश्वर कहिये । बालक लकड़ियोंके बने  
तलवार लेकर बार सैनिकोंकी भाँति हर्षसे युद्धके  
ऊँचक टँडते हुए निकल पड़े और आनन्द मन्त्रमें । सूखी  
लकड़ी, उपले, सूखी पत्तियाँ आदि अधिक-से-अधिक एक  
स्थानपर एकत्रकर दोनो लकड़ी बन्धोंसे लगाकर  
उसी स्थानपर कमाना कीजिये उस जगहों हुए  
दोनों का पर चित्रण का बने, सभी विन्देदपूर्ण और रहे । इस  
राक्षसको, कृष्ण करनेसे, कोलहल करनेसे तथा  
कलकलके प्रभावके इस दुष्ट राक्षसीका  
हो जाता है ।

विराटको यह कष्ट सुनकर राजा रघुने क्षमपूर्ण राज्यमें  
लोकोंसे इसी प्रकार उत्सव करनेको कहा और स्वयं उसमें  
सहयोग किया, जिससे वह राक्षसी विनष्ट हो गयी । उसी  
दिनसे इस लोकमें उत्सव हुआ और  
परम्परा चली । ब्राह्मणोंद्वारा सभी दुष्टों और सभी  
लोकोंमें शान्त प्रभावसे प्रसारित-होय इस दिन किया जाता  
है, इसलिए इसको शान्तिवासी भी कहा जाता है । सप्त विधिकोंका  
स्वर एवं परम आनन्द देनेवाली पञ्चगुनकी पूर्णिमा तिथि  
है । इस रात्रिमें विशेषरूपसे शशा चरने  
कहिये । गोबरसे सिते-पुले बरके अग्निसमें बहुतसे खट्टहल  
बालक बुलने चाहिये और घरमें पक्षित बालकोंको वरुणनिर्मित  
खट्टसे स्पर्श कराने चाहिये । ईश्वर, गाना, बजाना, नर्तन  
आदि करके उत्सवके मध्य और बहिरा लालन देकर  
बालकोंको विशर्भित करना चाहिये । इस विधिसे बौद्धका दोष  
अवश्य प्रान्त हो है ।

**महाराज बुधिरहिते पूजा—पञ्चगु ! दूसरे दिन** चैत्र  
माससे वसन्त ऋतुका आगमन होता है, उस दिन करना  
कहिये ?

**पञ्चगु श्रीकृष्णने कहा—महाराज ! होलीके दूसरे**





दोल्लेख्यकवच कर्ण कर रहा हूँ। किसी समय नन्दकर्मों  
दोल्लेख्य हुआ। वसन्त ऋतुमें देवकृष्ण और देवता भिन्नकर  
दोल्लेख्य करने लगे। नन्दकर्मों यह मन्त्रोक्त  
देवकर्म भगवती पार्वतीजीने संकलितसे कहा—‘भगवन् !  
इस ऋतुमें आय देखो। उक्त निर सिन्धे । दोल्लेख्य  
कर्मों, । साथ बैठकर दोल्लेख्य कर  
सही ।’ यह कर्मों ।  
प्राप्त मुलाकर दोल्लेख्य कर्मों कहा।  
कर्मोंनुसार सुन्दर उत्तम इष्टार्थनय दोल्लेख्य  
सत्यकर्म । लक्ष्मीकर्म फल लक्ष्मी और कर्मों कर्मों  
रक्षी कर्मों कर्मों कर्मों बैठनेके लक्ष्मी लक्ष्मीकर्म फल लक्ष्मी  
रचना की। उस फलके उत्तर अत्यन्त सुन्दर कर्मों और रक्षी  
। लक्ष्मी कर्मों लक्ष्मी कर्मों लक्ष्मी कर्मों लक्ष्मी कर्मों  
और पुनः-मन्त्रोंसे उक्त कर्मों दिया। इस प्रकार दोल्लेख्यमें  
अति उत्तम दोल्लेख्य कर भगवन् कर्मोंके उत्तरार्थक  
प्रदान किया। अनन्तर भगवन् कर्मोंकर्मों कर्मों  
साथ दोल्लेख्य बैठ गये। भगवन् कर्मोंके कर्मों दोल्लेख्य कर्मों  
लगे तथा गया और भिन्नका दोल्लेख्य कर्मों कर्मों कर्मों  
उस समय पार्वतीजीने बहुत ही बभ्रु सरसे गीत गाय, शिवजी  
शिवजी अत्यन्तप्रसन्न हो गये। कर्मों गीत गये लगे, अनन्तर  
कर्मों लगी और । कर्मोंके कर्मों दोल्लेख्य  
हो गये। परन्तु शिवजीके दोल्लेख्य-कर्मोंसे लक्ष्मी कर्मों  
लगे, ऋतुमें इष्टकर्म कर्मों गया, कर्मों फल कर्मों लगे,  
लोक कर्मों हो गया। इस प्रकार दोल्लेख्यमें अति कर्मों  
। दोल्लेख्यमें ।  
कर्मोंसे शिवजीके प्राप्त कर्मों किन्तु और कर्मों  
कर्मों लगे—‘गय । । अथ दोल्लेख्य-लक्ष्मीके निम्न  
हो, कर्मों । लक्ष्मी । । रह है।’ इस प्रकार  
देवताओंकी प्रार्थना सुनकर । हो शिवजीने दोल्लेख्य  
। कहा कि ‘अबसे कर्मों ऋतुमें जो कर्मों इन  
दोल्लेख्यकर्मों करेगा तथा नैवेद्य अर्पित कर लक्ष्मी देवताओंके  
मूल मन्त्रोंसे उन्हें दोल्लेख्य उत्तरोत्तम कर्मों, कर्मों,  
अत्यन्त मनापेक्ष और कर्मों-फल करेगा, वह लक्ष्मी  
करेगा।’

भगवान् श्रीकृष्ण पुनः बोले—महाकर्म !

रक्षककवच कर्ण हूँ।

एक बार चैत्र मासमें कर्मों देवताओंसे समाप्त  
भगवन् । सत्यकर्मोंसे विरामकर्म थे। इसी समय  
मृगश्रुतकर्मों इष्टकर्मों कर्मों हुए देवता वरदलोचने  
भगवन् कर्मोंके कर्मों अने। भगवन् कर्मों प्रभाव किया  
। अत्यन्त कर्मों लगे। सर्वत्र भगवन् कर्मों देवता  
कर्मों कर्मों—‘मुने । । अत्यन्त कर्मों हो रहा है ?’  
कर्मों बोले—‘देवता । मैं मृगश्रुतकर्मों रहा हूँ। यहाँ  
कर्मोंके कर्मों कर्मों १००० संस्कार अपने कर्मों कर  
। है। यहाँ कर्मों-मर्म सुगन्धित । पवन बहता है।  
कर्मों कर्मों कर्मों—कर्मों, आद्यमन्त्रों आदि सभी  
कर्मों कर्मों सङ्गोल प्रदान कर रहे हैं। नगर-नगर और  
कर्मों-कर्मों कर्मों कर्मों यह कर्मों कर रहा है कि इस  
। यहाँ, अर्थात् । कर्मों कर्मों कर्मों कर्मों  
कर्मों है। भगवन् । कर्मों कर्मों सभी लोग कर्मोंसे हो  
हो है। चैत्र । कर्मों । देवकर्म । कर्मोंसे  
। अथ हूँ। । सुनकर भगवन्  
कर्मों, । मुनिगण और सभी देवताओंकी साथ  
। मृगश्रुतकर्मों । और कर्मों देवता कि चैत्र वरदजीने  
कर्मों , कर्मों कर्मों कर्मों कर्मों । सब लोग कर्मों  
। लगे हैं। अत्यन्त । है। । कर्मों लक्ष्मी लक्ष्मी  
। रहे । । कर्मों लक्ष्मी जो देवता कर्मों कर्मों से, वे भी  
कर्मों हो कर्मों-कर्मों लगे। कर्मोंके प्रभावसे देवताओंकी  
भी कर्मों देवकर्म कर्मोंसे यह कर्मों कि यह लगे कर्मों  
। हो रहा है। इसके प्रतीकारकर कोई-न-कोई उपाय  
। कर्मों। जो कर्मों होता हुआ देवकर्म भी कर्मोंके  
। कर्मों नहीं करता, । कर्मों ही । पड़कर  
कर्मोंके कर्मों करता है। अब मुझे इन कर्मों कर्मोंसे रक्षा  
कर्मों कर्मों और लक्ष्मीकर्मों कर्मों कर्मों भी सम्मान रखना  
कर्मों। यह कर्मों शिवजीने कर्मों कर्मों कर्मों पाम  
। । । केवल चैत्र मासमें  
प्रभाव । कर्मों, चैत्र मासके शुक्ल पक्षमें सभी जीवोंको  
और कर्मों कर्मों देवताओंकी सुख देनेवाले हो जाओ।’  
अन्तर देवताओंकी सत्यकर्मों किन्तु और यह भी  
‘जो कर्मों कर्मों कर्मों रक्षककवच करेगा, वह इस संस्कारमें

दिव्य भोगोंको भोगनेवाला तब नीरोग होगा।' इतना कहकर शिवजी सभी देवताओंके साथ अपने लोकमें चले गये। बसन्त ऋतु भी शिवजीके आज्ञानुसार अपने विचार करता हुआ अवलम्बन छोड़ गया। उसी दिनसे लोकमें रम्यवस्तुसम्पन्न प्रचार-प्रसार हुआ। जो देवताओंकी रम्यता करता है, उसके धन, पशु, पुत्र आदिभी पुष्टि होती है और अन्तमें वह सद्गतिमें प्राप्त करता है<sup>१</sup>।

उत्पन् ! अब आप विरोध विधियोंका वर्णन सुनें। तुल्यधन्यो गौरी, चतुर्वर्ण्यो गणेश्वरी, पञ्चमूर्त्यो सप्तमी अक्षय सरस्वती, पद्मीन्यो स्कन्द, सप्तमूर्त्यो सूर्य, अष्टमी और चतुर्दशीको शिव, नवमीको चण्डिका, दशमीको वेदव्यास आदि शतशतक विधि-मार्ग, एकदशी तथा छद्मदशीको भगवान् विष्णु, त्रयोदशीको कामदेव और पूर्णिमाको सभी देवताओंका आर्चन-पूजन करना चाहिये। इस प्रकार देवताओंकी निर्दिष्ट विधियोंमें ही रम्यवस्तुसम्पन्न, ऐश्वर्यसम्पन्न और रक्षणार्थ आदि उत्सव करने चाहिये। इस प्रकार बसन्त ऋतुमें उत्सव करनेवाला व्यक्ति बहुत कारुणिक कर्मका सुख भोगकर पुनः पञ्चमूर्ति राजाका पद प्राप्त करता है।

भगवान् श्रीकृष्ण पुनः बोले—उत्पन् ! अब भगवान् श्रीकृष्ण अपने नेत्रोंसे पञ्चमूर्ति कामदेवको धन कर दयालु था, उस समय कामदेवकी प्रीति होती और प्रीति होने से-ऐकर करने लगीं। इसका इतना प्रेम हो गया और वे शिवजीसे प्रार्थना करने लगे—'महादेव ! आप कृपया कामदेवको दे और शरीर प्रदान कर दें।' यह सुनकर प्रसन्न हो शिवजीने कहा—'पार्वति ! चण्डिका यह कृतिष्ण रूपमें नहीं छोड़ सकत, परंतु चैत्र मासके शुक्ल पक्षकी त्रयोदशीको एक बार मनसे होकर होगा। चैत्र शुक्ल पक्षकी त्रयोदशीको जो भी कामदेवका पूजन करेगा, कर्मकर सुखी रहेगा। इतना

कहे गये। उत्पन् ! इसकी विधियोंके सुनें—चैत्र मासके शुक्ल पक्षकी त्रयोदशीको स्नान कर एक अश्वत्थवृक्ष बनाकर उसके नीचे छींटा, प्रीति और बलवत्सहित कामदेवकी प्रतिमाको सिंदूर छरीसे बचन चाहिये। सुवर्णकी मूर्ति चाहिये। मूर्ति देखी होनी चाहिये, जिसकी निष्कामकीर्ति लाभ छोड़े हो, अथवा देवताके चरणों तक चढ़ी हो, गन्धर्व कुल कर रहे हो। इस प्रकार मध्यमकाल समय गन्धर्व, वृष, अक्षय, ताम्रस, दीप, अनेक प्रकारके फल, विष्णु आदि उपचारोंसे कामदेवकी तथा अपने पतिजी भी पूजा करे। इस प्रकार प्रतिवर्ष कामदेवका करता है, वह सुप्रिय, सेन, अश्वत्थ, लक्ष्मी आदि प्राप्त करता है। विष्णु, ब्रह्मा तथा सूर्य, चन्द्र आदि माता, कामदेव, काला और गन्धर्व, अश्वत्थ, ताम्रस, सुवर्ण, वन, विष्णु आदि इसका प्रसाद हो जाता है। उसके कभी शोक नहीं होता। जो भी वसन्त ऋतुमें छींटा करता, आदि कामदेवका प्रतिपूर्वक पूजन करती है, सोमाय, वृष, पुत्र और सुखको प्राप्त है।

महादेव ! इसी प्रकार जेठ मासके प्रतिवर्ष विधियोंसे लेकर पूर्णिमाका कालकी भूतमहात्म्य पूजनेसब मन्त्रन चाहिये। अनेक प्रकारके मन्त्रविशेषपूर्ण एवं हासपूर्ण गीत, शायक आनन्दजनक करना चाहिये। नवमी अथवा एकदशीको नवमकर मन्त्रन प्रतिपूर्वक सभीप लेना चाहिये।

इस प्रकार पूर्णिमाका त्रयोदशी समय दीपश्रोतसम्पन्न करना और छद्मदशीके दिन भूतमहात्म्य उत्सव मन्त्रन चाहिये। इस प्रकार अनेक प्रकारके उत्सवोंसे भूतमहात्म्य पूजन व्यक्ति संपरीकर रहते और उनके चरणों मिली प्रवर्तमान विधि उत्सव नहीं होता। भूतमहात्म्य कालकी पर्वतोंके अंशसे समुद्धृत है।

(अध्याय १३३—१३४)



१-वसन्तऋतुमें इस रम्यवस्तुसम्पन्न हो गया, अथवा-पुनः छींटाकी रीति आदि है, विशेषकर पुष्टिमें।



व्रत, दान, तीर्थसेवन, देवपूजन, श्रद्धा-तर्पण आदि शुभकर्मोंमें तथा पारंपरिक उत्सव व्यवाहारीक जनसाधारणको प्रवृत्त करनेके लिये उनके पारलौकिक कालोत्तर वर्णन गद्य है। भविष्यपुराणमें भी इन सब हैं। इनके अतिरिक्त कई समावेश है। सुविशेष लिये 'भविष्यपुराण'के सार-संक्षेप इस विरोधवादी प्रारम्भमें लेखकप्रभे प्रस्तुत किया गया है। उसके अवसरोक्तो भविष्यपुराणके प्रथम प्रतीपाद्य विषय पठकोंके पठनमें आ सकेंगे। आशा है, पठकगण इससे लाभान्वित होंगे।

'भविष्यपुराण'के प्रस्तावनाका निर्णय विद्वत् सरलाक्षो हुआ, इसके सम्पादनमें उनकी ही कठिनश्रमों में अनुपम हुआ। भविष्यपुराण अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होने हुए भी पर्याप्त पढ़ना है इन दिनों विरोध-रूपसे उपेक्षित-सा रहा। 'बेबादर प्रेस'से प्रकाशित एक ही मूल संस्करण इस पुराणका उपलब्ध हो सका। अन्य अवशिष्ट मूल प्रतियाँ भी इसीकी प्रतिलिपी मात्र थीं। इसके अतिरिक्त इस पुराणका कोई संस्करण तथा इस पुराणकी कोई टीका तथा किसी भी भाषामें कोई अनुवाद भी उपलब्ध नहीं हुआ। विश्वके चरण मूल पठ-पेद अतिरिक्त निर्भीक कर्म करिण था। जो संस्करण उपलब्ध हुए उनके मूल चलेकोमें अचूकियाँ मिलनेसे अनुवाद कार्यमें भी अनुपम हुआ।

इस वर्षसे 'कल्याण'के कार्यका प्रारम्भ तीन सप्ताह पूर्व जगद्वरीसे गद्य है। इस का कहते थे 'कल्याण'के अङ्क अपने समयसे करे, परीत इन अपरिहार्य अनुवाद-कार्य मूल न पढ़ा हुए भी हो गया। इस विश्वकोके कारण हमारे विश्व पठकोंको निश्चितरूपसे होने पड़ा होगा तथा कटका अनुपम भी दुर्लभ होगा, जिसके लिये सम्प-प्रार्थनाके अतिरिक्त मेरे पास कोई दूसरा उपाय भी नहीं है। भविष्यमें हमारा यह अवश्य होगा कि समयसे

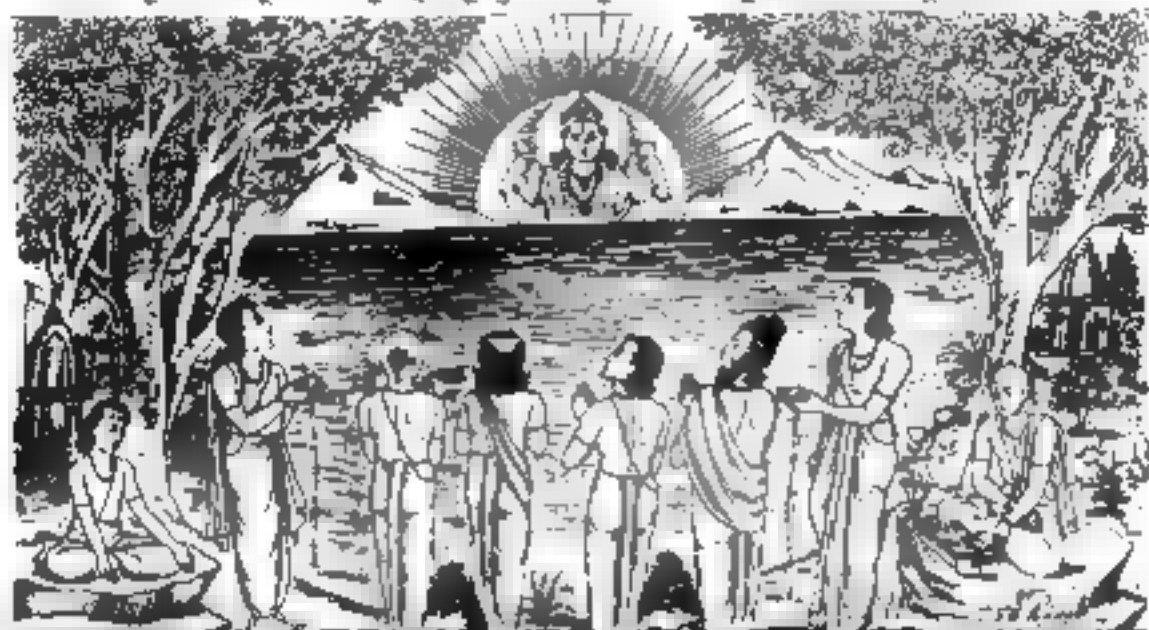
अपनी सेवकों 'कल्याण'के प्रस्तुत हों।

भविष्यपुराणके इस अनुवादका फलस्वरूप विरोधवादी पृष्ठ-संक्षेपसे तीन परिशिष्टोंमें यह पूर्ण होकेगा। ये परिशिष्टवाक्य पाठकोंके लक्षण प्रकट होंगे। इस मूलके सम्पादनमें पठन-प्रभेने हमारी सहायता की है, उनके इस कदमसे है। अनुवादका पुष्पक ५- श्रीमहाप्रमुखात्मकी पुष्पक ५- उनके पुष्पक ५- श्रीमूलशंकरजी साहबके द्वारा सम्पादित हुआ। इन इन दोनों पठन-प्रभेके प्रति इससे आभार व्यक्त करते हैं। अनुवादके संशोधन आदि कार्यमें पठन-प्रभे का सहयोग राखी तथा अपने 'कल्याण'-सम्पादकीय विभागके श्रीमानकीनाथजी रामनि विशेष सहयोग करने किया है। इनके प्रति भी हम सर्विक आभार व्यक्त हैं। इस विरोधवादीके सम्पादन, सुधार-संशोधन, विनिर्माण, मुद्रण आदि कार्यका दिन-दिन सेकेसे इसे सहायता मिली है, ये सभी हमारे अपने हैं, उन्हें सम्पादक देकर हम उनके महत्त्वसे कटका नहीं करते। इस बार भविष्यपुराणके सम्पादन-कार्यके प्रारम्भमें परमात्मप्रभु और श्रीमान श्रीमान-क्याओका विमान-प्रदान तथा श्रीमान श्रीमान निराला होकर रहा, यह हमारे लिये महत्त्वकी बात है। हमें है, इस विरोधवादीके पठन-पठनसे हमारे सहायक पठकोंको भी यह श्रीमान-साम होकर।

इस पुष्टि-कोई सबसे पुष्प-प्रार्थना करते हुए वाचन श्रीमानकीनाथजीके चरणोंमें नम्र करते हैं, किन्ते कृपायत्नसे मात्र हम सभी श्रीमानकीनाथजीके चरणोंमें नम्र करते हैं—

सुविशेष: सर्व निराला: ।  
पदमन्त्र का अतिरिक्त-समाप्तम् ॥  
—राधेदयाम सेमका





# अनुसूचित

|          |       |            |            |          |
|----------|-------|------------|------------|----------|
| एषि      | सूर्य | मङ्गलाक्षे | सेजोराक्षे | जगाधने । |
| अटलधाम्य | शं    | धकखा       | मृगशाली    | दिवाकर । |

वर्ष ६६ } गोरखपुर, सीर फाल्गुन, श्रीकृष्ण-संक्र ५२१७, कार्तिकी १९९२ ई. { संख्या २  
 संख्या ७८३

**कृष्णाय नमः**

બેઠકનું પુરોગામી : ગણતંત્રના મૂલ્યો સુધારવા  
 રાજ્યના સરકારી કાર્યોમાં સુધારો લાવવો  
 પોલીસ : ગણતંત્રના મૂલ્યો સુધારવા  
 રાજ્યના સરકારી કાર્યોમાં સુધારો લાવવો

श्रीगुरु ! आपने महामय प्रलयसमुद्र में हुए उद्धार, समुद्र-मन्थनके महाकर्म बनेकर पृथ्वीमण्डलको पीठपर किया, महावज्रके रूपमें हुई हुई पृथ्वीका उद्धार किया, जिसके रूपमें विषण्वकशिपु आदि दैत्योंका विदारण किया, याम्यनके रूपमें करिष्ये लाल, परशुरामके रूपमें क्षत्रिय जातिकका लाल, रूपमें महाबली रथगात्र प्राप्त की, श्रीबलरामके रूपमें हलके राक्षसके धारण किया, भगवान् बुद्धके रूपमें विस्तार किया करिष्ये रूपमें ऐतच्छीको सूचित करेंगे । इस प्रकार दशवतारके रूपमें आपकी मैं करता हूँ ।





इस प्रकार महावीरों सब प्रकारसे नयनवीर्य पूजन कर  
रात्रिको जागरण करता चाहिये और नृपवीर्य उत्तम करना  
चाहिये। प्रसन्नतापूर्वक रात्रिके बाद जानेपर नयनवीर्य  
प्राप्तकर नयनवीर्य बड़े समझनेके साथ विशेष पूजा करनी  
चाहिये। अमरावत-समयमें रात्रिके बीच मनकी दुर्बली  
प्रतिष्ठाको स्थापित कर पूरे राज्य भरमें प्रसार करना चाहिये।  
अपनी सेनसहित राजाको भी सब राजा चाहिये।

इस प्रकार निम्नलिखित विधि पूजापति करनी



### इन्द्रधनुषकोरसको वसुधा पुताणा

पताणा जीवन्मय कहते हैं— । पूर्वधनुषमें  
देवधनुष-संग्रहके समय । इन्द्रधनुष ।  
प्राप्त हो, इसलिये नयनवीर्य निर्माण किया। नयनवीर्यको  
देवताओं, सिद्ध-विद्याधर तथा नग आदिने मेरा  
स्थापित कर सभी उपरान्त—पुनः, भूय तथा दीर्घादिसे उत्तम  
पूजा की और अनेक प्रकारके आयुष्य, वन, पण्डा, ।  
आदिसे अलंकृत किया। उस । देव  
हो गये और पुनः देवताओंने उन्हें पराजित कर स्वर्ग  
राज्य प्राप्त कर लिया। देव लोकको बसे गये। उसी  
दिनसे देवता उस इन्द्रधनुष पूजन और उत्तम करने लगे।

समय अपने मन्त्रान् पुनः-प्राप्तके करण ।  
उपरिपर वसु स्वर्गमें आये। उनका देवताओंने । सम्मान  
किया। उनसे प्रसन्न होकर इन्द्रने वह धनुष उन्हें दिया और कर  
देते हुए कहा कि पृथ्वीमें इस धनुषकी अपन पूजा करे, इससे  
आपके राज्यके सभी लोग दूर । और जो । राज्य  
वर्षा-आतुरों (पादप सुकत प्रदरही) । नयनमें इसका  
पूजन करेगा, उसके राज्यमें क्षेत्र । सुखित बन रहेगा,  
मिस्त्री प्रकारका उपद्रव नहीं होगा, प्रजा । हरे नौरेग  
होगी, सर्वत्र । यज्ञ होगी। राज्यमें प्रभु बन-सम्पत्ति  
होगी। इन्द्रधनुष । कवन सुखकर राजा करीकर वसु ।  
धनुषको लेकर अपने नगरमें बसे आये और । इन्द्र-  
पूजा कर । मनने लगे। इस धनुषकी ।  
देवी मन्त्र गयी है।

अब मैं इन्द्रधनुषके उत्तमकी विधि बत रहा हूँ। जोस  
हाथ लेंगे, सुख, उत्तम वास्तवी एक चष्टि बनकर उसे सुन्दर

चाहिये। जिससे । निर्विघ्न पूर्ण । इस । जो राजा  
सम्मान व्यक्ति पावनीकी प्राप्त । है, सभी  
प्रकारके । सुन्दर पावनीके लोकको प्राप्त कर लेता है  
। उस व्यक्तिको सन्तु, पौर, पण्ड, । गरी  
होता । मरु सदा नौरेग, सुखी और निर्भय हो जाते  
हैं। जो व्यक्ति । कवन । है या  
। उसके । सभी नयनस दूर हो जाते हैं।

(अध्याय १३८)

### वसुधा पुताणा

रंग-मिरंगे वस्त्रोंमें सुसज्जित करे। । आयुष्य  
। आयुष्य पित्तक चीकोर होता है, इसे  
‘लोकपाल’ । है, दूसरा आयुष्य । रंग  
। है, इसी । देवधनुषकी  
। तथा यहिमें । पुष्पमाला, पण्डा,  
। आदिसे । उस । करे।  
। गुहने मुक्त मित्रा और पापस  
। कराये। । दक्षिण दे। उस धनुषको  
धीरे सड़कर स्थापित कर दे। नै ।  
उत्तम माना चाहिये। अनेक प्रकारके नृत्य, गावन, वादन  
करो दूर मरुतमुद । उत्तम भी कराये चाहिये।  
नयनपूजा तथा । नौरेगको संग्रह कर  
। करना चाहिये। । कर नयनकी  
करनीकी । करनी चाहिये।

इन्द्रधनुषका पूजन, अर्चन तथा उसकादि कर्ण सम्मान  
करना चाहिये। यदि एक वर्ष करनेके बाद दूसरे ।  
नयनधनुषके । पूजादि कर्ण न हो सके तो पुनः बारह  
वर्ष बाद ही करना चाहिये। धनुषके अङ्ग-भङ्ग होनेपर अनेक  
प्रकारके । हो जाते हैं। यदि धनुषपर कीआ  
। तो दुर्भिक्ष । है, उत्तक बैठे तो राज्यकी मूल्य  
। करी है। कहेत । तो । विनाश होता । इसलिये  
सम्मान लेकर उसकी । करनी चाहिये और प्रतिपूर्वक  
। उत्तमकर पूजन । चाहिये। यदि  
धनुष गिर पड़े या टूट । सोने । चट्टीका धनुष  
बनकर उसका । और अर्चनकर शान्ति-पौष्टिक







एवं सुतिथोद्धार आदिह इस प्रकाराधिक संक्षिप्त वर्णन कर  
हैं। इसके ज्योतिषीद्वारा कालगने गये शुभ शुक्ली  
आज्ञाद्वारा साविताचन करणकर यहाँ एवं प्रशिक्षितोके  
करके त्वन करण करण चाहिये। पुनः एवं  
सुतिथोके विद्वाने त्व प्रशिक्षितोके कह्यत करण है।  
दस हजार आहुतिथोके अयुक्तोके, उसो कणकर दस  
एक सप्त आहुतिथोके सप्तहोम तथा सम्पूर्ण करण  
फल प्रदान करनेवाला तीसरा एक करोड़ आहुतिथोके कोटि-  
होम होता है। दस हजार आहुतिथोके सप्तहोम करणकर  
कहाला है। इसकी विधि जो पुराणों सुतिथोके कणकर  
गयी है, प्रथम में दसहोम अर्थ करण है। (कणकर  
मण्डपनिर्माणके बाद) हवनकुण्डकी पूर्वोत्तर-दिशामें  
लिखे एक केटीका निर्माण करावे, ३३ बीज लकी-कोटी,  
एक पाता ऊँची, ३ पत्रपत्रा सुरोभिता और चक्र हो।  
उक्त मुख उत्तरकी ओर हो। पुनः कुण्डमें आग्नेय स्थान  
करके उस केटीपर देवताओंका अर्पण करे। इस प्रकार  
उत्तर की ओर देवताओंकी स्थापना चाहिये।

सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु,  
केतु—ये लोगैकै हितकारी भूत होते गये हैं। इन प्रत्येकी  
प्रतिमा क्रमशः लीज, रक्तचन्दन, लाल, चाँदी तथा  
बननी चाहिये। कालोद्धार प्रथममें  
सूर्यकी, दक्षिणमें योगेश्वरी, उत्तरमें बृहस्पतिकी, पूर्वोत्तर-  
कोणपर बुधकी, पूर्वमें शुक्रकी, दक्षिण-पूर्वकोणपर चन्द्रकी,  
पश्चिममें शनिकी, पश्चिम-दक्षिणकोणपर राहुकी और  
पश्चिमोत्तरकोणपर केतुकी स्थापना करना चाहिये। इन सब  
ग्रहोंमें सूर्यके शिव, चन्द्रके पार्वती, मंगलके रुद्र, बुधके  
भगवान् विष्णु, बृहस्पतिके ब्रह्मा, शुक्रके इन्द्र, शनिके काल,  
राहुके और केतुके विष्वक् अर्थात् देवता माने गये हैं।  
अग्नि, जल, पृथ्वी, वायु, इन्द्र, सौम्य देवता, प्रजापति, सूर्य  
और ब्रह्मा—ये सभी प्रत्यक्षदेवता हैं। इनके अति-  
रिक्त विनायक, दुर्गा, वायु, लक्ष्मी तथा  
उक्तके उनके पतिदेवताओंके साथ और अतिनीकुण्डोके  
प्रादुर्भावके उद्धारणपूर्वक उद्धारण चाहिये।

योगसंज्ञित सूर्यके लाल वर्णकर, और शुक्रके  
वर्णकर, और बृहस्पतिके पीत वर्णकर, शनि और  
केतुके कृष्ण वर्णकर तथा केतुके नील वर्णकर और  
करण चाहिये। बुधको चक्रवर्ती यह करण  
हो, उसे बज और फूल करे, सुगन्धित  
धूप दे। पुनः फल, अदिके सूर्यके गुड़ और  
चक्रसे करे (चौर) कण, चन्द्रमाके और दूधसे  
चक्रकर, योगसंज्ञित गोविन्दका, बुधके क्षीरशुद्धिक  
(दूधमें लगे हुए साठीके चक्र) का, बृहस्पतिके दही-  
का, शुक्रके ची-का, विष्वक्का, राहुके  
अजन्तकी चक्र लालके फलके गुदापर और केतुके विभिन्न  
रंगके फल अर्थात् सभी प्रकारके  
पूजन करे।

पूर्वोक्तोक्तकर एक निश्चित कलराशी  
करे, उसे भक्तसे सुरोभिता, पल्लवसे  
और कर्णसे परिधीत करके उसके निकट  
फल दे। चक्र दे और  
बराद, पाकड़, गुल्म और आमके पल्लव) से युक्त  
कर दे। चक्र, गङ्गा अदि नदियों, सभी समुद्रों और  
अर्पण तथा स्थापना करे। राजेश्वर धर्म  
पुरोहितको कि वह इन्हींकर, बुधशाल, चीरोहे,  
विष्वक्, जलके संगम, और गोरालाकी मिट्टी  
अर्थात् धर्मका धर्मका ज्ञानके  
लिखे कई प्रस्तुत कर दे 'धर्मका फल नष्ट  
समुद्र, नदी, नद, बाढ़ल और सरोवर यहाँ  
पानी ऐश करकर इन देवताओंका करे। तत्पश्चात्  
ची, जी, हवन प्रारम्भ। मदार,  
और विभिन्न, पीपल, गूलर, शमी, दूध और  
कुस—ये क्रमशः नवों अर्थात् रविचार हैं। इनमें प्रत्येक  
नक्षत्रके लिखे यक्ष, ची और दही चक्रसे युक्त सी  
अथ अथ अथ अथ आहुतिवा प्रदान करनी चाहिये।  
बुधको पुनः सदा सभी कर्णों में अंगूठेके सिरेसे लालके  
सिरोतकी चक्रवर्ती तथा करोड़, और















चक्रा निर्माण करे। उसके सिद्ध होनेके बाद पृथ्वीपर स्थापित करे। इसके पश्चात् राक्षसी अठ्ठात्र तन्वा परब्रह्मदे सप्त समिधओंको भस्मि [ ] [ ] लिपे कुम्भमें डाले। आधार और अङ्ग्य-पाश-रोड़क इत्यादि [ ] 'वातलोदसे' (श्रु० १।१९।१) इस मन्त्रके द्वारा [ ] सप्त आहुतिर्वा प्रदान करे। पुनः 'वातलोदसे' इस मन्त्रसे [ ] इष्टन करे। 'वसू स वही' (श्रु० १।५८।१-४) इस सूक्तसे बार बार इष्टन करे। इसके [ ] 'लोभ' (श्रु० १०।१४।१३) इस मन्त्रसे 'व्याह' शब्दका प्रयोगकर [ ] आहुतिर्वा दे। तदनन्तर 'विष्णुर्वा' (यजु० ५।१५) इस मन्त्रसे सप्त बार आहुति दे। फिर २७ नक्षत्रोंके लिये २७ आहुतिर्वा दे। अन्ततः 'महावीणा' इसके द्वारा [ ] [ ] विष्टपुत्र इष्टन करे। तदनन्तर पृथ्वीदेव [ ] [ ] करे। इसके बाद आपक्षित-निमित्तक इष्टन करके क्षेत्र-वर्णको सम्पन्न करे। तदनन्तर वेद द्विज यजमानके दुर्मितितवी राक्षसोंके लिये चौद कलशोंके [ ] मन्त्रोंके द्वारा पञ्चाङ्ग्य अभिषेक करे। 'सहस्रलोभ' (श्रु० १०।१६१।३) इस मन्त्रसे [ ]

कलशोंके जलासे, 'सहस्रपुत्र' [ ] द्वितीय कलशके जलसे, 'सन्धेय' (श्रु० ३।४०।२) इस मन्त्रसे तृतीय कलशके जलसे, 'विष्णुर्वा देव' (श्रु० ५।८२।५) इस मन्त्रसे चतुर्थ कलशके जलसे तथा 'सहस्रपुत्र' इस मन्त्रसे पञ्चम कलशके [ ] अभिषेक करे। इसके बाद 'नमोस्तु सर्वभूतेभ्यः' इस मन्त्रसे [ ] वसि-वैदेय प्रदत्त करे।

यजमानके यजन करनेके समय ब्राह्मणान् राक्षसका पाठ करे। [ ] और रक्षि-जयसे [ ] गिराये। अन्तमें पुनः ब्राह्मणपूर्वक राक्षसोंको सम्पन्न करे। ब्राह्मणोंको [ ] भूमि, जल, वायु, शब्द, अस्त्र एवं दक्षिणा दे। धन, अन्न, विभिन्न लोभियोंको भी धनदान आदि प्रदान करना चाहिये। ऐसा [ ] अनुष्ठी करि और शत्रुपर कलश [ ] जल [ ] पुत्र-लाभ [ ] है। जैसे शत्रुको प्रहार [ ] है, वैसे [ ] भी इस रक्षिण्यमेंसे दूर [ ] है। अहिंसक, इन्द्रियसंयमी, [ ] यन संयमित करनेकरता, दण्ड और दक्षिणसे युक्त व्यक्तिमें लिये यही ऋ अनुकूल हो जाती है।<sup>१</sup>

(अध्याय १४३)

### —ॐ—

#### विनायक-राक्षि<sup>२</sup>

भगवान् बुधिविदिते ब्रह्म—देवता। विदोः अथ [ ] विनायक-राक्षिणी [ ] मुखे ब्रह्मदे, विशाले करनेसे सभी मानव समस्त [ ] मुक्त [ ] है।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—एजेन्द्र। [ ] द्विज गेह राक्षिण्य में वर्णन करता है, इसके आचरणसे सभी अग्निष्ट नष्ट हो जाते हैं। यह विनायक-राक्षि सम्पूर्ण विश्वको [ ] करनेके लिये बनी जाती है। स्वामी जलसे [ ] करण, मुष्टित सिधों तथा गेहअन्न बचानेसे देखना, [ ] राक्ष, विना [ ] करणके ही दुःखी होना, कर्मों असाधन हो जाना इत्यादि विनायकद्वारा गृहीत होनेमें [ ] दिखानी देते हैं। विनायकद्वारा गृहीत हो जानेपर राजपुत्र राज्यको खण्ड नहीं कर सकता, कुम्भरी धनी नहीं [ ] कर सकती, [ ] पुत्रको

और [ ] राज्यको खण्ड नहीं कर सके। विद्याधी पक्ष नहीं चला, खजरी मरकटों द्वारा नहीं पाव और कुम्भक बुधिवर्धनी सबल नहीं होता।

इसीलिये इन विश्वोंके दूर करनेके लिये पुण्य दिनमें जपन-धार्य करना चाहिये। काल सरसोषी छली, वृत्त और सुधीन कुम्भकका उदयन लगानकर जपन कर पवित्र हो जाय। [ ] करणसे [ ] करणसे। विधिपूर्वक कलश-स्थापन करे और ब्राह्मण अभिषिक्त जलसे द्वारा यजमानको अभिषेक [ ] और इस [ ] करे—

सकलार्थे सत्कारकृष्ण [ ] कृतम्।  
येन सत्कारकृष्णाय नमः। पुनस्तु मे॥  
धर्म [ ] राज्य धर्म सर्वे वृद्धवर्तिः।

१-अहिंसक अथवा [ ] [ ] वादकृष्ण [ ] धर्म अनुकूल श्रुतिः (१४३-४५)

२-य [ ] [ ] यजः [ ] और पुत्रको [ ] [ ] है।





भागवान् पद्म, कौमोदकी गण्ड, सुदर्शन  
 चक्र धारण रहते हैं। उनके चरित्रमण्डले अनेकगोरी  
 पवित्र गङ्गाका प्रदुर्भाव हुआ है। उनके सतिर्भाव है,  
 विनोद है—जय, विनय, जयन्ती, नरिणी,  
 उन्मीलनी, चञ्चुली, विन्दुस्र और विनयन।  
 भागवान् शुक्लशम्भरधारी, लोभ्य, प्रसन्नमुख, उन्मी  
 अम्भरागोसे युक्त, शेषशयन और भुक्ति-भुक्तिप्रदता है।

उत्तर । उनकी विस विधिसे प्रकाशपूर्ण पूजा करनी  
 चाहिये, उसे आप सुनें। पानीशीर्ष अर्द्ध फाट पातेमें छटाती,  
 अमवास्या अथवा अष्टम्योके दिन । उपवासपूर्वक हा  
 चाहिये। शुक्ल और शुभ । पानी कलशका पूजा  
 । इस प्रकार निकल गान करके  
 दत्तात्रयपूर्वक तक्षण, पुष्कर कलश धारण । तक्षण  
 मित्य-मैत्रील कार्य करने चाहिये। एक एक सुवर्णिक पात्रसे  
 लक्ष्मीसहित । उपवासपूर्वक हा  
 साधिका प्रकाशनपर स्थित हो। दुम्भसे पूरित कुम्भकर  
 सुवर्ण-पत्रके ऊपर उस लक्ष्मी करे।  
 वर्णवर्णश्रेण देवाधिदेवकी अर्द्ध पूजा करे।  
 कनक भगवान् सरोज (विष्णु) और लक्ष्मी (लक्ष्मी)  
 विविध विविध पत्रादि उपचारोंसे पूजा करे। अथवा इस

प्रकार प्रार्थन करे—

कुम्भ प्रथमे दान दान विधि हो।  
 अर्द्ध नो लक्ष्मीको लक्ष्मी ।  
 पूजा केन यथा दत्ता तिलाब्ध जगद्गुरो।  
 शुक्ल शम्भुकाय नमस्कृत्य नमोऽस्तु ते॥

(उत्तरार्ध १४६, १४८-१४९)

अनुष्ठान ब्राह्मणसे दान देकर  
 तक्षण सम्पन्न करवा चाहिये। इस कालसे दोनों पाशोंमें बंधे  
 और बंध पूरा होनेपर उद्धारन करे। ब्राह्मणसे प्रार्थना करे  
 देवता। और सभी दूर जायें।  
 कहे—‘मन्त्रोंके सभी एवं दुःख दूर हो जायें।’ तक्षण  
 ब्राह्मणसे यह मूर्ति सम्र्पित कर सम्पन्न करना चाहिये।

उत्तर । ब्राह्मणोंने कहा है कि इस कालसे करनेसे अथवा  
 फलकी प्राप्ति होती है। जो फल सभी केदोके अध्ययनसे  
 अथवा अथवा करनेसे प्राप्त होता है, उससे वेदविगुना  
 फल इस कालसे अथवासे होता है और ब्रह्मको इस लोकमें  
 बन, कान, नुर, चैत्र, मित तथा सुखकी प्राप्ति होती है।  
 कालसे करनेवाले ब्रह्मको विद्या अथवासे भी प्राप्ति  
 होती है तथा कर्म, अर्थ, धन और मोक्षकी प्राप्ति होती है।  
 इससे कोई संदेह नहीं है। कि इससे पड़ता अथवा सुगत है,  
 उसके भी सभी फल दूर हो जाते हैं। (अध्याय १४६)



### काकानपुरीकाव-विधि

भागवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—महात्म्य ! एक बार  
 विष्णुके उत्पत्ति, फलन और लक्षणका अथवा पुष्कोत्तम  
 भागवान् विष्णु कोशोंमें सुखपूर्वक बैठे हुए थे। उसी समय  
 जन्मवाता लक्ष्मीने । कर्म फलन । कर्म फलन  
 पूजा—‘भागवान् । कर्म फलन । कर्म फलन  
 महात्म्य । पुष्कर भी दान करके अथ कोई ऐसा कर्म-  
 सौभाग्यप्रदक । कर्म फलन, विष्णु अथवासे  
 समस्त लोच अर्द्ध पुष्प कालोत्तर फल प्राप्त हो जाय।’

भागवान् विष्णु बोले—देवि ! विस प्रकार  
 गुरुस्वप्न, ब्रह्म, नदीयोंमें ब्रह्म अथवासे सुख,  
 देवताओंमें विष्णु (मै) तथा विष्णुमें तुम (लक्ष्मी) बैठ हो,  
 उसी प्रकार प्रथमें काकानपुरी अथ जाय है। इस कालसे फलने

भागवान् श्रीकृष्णके साथ अनुष्ठान किया था।  
 भागवान् श्रीकृष्णके साथ इसी कालसे पालन  
 सत्त्व । कर्म फलन । कर्म फलन  
 करने । इस । कर्म फलन  
 श्रीकृष्णके । इस कालसे कर्म फलन और  
 कर्म फलन । फलने । यह अथ लोच और  
 प्रदत्त करनेवाला । कर्म, मेवत्त, हृदयकी (लक्ष्मी)  
 सत्त्व, लक्ष्मी, अथवा, कर्म फलन  
 इस कालसे कर्म लोच, सुख और  
 अपने प्राप्त थे। फलनेमें भागवान्वाक्यों और  
 कर्म, सरलकी एवं सतिर्की अर्द्ध तथा देविसे तथा  
 पूर्वकी लक्ष्मीकासे इस



करे। दौन, अंध, बधिर, बंगु आदि सबको संतुष्ट करे।  
करे। तदनन्तर मधुर पायससुक व्यञ्जनको भोजन और  
बान्धवोंके साथ भोजन करे। ऐसा करने पर  
प्राप्त करे। साथ आनन्दमय जीवन व्यतीत है।

अन्तर उदात्तोंके, उसके बन्ध विधुलोकाको है।  
देखि ! कन्यानुपेक्षित यह बात पूर्वसमयमें तुमने भी किया  
था, पुण्यके प्रभावसे त्रैलोक्यपूजित भूते स्वर्गीय रूपमें  
तुम्हें प्राप्त किया है। (अध्याय १४७)

### कन्यादान एवं ब्राह्मणोंकी वरिष्ठाधिकार

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—राजन् ! जो  
करने योग्य कन्याको अर्चनाकर ब्राह्मणोंमें सुयोग्य  
प्रदान करता है, वह सात पूर्व और आगे विष्णु  
पीडितोंको अपने सुखमें मनुष्योंको भी इस  
कन्या-दानके पुण्यसे देता है, इसमें शक नहीं।  
ब्राह्मणत्व-विधिके द्वारा कन्या-दान करना है, वह  
दक्षप्रजापतिके लोकाको प्राप्त करता है। वह अमर्य उदार बन  
अपार पुण्य प्राप्त करता है तथा अपने स्वर्गलोक प्राप्त करता  
है। जो पृथ्वी, गौ, अश्व, गजका दान हीन करनेवाला है,  
वह धीर नरकमें है। दान  
कारणवत्त्व धीर नरक प्राप्त करता है और इसमें  
अपवित्र त्वत्त्व-प्राप्त करता हुआ नरकमें जाता है।  
है। इसलिये सर्वगं कन्या ही प्रदान करने चाहिये।  
ब्राह्मणके अधिकांश पुण्यकारण,  
उपनयन आदि संस्तुत करता है, वह अशोक-  
पत्र करता है। अन्ध कन्याका विवाह करने-  
वाला स्वर्गमें पूजित होता है। पूर्वजोंने कहा कि

कन्यादानके साथ प्रतीत सुख सर्वथा दान करता है, वह  
हिमालय कन्याका दान प्राप्त करता है। कन्याकी पूजासे  
विष्णुकी पूजाके पुण्य होता है।

महाराज ! पृथ्वीपर ब्राह्मण ही देवता हैं, पशुका ब्राह्मण  
ही देवता है। इन्हीं ही नहीं सौने ब्राह्मणसे भेद कोई  
है। वह शक्ति है कि वे पशु-बालके प्रभावसे  
अदेवता अदेवताको देवता बना देते हैं।  
इसलिये महाभाग। सदा पूजा करनी चाहिये।  
देवता ब्राह्मणसे ही पूर्वमें उत्पन्न हुए देता स्मृतिवत्ता कथन  
है। सम्पूर्ण जगत् ब्राह्मणसे है। इसलिये ब्राह्मण  
पूज्यत्व है। देवगण, विद्वान्, ब्रह्मिण्य जिसके मुखसे भोजन  
करते हैं, उस ब्राह्मणसे बंध और बंधन हो सकता है ? धर्मज्ञ !  
कन्याका कन्याकाकारणसे पूजित होता  
है। जब प्रथम देवता ब्राह्मण संतुष्ट होकर बोलते हैं तो वह  
सम्पूर्ण कि परेशम देवताओंकी यह वाणी है।  
उसीसे मनुष्यका कल्याण हो जाता है, अतः सदा ब्राह्मणकी  
करनी चाहिये। (अध्याय १४८—१५०)

### दानकी विधि और धेनु-दानकी

महाराज सुनिश्चित करने का—भगवन् ?  
वीमुखसे मैंने पुराणोंके विष्णुको सुन। मैंने भी  
विस्तारपूर्वक सुन, संस्कारकी असरताको भी मैंने उस  
मैं दानके महात्म्यको सुना चाहता हूँ। दान किस समय,  
किसको, किस विधिसे देना चाहिये, यह सब कहनेकी कृपा  
करें। मेरी समझसे दानसे बहुत अन्ध कोई पुण्य कार्य नहीं  
है, कदाचित् धनिकोंका धन चोरेद्वारा नष्ट हो जा सकता है  
अथवा राजाद्वारा हिनस्त्रया जा सकता है, अतः धन रहनेपर

अवश्य करना चाहिये।  
भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—महाराज ! मनुष्यके उत्पत्ति  
धन आदि वैभव अधिकके साथ नहीं आते, परंतु ब्राह्मणको  
दिया गया दान फलस्वरूप पापोंका कर्त्तव्य उसके साथ जाता है।  
पुत्र, बालक शरीर पानेसे भी कोई लाभ नहीं है, अथवा  
किरीक ठपकर न करे। उपकारहीन जीवन व्यर्थ है।  
इसलिये ब्राह्मणसे अवश्य उससे प्राप्त  
करनेवाले को नहीं देना

इच्छानुसार धन कमा और किसको प्राप्त हुआ वह होगा ? धर्म, अर्थ तथा कामके विषयमें सचेत होकर जिसने प्रयत्न नहीं किया, उसका जीवन लोहस्थी का है। यही अर्थ ही चलता है। जिस व्यक्तिने न धन दिया, न धन किन्ना, तीर्थ-स्थानोंमें प्राण नहीं लगाया, सुकर्म, अन्न-सखा तथा जल आदिसे आह्वानोंपर सत्कार नहीं किया, वही व्यक्ति ऊप-ऊपमें मग्न रहित, योगसे प्रसिद्ध, इन्धने काजल लेकर दर-दर पाठकता हुआ याचना करता रहता है। अनेक प्रकारके कहानोंसे समझ जायेंगे की अधिक धिय जो धन प्राप्त किया गया है, उसकी एक सुगति धन। सौध योग और ये विषयार्थ ही हैं। उपयोगसे और धनसे मनका तन का होता, केवल पूर्व-पुरुषके क्षीण होनेसे ही काजल जल होता है। मरणोपरांत धनपर अपना स्वामित्व नहीं रह जाता, अपने हाथसे ही सुखकामे मनका धन कर सौध बहिये। धन अनेक रूप इस प्रकार काजल, कल्पीक, धनु आदि महापुरुषोंमें पहले काजल पूर्वजन्ममें किये गये ज्ञान, धन एवं देवपूजा पुण्यकर्म ही दूसरे जन्ममें फलीपत होते हैं।

राज्य युधिष्ठिरने पूछा—सत्यम् । भगवन् विष्णु,  
शिव एवं ब्रह्मणोक्तं विद्ये । एतं विदितं विदितो  
देवः चास्मिन् भगव उक्तं वर्णनं करो ।

**धर्मदास श्रीकृष्णजी कहते हैं—**महाशय ! श्री, श्री, श्री  
 सरस्वती—ये तीन सब सही दानोंमें से मुक्त है ।  
 अतिदान कहे गये हैं । गवोंके दुग्ने, पृथ्वीको जोतकर  
 उपजने तथा विद्याके पढ़ने-पढ़ानेसे प्राप्त कुत्सोप उद्भूत होता  
 है । अन्न में दान देने योग्य नौके लक्षणों और गोदानकी विधि  
 यह है—महाशय । सुष्ट, सुन्द, सुकृत,

और त्वक्पूर्वक अभिहित करनेसे प्राप्त गौं श्रेष्ठ ब्राह्मणको देना चाहिये। घृष्टा, योगिनी, कपय, अङ्गहीन, भृशतस्त, दुर्गतिस्त्र और दुष्परिहित तथा अन्यत्पूर्वक प्राप्त गौंका कभी दान नहीं करना चाहिये। एकम् । किसी पुण्य दिनेसे जानकर पितरोका दर्शन ॥ यागवन् ॥ और विष्णुश्च ॥ और दुग्धसे ॥ करनेके ॥ सोनेकी सींगपुत्र, रौप्य खुरवाली, कर्णके दोहन-प्राप्तहित तत्पश्चात् गौंका पुण्य आदिसे परीक्षित पुत्र ॥ ॥ ॥ उसे यज्ञ तथा मरता आदिसे अर्पण कर ले। गौंको पूर्व या उत्तरार्धमुख चक्रा काला चाहिये। अन्यत्र दक्षिणको ॥ ॥ अङ्गहीनसे गौंका दान करना ॥ और त्वक्पूर्वक इत ॥ ॥ अक्षिण करनी ॥ ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पूजाविधिः ॥  
॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

(आजपर्यन्त १५६/२९-३०)

[illegible]

**सिलवनेनु-धाम्नी**

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—महाराज ! मैं  
भगवान् खराहूँ । मैं गये तिलधेन-ठनकी विधि ।

हूँ। जिससे वह ~~सहज~~ महत्प्राप्त करे तथा सभी उपकरणोंसे मुक्त हो जाता है और सर्वार्थे निवास करता है।

**१-आवकतर्जनी**    **प्रत्यक्षीयता:** ■    **■**    **टीका:** दुष्प्राप्त्युक्तं    **■**    **अर्थ:** कस्य    **महोदधि:** \* (उत्तरार्ध २५३:६)

२-समाचारसंग्रहकर्ता प्रत्येकदिने तद्विषयः परिशिष्टेन विहितः समयः विधानम् (अनुसूची १५४ (११))

■ भोगो नश्यन्ति गत्यो ■ मन्त्रः । च न लुपति न पुनो जग हर्षेण विवर्धते = (सुखीभूतत्वात्)

[illegible]

३. श्रीम्यादुष्टिदुष्टिनी तव्यः पुष्पी तव्यनी । (अष्टक १२३ (१८)











**सुवर्णचिन्मय-विधि**

[illegible]

**उत्तर ।** ■■■■ आइने ■■■ देखा, मन नि ■■■

निवास करते हैं। वे इस प्रकार हैं—नेत्रोंमें सूर्य और चन्द्रमा,  
 शिखरमें सरस्वती, [ ] परमात्म, [ ] अधिपतिकुमार,  
 [ ] [ ] और शब्द, चक्रवर्त्तमें गवर्ध्व और  
 अश्वत्थ, कुम्भमें पात [ ] योनिमें गङ्गा, ऐम्बकूपमें  
 शशिगन्ध, अम्बुदेवमें पुष्प, अर्धमें नाग, अस्त्रिकोपमें पर्वत,  
 [ ] चक्रवर्त्तमें पुष्पाक्ष, कुम्भमें [ ] वेद, चामलमें रुद्र,  
 पुष्पाक्षमें वैश्व [ ] समस्त भूतोंमें यमवान् विष्णु निवास  
 [ ] हैं। इस [ ] चक्र चक्रवर्त्तमें लक्ष्मिदेवकी और परम  
 [ ] हैं।

दुर्लभधेनुका भारत है, यहाँ  
एक बार है। इस कर्मधुनियें  
एक बहुत दुर्लभ है। इसलिये प्रपञ्चपूर्वक अध्ययनधेनुका  
करना चाहिये। इससे संसारसे उत्कार हो  
तथा शक्तिमान होती है। संपूर्ण  
कोरध पूर्ण हो जाते हैं और प्राप्ति  
है।

(अनुच्छेद १५६)

राष्ट्र-संघ-संस्था

धनवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—उत्तम् । ॥ श्री ॥  
 प्राप्य कन्येवासे अत्युत्तम राजकेतु-राजस्ये विधि ॥ ॥ ॥  
 किन्तु पुण्य दिगये धूमिले ॥ ॥ ॥ ॥  
 वेतुकी ॥ ॥ ॥ ॥  
 एक श्रेष्ठ लक्षण ॥ ॥ ॥ ॥  
 राजस्ये वेतु ॥ ॥ ॥ ॥  
 इवमासी पदरागादिनि तथा धरण्याये पुष्कराग स्वमित करे । ॥  
 गीते ॥ ॥ ॥ ॥  
 मोक्षी दोहों श्रीधर श्री गीत श्री दोहों ॥ ॥ ॥ ॥

राष्ट्रिय : [ ] सैन्य [ ] होमे चाहिये । [ ] जगह [ ]  
[ ] [ ] चाहिये । [ ] और नेत्र-परायणों से  
कोमेडक, पुष्पपात्रों से ही इन्द्रजील (मैलम), दोनों पार्श्वस्थानों में  
सी कैदुर्य (मिलरर), उदरम [ ] [ ] कटिदेशपर सौ  
सौगन्धिक (गन्धिक-सल्ल) [ ] [ ] चाहिये । धूर्तों से  
सर्वांग, धूर्तों से [ ] (मोतिचो) [ ] लक्ष्मणों से मुक्त कर तथा  
[ ] नवयौव सूर्यकमल तथा [ ] यथिपों से रचना [ ]  
कर्म और चन्दन से [ ] को ? । रोमों से केसर और नाभिकों  
[ ] [ ] [ ] स्वयं प्रसिद्धों से भगवान् चाहिये

1-नेत्रोः सर्वाङ्गिणी विद्या २-सहजः प्रज्ञा ३-मनः ४-बुद्धिः ५-चित्तं ६-आत्मन्

आपकी सव फाय है। सही तरीके से। सही तरीके से। सही तरीके से।

**पत्नी**      **समस्तभार्यसे**      **पेची**      **विवाहादिपी**

अथर्व वेदोक्तं अग्नेः चतुर्धा विद्युः । अग्नेः चतुर्धा विद्युः । पर्वतगणितम् विद्युः ।

**भारतमार्गवेलास**    **कले**    **जीवनीयः । इत्ये व मार्गेः कले रतः जीवितः ।**

पुष्पागणे शिन्धो मेरुद्विष्टः सर्वमन्त्रिणः । एवं सर्वमन्त्रे रक्षे स्वमन्त्रे विचारमन्त्रे ॥ (अनर्क १५३।१९-२०)

३-इसी आशय कोरें का करके बरखेको लोच, कौन न अन्ध-धन्धली बरखार कौन न होन कहिये, सबके पूर्व

अन्य रत्नोंको संधिभागोंपर लगाना चाहिये। सकारको, गोबरको गुड़से और गोमूत्रकी बीसी मचाना चाहिये। दलों-दुध प्रसवण रहे। पूँछके अग्रभागपर सदा सानके बस तबिकी चोहनी रखनी चाहिये।

इसी गौके चतुर्थांशसे बड़ा मचाना चाहिये। इसके धेनुको करे। सदा गुड़धेनुकी तल आश्विन कर यह मचाना चाहिये—देवि ! चूँकि हर पञ्चमा, ऋद्धा, विष्णु—ये सभी तुम्हें देवताओंका मानते हैं तथा समस्त विभूतय तुम्हारे तबिकी रहता है,

### उभयमुखी धेनु-दानका माहात्म्य

महारा सुधिहिरने पूछा—यहो ! उभयमुखी गौका प्रसवके समयमें गौका दान करने का क्या फल है।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महारा ! उभयमुखी गौ-दानका संयोग बड़े फायदे वाला होता है। बड़ाईके समय में और फिर बार दिखलायी दे उस समय वह गौ देने समझा प्यारी है<sup>१</sup>। ऐसी उभयमुखी गौके दान करने का फल नहीं। यह और दान जो फल देता है, वह

यह तुम पंचांगारसे विहित में ही पाओगे। इस करनेके बाद गौकी पूजा तथा चरित्रका कर भविष्यके सब कुछ प्रदान करने उस रत्नधेनुका दान ब्राह्मणको करे, अन्तमें क्षमा-प्रार्थना करे।

सम्पूर्ण जन्मेवासा जो पुरुष इस रत्नधेनुका दान करे, (कैलास सुमेरुसिंह दिव्य शिवधाम) प्राप्त करे। पुनः बहुत समयके बाद इस पृथ्वीपर दया होता और उसकी सम्पूर्ण क्षमता पूर्ण हो जाती है। (अध्याय १५७)

फल केवल उभयमुखी-धेनुके दानसे ही हो और है। सर्वसे, सुखोंको चाँदीसे तथा पूँछको अलङ्कृत कर जो उभयमुखी धेनुका दान करता है, वह गौ और बड़ाईके शरीरमें रोम हल्का स्वर्णमें पूजित होता अपने ठंडा कर है। जो सुवर्णसहित उभयमुखी धेनुका दान करे, उसके गोलेक और ब्राह्मणोंका सुख हो। दुर्बल, भयभीत गौ और दक्षिणासे नहीं बचता रहिये। (अध्याय १५८)

### गोसहस्रदान-विधि

महारा सुधिहिरने पूछा—अनन्त ! अब गोसहस्र-दानका विधान बतायें। वह किस समय किस विधिसे किया जाता है।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—अनन्त ! गौरी सम्पूर्ण और गौरी ही तब अग्रयणका है। संस्कारकी शिवे ब्राह्मण उसकी सृष्टि है। दोनों लोकोंके हितकी कथनासे गौकी सृष्टि प्रथम की गयी है। इनके मूल और पुरीषसे देवमंदिर भी पवित्र हो जाते हैं औरोंके लिये तो कहना ही क्या<sup>१</sup> ! गौरी काय्य बड़ेकी है,

इसी गौ देवताओंका निवास है। गोमयमें सब्राह्मण लायीका है। ब्राह्मण और गौ—दोनों एक। कुलके दो रूप हैं। एकमें मय अधिष्ठित है और एकमें हविष्य-पदार्थ। इसी पुरुषों से संसार और देवताओंका भरण-पोषण होता है। राजा, वेसी विशिष्ट गुणयुक्त गौके दानका विधान सुने। एकमात्र सर्वगुण तथा सर्वलक्षण-सम्पन्न गौका दान करनेपर समस्त कुटुम्ब तर जाता है, जिससे अधिक गौरी दानमें दी जाय तो उनके माहात्म्यके विषयमें क्या कहा जाय।

धर्मधन, देवधन और ईश्वरकी तब फल उपासी फलको फल देना ही बहुत बड़ा है। यदि कोई मनुष्य दान लेकर नहीं देवी जाय तो। इस कारण 'कलश'के 'हिन्दु संस्कृति-ग्रन्थ' से लेकर १९२८ के वर्ष तकका ग्रन्थमें बार-बार उल्लेख मिल मिल गया है।

१-अन्य पुराणोंमें भी इसका फल मया है और इसी पवित्रतासे राजाओंकी पृथ्वी पवित्रता पुनः कलश मया है।

२-यह पुराणोंमें देवताओंकी। गौरीके सम्पन्न। गौरीके लः (अनन्त १५९।२)



गौरी देनी चाहिये। इस प्रकार एक इच्छा गोदान करनेवाला यजमान एक दिने के लिये पुनः परोक्ष करे और इस प्रकार कर्म अनुकीर्तन स्वयं सुनने अच्छा सुने।

यदि उसे विपुल सम्पत्ति हो तो उस महाधर्म-व्रतका पालन करना चाहिये। इस विधिसे जो मनुष्य एक गोश्लोक दान करता है, वह

### कृषभदानकी विधि

पुत्रिहितने कहा—जगद्वन। अग्रे अमृतमयी मूत्रे सृष्टि नहीं हो रही और इदानीं एक कौतुहल है। तबने प्रसन्न है कि गौश्लोक स्वामी—गोपति (कृषभ) गोविन्दस्वरूप है, प्रभो ! प्राणीय कृषभ-दानका कृष करे।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—गम् । सुनि, वह कृषभ-दान पवित्रमें प्रविष्टतम और दानमें एक है। एक वह-पुत्र कृषभके दानका फल दस केन्द्रोंके दानसे अधिक है। वह-पुत्र, पुत्र, सुपुत्र, सुखी, कृष्ण और ककुद्भान् एक ही रूप सत्त्वगुणमय के दान उस दान करनेवाले सभी कुलोका उद्धार के आता है। पुण्यपर्वके दिन कृषभकी पूछी जाती लगतकर तथा करनेवाले उसे अलंकृत कर दे, तदनकर दक्षिणके साथ उस कृषभ दान महापुण्यको लेकर इस प्रार्थना करे—

धर्मदाय कृषभमेव महापुण्यदायकः ।

अहमुत्तरेतिहायकः सदायम् ॥

(अध्याय १६०१)

### कपिलदानकी विधि

महाराज पुत्रिहितने कहा—जगद्वन ! कपिल-दानका महापुण्य कालकेकी कृष करे, पापोंका नाश करनेवाला एवं फल पुण्यदा है।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महामते ! इस सम्पत्ति प्राचीन कालमें विनशाधने भगवान् कृष्ण परमेश्वरके संज्ञादके मुझे बताया था उसे सुने। परमेश्वरके पूजनेपर भगवान् वास्तव कह कि 'भद्र ! कालका गौके कर्तव्यसे सम्पूर्ण पापोंका नाश हो जाता है तथा यह फल पवित्र है। पूर्वकालमें ब्रह्माजीने सम्पूर्ण लोकोंका स्वरूप कर पढ़ने

होकर सिद्धों का सम्पत्ति सेवित होता है। वह पवित्रसे सुशोभित सुखी स्थान विमानपर अवस्थ होकर सभी देवताओंका पूजित होता है। गोश्लोक-दानसे पुण्य अपने इन्हीं पवित्रोंका उद्धार देता है। गोदानमें गौ, पात्र, एवं विभिन्न चीजें चाहिये। (अध्याय १५९)

इस विधिसे कृषभ-दान करनेवाले कर्तव्यके सत्तम जन्म पहलेके कर्तव्योंसे समाप्त कर इसके प्रभावसे उसी जन्म नष्ट हो जाते हैं। वह कर्तव्य कृषभपुत्र कर्मकाटी दिव्य विमानमें बैठकर पाल जाता है। महीपते। उस कृषभ स्त्रीमें विमान टेप है, उन्हीं द्वारा कर्तव्य का गोश्लोकमें पूजित होता है, इसके बाद गोश्लोकमें अवतीर्ण होकर इस लोकमें जन्म कुर्यात् महापुण्यके फलमें जन्म लेता है। वह कर्तव्य करनेवाला, महापुत्र केवल और सभी महापुण्योंका पूजित होता है। महापुत्र ! अपने जो वह पुत्र कि वह उत्तम कृषभदान करने करे, उसके विषयमें मैं बतला रहा हूँ। जो कर्तव्य, विवेक, वेदकेता, अधिसक और अतिशयसे इनेवाला, मनुष्योंका उद्धार करनेमें समर्थ तथा गुरुका हो। उसे पुत्र, पुत्र, कलवान्, भार-वहन करनेमें समर्थ और सब गुणोंसे उत्तम पुत्र प्रदान चाहिये। इस प्रकारसे एक कृषभका दान केन्द्र-दानसे भी अधिक है।

(अध्याय १६०)



उत्तर उसके गले एवं मस्तकके गिरे हुए जलमय त्र्यम्बक सिर शुक्लकर प्रणम करता है, वह पवित्र हो जाता है और उसे क्षम उसके पाप भय हो आते हैं। प्रातःकाल उत्तर विमाने कपिल गौरी प्रदक्षिणा करी, उसने मन्त्रे सम्पूर्ण पृथ्वीकी प्रदक्षिणा कर ली। यमुनामें। कपिल गौरी एक ब्रह्मका कलेवर भी इस जलमें किये हुए पाप नष्ट हो आते हैं। पवित्र जलके आचरण करनेवाले पुत्रमय कपिल गौरी मृत्युमें स्नान करने चाहिये। ऐसा करनेवाला मन्त्रे गङ्गा आदि सभी तीर्थमें कर मुक्त। भक्तिपूर्वक एक बार कपिलमय भोगवाले स्नान करनेपर मनुष्यके जीवनपरम किये हुए पाप नष्ट हो आते हैं। एक हजार गौरी स्नान कर एक कपिल गौरी स्नानके समान है। गौरीकी यज्ञपूर्वक स्नान करनी चाहिये। गौरी दूध-दाई, भुग, गोमूत्र, गोमय आदिको अर्पित नहीं करना चाहिये। गौरीके शरीरको कुजलना और उनकी सेवा करना परम सेवा धर्म माना गया है। गौरी का एक एक छोटी छोटी आली पल्लवमाला सेवा करनी चाहिये। गौरीके किये गरी-गरी गोबरभूषण का करता है, वह गौरी के कपिल परम प्राप्त करता है। साक्षात् ब्रह्मजीने कपिल गौरी दस केट पहनाये हैं। इस कपिल गौरी जो श्रेष्ठ ब्रह्मको दान है वह अमरमयसे अलंकृत दिव्य विमानपर होकर सर्ग जाता है। सोनेके समान रंगवाली कपिल प्रथम श्रेणीकी है और गौरी मित्रलक्ष्मणवादी द्वितीय। त्रिलोक-पीले नेत्रवाली, चौबी आँखोंके समान नेत्रवाली, जुहूके चर्चवाली, छठी मित्रलक्ष्मणवाली, उबली-पीली, अठारवीं दुग्धलक्ष्मण समान पीली, पदलक्ष्मणवाली दसवीं पीले पैरवाली। ये सभी कपिलमय संसार-सागरसे बहार कर देती हैं, इससे संसार नहीं। जो शुद्ध होकर कपिलमय दान लेता है और उसका दूध पीता है, वह पवित्र होकर मुक्त हो जाता है और अनायें नष्टमें जाता है। इसलिये किसी ब्रह्मणेतरको कपिलमय दान नहीं लेना चाहिये। श्रेष्ठ, धनहीन, सदाचर वचन अधिकारी ब्रह्मणको एक कपिल गौरी दान करनेसे दान सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो जाता है।

गृहस्थ पुण्यको चाहिये कि वह देनेके लिये कष्टकर प्रसन्न करनेवाली वस्तु का चालन करे। जिस समय वह कथिल वस्तु स्थितिमें हो उसी समय उसे गृहस्थको कर देना चाहिये। अब उत्पन्न होनेवाले कष्टकेका मुक्त बन्धनके कारण दीजने लगे और दोष अङ्ग अभी भीतर ही रहें, अर्थात् अभी पूरे गर्भवत् उसने मोक्षन (बाहर नहीं निकल, तबतक वह वस्तु सम्पूर्ण पृथ्वीके स्थान भावी आती है। कहिये ! ऐसी गणना दान करनेवाले पुण्य गृहस्थान्तिकसे सुप्रीति होकर गृहस्थको उतने करोड़ पुण्य करता है, जिससे कि वेनु और कष्टकेके ऐन्दवीय संस्कार होती हैं। गृहस्थ को गृहस्थ करने के कथिल गौण दान से सदा दूर वस्तु का पुण्य गृहस्थके हाथपर रह दे। यह लेखन सुद्ध भागीमें गृहस्थमें संस्कार पड़कते। पुण्य इस प्रकार (उभयमुखी गौण) दान करता है, उसने अपने समुद्रों की ओर धर्मों, वनों की ओर शक्तिपूर्ण समुद्रों पृथ्वीका दान कर दिया—इन्हीं की ओर नहीं। ऐसा वस्तु इस गौण ही पृथ्वी-दानके पुण्य भागी है। अब गौण प्रसन्नतापूर्वक भगवान् विष्णुके पास पहुँच है। गृहस्थको दान होनेवाला, गर्भवत् करनेवाला, दुसरोसे उतनेवाला, केवलिक, शक्ति, गृहस्थको विदक और सात्विकी केवलिक गौण पात्र सदा काव्य है। किन्तु ऐसा जोर पक्ष गृहस्थके सुखोंमें पुनः उभयमुखी सफल मुक्त हो है। दानको चाहिये कि उस भोजन की अथवा दूधके ही सहारे रहे। जो इस कष्ट उभयमुखी कथिल गौण दान करता वह सम्पूर्ण पृथ्वीके दानका फल प्राप्त कर लेता है। जो व्यक्ति अन्तःकाल ठठकर समाहितचित्तसे तीन भोजनपूर्वक इस कष्ट—'गौण-विष्णु'को पढ़ता है, उसके वर्षभरके किये हुए पुण्य उसी दान इस प्रकार रह हो है, जैसे वायुके झोंकेसे धूलके समूह। पुण्य शब्दके अवसरपर इस परम पावन प्रसन्नता करता है, उस कुटुम्ब पुण्यके अंशमें दान जाते हैं और फिर उत्तरी वस्तुओंको

[illegible]



प्रश्न-पर्यन्त संतुष्ट रहते हैं। जिससे जो पत्र पुरुषोंसे होता है, वे सबेरे का गोबर-मूत्र पृथिकी का करनेसे दूर हो जाते हैं। एक हजार वर्ष मुझे दाँतों से कल कात्ताना गन्ना है, बाड़ी कात्त गोबर-उत्तानसे मृत्तिका का देनेसे घात हो जाता है। नयेरुम। इनसे बाँधित गोबरों का करनेसे समस्त पुत्र गोबर-मूत्र पृथिकी देनेसे घात हो है। सागर अर्द्ध अनेक राजाओंने पृथिकी उत्ताने कात्त है, संतु अपने-अपने जिससे पृथिकी कात्त मृत्तिका, सप्रेमसे कर आत हुआ। अर्द्धात्तान, बाँधने के पत्र और अनेक और इनकी दाँत कात्त पृथिकी करनेवालेके समीप नहीं आती। चित्रात्त, मुत्तु, अनेक का अर्द्ध पृथिकीवाली करते हैं। राजा कात्त कर, अनेक देवता और अमृताना पृथिकी कात्त करनेवालेकी दूत करते हैं, सब ये ही हैं। अर्द्ध प्रसक्तसे पुत्र करता है। जिस भीति माता अपनी संतानका और गी जैसे अपने कात्तान दूध आँधिके हाथ धारण करता है, उसी प्रकार रखवाली पृथिकी देनेवालेकी दूध और धारण-वेधन है।

■■■■■ बीच अंगुरित होते हैं, वही ■■■■■  
 भूमिदानसे सब मंगेरेय ■■■■■ सफल सिद्ध होते हैं ।  
 विश्व ■■■■■ सुखी उदय होते ■■■■■ उनके प्रकाशसे ■■■■■ दूर  
 ■■■■■ जात है, ■■■■■ भूमि के दानसे सभी प्रकारके पाप ■■■■■  
 ■■■■■ है ।

भूमिको एक देकर लेनेवालेको समस्त धारण  
पूरा तथा संनिहित हो बुझ्छौं कालो है ।  
अर्थात् यी गरी अन्तः दुखे दी गरी  
भूमिका व्यक्ति अन्याय करता है, प्रत्यक्षपरिणत  
अन्याय रहता है। यन्त्रो मध्य भूमिको  
अन्तर दृष्टित व्यक्तिको देने-बलावनेको अनुविन्दु गिरते  
भूमिका कार्यवाही नरकमें  
है। भूमिकान देकर जो व्यक्ति पुनः उस  
भूमिका द्वारा करता है, उद्यम लक्षण कुम्भीपाक  
प्रकारका जल है। दिग्ग इन्द्रा ब्रह्मा व्यक्ति  
कुम्भीकरणसे निकटतम इस भूमियर जान्य और सात  
प्रकारको कह्योको योगदा रहता है। इसलिपो  
कह्यो (अध्याय १४५)

[illegible]

**महाराज बुद्धिजीविने कहा —** वाक्य । भूमिका दान ।  
 क्षयित हो कर समझे है, [ ] क्षयित । भूमिका [ ]  
 करनेमें, उसका [ ] करनेमें और उसके [ ] करनेमें [ ]  
 होते । और क्षेत्रोंसे न तो भूमिका दान को [ ] है, न ही  
 उसका महत्त्व [ ] हो सकता है। अतः आप [ ] ऐसा [ ]  
 करावेंगे जो भीष्टाओंके सम्मान हो।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महाराज ! ■■■ पृथिवी  
 टूटन सम्भव न हो तो भूकम्पके द्वारा भूकम्पलक्षी अशुद्धि  
 बन्दकर और नदी-पर्वतोंको रेखांकित कर उसे ही ■■■ कर देना  
 चाहिये । इससे सम्पूर्ण पृथ्वीके टूटनका फल प्राप्त ■■■ है ।  
 ■■■ ये ■■■ रक्त हैं ।

सूर्य-वन्दन-प्रारम्भ, जन्मनाम, विष्णुमंत्र, मुद्रादि  
 तथा अथानुष्ठानादि अष्टादि पुण्य समन्वये धर्मधन्य और  
 प्रसिद्धि स्थिते इस मानस्ये कल्याण चरित्ये ।

समयोंमें जब मन एकाग्र हो जाय, इस क्षणमें विष्णु आ सक्रिय है। एक ही क्षणमें लेखक कथ-के-कथ पाँच पल्लवक अभ्यास करता है। **अनुसूचक** अनुसूचक सुवर्णवर्षी जम्बूद्वीपके आकारमें पृथ्वीकी प्रथिम बङ्गनी कहिये। जिसके मध्यमें मेरु पर्वत तथा ब्रह्मरन्ध्र अन्य पर्वत उद्भूत हैं। वह पृथ्वी मत्स्यसम्पन्न तथा लोकपालसे रहित, लङ्का, शङ्कर आदि देवताओंसे सुनोभित है। **आभूषणोंसे** अलंकृत हो, **जैसे** हाथ लङ्का-चौड़ा तोरणपुल्ल वार द्वारोत्तरा एक सुन्दर मण्डप बन्दर द्वारों वार द्वारों में बँटी बनानी **विष्णु** ईशानयोगमें **देवताओंका** करे और उद्विग्नयोगमें कुम्भ बन्दे। **पञ्चम-तोरण** आदिसे मण्डपमें लम्बा ले। अनन्तर पञ्चलोकपाल और नवग्रहोंका चन्द्रोपचार पूजन करनेके बाद ब्रह्मसे हवन करना चाहिये। ब्रह्मजगत्तुल्य धर्मिक स्वयं तथा महालोकेश्वरपर्वक मेरी, नरक इत्यादि पाशोंकी ध्वनिके साथ





मगधमन् श्रीकुन्जले पुनः कदा—मगधराज ! ॥ मैं ॥  
 ॥ आपका-दानकी विधि क्या रहा है, क्या ब्रह्मपूर्वक मुने ।  
 बुद्धिमन् व्यक्तिको चाहिये कि ॥ और करकलाय विचारकर  
 शुच मुहूर्तमें अगर, बदन, धूप, पुष्प, धन, उग्रपूजन, वैष्णव  
 आदिसे भारीव (कुन्जार) ॥ ऐसा सम्पन्न करे, जिससे  
 संतुष्ट हो और उससे निवेदन ॥ महाभाग ! अगर  
 विश्वकर्मास्वरूप है । आप मेरे लिये सुन्दर छोटे-बड़े मिट्टीके  
 भड़े, स्याली, कसौरी, कलरा आदि पाखोय निर्माण करें ।  
 भारीव भी उन ॥ बनये । तदनन्तर विधिपूर्वक एक  
 आँई—भट्टी लाइये । अनन्तर उन एक हजार मिट्टीके पाखोयो  
 ॥ स्थापित कर सायंकालके समय उसमें अग्नि प्रज्वलित  
 करें और ॥ कागजका धूप, गीत, नृत्य ॥  
 व्यवस्थाकर उसका मन्त्रये । सुप्रभात होते ही ब्रह्मपुत्र ॥  
 आशिको शापकर पाखोयो बाहर निकाल ले । अनन्तर ब्रह्मपुत्र  
 शेष बका पवनकर उनमेंसे सोलह पाखोयो सम्मने स्थापित करे ।  
 रातबजसे उठे आचार्यदितकर मुखमलामोसे उसका ॥  
 करे और ब्राह्मणोंद्वारा स्तुतिप्रार्थना आदि करकर भारीवका भी  
 पूजन करे । ये पात्र महीपूज, सोने, ॥ अथवा मिट्टीपाखोये  
 हो सकते हैं । सौभाग्यवती ॥ ॥ ॥



है, जिससे मुझे उत्तम भोजन नहीं मिलता। आप कृपया ऐसा कोई उपाय [ ] [ ] [ ] यह दुःख दूर हो जाय।

**ब्रह्माजी बोले—**एजन् ! अपने अनेक प्रवासके दिन दिने हैं, बहुत-से यज्ञ किये हैं और गुण्यजनों को भी संतुष्ट किया है, परन्तु माहात्म्यको खातिर उत्तम व्यञ्जनको भोजन नहीं कराया। भगवान् न करनेसे ही आज आपकी यह दश हो रही है। [ ] [ ] [ ] नहीं। [ ] [ ] अन्तः जानना चाहिये। इसलिये अब आप पुष्पीय जाकर केदारनाथ जाननेवाले कुलीन ब्राह्मणोंको भोजन करावें। [ ] [ ] यह कुछ दूर हो जायगा।

**ब्रह्माजीका** भवन सुन्दर राजा केने पुष्पीय जाकर महर्षि अगस्त्यजीको परमपतिसे भोजन कराया और अपने गलेकी दिव्य एकमल्ली (माला<sup>१</sup>) [ ] [ ] समर्पित किया। अगस्त्यजीने भोजन कराते ही राजा को संतुष्ट हो गये [ ] सभी देवता बड़ा आनन्द [ ] अदरपूर्वक राजाको विभावने [ ] आलोक करते गये। औरअगस्त्यजीने जब राजाका वध कर दिया, [ ] का एकमल्ली अगस्त्यजीने औरअगस्त्यजीको दे [ ] वह आनन्दनाथ ही माहात्म्य है।

येरा वचन सत्य [ ] [ ] [ ] कोई उत्तम पदार्थ नहीं है। [ ] [ ] प्रण है। अतः [ ] तेज, [ ] और सुख है। इसलिये अमृतदातृ ब्रह्मदातृ है। भूखा व्यक्ति जिस दुःखे व्यक्तिसे घर [ ] करके जाता है और [ ] संतुष्ट होकर आता है वो व्यक्ति देनेवाला व्यक्ति भव्य हो जाता है, उसके समस्त पुण्यकार्य [ ] कीन [ ] ? टीका-प्राप्त [ ] करिष्य गौ, यज्ञिक, राज, विष्णु तथा महोपाधि—ये [ ] दर्शनमन्त्रसे [ ] [ ] है। इसलिये घरपर अपने भूखे व्यक्तिको जो भोजन न दे सके उसका गुणस्वात्तम व्यर्थ है। उसके मित्र कोई अधिक सम्मान नहीं रह सकता। पशुजनों दुष्कृत अर्थात् किन्तु कुछ दुष्ट [ ] अन्तर्ग [ ] [ ] इसलिये [ ] ऐसे व्यक्तिना भव्य खाता है, वह अन्न देनेवालेके दुष्कृतका [ ] मक्षण करता है। इसके विपरीत अमृतमय [ ] पदार्थका भोजन करनेवाले [ ] महीनका [ ] पुण्य

अमृतमयके प्राप्त [ ] [ ] है। [ ] अन्तर्ग [ ] इतना [ ] है, उसका दान [ ] नहीं करते ? (अर्थात् थोड़ा-बहुत अत्यन्त करो, [ ] चाहिये।) जो व्यक्ति ब्राह्मण-असिषि अर्थात् भोजन [ ] करने [ ] भिक्षा देनेके पूर्व [ ] [ ] कर [ ] है, वह [ ] पाप [ ] मक्षण करता है। [ ] [ ] दान [ ] या [ ] [ ] माहात्म्यको भोजन [ ] है, उसने [ ] ब्रह्मलोकायें अपना [ ] बना लिया।

[ ] कराने करानेसे देवता और ब्राह्मणोंका पूजन होनेका सम्भव [ ] वैद्य राजा [ ] करती दुःखाने एक [ ] एक [ ] दिया और वह उस अंशको छोड़कर [ ] अन्तर्ग चली [ ] वैद्यने अंशको देखा और उसका [ ] [ ] रक्षा करने लगा। [ ] समय [ ] छोड़कर कृष्ण [ ] बन्धन [ ] निकला। उस [ ] [ ] प्रतिदिन [ ] था। [ ] सर्प भी [ ] पैरोपर लोटता, उसके अङ्गुलीको चाटा और पूरे घरमें [ ] [ ] घुमता चला। वैद्य भी [ ] [ ] करता। [ ] [ ] समयमें वह धर्मकर सर्प [ ] गया। [ ] समयकी बात है, [ ] बनेकर गङ्गा-जाल करनेके लिये गया था [ ] [ ] दुष्कृतका वैद्यका सामान [ ] रहा था। उसी समय वह सर्प उस लड़केके [ ] [ ] निकला, [ ] वह [ ] कर गया और उसने सर्पको डोहते करा। चोट [ ] [ ] [ ] वैद्यपुत्रके सिरपर [ ] गया और त्रैलोक्य होकर कहने लगा—‘भूर्ध’। [ ] तुम्हारे [ ] सारण्ये हैं और तुम्हारे पिताने ही मेरा पालन-पोषण किया है, इसलिये [ ] तुम्हारा [ ] भला [ ] [ ] था, परन्तु तुम्हने [ ] [ ] ही प्रार्थित किया है, इसलिये अब मैं तुम्हें [ ] नहीं छोड़ूँगा। [ ] [ ] [ ] कहनेके साथ ही वैद्यके धर्म दुःखी हो सब रेतने लगे।

उसी [ ] अमृत, गोविन्द, अमृत आदि भाग्यवान्के [ ] [ ] करता हुआ जान कर [ ] बनेकर भी घर आ गया। पुत्रकी [ ] [ ] [ ] उसने सर्वसे कहा—‘पद्मग’। [ ] मेरे पुत्रके [ ] [ ] पद्म फैलाये बसो [ ] [ ] ? [ ] [ ] ही कहा गया [ ] कि भूर्ध मित्र और हीन

१-मालाका कोली काका [ ] [ ] है, किन्तु [ ] राजका [ ] [ ] [ ] [ ] [ ] और गङ्गा [ ] [ ] है। बड़ा [ ] [ ] जग केन्द्र गौरी [ ] अमृतमयी बात [ ] है।





केवल अन्तर्ही पेट भरता है, वह भिक्षा होते हुए भी मरे हुएके समान है। यही सोचकर मैं उन ब्राह्मणोंसे कहा कि आपलोग त्रिकलाश्र और शन-विज्ञानमें लगे हैं और कि जितने परीभूत होकर हैं अन्तर्ही हैं। अब कोई ऐसा ब्राह्मण बतानेभी कुछ बर्तिये जिससे कि पाई, कम्प, मित्र, पुत्रसहित आपलोगोंके लिये भी भोजन आदिवा प्रणय हो सके, अन्तर्ही इस निर्जन कर्ममें हमें क्या कर्म मिलता है। मैं इस प्रकारके वचनको सुनकर मैत्रेय मुझे मुझसे कहा कि बर्तिये। एक प्राचीन मुशाना मैं दिव्य दृष्टिसे देखा है, जिसे मैं बत रहा हूँ, आप अपनेसे सुनें।

किन्ती समय एक लगेवन्तमें कोई दुर्गा, दंडा, ब्राह्मणोंकी ब्राह्मणी निवास कर रही थी। वह इस दशमें भी प्रतिदिन ब्राह्मणोंका पूजन किया करती। उन्हीं रात-रातके परिपूर्ण ब्राह्मणोंके देखकर एक दिन ब्राह्मणोंने प्रसन्न होकर उससे कहा—‘सुनो। हमलोग तुमसे बहुत प्रसन्न हैं, तुम कोई बर माँगे।’ तब ब्राह्मणोंने कहा—‘महात्म्य ! किन्ती बर अथवा जानकी ऐसी विधि बतानेकी कुछ बर्तिये, जिससे जगत्में मैं भीतरी त्रिप, पुत्रपत्नी, सौभाग्यपत्नी, अथवा तब त्रिपत्नी प्रसंगिक योग्य हो जाऊँ।’

ब्राह्मणोंका यह वचन सुनकर ब्राह्मणोंने कहा कि ब्राह्मण ! मैं तुम्हें सभी मनोरथोंको पूर्ण करनेवाले स्वामीदासकी विधि बता रहा हूँ। तीन सौ पल, दो सौ पचस पल अथवा एक सौ पचीस पल तनिका यह कर्ममें अथवा सामर्थ्य न हो तो मिट्टीकी उत्तम हड्डी बना ले। वह गहरी और गूँथ हो। उसे दूग तब जायलसे बने पदार्थसे ढाकर चन्दनसे वर्णित कर एक पञ्चदशके बर्तनमें लपेटा कर लें तथा उसके समीप लवण, शक्कर, जलपत्र, चोखा पात्र रखे और पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, कर्पूर आदिसे उत्तम पूजन करे और इस प्रकार उस पात्रकी प्रार्थना करे—

उत्तमपञ्चदशपादार्थसामर्थ्यः सत्परीक्षितः ।

उ प्रवेद्योत्तमसिद्धिर्भूतानां भिक्षा भिक्षा ॥

उ सिद्धिः सिद्धिकामायां उ पुष्टिः पुष्टिनिष्ठायां ।

अतस्तत् प्रणयामासु सर्वं कुरु यत्ते नमः ॥

इतिवन्मुमुक्षुर्हो भिक्षा प्रणयने नमः ।

अधुनायति तन्नीचाम् तन्ना भव वरप्रदा ॥

(अध्याय १७० । २२—२४)

इत्यादि बात यह है कि समीप ही प्रस्थित भक्ति हो, चायल हो तथा बल भी हो, किन्तु यदि स्वासी (बटलोई) न हो तो भोजन नहीं पचता वा सकता। लक्ष्मी ! तुम सिद्धि पावनेवालोंके लिये सिद्धि तथा पुष्टि पावनेवालोंके लिये पुष्टि-लक्षण हैं। मैं तुम्हें प्रणय करता हूँ। मेरी बातको सत्य करो। मेरे इतिवर्ण, सुहृद्वर्ण, कन्धुवर्ण तथा पुत्रवर्ण आदि वचनको भिक्षा न मान ले, बल्कि तुम्हें-से भिक्षा ही नहीं—ऐसा वा प्रदान करो।

तब मध्य पढ़कर वह पात्र द्विकोहलसे दान कर दे। यह दान उज्ज्वर, संकाशित, चतुर्दशी, अष्टमी, एकादशी जगन्मा सुतीतको करन चाहिये। ब्रह्मणोंका यह उपदेश श्रवणकर वह ब्राह्मणी तब ब्राह्मणोंको दक्षिणासहित स्वामीदास देने लगी। धर्म ! उसी पुत्रके प्रधानसे जगन्मायें कही ब्राह्मणी हीपदी-कर्मसे मुक्तरी प्राप्त हुई है और दान देनेमें हीपदीका साथ काफी रूप नहीं योग्य; क्योंकि यह हीपदी, सती, रात्री, स्वहा, लक्ष्मी, वृ, अलक्ष्मी तथा सत्यकी कर्ममें यहाँ रह रही हो, कहीं फिर सैन-स पदार्थ दुर्लभ हो सकता है। इसका बतकर मैत्रेय मुझे कहा कि महात्म्य भुविष्ठिर ! यह हीपदी अपनी स्वामीसे मात्र दे तो सम्पूर्ण जगत्को सुप्त कर सकती है, फिर तब तन्मय ब्राह्मणोंके भोजन आदिके विषयमें आप क्यों विचित्र होतें हैं ?

मैत्रेय ! ऐसा वचन सुनकर कावन् ! हमलोगोंने भी वीर ही भिक्षा और सभी पौर्णिकोंका साथ ब्राह्मणोंको मित्र भोजन किया लगे। प्रभो ! आज्ञादत्तके प्रसंगसे वह स्वामीदासकी विधि मैं कही, इसलिये आप मेरी भूतताको क्षमा करें। जो व्यक्ति सुन्दर लक्षणोंकी स्वामी बनकर चायलोसे तब भक्कर पर्व-दिनमें इस विधिसे ब्राह्मणोंको देता है, उसके घर कुम्हार, समन्धी, कम्प, मित्र, पुत्र और भक्ति त्रिप भोजन करे। ये भोजनकी कर्म नहीं होती।

(अध्याय १७०)

# गीताप्रेससे प्रकाशित कल्याणके पुनर्मुद्रित पुराण-साहित्य

महाभारत-सटीक, सचित्र, सलिल [ कोड नं० 728 ]—यहाँ, अर्थ, काम, मोक्षके महान् उपदेशों एवं प्राचीन ऐतिहासिक घटनाओंके उल्लेखसहित इसमें ज्ञान, वैराग्य, भक्ति, योग, नीति, सदाचार, अभ्यास, राजनीति, कुटनीति आदि मानव-जीवनके अनेकों विषयोंका विशद वर्णन है। इस ग्रन्थ संहिता महाभारत (केवल भाग) (कोड नं० 39, 511), सचित्र, सलिल के अनेक भागों (कोड नं० 728) भी उपलब्ध हैं।

संहिता पञ्चपुराण सचित्र, सलिल [ कोड नं० 44 ]—इसमें कर्मात् विष्णुके महात्म्यके साथ भगवान् श्रीकृष्ण तथा श्रीकृष्णके अवतार-चरित्रों एवं उनके परापरकर्मोंके विशद वर्णन, एकदली महात्म्य, शास्त्रप्रामाण्य और उनकी महिमा, गुणसौबिधकी महिमा आदि अनेक विषयों पर विस्तृत वर्णन है।

संहिता एकपुत्रपुराण सचित्र, सलिल [ कोड नं० 238 ]—इसमें भगवान् श्रीकृष्णकी महिमा, सती-चरित्र, त्रिवर्णाक्षी-विवाह, कुमार आदि अनेक विषयोंका विशद वर्णन है। इसमें अनेक विषयों एवं बहुत-से रोचक, उत्प्रेरक इत्यादि अनेक अर्थोंके चरित्रोंका भी विस्तृत वर्णन है।

संहिता श्रीमद्देवीभागवत सचित्र, सलिल [ कोड नं० 1113 ]—इसमें परमात्मिका परमात्मिकी प्रकृति-तत्त्व-महिमा आदिके अनेक विषयोंपर विस्तृत वर्णन है। इसमें भगवान् श्रीकृष्णकी महिमा, सती-चरित्र, त्रिवर्णाक्षी-विवाह, कुमार आदि अनेक विषयोंका विशद वर्णन है। इसमें अनेक विषयों एवं बहुत-से रोचक, उत्प्रेरक इत्यादि अनेक अर्थोंके चरित्रोंका भी विस्तृत वर्णन है।

संहिता शिवपुराण सचित्र, सलिल [ कोड नं० 789 ]—शिवपुराणका यह संहिता अनुवाद-परम्परा है। इसमें शिव-विष्णु, तत्त्व-तत्त्व, सचित्र, सलिल आदि अनेक विषयोंका विशद वर्णन है। इसमें अनेक विषयों एवं बहुत-से रोचक, उत्प्रेरक इत्यादि अनेक अर्थोंके चरित्रोंका भी विस्तृत वर्णन है।

संहिता महाभारतपुराण सचित्र, सलिल [ कोड नं० 631 ]—इसमें कर्मात् श्रीकृष्णकी महिमा, सती-चरित्र, त्रिवर्णाक्षी-विवाह, कुमार आदि अनेक विषयोंका विशद वर्णन है। इसमें अनेक विषयों एवं बहुत-से रोचक, उत्प्रेरक इत्यादि अनेक अर्थोंके चरित्रोंका भी विस्तृत वर्णन है।

श्रीमद्भागवत सचित्र, सलिल [ कोड नं० 26, 27 ]—इस महाभारतमें सत्य-भक्ति, मित्र-भक्ति, यथा-भक्ति, पुत्रि-भक्ति, अनुग्रह-भक्ति आदि अनेक विषयोंका विशद वर्णन है। इस ग्रन्थका मूल-अर्थोंका अनुवाद दो खण्डोंमें (कोड नं० 56, 57), भागवत सुभाषण (कोड नं० 28), सुक-सुख-समय (कोड नं० 252) सम्पूर्ण भागानुसार, मूल-महाभारत (ग्रन्थकार) आदि अनेक विषयोंका विशद वर्णन है।

महाभारत-सलिलभाग हरिवंशपुराण सचित्र, सलिल [ कोड नं० 38 ]—इस ग्रन्थमें कर्मात् श्रीकृष्णकी अर्पणित रामायणी कथाओंके अनेक विषयोंका विशद वर्णन है। इसमें अनेक विषयों एवं बहुत-से रोचक, उत्प्रेरक इत्यादि अनेक अर्थोंके चरित्रोंका भी विस्तृत वर्णन है।

सं० ब्रह्मपुराण सचित्र, सलिल [ कोड नं० 1111 ]—इसमें ब्रह्म-विष्णु, तत्त्व-तत्त्व, सचित्र, सलिल आदि अनेक विषयोंका विशद वर्णन है। इसमें अनेक विषयों एवं बहुत-से रोचक, उत्प्रेरक इत्यादि अनेक अर्थोंके चरित्रोंका भी विस्तृत वर्णन है।

सं० मार्कण्डेयपुराण सचित्र, सलिल [ कोड नं० 539 ]—इस पुराणमें दुर्गासप्तशतीकी कथा एवं देवीका महात्म्य, हरिवंशकी कथा, महाभारत-चरित्र, अग्नि-अनुष्ठीका आदि अनेक विषयोंका विशद वर्णन है। इसमें अनेक विषयों एवं बहुत-से रोचक, उत्प्रेरक इत्यादि अनेक अर्थोंके चरित्रोंका भी विस्तृत वर्णन है।

सं० पारवपुराण सचित्र, सलिल [ कोड नं० 1113 ]—इसमें सदाचार-भक्ति, यथा-भक्ति, पुत्रि-भक्ति, अनुग्रह-भक्ति आदि अनेक विषयोंका विशद वर्णन है। इसमें अनेक विषयों एवं बहुत-से रोचक, उत्प्रेरक इत्यादि अनेक अर्थोंके चरित्रोंका भी विस्तृत वर्णन है।

श्रीविष्णुपुराण सचित्र, सलिल (हिन्दी-अनुवाद) [ कोड नं० 1264 ]—यह विष्णु-भक्तिका मूलग्रन्थ है। इसमें श्रीविष्णुकी महिमा, सती-चरित्र, त्रिवर्णाक्षी-विवाह, कुमार आदि अनेक विषयोंका विशद वर्णन है। इसमें अनेक विषयों एवं बहुत-से रोचक, उत्प्रेरक इत्यादि अनेक अर्थोंके चरित्रोंका भी विस्तृत वर्णन है।

श्रीविष्णुपुराण-सम्पूर्ण, सचित्र, सलिल (कोड नं० 48) प्रकाशनमें पहलेसे ही उपलब्ध है।

|      |                                    |                |     |      |                       |                |     |
|------|------------------------------------|----------------|-----|------|-----------------------|----------------|-----|
| 1184 | श्रीकृष्णार्जुनसंवादनम्            | (अष्टाध्यायम्) | १)  | 631  | श्री० ब्रह्मसंहितासु  | (अष्टाध्यायम्) | ४०) |
| 749  | ईश्वरार्जुनसंवादनम्                | (अष्टाध्यायम्) | २)  | 1185 | अथवाक्य-संहिता        |                |     |
| 835  | शिवार्जुनसंवादनम्                  | (अष्टाध्यायम्) | ३)  |      | संस्कृत-अनु           | (अष्टाध्यायम्) | ४१) |
| 41   | शक्ति-अनु                          | (अष्टाध्यायम्) | ४)  | 372  | वाक्यिक और पुनर्व्यास | (अष्टाध्यायम्) | ४२) |
| 616  | योगसूत्रम्                         | (अष्टाध्यायम्) | ५)  | 317  | श्रीमद्भगवद्गीता-अनु  | (अष्टाध्यायम्) | ४३) |
| 627  | संन-अनु                            | (अष्टाध्यायम्) | ६)  | 1113 | भक्तिप्रदीपिका        | (अष्टाध्यायम्) | ४४) |
| 604  | सामान्य-अनु                        | (अष्टाध्यायम्) | ७)  | 657  | श्रीमद्भगवद्गीता-अनु  | (अष्टाध्यायम्) | ४५) |
| 1104 | भगवद्गीता                          | (अष्टाध्यायम्) | ८)  | 42   | श्रीमद्भगवद्गीता-अनु  | (अष्टाध्यायम्) | ४६) |
| 39   | सं० ब्रह्मसंहिता                   | (अष्टाध्यायम्) | ९)  | 791  | सुख-अनु               | (अष्टाध्यायम्) | ४७) |
| 511  | (श्री कृष्णार्जुनसंवादनम्)         |                |     | 384  | श्री० ब्रह्मसंहितासु  | (अष्टाध्यायम्) | ४८) |
| 7002 | श्री० ब्रह्मसंहितासु               | (अष्टाध्यायम्) | १०) | 386  | शिवार्जुनसंवादनम्     | (अष्टाध्यायम्) | ४९) |
| 44   | सं० पञ्चपुराण                      | (अष्टाध्यायम्) | ११) | 628  | श्रीमद्भगवद्गीता-अनु  | (अष्टाध्यायम्) | ५०) |
| 639  | सं० मारकण्डेयपुराण                 | (अष्टाध्यायम्) | १२) | 653  | श्रीमद्भगवद्गीता-अनु  | (अष्टाध्यायम्) | ५१) |
| 1111 | सं० ब्रह्मसंहिता                   | (अष्टाध्यायम्) | १३) | 448  | भगवद्गीता-अनु         | (अष्टाध्यायम्) | ५२) |
| 43   | मार्ग-अनु                          | (अष्टाध्यायम्) | १४) | 1046 | शिवार्जुनसंवादनम्     | (अष्टाध्यायम्) | ५३) |
| 639  | इश्वरार्जुनसंवादनम्                | (अष्टाध्यायम्) | १५) | 1189 | श्री० ब्रह्मसंहितासु  | (अष्टाध्यायम्) | ५४) |
| 516  | शिव-संस्कृति-अनु                   | (अष्टाध्यायम्) | १६) |      |                       |                |     |
| 379  | सं० स्कन्दपुराण                    | (अष्टाध्यायम्) | १७) |      |                       |                |     |
| 40   | भगवद्गीता                          | (अष्टाध्यायम्) | १८) |      |                       |                |     |
| 573  | बालक-अनु                           | (अष्टाध्यायम्) | १९) |      |                       |                |     |
| 1163 | सं० मारकण्डेयपुराण                 | (अष्टाध्यायम्) | २०) |      |                       |                |     |
| 48   | श्री श्रीविष्णुपुराण               | (अष्टाध्यायम्) | २१) |      |                       |                |     |
|      | (हिन्दी-अनुवादसहित)                | (अष्टाध्यायम्) | २२) |      |                       |                |     |
| 667  | संनकाजी-अनु                        | (अष्टाध्यायम्) | २३) |      |                       |                |     |
| 987  | सामान्य-अनु                        | (अष्टाध्यायम्) | २४) |      |                       |                |     |
| 636  | श्रीमद्भगवद्गीता                   | (अष्टाध्यायम्) | २५) |      |                       |                |     |
| 660  | भक्ति-अनु                          | (अष्टाध्यायम्) | २६) |      |                       |                |     |
| 1133 | सं० श्रीमद्भगवद्गीता (केवल हिन्दी) | (अष्टाध्यायम्) | २७) |      |                       |                |     |
| 574  | सं० योगसूत्र-अनु                   | (अष्टाध्यायम्) | २८) |      |                       |                |     |
| 789  | सं० शिवपुराण                       | (अष्टाध्यायम्) | २९) |      |                       |                |     |

|                     |                            |
|---------------------|----------------------------|
| इतिरादि यो धर्मीयम् | अथवा, हिन्दी-आधारितसहित    |
| मुकुटारण्यकोपीयम्   | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |
| काम्योपयोगीयम्      | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |
| इतिराण्यकोपीयम्     | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |
| केपीययम्            | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |
| काम्योपयोगीयम्      | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |
| कायकाम्योपीयम्      | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |
| मुकुटकोपीयम्        | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |
| प्रकोपीययम्         | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |
| विपिरीयोपीयम्       | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |
| ऐतरेयोपीयम्         | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |
| केन्द्राण्योपीयम्   | सामुदाय, सांकेतिकभाष्यसहित |